हिन्दी के आंचलिक उपन्यासों में बुन्देलखण्ड के लोकजीवन का अनुशीलन

(श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य', डा. वृन्दावन लाल वर्मा एवं मैत्रेयी पुष्पा के सामाजिक उपन्यासों के विशेष सन्दर्भ में)

BUNDELKHAND UNIVERSITY
Central Library
Acc. No. ...
Date ...
JHANSI
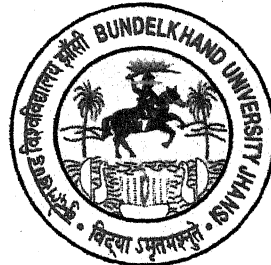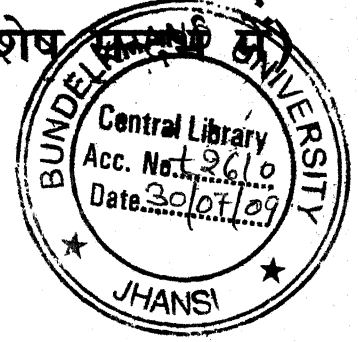
बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झाँसी की

पी-एच.डी. (हिन्दी) उपाधि के लिए प्रस्तुत

2007

शोध निर्देशक :
डॉ. सुरेन्द्र नारायण सक्सेना
रीडर एवं अध्यक्ष
स्नातकोत्तर हिन्दी-विभाग
मथुरा प्रसाद महाविद्यालय, कोंच (जालौन)
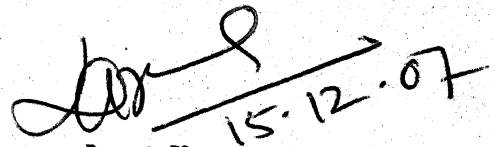
अनुसंधित्सु :
कु. ऋचा पटैरिया
एम.ए. (हिन्दी)

प्रमाण-पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि अनुसंधित्सु कु० ऋचा पटैरिया ने दो सौ दिनों से अधिक अवधि तक उपस्थित रहकर मेरे निर्देशन में "हिन्दी के आंचलिक उपन्यासों में बुन्देलखण्ड के लोकजीवन का अनुशीलन" (श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य', 'डा० वृन्दावन लाल वर्मा' एवं 'मैत्रेयी पुष्पा जी' के सामाजिक उपन्यासों के विशेष सन्दर्भ में) शोध प्रबन्ध पूर्ण किया है। उस उपक्रम में इन्होंने बुन्देलखण्ड विश्व विद्यालय, झाँसी के समस्त उपबन्धों का पूर्ण पालन किया है। मैं इस मौलिक शोध प्रबन्ध को शोध विशेषज्ञों के समक्ष परीक्षार्थ प्रस्तुत करने की अनुशंसा तथा अनुसंधित्सु के ज्योतिर्मय भविष्य की कामना करता हूँ।

15.12.07

शोध निर्देशक -
डॉ० सुरेन्द्र नारायण सक्सेना
रीडर एवं अध्यक्ष, हिन्दी-विभाग
मथुरा प्रसाद स्नातकोत्तर महाविद्यालय
कोंच- जालौन

आभार

मैं माँ सरस्वती के चरणों में नतमस्तक होकर एवं उनके शुभाशीर्वाद से यह शोधकार्य पूर्ण कर पायी हूँ। मैं हृदय से बारम्बार माँ की वन्दना करती हूँ।

मेरे पथ प्रदर्शक, परम आदरणीय 'डा० सुरेन्द्र नारायण सक्सेना जी (अध्यक्ष हिन्दी विभाग, मथुरा प्रसाद स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोंच-जालौन) के प्रति, मैं अति विनम्र भाव धारण कर हृदय की गहन अनुभूतियों से कृतज्ञता व्यक्त करती हूँ। उनके उत्कृष्ट निर्देशन में प्रस्तुत शोधकार्य पूर्ण कर सकी हूँ। उनके सारगर्भित विचार, उदार व्यवहार, एवं अखण्ड सहयोग, जो मुझे प्राप्त हुआ, वह मेरे लिए अविस्मरणीय है।

मैं प्रो० जयशंकर तिवारी, डा रामसजीवन शुक्ल एवं डा० अरुणिमा सौनकिया जी की आभारी हूँ, जिन्होंने मुझे शोधकार्य में अपना असीम सहयोग प्रदान किया।

मैं आभारी हूँ अपने पूज्यनीय बब्बाजी 'डा० रामस्वरुप पटैरिया', 'श्री रामस्वरुप दीक्षित' एवं नाना 'श्री राधारमण शांडिल्य' (सेवानिवृत्त प्राचार्य), जिन्होंने मुझे पी.एच.डी. करने की प्रेरणा दी और समय-समय पर बुन्देलखण्ड के लोकजीवन से संबंधित अनेकों प्रमुख जानकारियाँ देकर मेरा मार्गदर्शन किया।

मैं अपने परम पूज्यनीय सास-ससुर जी 'श्रीमती राजेश्वरी दीक्षित' एवं 'श्री आनंद कुमार दीक्षित' (अध्यापक) के प्रति आभार प्रकट करती हूँ, जिन्होंने मुझे शादी के पश्चात् शोधकार्य करने का मौका दिया।

मैं अपने परम आदरणीय माता-पिता 'श्रीमती रचना पटैरिया' एवं 'श्री अशोक कुमार पटैरिया' के प्रति आभार व्यक्त करती हूँ, जिन्होंने मेरी पग-पग पर हर आवश्यकता पूरी की और मेरी नन्हीं से बेटी 'संस्कृति' का लालन-पालन कर अपना असीम सहयोग प्रदान किया। जिसे व्यक्त करने के लिए मेरे पास शब्द नहीं है।

मैं अपने मामा जी 'श्री विनय शांडिल्य' (चीफ इंजीनियर), श्री आलोक शांडिल्य (अध्यापक) एवं मौसाजी 'श्री धीरेन्द्र मोहन अवस्थी' की आभारी हूँ, जिन्होंने बुन्देली साहित्य से संबंधित अनेकों पुस्तकें प्रदान करने में मेरी मदद की।

मैं अपने प्रिय हितैषी अनुज 'राहुल', 'साकेत पटैरिया' एवं राघवेन्द्र दीक्षित के प्रति अपना असीम हार्दिक आभार प्रकट करती हूँ, जिन्होंने मुझे प्रत्येक क्षण अपना सहयोग प्रदान किया।

मैं आभार व्यक्त करती हूँ अपने जीजा 'श्री राकेश त्रिपाठी', 'श्री पलक निधि नायक' एवं अपने बड़े भाई 'देवेन्द्र दीक्षित' का जिन्होंने शोध कार्य से सम्बन्धित सामग्री उपलब्ध कराने में मेरी मदद की।

मैं आभारी हूँ अपने जीवन साथी 'सुधीर कुमार दीक्षित' की, इन्होंने शोधकार्य करने के लिए मुझे हमेशा प्रेरित किया, इनके पूर्ण सहयोग से मैं आज इस शोध कार्य को पूरा करने में सफल रही हू.। मैं इनके प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करती हूँ।

मै अपनी शोध सहपाठी 'संगीता अग्रवाल' का हार्दिक आभार व्यक्त करती हूँ, इनसे मुझे साहित्य से संबंधित अनेकों पुस्तकें प्राप्त हुयीं।

टंकड़ की अशुद्धियों को ठीक करने में मुझे 'सारिका गोयल' का पूर्ण सहयोग प्राप्त हुआ, इनकी मैं बहुत-बहुत आभारी हूँ।

मैं अपने शोध केन्द्र (मथुरा प्रसाद स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोंच) के प्राचार्य महोदय 'श्री वीरेन्द्र सिंह निरंजन' एवं समस्त प्राध्यापकों का हृदय से आभार व्यक्त करती हूँ, जिनके सहयोग एवं दिशा निर्देशन से यह कार्य अति सरल हो गया।

अतः मैं उन सभी के प्रति अपना हार्दिक आभार व्यक्त करती हूँ, जिन्होंने इस कार्य में मुझे अपना असीम सहयोग प्रदान किया।

ऋचा पटैरिया

भूमिका
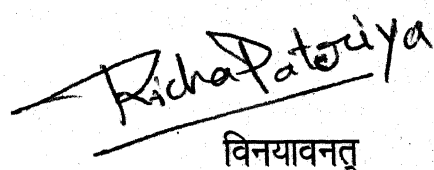
हिन्दी गद्य साहित्य में उपन्यास साहित्य का महत्वपूर्ण स्थान है। उपन्यास कथा साहित्य का एक ऐसा विस्तृत फलक है जिसके माध्यम से मानव जीवन की विस्तृत व्याख्या की जा सकती है। हिन्दी का उपन्यास साहित्य बहुत समृद्ध है। एक लम्बी अवधि से हिन्दी में उपन्यास लेखन जारी है। प्राचीन काल में 'चेदि', 'जेजाक भुक्ति', दशार्ण आदि नामों से विख्यात भारत भूमि का हृदय स्थल 'बुन्देलखण्ड' एक अद्वितीय भू-भाग है। यहाँ की प्राकृतिक छटा मानव मन को सहज आकर्षित करती है। यह भू भाग वैदिक काल से अखण्ड भारत में प्रसिद्ध रहा है। यहाँ की अपनी निजी जीवन यापन शैली है जो यहां के सांस्कृतिक वैभव में होती है।

उपन्यासों में आंचलिकता का विशेष महत्व है। प्रत्येक लेखक अपनी जन्म भूमि से जुड़े हुये क्षेत्र के प्रति विशेष लगाव रखता है। उस क्षेत्र की प्रकृति, रीति-रिवाज, पर्व, उत्सव, वेषभूषा, अलंकरण आदि उसके मन और मस्तिष्क में रचे वसे रहते है। सत्य ही है **'जननी, जन्म-भूमि स्वार्गदापि गरियसी'।** उपन्यासकार जब अपने उपन्यासों में स्थानीय कथाओं को अपनाता है। तो सभी स्थानीय विशेषताओं को वह रोचक रूप में उपन्यास में प्रस्तुत कर देता है। लेखन के मन व मस्तिष्क में बचपन से बने हुये चित्र शब्द पाकर मुखरित हो उठते है। साहित्य में इस प्रकार के उपन्यासों के आंचलिक उपन्यासों का नाम दिया गया है। इन उपन्यासों में उपन्यासकार अपने लोक भाषा की मिठास से कथा प्रेमियों को अवगत कराता है।

आंचलिक उपन्यासों को लोकप्रिय बनाने में 'फणीश्वर नाथ रेणु' का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। उनके 'मैला आँचल' उपन्यास ने पाठकों को आंचलिक उपन्यासों के प्रति आकर्षित किया है। बुन्देलखण्ड का आंचलिक उपन्यास साहित्य अति समृद्ध है। ये अपने अन्तःस्थल में पर्याप्त बुन्देली सम्पदा संजोये हुये है। इन उपन्यासों के अध्ययन से बुन्देलखण्ड की समग्र विशेषताओं से अवगत होना आसान है। श्री अम्बिका प्रसाद दिव्य, डॉ० वृन्दावन लाला वर्मा, मैत्रेयी पुष्पा ने इस दिशा में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इन उपन्यासकारों ने अपने जीवन का अधिकांश समय बुन्देलखण्ड की साहित्य उर्वरा भूमि पर व्यतीत किया है। इस भू भाग की विस्तृत छवि इनके मन मस्तिष्क से लेखनी में स्थानान्तरित होकर उपन्यासों के रूप में प्रकट हुई है।

दिव्य जी वर्मा जी के सभी सामाजिक उपन्यासों की कथा बुन्देली भू-भाग से जुड़ी है। कुछ उपन्यासों को छोड़कर मैत्रेयी ने भी अपने उपन्यासों में बुन्देली भू-भागों को कथानक का आधार बनाया है। इन सभी उपन्यासकारो के अधिकांश सामाजिक उपन्यास बुन्देलखण्ड की पृष्ठ-भूमि पर लिखे गये है। इन उपन्यासों में बुन्देलखण्ड का सम्पूर्ण जीवन समाया है। इनकी सशक्त लेखनी ने बुन्देलखण्ड एवं उसके लोक जीवन के सुंदर चित्र उकेरा है। कहा जाता है कि यदि बुन्देलखण्ड को समझना है तो इनके उपन्यासों को पढ़ना परम आवश्यक है।

बुन्देलखण्ड मेरी जन्म एवं कर्मस्थली है अतः इस पावन वीर भूमि से मेरा घनिष्ठ सम्बन्ध है। यहां की परंम्पराओं, रीति रिवाजों को मैने निकटतम से देखा है। साहित्य मेरा रूचिकर विषय रहा है और साहित्य के अन्तर्गत 'कथा साहित्य' मे मेरी सर्वाधिक रूचि है। स्नाकोत्तर उपाधि के पश्चात जब मैंने शोध कार्य करने का निर्णय लिया था, उस समय मेरे मन मे अपनी जन्म एवं कर्म भूमि 'बुन्देलखण्ड के लोक जीवन' को साहित्य जगत में उजागर करने का विचार आया और इस कार्य हेतु मैने अपना प्रयास प्रारम्भ किया। मैंने बुन्देलखण्ड के मूर्धन्य उपन्यासकारों को सविस्तार पढ़ा । इनको पढ़ने के उपरांत मैंने पाया कि इन उपन्यासकरों के अनेक उपन्यास, अपने अंतःस्थल में बुन्देलखण्ड की सभ्यता एवं संस्कृति को संजोये हुये हैं। मैंने इन उपन्यासों में निहित बुन्देली 'लोक जीवन' को खोजने का अथक प्रयास किया है जो इस शोध कार्य के रूप में सुविज्ञ जनों के समक्ष प्रस्तुत है।

Richa Patariya

विनयावनत्

कु० ऋचा पटैरिया

विषय सूची

अध्याय - १

बुन्देलखण्ड- एक सामान्य परिचय

१.१ - नामकरण

१.२ - भौगोलिक सीमाएं

१.३ - राजवंश का संक्षिप्त इतिहास

१.४ - सृजनशीलता एवं साहित्य प्रेम

१.१ – नामकरण–

प्रायः किसी भी प्रदेश के नामकरण के निर्धारण में वहाँ के ऐतिहासिक तथ्य सहायक होते हैं। ये तथ्य वहाँ उस क्षेत्र के निवासी तथा शासक वर्ग पर निर्भर करते हैं। इसके अतिरिक्त वहाँ की प्राकृतिक दशा भी नामकरण में सहायक होती है। बुन्देलखण्ड भी इससे अछूता नहीं है। कहा जाता है कि बुन्देलखण्ड का नाम छः सौ वर्षों से अधिक पुराना नहीं है। डा० वगीश शास्त्री जी की पुस्तक **‘बुन्देलखण्ड की प्राचीनता’ में “इसकी व्युत्पत्ति बूँद (< बूँद) लः > बुन्देला+खण्ड = बुन्देलखण्ड बतलायी जाती है। इसके पहले यह देश जिझौति के रुप में प्रख्यात था। कुछ इतिहासकार इस प्रदेश का संबंध ‘विन्ध्य’ से जोड़ते हैं। कुछ लोग बुन्देली को ब्रजवुलि से विकसित मानते हैं। शास्त्रीजी इस प्रदेश को पुलिन्द जाति का प्रदेश मानते हैं। अतः पुलिन्द अपभ्रंश बोलिन्द और बुन्देल मानते हैं।”[१]**

प्राचीनकाल में पुराणों में इस क्षेत्र का नाम मध्य देश भी पाया गया। आदिवासी गोड़ जाति की प्रधानता के कारण यह क्षेत्र गोंडवाना नाम से संबोधित हुआ। कालान्तर में इस प्रदेश को ‘आटव्य देश’ नाम से भी प्रसिद्धि प्राप्त हुई। अंग्रेजों के शासनकाल में इस भू-भाग को ‘सेंट्रल इण्डिया’ नाम से पुकारा गया। वनों की प्रचुरता के कारण यह क्षेत्र ‘आरण्यक’ या वन्य देश भी कहलाया। उत्तर में यमुना नदी एवं दक्षिण में नर्मदा नदी के बीच के क्षेत्र भिन्न-भिन्न कालों में अनेक नामों से उच्चारित किए गये।

“महाभारत काल में यह प्रदेश ‘चेदि देश’ नाम से संबोधित हुआ। इस क्षेत्र का राजा शिशुपाल चेदि-चंदेरी का राजा था, शुक्तिमती केना नदी तक उसकी सीमाएं थी। बुन्देलखण्ड का प्राचीन नाम दशार्ण रहा है। संभवतः इस भू-भाग से दस नदियाँ प्रवाहित होती थीं। इस प्रदेश के राजा हिरण्यवर्मा की पुत्री पांचाल देश के राजा शिखंडी को ब्याही थी। इसी वंश के शासक सुधरमा और भीमसेन के बीच युद्ध हुआ। इनकी राजधानी विदिशा थी।”[२] धसान नदी के निकटवर्ती भू-भाग को दशार्ण नाम से पुकारा जाता था।

---

१. बुन्देलखण्ड की प्राचीनता – डा० बगीश शास्त्री (पृ० संख्या-१)

२. बुन्देलखण्ड का साहित्यिक ऐतिहासिक सांस्कृतिक वैभव –डा० रमेश चन्द्र श्रीवास्तव (पृ०संख्या-२)

दशार्ण के दक्षिण में पुलिन्द राज्य था। इस वंश के शासक की पुत्री चेदिवंश के शासक भीम को ब्याही थी। जिसकी पुत्री दमयंती थी। नर्मदा नदी के तट तक फैला यह राजमार्ग भरहुत से होता हुआ कौशाम्बी तक जाता था। कालांतर में चेदि देश की सीमाएं मगध वंशीय शासकों के अधीन हो गईं जो सोन नदी तक विस्तृत थी।

चंदेलवंशीय राजाओं में राजा जय शक्ति या जेज्जाक अत्यंत प्रतापी राजा हुए तथा इसी नाम से इस क्षेत्र को पुकारते थे। चंदेलों के उत्थान-पतन काल में देश जेजाक भुक्ति नाम से ही विख्यात था। पृथ्वीराज चौहान के मदनपुर शिलालेख से प्रकट होता है कि बारहवीं सदी के अंत तक यह प्रदेश जेजाक भुक्ति के नाम से प्रसिद्ध था।

छठीं शती ईस्वी में यमुना और नर्मदा नदी के बीच का क्षेत्र जेजाहुति 'जुझौतिया' कहा जाता था क्योंकि अधिकांश मात्रा में जुझौतिया ब्राह्मण और अहीर यहाँ के निवासी थे। इस भू-भाग का नाम युद्ध देश या जुझौतिया यहाँ की लोकप्रिय, युद्ध प्रिय प्रवृत्ति के कारण हुआ। जुझौति बुन्देलखण्ड का प्रथम नाम है। स्कन्ध पुराण में इसका निर्देश राज्य के रूप में मिलता है। कान्तिपुर चेदि मालवा इस राज्य की सीमाएँ थी। इस राज्य में ४२,००० गांव शमिल थे।

"जुझौति शब्द का उल्लेख अबूरिहाँन ने बड़े ही मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया है, इनके अनुसार - इस देश की राजधनी खजुराहो थी, जो कन्नौज से ३० परगना अथवा ६० मील दक्षिण-पूर्व है। पर कन्नौज से खजुराहो की वास्तविक दूरी १८० मील अथवा ६० परगना है, इसके अतिरिक्त इस नगर में इब्नबतूता भी आया था और इसे खजूर के नाम से पुकारा, इसके चारों तरफ मंदिर काफी तादाद में बने हुए थे। अतः इससे ज्ञात होता है कि जिझौति ही आधुनिक बुन्देलखण्ड है। जुझौति ब्राह्मणों की बाहुल्यता के कारण यह जुझौतिया या यजुर्होत्र भी कहा जाता था, कुछ समय के लिए जेजा या जय शक्ति नरेश के नाम पर यह जेजा भुक्ति अथवा जेजाक भुक्ति नाम से पुकारा गया, इसके पश्चात् बुन्देलखण्ड के अनेक नाम परिवर्तित हुए। इस प्रदेश का नाम बुन्देलखण्ड है लेकिन इसके नामकरण के संबंध में मतभेद अवश्य ही जान पड़ता है क्योकि राजा वीरसिंह देव एवं छत्र प्रकाश चरित के आध ाार पर यह कथा निम्नवत् है कि एक राजा ने विन्ध्यवासिनी देवी को प्रसन्न करने के लिए काफी समय तक घोर तपस्या की देवी माँ फिर तब भी प्रसन्न न हुयी तो उस राजा ने निराश होकर माँ के चरणों

में अपना जीवन त्यागने का विचार किया और अपनी तलवार निकालकर अपनी गर्दन पर प्रहार किया उसी क्षण देवी माँ प्रकट हो गयी। देवी माँ ने कहा कि उसकी खून की बूंदों से पैदा हुआ उसका पुत्र एक शक्तिशाली विजेता होगा तथा बुन्देलवंश की नींव रखेगा।

'इतिहास बुन्देलखण्ड' में महाराज सिंह ने इसका वर्णन किया है उसमें देवी विन्ध्यवासिनी देवी के मंदिर में खून की बूंदों से उत्पन्न किसी राजकुमार का वर्णन नहीं है। बुन्देलों की पैदाईश की एक अलग ही कथा का वर्णन 'हकीकत-उल-आलिमा' में मिलता है और इसका समर्थन इलियट तथा स्मिथ ने भी किया है। इस कथा के अनुसार गृहखार वंश के राजा हरदेव एक सेविका (बांदी) के साथ खेरागढ़ से आकर ओरछा के निकट बस गये। उसने वहाँ के खंगार नरेश का वध कर दिया और वह वेतवा तथा धसान के बीच के देश का स्वामी बन गया।

कहा जाता है कि राजा हरदेव के उत्तराधिकारी जो इस सेविका (बांदी) से हुए, वे बुन्देला कहलाये और यह प्रदेश बुन्देलखण्ड कहलाया। इस प्रदेश की भाषा 'बुन्देली' कहलायी।

मुगल शासन (सम्राट अकबर से औरंगजेब तक) में बुन्देलखण्ड का क्षेत्र आगरा, इलाहाबाद तथा मालवा प्रान्त के सूबेदारों द्वारा नियंत्रित था। केन तथा धसान नदी द्वारा विभाजित बुन्देलखण्ड पूर्वी और पश्चिमी बुन्देलखण्ड राज्य के नाम से सम्बोधित किया गया था। यहाँ वन और पहाड़ अधिक थे जिन्हें स्थानीय भाषा में डांग कहा जाता है। अजयगढ़, कालिंजर, चित्रकूट इसी के अंतर्गत आते थे।

सर जार्ज ग्रियर्सन ने बुन्देली भाषा के आधार पर बुन्देलखण्ड का क्षेत्र निर्धारित किया है उनके मतानुसार बुन्देलखण्ड उत्तर में चम्बल नदी के उस पार मैनपुरी, आगरा, इटावा के दक्षिणी भाग तक, पश्चिम में पूर्वी ग्वालियर तक, दक्षिण में सागर दमोह तक ही नहीं, भोपाल का पूर्वी भाग, नर्मदा के दक्षिण में नरसिंहपुर, होशंगाबाद, सिवनी, बालाघाट, छिन्दबाडा के कुछ क्षेत्रों तक फैला है। पूर्व में बाँदा की भाषा बुन्देली नहीं है। श्री कृष्ण गुप्त ने इसका समर्थन किया है।

१.२- भौगोलिक सीमाएं -

चेदि, 'जेज्जाकभुक्ति' के नाम से विख्यात **"बुन्देलखण्ड का उत्तरी अंक्षास २३°-२४° अंश, २६°-५०° अंश और पूर्वी देशान्तर ७७°-५२° व ८०° अंश के मध्य स्थित है। यमुना नदी इसकी उत्तरी तथा चम्बल उत्तरी-पश्चिमी सीमा निर्धारित करती है। दक्षिणी दिशा में मध्य प्रदेश की जबलपुर तथा सागर मण्डल तथा दक्षिण पूर्व में बघेलखण्ड तथा मिर्जापुर की पहाड़ियाँ शामिल होती हैं। उत्तर प्रदेश के जिला झाँसी, जालौन, बाँदा, हमीरपुर, ललितपुर, चित्रकूट तथा महोबा यमुना तथा वेतवा नदी से सिंचित है। बुन्देलखण्ड में कई छोटी-बड़ी रियासतें शामिल थीं जो अब मध्यप्रदेश तथा उत्तरप्रदेश के बँटवारे में चली गई हैं।"**[१]

बुन्देलखण्ड का सीमांकन समयानुसार परिवर्तित रहा है। कैप्टन जैम्स-फ्रैकलिन (सन् १८२५) के अनुसार बुन्देलखण्ड के उत्तर में यमुना नदी प्रवाहित है, दक्षिण में बरार और मालवा प्रदेश है। पूर्व में बघेलखण्ड है तथा पश्चिम में सिंधिया अधिकृत राज्य है। इसमें टेहरी, झाँसी, दतिया, समथर, देशी राज्य समाविष्ट हैं।

बुन्देलखण्ड प्रदेश सन् १८७१ ई० टी० ऐटिकिन्सन के अनुसार- उत्तर में यमुना नदी तक, उत्तर पश्चिम में चम्बल नदी तक, दक्षिण में जबलपुर (सागर नर्मदा क्षेत्र) तक तथा उत्तर-पूर्व में बघेलखण्ड और मिर्जापुर तक विस्तृत है। इसमें बाँदा, झाँसी, ललितपुर, जालौन, हमीरपुर के बिट्रिश शासित जिले, संधि राज्य ओरछा, दतिया, समथर सनद प्राप्त राज्य अजयगढ़, अलीपुर, अष्टभैया, धुखई, टोरी-फतेपुर, बिजना-पहाड़ी बंका, बरौंधा, बावनी, बेहट बिजावर चरखारी तथा चौबियाना जागीर- भैसौंधा नया गांव, पालदेव, पहाड़ी, तराव तथा जिगिनी, खनियाधान, लुगासी, नयागांव, रेवई, पन्ना, सरीला सम्मिलित थे। सागर दमोह जिले 'नर्मदा क्षेत्र' अंग्रेजों के शासनाधीन थे।

भूगोल-वेत्ताओं तथा भाषाविदों ने बुन्देलखण्ड का सीमांकन निम्नवत् किया है। श्री एस.एम. अली ने विभिन्न पुराणों के आधार पर विन्ध्य क्षेत्र में तीन जनपद विदिशा, दशार्ण एवं करूष की स्थिति का विवरण दिया है। विदिशा में ऊपरी वेतवा का बेसिन, 'दशार्ण' धसान नदी और उसकी गहरी घाटियों द्वारा चीरा हुआ सागर के पठार तक फैला हुआ प्रदेश तथा करुष के अंतर्गत सोन नदी के बीच

---

१. बुन्देलखण्ड का राजनैतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास- अब्दुल करयूम मदनी (पृ०संख्या-८)

समतलीय मैदान समाविष्ट किया है। त्रिपुरी जनपद में जबलपुर, मण्डला, नरसिंहपुर जिले माने है। इतिहासकार जयचन्द्र विद्यालंकार ने बुन्देलखण्ड को विन्ध्यांचल पर्वत श्रेणियों में फैला हुआ प्रदेश माना है जिसमें वेतवा (वेत्रवती) धसान, (दशार्ण) और केन (शुक्तिमती) नदी क्षेत्र एवं नर्मदा की ऊपरी घाटी पचगढ़ी से अमरकंटक तक का क्षेत्र शामिल किया है।

पाजिटर के अनुसार 'चेदि देश' उत्तर में यमुना तट से दक्षिण में मालवा के पठार, दक्षिण-पूर्व में कर्वी (पयस्वनी) नदी से उत्तर-दक्षिण में चम्बल नदी तक फैले हुए प्रदेश का नाम था। डा० रामेश्वर प्रसाद अग्रवाल ने बुन्देली का विस्तार उत्तर में मुरैना जिला, पश्चिम में शिवपुरी, गुना तक, दक्षिण में बैतूल जिला तक माना है। डा० महेश प्रसाद जायसवाल ने मध्य के दुर्ग जिले का कुछ भाग, बाँदा का कुछ भाग महाराष्ट्र के चाँदा, बुलढ़ाना, भंडारा, अकोला के कुछ भाग को बुन्देलखण्ड माना है।

आधुनिक शोधों के अनुसार बुन्देलखण्ड को भौतिक क्षेत्र घोषित किया गया है और इसकी सीमाएं इस प्रकार है-"वह क्षेत्र जो उत्तर में यमुना, दक्षिण में विन्ध्य प्लेटो की श्रेणियों, उत्तर-पश्चिम में चम्बल और दक्षिण-पूर्व में पन्ना-अजयगढ़ श्रोणियों से घिरा हुआ है, बुन्देलखण्ड के नाम से जाना जाता है। इसमें उत्तर-प्रदेश के चार जिले-जालौन, झाँसी, हमीरपुर और बाँदा तथा मध्यप्रदेश के चार जिले -दतिया, टीकमगढ़, छतरपुर और पन्ना के अलावा उत्तर-पश्चिम में भिंड जिले की लहार और ग्वालियर जिले की भांडेर तहसीलें भी सम्मिलित है।" इतिहास, संस्कृति और भाषा की दृष्टि से बुन्देलखण्ड बहुत विस्तृत प्रदेश है लेकिन ये सीमारेखाएं भू-संरचना की दृष्टि से उचित कही जा सकती है।

जनपद भूखंड की एक ऐसी इकाई है जिसमें वहाँ के निवासियों की संस्कृति-सभ्यता एवं संस्कारों की समानता देखने को मिलती है। इसी यथार्थ पर आधारित डा० वासुदेवशरण अग्रवाल ने "प्राचीन काल के जनपद को एक ऐसी सांस्कृतिक भौगोलिक ईकाई की संख्या से अभिहित किया है।" कहा जाता है कि नर्मदा और चंबल घाटी की सभ्यता बहुत प्राचीन है लेकिन जनपदीय चेतना का प्रादुर्भाव रामायण और महाभारत काल से हो चुका था। महाभारत और जनपद-काल का चेदि इसी प्रकार का जनपद था, जिसका समीकरण पार्जिटर ने वर्तमान बुन्देलखण्ड से किया है। उनके बनुसार चेदि देश उत्तर में यमुना के दक्षिणी तट से दक्षिण में मालवा के पठार और बुन्देलखण्ड की पहाड़ियों तक तथा दक्षिण-पूर्व में चित्रकूट के उत्तर-पूर्व में बहने वाली कर्बी नदी से उत्तर-पश्चिम में चंबल नदी तक प्रसारित विस्तृत

प्रदेश का नाम था । डा० वी० वी० मिराशी के अनुसार मध्यकाल में उसका विस्तार नर्मदा तक हो गया था । ज्यादातर इतिहासकारों ने इस सीमांकन को सही माना है। इस सीमांकन का आधार पूर्णतया सांस्कृतिक माना है। लेकिन उस समय सीमा का आधार युद्ध भी होते थे इस कारण वर्णित सीमांकन को विश्वसनीय नहीं माना गया ।

जनपदों के पतन के बाद सास्कृतिक आधार का स्थान राजनैतिक ने ले लिया । चन्देलकाल में 'जेजाक भुक्ति' की सीमायें वर्तमान बुन्देलखण्ड से विस्तृत थीं। चंदेल राजाओं के राज्य में उनके आधीन विभिन्न लोक-संस्कृति के क्षेत्र थे, जिनकी लोक-भाषा वघेली,ब्रज,कन्नौज जैसी क्षेत्रीय भाषायें थी न कि बुन्देली । इन कारणों से इन सीमाओं को बुन्देलखण्ड की सीमा नहीं माना जा सका । दीवान प्रतिपाल सिंह लिखित 'बुन्देलखण्ड का इतिहास' नामक पुस्तक के प्रथम भाग के अनुसार "पूर्व मे टोंस और सोन नदियाँ अथवा बघेल-खण्ड या रीवा राज्य है तथा बनारस के निकट बुन्देला नाले तक सिलसिला चला गया है पश्चिम में बेतवा, सिंध और चम्बल नदियां विन्ध्याचल श्रेणी तथा मालवा, सिंधिया का ग्वालियर राज्य और भोपाल राज्य है, तथा पूर्वी मालवा इसी राज्य में आता है। उत्तर में यमुना एवं गंगा नदियाँ अथवा इटावा, कानपुर, फतेहपुर, इलाहाबाद, मिर्जापुर तथा बनारस जिले है, दक्षिण में नर्मदा और मालवा है।" दीवान प्रतिपाल सिंह ने निम्न पंक्तियों में बुन्देलखण्ड की सीमायें प्रदर्शित की हैं -

" उत्तर समथल भूमि गंगा जमुना सुबहति है।
प्राची दिसि कैमूर, सोन कासी सुलहति है।
दक्षिण रेखा विन्ध्याचल वल शीतल करनी।
पश्चिम में चंबल चंबल सोहित वन हरनी।
तिनि मधि राजेगिरि, बन सरिता सहित मनोहर।
कीर्ति स्थल बुन्देलन को, बुन्देलखण्ड बर"२

इस सीमांकन में ऐतिहासिक व राजनीतिक टृष्टिकोण प्रमुख रहा है।

बुन्देलखण्ड के सुप्रसिद्ध यशस्वी कवि व लेखक श्री वियोगी हरि ने बुन्देलखण्ड की सीमा इस प्रकार निर्धारित की -

---

२. बुन्देलखण्ड दर्शन - मोतीलाल त्रिपाठी 'अशान्त' (पृ० संख्या- २६)

" इत चम्बल उत नर्मदा इत यमुना उत टोंस ।

छत्रसाल से लरन की रही न काहू होंस ।।"३

यह दोहा छत्रसाल की राज्य सीमा से संबन्धित है लेकिन इतिहास में विख्यात है। श्री गोरेलाल तिवारी ने बुन्देलख्ण्ड की सीमा इस प्रकार निर्धारित की है-". भारत के मध्य भाग में नर्मदा के उत्तर की ओर यमुना के दक्षिण में विन्ध्याचल पर्वत की शाखाओं से समाकीर्ण और यमुना की सहायक नदियों के जल से सिंचित सृष्टि सौन्दर्याकृत जो प्रदेश है उसे बुन्देलखण्ड कहते है।"

यदि हम सांस्कृतिक सीमांकन का आधार भाषा या क्षेत्रीय बोली को माने तो बुन्देलखण्ड के संदर्भ में, जनपद परिवर्तन के साथ बोली में प्रयुक्त शब्दों में भिन्नता देखने को मिलती है। इसलिए भाषा शैली में कछ न कुछ परिवर्तन सवाभाविक है। सर्वप्रथम विलियम कैरे ने, जो १७६३ई० में भारत आए थे, ने अपने भाषा सर्वेक्षण के प्रतिवेदन में ३३ भारतीय भाषाओं की सूची में बुन्देलखण्डी पर भी विचार किया और उसका नमूना दिया । सन् १८३८ से १८४३ ई० के बीच राबर्ट लीच ने बुन्देलखण्ड की हिन्दी बोली के व्याकरण का निर्माण किया । इसके बाद सर जार्ज ए० ग्रियर्सन ने बुन्देलखण्डी पर महत्वपूर्ण कार्य कर प्रत्येक क्षेत्र की बुन्देली भाषा विचार प्रस्तुत करते हुए, बुन्देली की सीमाऐं खोजी । जार्ज ए. ग्रियर्सन के अनुसार-" बुन्देली भाषा का क्षेत्र बुन्देलखण्ड के राजनीतिक क्षेत्र से मिलता जुलता नहीं है। वह उत्तर में चंबल नदी के उस पार आगरा, मैनपुरी, इटावा, जिलों के दक्षिणी भागों तक, पश्चिम में चंबल नदी तक न होकर पूर्वी ग्वालियर तक, दक्षिण में सागर और दमोह तक ही नहीं, वरन् भोपाल के पूर्वी भागों, नर्मदा के दक्षिण में नरसिंहपुर, होशंगाबाद सिवनी जिलों तथा बालाधार और छिंदवाड़ा के कुछ क्षेत्रों तक फैला हुआ है। पूर्व में पूरे बाँदा जिले की भाषा बुन्देली नहीं है। श्री कृष्णनंद गुप्त ने सीमाकंन को और भी विस्तृत कर दिया । डॉ० उदयनारण तिवारी, डा० हरदेव बाहरी आदि ने ग्रियर्सन की सीमाओं को ही मान्यता प्रदान की । ग्रियर्सन के भाषा सर्वेक्षण के बाद इस कार्य को योजनाबद्ध तरीके से आगे नहीं बढ़ाया गया।

भूगोल बेत्ताओं ने अपना टृष्टिकोण भौगोलिक टृष्टि से किया । उनके अनुसार बुन्देलखण्ड की भौगोलिक, सांस्कृतिक और भाषा सम्बन्धी समानता की बात आती है। "बुन्देलखण्ड भारत का एक ऐसा भौगोलिक क्षेत्र है, जिसमें न केवल संरचनात्मक एकता, भौम्याकार की समानता और जलवायु की

---

३. बुन्देलखण्ड दर्शन - मोतीलाल त्रिपाठी 'अशान्त' (पृ० संख्या- २७)

समता है, वरन् उसके इतिहास, अर्थव्यवस्था और समाजिकता का आधार भी एक ही है। वास्तव में समस्त बुन्देलखण्ड में सच्ची सामाजिक, अर्थिक और भावनात्मक एकता है।"

यहाँ पर भौगोलिक दृष्टि से अध्ययन करने की बजाय अगर हम भौगोलिक, सांस्कृतिक एवं भाषिक दृष्टियों को एक साथ लेकर अध्ययन व सीमाकंन करे तो ज्यादा समाचीन रहेगा । भूगोल वेत्ताओं पीटर वाश ने 'मैगाजियोग्राफी' पद्धति के आधार पर किये गये अध्ययन के अनुसार बुन्देलखण्ड क्षेत्र के भूमि उपयोग पर इस प्रदेश के निवासियों की आंकाक्षाओं, आस्थाओं, मान्यताओ, दृष्टिकोणों पूर्वाग्रहों एवं नियमों की अवेहलना कर भूमि उपयोग नियोजन कार्य सम्पादन में आशातीत सफलता प्राप्त नहीं की जा सकती है। इस कारण नियोजकों को सांस्कृतिक भूगोल के तत्वों को भी ध्यान में रखना चाहिए । बुन्देलखण्ड क्षेत्र में सांस्कृतिक तत्व सदा से अपना विशेष महत्व रखते है। इस कारण सांस्कृतिक भूगोल के आधार पर विश्लेषण करना अधिक उपयुक्त होगा । हमें यह मानना चाहिए, कि सांस्कृतिक तत्वों में गतिशीलता एवं परिवर्तन त्वरित गति से नहीं आ सकता है। हम सांस्कृतिक भूगोल को भूगोल की विकासशील शाखा मान सकते है। यहाँ के भूगोल के कारण निवासियों की अपनी संकल्पनायें एवं अवधारणायें है।

बुन्देलखण्ड का क्षेत्र ऊँचा-नीचा पथरीला है। यहाँ की मिट्टी कठोर एवं सामान्य परिस्थितियों में अनुर्वरक है। इस क्षेत्र में पहाड़ एवं घाटियाँ भी प्रचुर मात्रा में है। निम्न कठिनाईयों के कारण यहाँ का जन-जीवन संघर्षशील एवं जटिल है। भौगोलिक संरचना के आधार पर बुन्देलखण्ड दो भागों में विभक्त है। मैदानी भाग में बाँदा, हमीरपुर, जालौन, झाँसी, ललितपुर आदि तथा उच्च भूमि क्षेत्र में पन्ना, छतरपुर, टीकमगढ़, महोबा आदि क्षेत्र आते है।

बुन्देलखण्ड के उत्तर में यमुना नदी है। और सीमारेखा को भूगोल-विदों, इतिहासकारों, भाषाविदों आदि सभी ने स्वीकार किया है। पश्चिमी सीमा- चम्बल नदी को भी अधिकांश विद्वानों ने माना है। परंतु उत्तरी चम्बल इस प्रदेश से दूर है और निचली चम्बल निकट है। मध्य और निचला चंबल के दक्षिण में स्थित मध्य- प्रदेश के मुरैना और भिण्ड में बुन्देली संस्कृति और भाषा का मानक रूप समाप्त हो जाता है। भाषा और संस्कृति की दृष्टि से ग्वालियर और शिवपुरी का पूर्वी भाग बुन्देलखण्ड में आता है और साथ ही उत्तर प्रदेश के जालौन जिले से लगा हुआ भिण्ड का पूर्वी हिस्सा भी, जिसे भूगोलविदों ने बुन्देलखण्ड क्षेत्र में सम्मिलित किया है। संस्कृति के विस्तार को घने जंगल तथा वीहड़ बाधित करते

है। चंबल और कुवारी नदी के बीहड़ो तथा दुर्गम भार्गो के कारण एवं मुरैना और शिवपुरी के घने जंगलों के होने से बुन्देली भाषा और संस्कृति का प्रसार इटावा, मैनपुरी और आगरा जिलों तक नहीं पहुँच पाया।

बुन्देलखण्ड की पश्चिमी सीमा पर ऊपरी बेतवा और ऊपरी सिंध नदियाँ तथा सीहोर से उत्तर में गुना और शिवपुरी तक फैला मध्य भारत का पठार है। पठार के ही समान्तर विन्ध्य श्रेणियां भोपाल से लेकर गुना और शिवपुरी तक फैली हुयी है, जो अवरोधक का कार्य करती हैं। बुन्देलखण्ड के पश्चिम में रायसेन जिले के रायसेन और तहसीलों का पूर्वी भाग, विदिशा, बासौदा और सिरोंज के पूर्वी भाग की सीमा बेतवा बनाती है। गुना जिले की अशोक नगर, मुंगावली तथा शिवपुरी की पिछोर और करैरा तहसीलें है जिनकी सीमा सिंध नदी बनाती है। विदिशा इतिहास प्रसिद्ध तथा दशार्णी संस्कृति का प्रमुख केन्द्र रहा है। नाग संस्कृति भी बुन्देलखण्ड के बड़े भू-भाग में प्रसारित रही है।

भूगोलवेत्ता सर थामस होल्डिच के अनुसार- "सभी प्राकृतिक तत्वों में एक निश्चित जल विभाजक रेखा है, जो एक विशिष्ट पर्वत श्रेणी द्वारा निर्धारित होती है, अधिक स्थाई और सही होती है।" तथा इस प्रदेश की दक्षिणी सीमा महादेव पर्वत श्रेणी (गोडवाना हिल्स) और दक्षिण-पूर्व में मैकल पर्वत श्रेणी उचित ठहरती है। इस आधार पर होशंगाबाद जिले की होशंगाबाद और सोहागपुर तहसीलें तथा नरसिंहपुरा का पूरा जिला बुन्देलखण्ड के अंतर्गत आता है। कुछ भाषा वैज्ञानिकों ने इन क्षेत्रों के दक्षिण में बैतूल, छिंदवाड़ा, सिवनी, बालाघाट और मंडला जिलों अथवा उनके कुछ भागों को भी सम्मिलित कर लिया। लेकिन उनकी भाषा शुद्ध बुन्देली नहीं है और वहाँ की संस्कृति भी बुन्देलखण्ड से मेल नहीं खाती। लेकिन इतना हम कह सकते हैं कि बुन्देली संस्कृति एवं भाषा का यत्किचिंत प्रभाव वहाँ पर अवश्य पड़ा। ऊँचाई पर स्थित होने के कारण वे पृथक हो गये। महामैकल पर्वत श्रेणियाँ उन्हें अनेक स्थलों पर अलग करती हुई अवरोधक सिद्ध हुई।

दक्षिण सीमा में नर्मदा नदी तथा विन्ध्य श्रेणियों के पार बुन्देली संस्कृति और भाषा का प्रसार कैसे हुआ? इस प्रश्न का उत्तर डा० काशी प्रसाद जायसवाल द्वारा लिखित 'अन्धार युगीन भारत' से ऐतिहासिक रुप में प्राप्त होता है -

"भार शिवों (नागों) और वाकाटकों के इस क्षेत्र में बसने के कारण इस भाग का संबंध बुन्देलखण्ड से इतना घनिष्ठ हो गया था कि दोनों मिलकर एक हो गये थे और उस समय से इन दोनों प्रदेशों में

जो एकता स्थापित हुई थी व आज तक चली आ रही है। साठ वर्षों तक नागों के यहाँ रहने से इतिहास का यह परिणाम निकला है कि यहाँ के निवासी भाषा और संस्कृति के विचार से पूरे उत्तरी हो गये हैं।”

गुप्तकाल में बुन्देलखण्ड के इस भू-भाग में बाकाटक यहाँ रहा करते थे। कुछ विद्वान झाँसी जिले के बगाट या बाघाट को वाकाटकों का आदि स्थान सिद्ध करते हैं। कुछ इतिहासकार पुराणों में कथित किलकिला प्रदेश की समानता पन्ना से करते हैं। पन्ना को वकाटकों की आदि भूमि मानते हैं। वकाटकों के पश्चात् जेजाभुक्ति के चंदेलों और त्रिपुरी के कलचुरियों के राज्यकाल में भी यह क्षेत्र बुन्देलखण्ड से जुड़ा रहा।

अतः निम्न उदाहरणों से स्पष्ट है कि बुन्देलखण्ड की दक्षिणी सीमा महादेव पर्वतश्रेणी की गोंडवाना हिल्स है, जो जबलपुर के पूर्व में मैकल पर्वतश्रेणी से मिल जाती है। इस प्रदेश के पूर्व में मैकल पर्वत श्रेणियां, भानरेर श्रेणियाँ, कैसूर श्रेणियाँ और निचली केन नदी है। दक्षिण पूर्व में मैकल पर्वत है इस कारण नरसिंहपुर जिले के पूर्व में स्थित जबलपुर जिले के दक्षिणी-पश्चिमी भाग के समतल भाग अर्थात् पाटन और जबलपुर तहसीलों का दक्षिण पश्चिमी भाग बुन्देलखण्ड के अंतर्गत आ गया है। निश्चिततः इसी कारण वहाँ की भाषा और संस्कृति बुन्देली के अधिक निकट है। किन्तु दमोह पठार के दक्षिण पूर्व में स्थित भारनेर रेंज पाटन और जबलपुर तहसीलों के उत्तरी-पूर्वी भागों को बुन्देलखण्ड से अलग कर देती है। भारनेर श्रेणियों के उत्तर-पूर्व में कैमूर श्रेणियाँ स्थित हैं। जिनके पश्चिम में स्थित पन्ना बुन्देलखण्ड में है और पूर्व में बघेलखण्ड है।

इण्डिया ए रीजनल ज्याँग्राफी, सर आर. एल सिंह, पृ० ६४४ के अनुसार- “ पन्ना जिले की तहसीलों पवई और पन्ना के पूर्व संकरी पट्टी में बुन्देली भाषा और संस्कृति का प्रसार है। टोंस और सोन नदियों के उद्‌गम का भू-भाग दक्षिण-पश्चिम की उस संस्कृति से अधिक प्रभावित है। पन्ना जिले के उत्तर में पन्ना अजयगढ़ की पहाड़ियां चित्रकूट तक फैली है। बाँदा जिले का वह भाग जो छतरपुर जिले के उत्तर-पूर्वी कोने और पन्ना जिले के उत्तरी सीमा से लगा हुआ है। उत्तर में गोरिहार (जिला छतरपुर) से लेकर चित्रकूट तक पहाड़ी क्षेत्र की एक सीमा-रेखा बनाता है जिसके उत्तर में बाँदा का मैदानी भाग आरम्भ होता है इसलिए बुन्देलखण्ड क्षेत्र के अंतर्गत आता है। बाँदा जिले का शेष मैदानी भाग उससे बाहरी क्षेत्र में पड़ा जाता है। इस प्रकार बुन्देलखण्ड की उत्तर-पूर्वी सीमा निचली केन बनाती है।

आर्कियोलॉजी सर्वेरिपार्ट, बाल्यूम २१ ए०कनिंधम में पृ.सं० ८२ के आधार पर- बाँदा के उत्तर पूर्व में चिल्ला नामक ग्राम से आल्हा ऊदल का निवास खोजा गया है। चंदेलों के समय में बाँदा के अधि ाकांश भाग पर बुन्देली प्रभाव रहा। बाँदा जिले के उत्तर पश्चिमी भाग में बुन्देली भाषा व संस्कृति का प्रभाव पाया जाता है। प्राचीन काल में बाँदा चेदि में सम्मिलित नहीं था, भारशिवों और नवनागों के साम्राज्य से बाहर था और वाकाटको की संस्कृति यहाँ तक पहुँच नहीं पाई, लेकिन कालिंजर से चित्रकूट तक का भाग बहुत प्राचीन समय से ही इस संस्कृति का अंग रहा है। बुन्देलखण्ड के उत्तर-पूर्व में निचली केन की तटीय पट्टी का क्षेत्र, बाँदा जिले के नरैनी और करबी तहसीलों का क्रमशः दक्षिणी और दक्षिण-पश्चिमी भाग सम्मिलित हैं पूर्व में पन्ना और दमोह जिले तथा दक्षिण-पूर्व में जबलपुर जिले की पास और जबलपुर तहसीलों का क्रमबद्ध दक्षिणी व दक्षिण पश्चिमी भाग है। वह भाग मैकल श्रेणियों तक चला गया है जो कि बुन्देलखण्ड के अंतर्गत आता है। सोन व टोंस नदियों की उद्गम घाटी, जो नर्मदा की तरफ दक्षिण की ओर खुलती है और जिसमें पाटन, जबलपुर, मुड़वारा और सीहोर तहसीलें भी सम्मिलित हैं, में सभी बुन्देलखण्ड का क्षेत्र है।

निम्न विवेचन के आधार पर भौगोलिक, भाषिक, राजनैतिक व सांस्कृतिक मानकों पर बुन्देलखण्ड के जनपदों को सरलता से विभाजित किया जा सकता है।

अ- उत्तरप्रदेश- के झाँसी, ललितपुर, महोबा, बाँदा, हमीरपुर, चित्रकूट, जालौन जनपद आते हैं।

ब- मध्यप्रदेश- के छतरपुर, दतिया, पन्ना, टीकमगढ़, सागर, दमोह, शिवपुरी, ग्वालियर, भिण्ड, सतना, गुना, बिदिशा, मुरैना, छिन्दवाड़ा, नरसिंहपुर, जबलपुर, रायसेन, होशंगाबाद, बैतूल, सिओनी, मंडला, बालाघाट जनपद हैं।

यह प्राकृतिक सुस्पष्ट सीमा सभी दृष्टियों से एक जनपदीय ईकाई का निश्चित रेखांकन करती है, इस सीमांकन के आधार पर उत्तरप्रदेश व मध्यप्रदेश के २९ जनपदों में प्रसारित भू-भाग बुन्देलखण्ड है।

१.३ - राजवंश का संक्षिप्त इतिहास-

बुन्देलखण्ड के इस भू-भाग में महाजनपद युग से लेकर उत्तर मध्यकाल तक साहित्य वास्तु, मूर्तिकला, चित्रकला, संगीत और नाट्य आदि का सृजन बड़े रुपों में हुआ। बुन्देलखण्ड में राजवंश के इतिहास में यहाँ पर मौर्य, शुंग, नाग, गुप्त, गुर्जर-प्रतिहार, चंदेल आदि राजाओं ने राज्य किया। इस समय इस भू-भाग का गौरव उच्च्व शिखर तक पहुँचा। भारतीय इतिहास में गुप्त शासनकाल 'स्वर्णयुग' के नाम से प्रसिद्ध है। उस समय नचना, झुमरा, खोह, ऊपेहरा आदि स्थल भारतीय कला के प्रमुख केन्द्र बने। गुप्त राजाओं के समय कला में चारुता को प्रमुख स्थान दिया गया।

बुन्देलखण्ड क्षेत्र से जुड़े विषय पर राजवंश के इतिहास पर क्रमबद्ध ध्यान देना आवश्यक है। अतः क्रमशः कौन-कौन से शासक हुए और उनकी वंश परम्परा कैसी रही, किस शासक के समय राज्यकाल कैसा रहा यह जानना अति आवश्यक है। इससे पहले प्राचीनकाल को देखना आवश्यक है।

"अत्यंत प्राचीनकाल लगभग ५०,००० वर्ष पूर्व केन, बेतवा, पयस्वनी, बागें चम्बल तथा इनकी सहायक नदियों के तटों पर कोल, गोंड़, पुलिंद, शबर, बहेलिया, कौन्दरा, गुरिन्दा सौर आदि जातियाँ स्वतंत्रतापूर्वक घने वनों में निवास करती थीं। इनका आहार वनोपदन-शहद, कंदमूल, फल-फूल तथा वन्य पशु थे। इनका सामाजिक जीवन पशुवत था। कालांतर में पूर्व और मध्यवर्ती पाषाण युग में अस्त्र-शस्त्रों का प्रयोग प्रारंभ हो गया जो भद्र्दे, भारी और फेंकने में कष्टसाध्य थे। इस प्रकार के पाषाण काल में अस्त्र सागर, ललितपुर, पन्ना, बाँदा, चित्रकूट, हमीरपुर आदि जनपदों में नदियों के किनारे भारी मात्रा में प्राप्त हैं। उत्तर पाषाण युग के अस्त्रों साथ शैलाश्रय भी उक्त स्थानों में दृष्टव्य है। चरखारी के समीप इस सभ्यता के चिन्ह प्राप्त होने की संभावना प्राप्त होती है।"१

बुन्देलखण्ड 'विन्ध्य हिमालयोर्मध्य देशः अथवा मनु स्मृति के अनुसार हस्तिनापुर से दक्षिण पूर्व तथा प्रयाग से पश्चिम का देश है। यहाँ पर आर्यों के अलावा शक, सीथियन, हूण, कल्चुरि, गुर्जर, प्रतिहार, परमार, राठौर, राष्ट्रकूट, चौहान, तुर्क अफगानों के साथ-साथ त्रिपुरी, जबलपुर, मालवा, गुजरात नरेश सभी के सैन्य अभियानों का सामना दृढ़तापूर्वक करना पड़ा।

१५०० ईसापूर्व तक भगवान परशुराम के काल में आदिकवि बाल्मीकि, अत्रि, अनुसुइया, अगस्त्य,

---

१. बुन्देलखण्ड का साहित्यिक ऐतिहासिक सांस्कृतिक वैभव -डा० रमेश चन्द्र श्रीवास्तव (पृ० संख्या - १५४)

सुतीक्षण, मार्कण्डेय, भरद्वाज, शरभंग, पाराशर, वेदव्यास आदि के आश्रम जलाशय पर्वत उपव्यकाओं में स्थापित थे। समस्त आश्रम विद्या एवं आर्य संस्कृति के केन्द्र बिन्दु थे। ऋग्वैदिक काल में यमुना नदी के दक्षिणी तट पर स्थित बसु या कसु चैद्य का विवरण प्राप्त है जो चेदि वंशीराजा था और अपनी दानशीलता के लिए प्रसिद्ध था।

रामायण काल में चित्रकूट कालींजर का क्षेत्र दण्डकारण्य के अंतर्गत था। यहाँ पर यत्र-तत्र ऋषियों के आश्रम थे, उनके चारों ओर जनजातियां- कोल, निषाद, शबर, पुलिंद आदि निवास करते थे। द्वापर युग में चेदि प्रदेश राजा शिशुपाल तथा दंतवक्र के अधीन था। शिशुपाल की राजधानी चंदेशी तथा दक्षिणी प्रदेश शुक्तिमती थी। महाकाव्य तथा जैनकाव्य में उत्तरी भारत १६ महाजनपदों में विभक्त था। उनमें से चेदि, दशार्ण, वत्स के भू-भाग बुन्देलखण्ड में स्थित थे। दशार्ण धसान नदी के समीप का भू-भाग था। सुधर्मा, हिरण्यवर्मा की राजधानी विदिशा थी। दशार्ण की राजकुमारी से शिखंडी का विवाह हुआ। पांचाल के आधीन ग्वालियर से केन नदी का प्रदेश था। यमुना नदी के किनारे के भू-भाग को 'वत्स' कहते थे, तथा कौशाम्बी इसकी राजधानी थी।

सम्राट चन्द्रगुप्त का शासन सम्पूर्ण उत्तरी भारत में था। सम्राट अशोक पाटलिपुत्र से २५६ दिन की धर्मयात्रा करते हुए गुजर्रा (दतिया) में सिंहासनासीन होने के तेरहवें वर्ष में ईसापूर्व २५७ में पधारे थे। सम्राट अशोक का नाम इस शिलालेख में देवानामप्रिय अंकित है। यहाँ के निवासी शाक्त मत के समर्थक होने के कारण पशुबलि, नरबलि देते अंहिसा उनके लिए त्याज्य था। इस समय की जनजातियां अधिकांश मद्यपी व मांसाहारी थीं। यहाँ के लोग हिंसा लूट-पाट में संलग्न रहते थे।

आर्य सभ्यता का प्राचीन केन्द्र एरन या एरिकेण है। पाण्डुवंशीय राजाओं ने हस्तिनापुर के स्थान पर यमुना नदी के तट पर स्थित कौशाम्बी को अपनी राजधानी बनाई। पुरुरवा और ऐल के प्रपौत्र ययाति ने मध्य देश जीत लिया इनके पाँच में से ज्येष्ठ पुत्र यदु को चर्मण्यवती, वेत्रवती और शुक्तिमती नदी के बीच का प्रदेश प्राप्त हुआ। चेदिवंशीय यादवों को कुरुवंशीय वसु ने हराया। इनकी राजधानी शुक्तिमती थी। बाहु और सुबाहु इसी वंश में उत्पन्न हुए। निषेध के नल की पत्नी ने सुबाहु के पास शरण ली। दमयन्ती की प्राप्ति राजा नल को चित्रकूट के पास हुई। चेतिय जातक के अनुसार उपचर के पाँच पुत्र थे। इनको मान्धाता का वंश कहा गया। चेदि में वितिहोत्र शासक थे। इनकी राजधानी सुत्थिवती थी। राजा युधिष्ठिर के पुत्र इस क्षेत्र के अधिपति थे। एरच के शासक दाम मित्र का ब्राह्मी लिपि

में इष्टिकाभिलेख ईसापूर्व प्रथम शती में प्राप्त हुआ है। इन्होंने अश्वमेघयज्ञ सर्वमेघयज्ञ सम्पन्न किये थे तथा इनकी वंशावली प्राप्त हुयी। 'मित्र' नामधारी शासकों का राज्य ईसापूर्व द्वितीय शती में था। उनका केन्द्रबिन्दु कौशाम्बी था।

मौर्यवंश के पतन के बाद ब्राह्मण वंशीय राजाओं का आधिपत्य बढ़ा जिनमें शुंग, काण्ड और शातवाहन प्रमुख थे। इनका राज्यकाल १८४ ई०पू० से ७८ ई० तक रहा। कहा जाता है कि पुराण व स्मृतियों की रचना इसी काल में हुयी थी। बुन्देलखण्ड में नागवंशीय क्षत्रियों का उदय कुषाणों के उदय के साथ हुआ। नाग राज्य एक संघ राज्य था तथा ये शैवमतावलम्बी थे।

वाकाटकों का राज्य पश्चिमी बुन्देलखण्ढ में ३०० ई० में ५२० ई० के मध्य था। वाकाटकों का उद्भव बाघाट वेतवा नदी के तट पर माना जाता है। इस वंश के प्रतापी राजा भीमसेन ने विन्ध्यशक्ति की उपाधि धारण की और पूर्वी बुन्देलखण्ड के भूभाग को जीत लिया। इनका युद्ध समुद्रगुप्त से हुआ। गुप्त राजाओं ने धसान, केन, वेतवा नदी के मध्य का क्षेत्र इनके अधीन हो गया। नागवंशीय राजकुमारी से प्रवरसेन का विवाह हुआ। रुद्रसेन द्वितीय ने चंद्रगुप्त द्वितीय की पुत्री से विवाह किया। इस वंश के अंतिम राजा हरिषेण हुए। समूचा बुन्देलखण्ड २६० ई० से ४०० ई० तक गुप्त राजाओं के आधीनस्थ था। बुन्देलखण्ड का शेष भाग नागों और वाकाटकों के अधीन था।

गुप्तवंश के पतन के पश्चात् देश अनेकानेक स्वतंत्र राज्यों में विभक्त हो गया। कल्चुरि (कल्प-मदिरा, चुरी-चुराने वाले) प्राचीन जाति हैं। इनका संबंध रामायण काल में सहस्त्रार्जुन, महाभारत काल में हैहय तथा चेदि से जुड़ा हुआ है। कल्चुरि नरेश प्रथम (कृष्ण प्रथम) ने कालिंजर पर अधिकार कर कालींजरपुराधीश्वर तथा दहाला-विड़ंगा की उपाधि ग्रहण की।

कन्नौज के प्रतिहार नरेशों ने कल्चुरियों से सत्ता छीन ली। सागर जनपद सं० ६१६ वि० में कन्नौज के अधीन था। नागभट्ट ने कौशाम्बी के वत्स नरेशों को पराजित कर बाँदा जनपद का पूर्वी भाग प्राप्त कर लिया। नागभट्ट की मृत्यु के पश्चात् उत्तराधिकार युद्ध में चंदेलवंश के प्रथम शासक नन्नुक ने रामभद्र के निर्बल शासन से मुक्त होकर स्वतंत्र राज्य लगभग सन् ८३० ई० में स्थापित किया। उसने नृपति महीपत की उपाधि धारण कर सन् ८५० ई० तक राज्य किया। उसका राज्य खजुराहो महोबा तक ही था।

चंदेलवंश के विकास की प्रारम्भिक अवस्था में नन्नुक चन्देल का महत्वपूर्ण योगदान रहा। नन्नुक

का दूसरा नाम चन्द्रवर्मा था। इनका राज्यकाल ८२५ से ८४० तक माना जाता है। इसके बाद इनका उत्तराधिकारी वाक्यपति का शासनकाल ८४५ से ८६५ तक रहा। वह बड़ा वीर एवं साहसी था। वाक्यपति ने विन्ध्य की ओर अपनी शक्ति का प्रदर्शन किया। चंदेलवंश में वाक्यपति के पश्चात् उसके दो पुत्र जयशक्ति या जेजा और विजय शक्ति प्रसिद्ध हुए। वे अपने पराक्रम और कुशाग्रबुद्धि के लिए अत्यंत प्रसिद्ध थे। इनका काल ८६५ से ८८५ तक माना जाता है। जयशक्ति ने अपने नाम पर राज्य का नाम जेजाकभुक्ति रखा, यह महोबा के एक अभिलेख में अंकित है। जयशक्ति और विजयशक्ति चंदेल राज्यकाल इतिहास में अत्यंत प्रसिद्ध है। विजयशक्ति का उत्तराधिकारी पुत्र राहिल का शासन ८८५ से ९०५ ई० तक था। वह बहुत ही वीर एवं पराक्रमी योद्धा था और शत्रु उसका लोहा मानते थे।

धीरे-धीरे परिस्थितयां अनुकूल होती गई और राहिल का पुत्र हर्षदेव चन्देलवंश का महत्वपूर्ण राजा बना। हर्षदेव का शासनकाल ९०५ से ९२५ ई० तक रहा। चन्देल साम्राज्य के वैभव का विकास इन्हीं के काल से प्रारम्भ होता है। हर्षदेव के पुत्र यशोवर्मन द्वारा चन्देल शक्ति का विकास अधिक हुआ। यशोवर्मन ने अपने पिता की नीति का अनुसरण किया और विशाल साम्राज्य का विस्तार किया। खजुराहो अभिलेख के अनुसार यशोवर्मन ने कालिंजर के पर्वत को जीत लिया अपने पड़ोसियों से सफलतापूर्वक युद्ध किया और विष्णु के सुहावने चमकीले मंदिर का निर्माण कराया जो बर्फीले पहाड़ की चोटियों को चुनौती देता है। यशोवर्मन ने चन्देल साम्राज्य के विकास में अपूर्व योगदान दिया है। उसने गौड़, चेदि, कुरु, खज, कौशल, मालवा, कश्मीर तथा गुर्जरों पर विजय प्राप्त की। यशोवर्मन का पुत्र राजा धंग चंदेलवंश का कुशल योद्धा था। धंग का शासनकाल ९५० से १००२ ई० तक रहा। राजा धंगदेव ने अनेकों लड़ाईयों में विजय प्राप्त कर अपने राज्य का विस्तार किया। उसके राज्य की सीमा कालिंजर से मालवा नदी तक, मालवा से कालिन्दी, कालिन्दी से चेदि, तथा चेदि से ग्वालियर तक थी। धंगदेव पराक्रमी योद्धा होने के साथ दानी, विवेकी, बुद्धिमान और कलाप्रेमी था। चंदेल अभिलेखों के अनुसार धंग महमूद के तुल्य ही शक्तिशाली था। चंदेल नरेश धंग साहित्य, स्थापत्य आदि कलाओं का संरक्षक था। विश्वनाथ मंदिर राजा धंग की स्थापत्य कला की रुचि का महत्वपूर्ण उदाहरण है। उसके शानकाल के समय तीन मंदिरों का निर्माण हुआ। १. विश्वनाथ मंदिर २. पार्श्वनाथ मंदिर ३. बैद्यनाथ मंदिर। वीर राजा धंग पराक्रमी योद्धा, कुशलशासक, भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता का पुजारी एवं कला प्रेमी था।

राजा धंग का पुत्र गंडदेव (९९९ से १०२५ ई० तक) उसी के समान प्रतापी राजा था। वह दूरदर्शी राजनीतिज्ञ था। उसने महमूद गजनबी के आक्रमणों को रोकने के लिए राजाओं के साथ संयुक्त रुप से मुकाबला करने के लिए अपने पुत्र को जयपाल के सहायतार्थ भेजा किंतु कन्नौज नरेश राज्यपाल की कायरता से योजना सफल न हो सकी। विद्याधर ने जयपाल का वध कर त्रिलोचनपाल को राजा बनाया। महमूद ने ग्वालियर तथा कालिंजर पर चढ़ाई की लेकिन विजय प्राप्त न कर सका, समानता की संधि हो गयी। गंडदेव के पश्चात् उसके पुत्र विद्याधर (१०२५से१०४०ई०तक) गद्दी पर आसीन हुआ। विद्याधर ने युद्ध की राजनीति के अलावा कला और साहित्य के प्रति अपनी वंश परम्परा का निर्वाह किया। एक अभिलेख के अनुसार विश्व के अनन्य उपासक के रुप में चंदेलवंशी नृपति विदित था जिसे कि विद्याधर माना जा सकता है। विद्याधर की मृत्यु के बाद चंदेल शासकों का ध्यान अधिकांश तथा महोबा, अजयगढ़ और कालिंजर की ओर आकर्षित हुआ जहाँ से मुसलमानी आक्रमणों का मुंह तोड़ उत्तर दे सकते थे।

चंदेलों के अंतिम शासकों में से विजयपाल, कीर्तिमान, मदनवर्मन आदि ने राज्य को विकसित व निर्माण की परम्परा को स्थापित करने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। विद्याधर का पुत्र विजयपाल (१०४०से१०५०ई०) शांतिप्रिय निर्बल शासक था। देववर्मा मात्र दो वर्ष राज्य कर पाया। कीर्तिवर्मा (१०५३से११००) ने खोई हुई प्रतिष्ठा को पुनः प्राप्त करने का प्रयास किया। इसके पश्चात् सलक्षवर्मा ने (सन् ११०० ई० से १११० ई०) शासक पद संभाला। उसने खजुराहो में अनेक मंदिरों का निर्माण कराया और सलक्षणपुर बसाया।

महाराजा परिमाल चंदेलकाल के चन्देली महाकवि 'जगनिक' ने महाकाव्य 'आल्हाखण्ड' में चंदेली वैभव, पराक्रम तथा सेना नायकों आल्हा ऊदल की वीरता और रणकुशलता का यशस्वी वर्णन किया है । इसी वंश में महोबा के अंतिम राजा परिमाल चंदेल हुए। इनका जन्म स्थान कालिंजर है। परमालदेव सन् ११६५ ई० में गद्दी पर बैठे। उरई के प्रतिहारों को अस्तित्वविहीन कर माहिल की बहिन मल्हना देवी से विवाह किया। प्रसिद्ध वीर आल्हा, भाई ऊदल तथा पुत्र इंदल आदि अज्ञेय योद्धा थे। कुंडार में खूब सिंह, खंगार, नायब किलेदार थे। माहिल ने परमालदेव से चुगली कर आल्हा, भाई ऊदल को महोबा से निष्कासित करा दिया। उन्होंने कन्नौज के राजा जयचन्द्र का आश्रय लिया। माहिल ने पृथ्वीराज चौहान को आक्रमण का प्रस्ताव भेज दिया। सन् १८८२ ई० में परमालदेव एवं पृथ्वीराज का

युद्ध महौनी (उरई) में हुआ। जिसमें दिल्ली नरेश पृथ्वीराज चौहान की जीत हुई। पृथ्वीराज महोबा मदनपुर आदि को लूटता हुआ दिल्ली लौट गया। राजा जयचन्द्र ने कालिंजर पर आक्रमण किया लेकिन असफलता प्राप्त हुई। इस आक्रमण से परमाल शक्ति कमजोर पड़ गयी। १२०२ ई० में परमाल की मृत्यु हो गयी। सन् १२०३ ई० में कुतुबुद्दीन ऐबक ने कालिंजर पर आक्रमण किया। किले की जल व्यवस्था को नष्ट कर किले को जीत लिया। परमाल के शासनकाल का विवरण सेमरा, इछावर, महोबा, चरखारी, मदनपुर के शिलालेखों में प्राप्त है।

"त्रिलोकवर्मन ने सन् (१२०३-४५) में शाही सेना वापस होते ही कालिंजर पर अधिकार कर लिया। त्रिलोकवर्मा के उपरान्त वीरवर्मा, भोजवर्मा, हम्मीरवर्मा का उल्लेख मिलता है। हम्मीरवर्मा ने हमीरपुर बसाया। इसके उपरान्त चन्देलशासकों की स्थिति क्रमशः गिरती गयी। चन्देलों के शासन का अंत सन् १३१० ई० में समाप्त हो गया। बुन्देलों ने उन्हें मिर्जापुर, बरदी, खटाई (म०प्र०) होते हुये बिहार की ओर प्रस्थान करने के लिए विवश किया। चंदेलों की जगह की पूर्ति बघेलों और बुन्देलों ने की। बघेलों ने बघेलवारी को केन्द्र बनाया। बघेलों ने अपना केन्द्र रीवा बनाया। इनकी प्रारम्भिक राजधानी बान्धवबढ़ बनी जो कालांतर में रीवा हस्तान्तरित हो गई ।

बुन्देले मूल रुप से कन्नौज के गहड़वाल या गहरवार की एक शाखा है जो बिन्धेलखण्ड मे आने के कारण बुन्देले कहलाये। काशी राज्य के एक राजकुमार हेमकरण ने असन्तुष्ट होकर विन्ध्यवासिनी देवी की शरण में आकर पांच बार अनुष्ठान किया औा पंचमनाधारी बनकर सन् १०४८ ई० गहोरा की ओर प्रस्थित हुआ। हेमकरण ने अपनी स्थिति को सुदृढ़ कर उसने महौनी (उरई) पर आक्रमण कर एक राज्य की स्थापना की। हेमकरण की मृत्यु सन् १०७१ में हो गई। महौनी को केन्द्र बनाकर वीरभद्र तथा कर्णपाल ने शासन किया। सोहनपाल ने गढकुंडार के खंगारों से छलपूर्वक (असन्तुष्ट सरदारों के सहयोग से) राजा को सपरिवार समाप्त कर कब्जा कर लिया। सन् १२५७ई० में उन्होंने इसे अपनी राजधानी बनाया। गुलामवंश के पतनकाल में निकटवर्ती क्षेत्र जीत लिए। उन्होंने चंदेलों की निर्बल सत्ता को महोबा से उखाड़ फेंका। अलाउद्दीन खिलजी ने सम्पूर्ण उत्तरी भारत को जीत लिया। गढ़कुंडार पर आक्रमण कर मोहम्मद तुगलक ने उसे नष्ट कर दिया। तैमूर लोगों के आक्रमण से केन्द्रीय सत्ता निर्बल वंश के हो गयी। इसका लाभ बुन्देलों ने राज्य विस्तार के माध्यम से उठाया तथा कालिंजर तक का क्षेत्र ले लिया।

इस समय सत्ता संघर्ष का क्षेत्र कालपी बन गया। जौनपुर, कन्नौज, मालवा, गुजरात सभी की गिद्ध दृष्टि इस ओर केन्द्रित हुयी। कालपी के मलिकजादा शासकों ने साहित्य की समृद्धि की। लोदीवंशीय सत्ता प्राप्त एवं सत्ताच्युत राजकुमारों का केन्द्र कालपी बना रहा। बुन्देलखण्ड ने अपनी राजधानी गढ़कुंडार से स्थानान्तरित कर ओरछा बना ली जो कालांतर में बुन्देलखण्ड की कला और संस्कृति का अप्रतिम केन्द्र बन गया।"२

"चंदेलों के पराभव के बाद और मुस्लिम शासन काल के मध्य इस प्रदेश में बुन्देलों की सत्ता का उदय हुआ। जिसके कारण यह प्रदेश बुन्देलखण्ड नाम से प्रसिद्ध हुआ। विन्ध्याचल पर्वत के अंचल में बसा हुआ यह प्रदेश पहले विन्ध्येल, फिर बिंदेल और बाद में बुन्देलखण्ड के नाम से प्रसिद्ध हुआ। अन्य मान्यताओं के अनुसार बुन्देलों की उत्पत्ति भगवान रामचन्द्र के वंशजों से हुई इसी वंश में वि० सं० ७३१ में गहरवार राजा कर्तराज हुये, जिन्होंने काशी में दिवोदस नामक राजपूत राजा से युद्ध जीतकर काशी पर अधिकार कर लिया। राजा कर्तराज ने अपने राज्य को शनि के प्रभाव से मुक्त करने के लिए एक गृह निवारण यज्ञ करवाया, जिसके कारण वे ग्रह निवार कहलाये। जो बाद में गहरवार में परिवर्तित हो गया। कर्तराज के बाद उनके पुत्र मिहिरदेव तत पश्चात् उनके पुत्र वीरभद्र राजा बने। वि० सं० ११०५ में वीरभद्र की मृत्यु के पश्चात् उनके सबसे छोटे पुत्र पंचम शासक बने वे अपने पांच भाईयों में सबसे छोटे थे किन्तु सबसे योग्य थे। अन्य भाईयों के हिस्से में छोटी-छोटी जागीरें आईं। भाईयों को यह बँटवारा स्वीकार नहीं था। इस कारण उन्होंने मिलकर राजा पंचम पर आक्रमण कर दिया तथा उन्हें राज्य से निष्कासित कर दिया। राजा पंचम विन्ध्यवासिनी देवी के मंदिर में जाकर आराधना करने लगे। देवी के आशीर्वाद से संवत ११९३ में हुए युद्ध में राजा पंचम विजयी हुये। उनके वंशज बुन्देला के नाम से प्रसिद्ध हुए। राजा पंचम की मृत्यु के पश्चात् सं० ११२८ (सन्१०७१) ई० में उनके पुत्र वीरसिंह राजा बने। उन्होंने लगभग १६ बर्ष तक राज्य किया। उन्होंने राज्य का विस्तार किया और महौनी को अपनी राजधानी बनाया। उनके वंश में तीसरी पीढ़ी में राजा सोहनपाल ने सं० १३१३-१४ (सन्१२५७ई०) में खंगार राजा हुरमत सिंह को हरा कर गढ़कुण्डार पर अधिकार किया तथा उसे अपनी राजधानी बनाया। राजा सोहनवाल की मृत्यु के बाद उन्हीं के वंश के राजा मलखान सिंह ने साम्राज्य विस्तार के उद्देश्य

---

२. बुन्देलखण्ड का साहित्यिक ऐतिहासिक सांस्कृतिक वैभव -डा० रमेश चन्द्र श्रीवास्तव (पृ० संख्या - १६०)

से सन् १४७८ ई० में बहलोल लोदी से युद्ध किया। मलखान सिंह की मृत्यु के पश्चात् रुद्रप्रताप ने अपना प्रभाव बढ़ा लिया। बैशाख सुदी ३ सं० १५८८ को रुद्रप्रताप देव ने अपनी राजधानी गढ़कुण्डार से ओरछा स्थानान्तरित की। उनके शासनकाल में ओरछा में बुन्देलों का महत्व बढ़ता गया।"३

सन् १५३१ ई० में राजा रुद्रप्रताप देव शेर के पंजे से गाय को छुड़ाने में बुरी तरह से घायल हो गये थे और कुछ दिन बाद उनकी मृत्यु हो गई थी। राजा रुद्र प्रताप देव के बारह पुत्र थे- भारतीचन्द्र, मधुकरशाह, उदयाजीत, कीरतशाह, भूपतशाह, अमानदास, चंदनदास, दुर्गादास, घनश्यामदास, प्रयागदास, भैरवदास और खंडेराय। सन् १५३१ से सन् १५५४ ई० तक भारतीचन्द्र ने ओरछा में शासन किया। पारिवारिक विवाद के कारण प्रतापदेव की दूसरी रानी मेहरबान कुंवर अपने पुत्र उदयाजीत (रुद्र प्रताप के तीसरे पुत्र) को साथ लेकर कटेरा में रहने लगी। वही पर उदयाजीत ने महोबा राज्य की स्थापना की। उन्हीं के वंशज चम्पतराय और छत्रसाल ने आगे चलकर पन्ना तथा छतरपुर तक बुन्देलों की शक्ति का प्रसार किया।

"वीर छत्रसाल बुन्देला बुन्देलखण्ड की आलौलिक विभूति थे। वे आलौकिक प्रतिभा के धनी थे। इतिहासकारों के मतानुसार वे बुन्देला स्वातन्त्रय युद्ध के प्रथम और अमर सेनानी थे। उन्होंने मुगलों की दासता कबूल नहीं की और पन्ना राज्य संघर्षों के बीच अलग से बना। वीर छत्रसाल ने वंगश से युद्ध करने के लिए पेशवा का सहयोग प्राप्त किया था। अतः उन्होंने जब अपने पुत्रों में राज्य का विभाजन किया तो पेशवा के सामंत को गुरसरांय आदि की गढ़ी दे दी। छत्रसाल ने पेशवा को अपना दत्तक पुत्र घोषित कर राज्य का तिहाई भाग का उत्तराधिकारी बताया। ४ दिसम्बर १७३१ ई० को ८१ वर्ष और ७ माह की आयु में वीर बुन्देला तथा वीरता का धनी इस संसार से सदैव के लिए उठ गया परन्तु उनके वैभव के गान बुन्देलखण्ड के कण-कण में आज भी गुंजित हो रहे हैं।"४

भारतीचन्द्र के पश्चात् ओरछा के राजा मधुकर शाह हुये। इनका अकबर साथ संघर्ष चला। ओरछा का सबसे अधिक विस्तार मधुकरशाह के शासनकाल में हुआ। गणेश कुंवरि इनकी रानी थीं। ये राम की अनन्य भक्त थीं। कहा जाता है कि वे राम को अयोध्या से लेकर आई थीं उन्होंने ओरछा में राम राजा

---

३. बुन्देलखण्ड की लोकचित्रकला - डा० श्रीमती मधु श्रीवास्तव (पृ० संख्या - ५-६)

४. बुन्देलखण्ड दर्शन - मोतीलाल त्रिपाठी 'अशान्त' (पृ० संख्या- ७६)

की स्थापना की। इन्हीं के वंश में बाद में वीरसिंह देव प्रतापी राजा हुये। वीरसिंह देव का नाम अबुल फजल का वध करने के कारण सम्पूर्ण बुन्देलखण्ड में प्रसिद्ध हुआ। ये जहांगीर के समकालीन थे। वीरसिंह देव के शासनकाल में सन् १६०५-२७ ई० में ही ओरछा में जहाँगीर महल का निर्माण हुआ। इस महल को हिन्दू-मुस्लिम स्थापत्य कला का बेजोड़ नमूना कहा जाता है। वीरसिंह जूदेव प्रथम वि०सं० १६६० में पूरे बुन्देलखण्ड का राजा घोषित किया गया। वे प्रजा पालक, धार्मिक एवं जनप्रिय शासक थे। देवसिंह जूदेव का देहावसान वि०सं० १६८२ में हुआ। इनके पुत्र जुझार सिंह, हरदौल, पहाड़सिंह, चन्द्रभान, माधौसिंह, भगवानराय, नरहरदास, और बेनीदास थे। इनके बड़े पुत्र जुझार सिंह गद्दी पर बैठे। इनके भाई हरदौल सेना नायक के पद पर आसीन रहे। दोनों भाईयों की वीरता से इस प्रान्त में शौर्य की पताका फहरती रही। हरदौल ने अपने भाई के भ्रम को दूर करने के लिए अपनी भावी के हाथों सहर्ष विष का पान कर अपने आप को बलिदान किया।

राजा जुझारसिंह की मृत्यु के बाद सात वर्ष तक मुस्लिम शासन रहा। वि०संवत् १६६८ ई० में वीरसिंह देव के तीसरे पुत्र पहाड़सिंह राजा के पद पर आसीन हुए। संवत् १७२० में पहाड़सिंह की मृत्यु हो गई। बुन्देलों में फूट पड़ जाने से पन्ना, दतिया आदि अनेक स्वतंत्र राज्य स्थापित हुए। इसके बाद ओरछा में अनेक शासक बदलते रहे। सुजानसिंह, इन्द्रमणि, यशवन्त सिंह, भगवन्त सिंह, उद्योतसिंह, हेरसिंह, मानसिंह, विक्रमाजीत, धर्मपाल, तेजसिंह, सुजानसिंह, हम्मीरसिंह, प्रतापसिंह और सवाई महेन्द्र वीर सिंह जूदेव द्वितीय। महेन्द्रवीर सिंह जूदेव ओरछा के अंतिम शासक थे। इनके शासनकाल में बुन्देलखण्ड की कला, संस्कृति व साहित्य का विकास हुआ। इस क्षेत्र में स्वतंत्रता के युद्ध में मराठों का योगदान बढ़-चढ़ कर रहा। महाराज छत्रसाल को बाजीराव पेशवा ने मुगलों से मुक्त कराया । १७३० में मराठों व बुन्देलों ने मिलकर मुगलों को परास्त किया ।

१७८१ में दिल्ली के सुल्तान ने पेशवा को सनद दी जिससे सम्पूर्ण भारत में मराठों को चौथ वसूलने का अधिकार मिल गया । इनको बुन्देलखण्ड पर अधिकार मिल गया । इस समय अंग्रेज भारत पर पैर जमा चुके थे। शमशेर बहादुर की सेना तथा अंग्रेजों की सेना में १८०३ में केन नदी के किनारे युद्ध हुआ । शमशेर बहादुर की पराजय होने से बुन्देलखण्ड पर अंग्रेजों का अधिपत्य स्थापित हो गया ।

प्रसिद्ध इतिहासकार सुरेन्द्र नाथसेन के अनुसार- सन्१८३८ में गंगाधर राव को झाँसी का राजा घोषित

कर दिया गया । सन् १८५० में मनुबाई से इनका पाणिग्रहण संस्कार हुआ । सन् १८५१ में पन्द्रह वर्ष की आयु में उनको पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई । चार माह पश्चात् उस बालक का निधन हो गया । २१ नबम्बर सन् १८५३ में महाराजा गंगाधरराव संसार सागर से विदा हो गए । राजा गंगाधरराव ने अपने जीवनकाल में ही अपने परिवार के बालक दामोदर राव को दन्तक पुत्र मान लिया था । अंग्रेजों ने दन्तक पुत्र की प्रथा समाप्त कर दी थी । इस पुत्र का अंग्रेजों ने कड़ा विरोध किया । पर रानी ने इनकी एक न सुनी। २७ फरबरी सन् १८५४ ई० को लार्ड डलहौजी ने (Doctrine of Lapse) गोद नीति के अंतर्गत दत्तक पुत्र दामोदरराव को अस्वीकृत कर झाँसी को अंग्रेजी राज्य में मिलाने की घोषणा कर दी। रानी ने अंग्रेजों से युद्ध लड़ने की चुनौती स्वीकार की । भारत के प्रथम स्वाधीनता संग्राम में अंग्रेजों के विरूद्ध रानी ने आन्दोलन छेड़ दिया । बानपुर, शाहगढ़ तथा बांदा आदि रियासतो ने भी उनका साथ दिया । १८ जून १८५८ को ग्वालियर का अंतिम युद्ध हुआ और महारानी ने सेना का कुशल नेतृत्व किया । इस युद्ध में महारानी घायल हो गई और युद्ध में उन्होनें वीरगति प्राप्त की ।

झाँसी के वंशजों का नाम रानी ने अपनी वीरता, त्याग, बलिदान एवं देश के प्रति समर्पण की भावना को प्रकट कर सदा-सदा के लिए स्वर्ण अक्षरों में अंकित कर दिया । बुन्देलखण्ड भी विदेशों में झाँसी की रानी की वीरता के कारण ही जाना जाता है, क्योंकि उन्होनें एक स्त्री होते हुये भी डर कर अंग्रेजों का सामना किया और अंत में वीरगति को प्राप्त हुई । झाँसी की रानी की समाधि के संबंध सुभद्रा कुमारी चौहान की कुछ पंक्तियाँ निम्न है-

" इस समाधि में छिपी हुई एक राख की ढेरी ।

जिसने जलकर स्वतंत्रता की दिव्य आरती फेरी ।।"

डा० बृन्दावन लाल वर्मा ने अपने सुप्रसिद्ध उपन्यास "झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई" में अपने निम्न विचार प्रकट किये- " रानी लक्ष्मीबाई स्वराज्य के लिए लड़ी । वह स्वतंत्रता के युद्ध में एक अमर सेनानी थी । उनका जीवन देश के लिए था और इस स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए किए गए प्रथम स्वतंत्रता के युद्ध में लड़ते-लड़ते अपने प्राणों का उत्सर्ग कर गई।"

प्रसिद्ध इतिहासकार सुरेन्द्रनाथ सेन के अनुसार- "नाना साहब के बाद १८५७ के स्वतंत्रता संग्राम के सर्वद्रोहियों में रानी लक्ष्मीबाई प्रमुख नेतृत्व करने वाली पहली नारी थी और उन्होनें युद्ध क्षेत्र

में एक वीर योद्धा की मृत्यु पाई।"

वीर मर्दनसिंह बुन्देला आरेछा नरेश महाराजा रामशाह की ग्यारहवीं पीढ़ी में थे। उनके पिता का नाम प्रहलाद था। १८ वर्ष राज्यच्युत रहने के बाद राजा मोद प्रहलाद बानपुर के राजा हो गए और उन्होनें अपना कार्यभार युवराज मर्दनसिंह को सौंप दिया। सन् १८४२ ई० में मोद प्रहलाद का निधन हो गया और राजा मर्दनसिंह वानपुर की गद्दी पर आसीन हुए। ये कुशल योद्धा और योग्य प्रशासक थे।

बुन्देलावीर राजा मर्दन सिंह महारानी लक्ष्मीबाई के प्रमुख सलाहकार और सक्रिय सहयोगी थे उन्होंने झाँसी, कोंच और कालपी के मोर्चों पर डटकर महारानी के साथ अंग्रेजों के विरुद्ध युद्ध किया।

"राजा मर्दनसिंह मुरार में गिरफ्तार हो गये और सन् १८५८ ई० मे लाहौर भेज दिया गया। उन्हें मासिक पेंशन सहस्त्र रुपये प्रदान की गई। और वृन्दावन में रहने की अनुमति भी मिल गई। २२ जुलाई सन् १८७६ ई० में उनका देहावसान हो गया।"५

भारत में धरे-धीरे राजवंशों की समाप्ति होती गई और अंग्रेजों का राज्य स्थापित हुआ। १५ अगस्त १९४७ को भारत आजाद हुआ। नवीन सरकारी नीतियां बनायी गयीं। २६ जनवरी १९५० ई० को भारत का संविधान लागू हुआ। धीरे-धीरे भारत में राजाओं महाराजाओं की वंश परम्पराओं का अंत हो गया। भारत में एक सरकारी राज्य की स्थापना हुयी।

---

५. बुन्देलखण्ड दर्शन - मोतीलाल त्रिपाठी 'अशान्त' (पृ० संख्या- ११०)

१.४ - सृजनशीलता एवं साहित्य प्रेम -

भारतीय साहित्य में बुन्देलखण्ड का महत्वपूर्ण स्थान रहा है।" **भारतवर्ष के उत्तरप्रदेश राज्य के दक्षिण का भू-भाग जो पुण्य सलिला महाभागे यमुना, नर्मदा, चम्बल, तमसा, वेत्रवती, दशार्ण नाम वाली नदियों के प्रवाहों से परिवेष्टित है, और राजनैतिक विग्रहों से जिनकी सीमाएं समय-समय पर विस्तृत तथा संकुचित होती रही है। आर्य संस्कृति में जीजाक भुक्ति, जीजभुक्ति तथा जुझौति आदि नामों से प्रतिष्ठित रहा है।"**१

'है धन्य धन्य बुन्देल भूमि, भारत भूतल की केन्द्र भूमि

निर्धन है, पर साहित्य धनी, सत्-सत् विभूतियों की जननी।'

(डॉ० सुरेन्द्र नारायण सक्सेना जी की काव्य पंक्तियाँ)

वैदिक काल से ही बुन्देलखण्ड साहित्य सृजन में अग्रणी रहा है। यहाँ पर बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न साहित्यकारों ने जन्म लेकर अपनी लेखनी द्वारा बुन्देलखण्ड की भारत में ही नहीं वरन् विदेशों में भी पहचान बनायी।

कविकुल महर्षि बाल्मीकि ने रामायण नामक महाकाव्य की संस्कृत में रचना कर भगवान श्रीरामचन्द्र जी के जीवन चरित्र का गुणगान किया। बाल्मीकि के पश्चात् बुन्देलखण्ड के कालपी नामक स्थान पर महाभारत नामक ग्रन्थ के रचयिता महाकवि वेदव्यास जी का जन्म हुआ। क्रमानुसार कृष्ण द्वैपायन, भवभूति, कृष्णपन्त मिश्र, पं० काशीनाथ जी आदि संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान इस धरा पर उपजे।

आदिकाल में बुन्देली के प्रथम आदि कवि जगनिक ने संस्कृत भाषा की रुढ़िवादी परम्परा तोड़कर लोक भषा में साहित्य सृजन करने की परम्परा प्रारम्भ की। सम्वत् १२३० में कवि जगनिक बुन्देलीकाव्य में आल्हाखण्ड की रचना कर लोकप्रिय हुए। आल्हाखण्ड वीररस की कविताओं से परिपूर्ण है। जगनिक के द्वारा प्रयुक्त काव्य शैली हिन्दी साहित्य में आल्हा शैली के नाम से प्रचलित हुयी जो बुन्देलखण्ड से विकसित होते हुए देश के प्रसिद्ध पूर्वी छोर तक पहुँची।

भक्तिकाल में गोस्वामी तुलसीदास का जन्म संवत् १५८९ में राजापुर नामक स्थान पर बाँदा

---

१. बुन्देलखण्ड की संस्कृति और साहित्य - रामचरण ह्यारण 'मित्र' (पृ० संख्या- २)

जिले में हुआ था। इनके पिता का नाम 'आत्माराम दुबे' माता का नाम 'हुलसी' था। गोस्वामीजी ने भारतीय जनता का सच्चे प्रतिनिधि के रुप में अपने प्रसिद्ध महाकाव्य 'श्रीराम चरितमानस' द्वारा प्रतिनिधित्व किया। **"तुलसीदास जी अपनी आलौकिक सर्वतोन्मुखी प्रतिभा और समन्वयकारी विलक्षण बृद्धि के बल पर जीवन के अंतराल में झांककर मानव जीवन की आंतरिक प्रवृत्तियों से ब्रह्म प्रकृति का सामंजस्य स्थापित करते हुए, आलौकिक कल्पना, जीवन की सत्यता लोक कल्याण की भावना, उज्जवल उदान्त कल्पना, अनुभूति क्षमता, विलक्षण प्रतिभा, काव्य चातुर्य और युग-युग का शाश्वत सत्य प्रदर्शित किया है। गोस्वामीजी ने रामचरित मानस में हर दृष्टि से समन्वय वादी प्रवृत्ति को अपनाते हुए लोकनायक का परिचय दिया है। आपने अनेकों काव्य ग्रन्थों का सृजन कर साहित्य जगत में अपनी अनूठी पहचान बनायी है।"२**

आचार्य शुक्ल के अनुसार गोस्वामी जी के रचना ग्रन्थों की संख्या १२ है। जो अवधी एवं ब्रजभाषा में है।

१. श्रीरामचरित मानस २. रामलला नहछू ३. कवितावली ४. दोहावली ५. गीतावली ६. विनयपत्रिका ७. श्री कृष्ण गीतावली ८. वैराग्य संदीपनी ९. राम प्रश्न १०. वरबै रामायण ११. पार्वतीमंगल १२. जानकी मंगल आदि।

मुंशी अजमेरी की बुन्देलखण्ड में जन्में साहित्यकारों के विषय में निम्न पंक्तियां हैं -

"तुलसी, केशव, लाल बिहारी, श्रीपति, गिरधार। रसनिधि, रायप्रवीन, भजन, ठाकुर, पद्ममाकर। कविता मंदिर कलश सुकवि कितने उपजाये। कौन गिनावे नाम जाँय किसके गुण गाये। यह कमनीया काव्यकला की नित्य भूमि है। सदा सरस बुन्देलखण्ड साहित्य भूमि है।"३

रीतिकाल में सर्वश्रेष्ठ आचार्य केशवदास जी हुए। इनका जन्म संवत् १६१२ में ओरछा के पास किसी गाँव में सनाड्य ब्राह्मण कुल में हुआ था। पिता का नाम 'कृष्णदन्त' था। केशवदासजी संस्कृत एवं हिन्दी के प्रकाण्ड विद्वान थे इन्होंने प्रसिद्ध महाकाव्य 'रामचन्द्रिका' की रचना की। केशवदास जी

---

२. बुन्देलखण्ड दर्शन - मोतीलाल त्रिपाठी 'अशान्त' (पृ० संख्या- ३४०)

३. वही - (पृ० संख्या - ३३८)

काव्य में अलंकारों की प्रधानता मानने वाले चमत्कारी कवि थे। इनकी कृतियां निम्न हैं - १. रामचन्द्रिका २. कविप्रिया ३. रसिकप्रिया ४. विज्ञानगीता ५. वीरसिंहदेव चरित ६. जहाँगीर जस चन्द्रिका ७. रतनबावनी ८. नख-शिख ६. रामालंङ्कृत १०. छन्दोशास्त्र आदि।

आचार्य केशव अलंकार विहीन कविता को सुन्दर नहीं मानते थे। इस संबंध में इनकी काव्य पंक्तियां निम्न हैं -

'जदपि सुजाति सुलक्ष्छनी सुबरन सरस सुवृत्त ।

भूषन बिन्दु न विरजई कविता बनिता मित्र ।।'

मतिराम रीतिकाल के प्रमुख कवियों में थे इनके पिता का नाम 'विश्वनाथ त्रिपाठी' था। मतिराम का जन्म १६०४ के आस-पास माना जाता है। आप सम्राट जहाँगीर, बूँदी नरेशराव भावसिंह हाड़ा, कुमांयु नरेश ज्ञानचन्द्र तथा बुन्देलखण्ड के स्वरुपसिंह बुन्देला के आश्रय में रहे।

इनकी कृतियां निम्न हैं - १. फूलमंजरी २. ललितललाम ३. सतसई ४. अलंकार पंचशिला ५. वृत्तकौमुदी ६. रसराज ७. लक्षण श्रृंगार ८. साहित्यसार आदि।

रीतिग्रन्थों की दृष्टि में आपकी उत्कृष्ट रचनायें हैं - रसराज और ललितललाम। आचार्य शुक्ल के अनुसार 'रस और अलंकार की शिक्षा में इनका प्रयोग निरन्तर चलता आया है।

भूषण छत्रपति शिवाजी और पन्ना के राजा छत्रसाल बुन्देला के आश्रय में रहने वाले ऐसे ही रीतिकालीन कवि हैं, जिन्होंने वीर रस की कविताएं लिखकर अपूर्व ख्याति अर्जित की। चित्रकूट के राजा रुद्रशाह सोलंकी ने इन्हें भूषण की उपाधि दी थी और वे इस नाम से इतने प्रसिद्ध हुए कि इनका वास्तविक नाम ही किसी को मालूम नहीं। भूषण का जन्मकाल १६१३ ई० माना गया है। आपके विषय में कहा जाता है कि इनकी पालकी में स्वयं महाराज छत्रसाल ने अपना कन्धा लगाया था। भूषण ने अपने वीरकाव्य का विषय महाराज शिवाजी एवं छत्रसाल बुन्देला इन्हीं दो नायकों को बनाया। इनके रचना ग्रन्थ निम्न हैं - १. शिवराज भूषण २. शिवाबावनी ३. छत्रसाल दशक

भूषण के लिखे तीन ही रचना ग्रन्थ उपलब्ध हुए हैं। कुछ लोग इनके लिखे तीन और रचना ग्रन्थों का उल्लेख करते हैं - भूषण उल्लास, दूषण उल्लास और भूषण हजारा।

बिहारी रीतिकाल के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं। इनका जन्म १५६५ ई० में ग्वालियर के पास बसुवा

गोविन्दपुर नामक ग्राम में हुआ था। बिहारी की ख्याति का मूल आधार उनका अन्यतम् ग्रन्थ बिहारी सतसई है। इसमें कुल मिलाकर ७१३ दोहे हैं। बिहारी सतसई मूलतः श्रृंगार रस से ओतप्रोत मुक्त काव्य है, जिसका प्रत्येक दोहा रत्न के समान है। बिहारी जयपुर के मिर्जाराजा जयसिंह के दरबारी कवि थे। राजा उन्हें प्रत्येक दोहे पर एक अशर्फी (स्वर्णमुद्रा) देते थे। इनके दोहे गागर में सागर भरने वाले हैं।

सतसैया के दोहरे ज्यों नावक के तीर। देखत में छोटे लगैं घाव करें गंभीर ।।

राजा जयसिंह अपनी छोटी रानी के प्रेम में कुछ समय के लिए इतने आशक्त हो जाते हैं कि वे अपना राज-काज छोड़कर दिन-रात रानी में खोये रहते थे। बिहारी ने उन्हें व्यंगार्थ यह दोहा सुनाया - नहि पराग नहि मधुप मधु नहिं विकास इति काल। अली कली ही सौ विंध्यौ आगे कौन हबाल।।

इस दोहे के व्यंग्यार्थ को समझकर राजासाहब तुरंत राजकाज के कार्यों में संलग्न हो जाते हैं।

इनके विषय में कहा जाता है कि बिहारी के पिता केशवराय ग्वालियर से ओरछा चले आये थे। यहीं पर बिहारी की भेंट महाकवि केशवदास से हुई थी। आपने केशव से ही काव्य रचना संबंधी विशद ज्ञान प्राप्त किया। इनके संबंध में एक दोहा प्रसिद्ध है-

जन्म ग्वालियर जानिए, खंड बुन्देले बाल। तरुणाई भाई युवा, मथुरा बसि ससुराल ।।

महाराजा छत्रसाल- बुन्देलकेशरी पन्ना नरेश महाराज छत्रसाल का जन्म संवत १७०६ वि० को हुआ था। महाराजा छत्रसाल वीर योद्धा एवं कुशल शासक होने के साथ-साथ एक सफल कवि भी थे। इनकी प्रमुख रचनायें निम्न हैं - १. महाराज छत्रसाल प्रति अक्षर अनन्य के प्रश्न, २. दृष्टान्ती और फुटकर कवित्त ३. दृष्टान्ती तथा राजनैतिक दोहा समूह ४. रामावतार के कवित्त ५. रामध्वजाष्टक ६. हनुमान पच्चीसी ७. कृष्णावतार के कवि ८. श्रीराधाकृष्ण पचीसी । इनके द्वारा पूना के पेशवा बाजीराव को लिखे गये पत्र में निहित ये दोहा भी इतिहास की अमूल्य निधि है -

जो गति भई गजेन्द्र की, सो गति पहुँचि आये। बाजी जात बुन्देल की, राखो बाजी राय ।।

पद्माकर - रीतिकालीन कवियों में पद्माकर का नाम बड़े आदर से लिया जाता है। बिहारी के पश्चात् ये सर्वाधिक लोकप्रिय कवि हुए। आपके 'पिता मोहनलाल भट्ट' एक महान विद्वान एवं कवि थे। आपका जन्म बाँदा में १७५३ ई० में हुआ। ८० बर्ष की आयु प्राप्त कर १६३३ ई० में आपका स्वर्गवास हो गया। इनके रचना ग्रन्थों की संख्या निम्न है -

१. हिम्मत बहादुर विरुदावली २. प्रतापसाहि विरुदावली ३. कलिपच्चीसी ४. जगद्विनोद ५. पद्माभरण ६. प्रबोध पचामा ७. गंगालहरी

आधुनिक काल के कवि-

ईसुरी- ये लोकगीतसम्राट प्रेम और सौन्दर्य के गायक थे। बुन्देलखण्ड के प्रसिद्ध लोककवि 'ईसुरी' का जन्म सं० १८८१ वि० में मेढ़की नामक ग्राम में हुआ था। इन्हें चौकड़िया फागों का प्रवर्तक माना जाता है। कवि ईसुरी ने अनेकों सुन्दर फागों का सृजन किया। ईसुरी के गीतों में जन-जीवन का सजीव चित्रण निम्न है -

" ऐंगर बैठ लेओ कछु कानें, काम जनम भर रानें।

सब खौ लगो रहत जियत, जौ नई कभऊ बड़ाने ।।

करियो काम घरी भर रै कें, विगर कछू नई जानें ।

जौ जंजाल जगत कौ ईसुर करत करत मर जानें ।।

मुंशी अजमेरी - इनका जन्म संवत् १६३८ वि० को चिरगांव में हुआ था। मुंशी जी को बुन्देलखण्ड नरेशों से अधिक सम्मान व पुरुष्कार प्राप्त हुआ था। आपके काव्यकाल की रचनायें निम्न हैं -

१. मधुकर शाह, चित्रांगदा, भालूराम, व्यालूराम, हेमलासत्ता, रवीन्द्र साहित्य संस्मरण, सोहराव रुस्तम, गोकुलदास आदि।

इनके पाण्डित्य काव्य लालित्य तथा वर्णन विदग्धता का परिचय प्रस्तुत है -

उर विशाल लम्बित बनमाल लटकत हरै, चरन कमल तन त्रिमंग पीताम्बर फहरै ।

यमुना तट, आज मैं तमाल तरैं हेरे, सोई घनश्याम सदा मन में बसौ मेरे ।"

घनश्याम दास पाण्डेय- सशक्त प्रतिभा सम्पन्न कवि आचार्य पाण्डेय जी का जन्म मऊरानीपुर में सम्वत् १६४३ वि० में हुआ था। बुन्देलखण्ड भूमि का श्रृंगार, प्राकृतिक सौन्दर्य एवं वैभव का हृदयग्राही वर्णन निम्न है -

"प्राकृतिक गड़े हैं गढ़ सुदृढ़ पहाड़ियों के

झाड़ियों के दुर्गम मरीची मार्तण्ड की।

सिंह शावकों के साथ अभय मिला के हाथ,

क्रीड़ा जहाँ होती क्षत्री बालक उदण्ड की।

सघन अरण्य है शरण्य फल वन्यस्वाद,

विप्र घनश्याम घन घरणि घमण्ड की।

विधि की विभूति मूर्तिमान सी हुई है जहाँ,

परम पवित्र भूमि है बुन्देलखण्ड की ।"४

कवीन्द्र नाथूराम माहौर- महौर का जन्म संवत् १६४१ में झाँसी के माहौर परिवर में हुआ था। माहौर जी ने खडी बोली ब्रजभाषा तथा बुन्देलख्झउ में अनेक काव्य ग्रन्थों का निमार्ण किया। आपकी कृतियाँ निम्न है- वीरवधु, वीरवाला, गोरीबीबी, दीन के आँसू, अश्रुमाल, व्यंग्य विनोद, दीन का दावा, सूर सुधानिधि आदि है। कवीन्द्र माहौर को खनियाधाना नरेश से 'कवीन्द्र' की उपाधि प्राप्त हुयी। बुन्देलखण्ड महासभा से बुन्देलखण्ड 'भूषण की उपाधि' ब्रजभाषा साहित्य मथुरा से अश्रुमाला आदि के रूप में पुरुष्कृत किया गया।

मैथलीशरण गुप्त- 'राष्ट्रकवि मैथलीशरण' गुप्त का जन्म 'चिरगाँव में १८८६ ई० में हुआ था। गुप्त जी हिन्दी राष्ट्रीय भाषा के प्रतिनिधि कवि कहे जा सकते है।' 'गुप्तजी' की राष्ट्रीय चेतना भारत-भारती में पूर्णतः मुखरित हुई है। गुप्तजी ने राष्ट्रीय चेतना सामाजिक जागृति और नैतिक मूल्यों पर बल देते हुये अपनी रचनाओं से जन-मन को प्रेरित करने स्तुव्य प्रयास किया। इनकी कृतियाँ निम्न है-

१. जयद्रथ वध, २. भारत-भारती, ३. पंचवटी, ४. झंकार, ५. साकेत, ६. यशोधरा, ७. द्वापर, ८. जय भारत, ६. विष्णु प्रिया। **अन्य कृतियाँ-** रंग में भंग, सिद्धराज, पद्य प्रबन्ध, वैतालिक, किसान। इन्होंने तीन नाटक भी लिखे- तिलोत्तमा, चन्द्रहास और अनद्य ।

गुप्तजी रामभक्त कवि थे। इनका साकेत नामक महाकाव्य रामकथा पर आधारित है। इसके नवम् सर्ग में उर्मिला का विरह-वर्णन विशत रुप से चित्रित किया गया है। यह उनकी मौलिक उद्भावना है क्योंकि उर्मिला रामकथा की उपेक्षित पात्र रही है। यशोधरा गौतम बुद्ध के गृह त्याग की घटना पर आधारित काव्य ग्रन्थ है, जिसमें नारी की वेदना मुखरित हुई है। गुप्तजी ने नारी की विवशता को निम्न पंक्तियों में व्यक्त किया है -

---

४. बुन्देलखण्ड दर्शन - मोतीलाल त्रिपाठी 'अशान्त' (पृ० संख्या- ३६६)

'अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी । आंचल में है दूध और आँखों में पानी ।।'

वृन्दावन लाल वर्मा - हिन्दी के सुप्रसिद्ध उपन्यासकार वर्मा जी का जन्म मऊरानीपुर झाँसी में जनवरी माह में सन् १८८६ में हुआ था। पिताश्री अयोध्याप्रसाद गुप्त एवं माता श्रीमती सवरानी सामान्य कायस्थ परिवार की थी। वर्मा जी पर इनकी परदादी का विशेष प्रभाव पड़ा। वे बचपन में वर्मा जी को किस्से कहानियाँ सुनाया करती थीं। उन कहानियों में से अधिकांश सत्य घटनाओ पर आधारित होती थीं। वर्मा जी को उन्होंने झाँसी की रानी की वीरता के अनेकों किस्से सुनाये थे। जिसका विशेष प्रभाव उनके जीवन पर पड़ा। इसी से प्रभावित होकर आपने झाँसी की रानी नामक उपन्यास की रचना की। इन्होंने सामाजिक व ऐतिहासिक उपन्यास नाटक व कहानियों एवं एकांकियों की रचना की। वर्मा जी की प्रसिद्ध रचनायें निम्न हैं -१. मृगनयनी २. झाँसी की रानी (ऐतिहासिक उपन्यास) ३. लगन ४. प्रत्यागत (सामाजिक उपन्यास) आदि हैं। वर्मा जी के चालीस रचना ग्रन्थ हैं। जिसमें अप्रकाशित ग्रन्थ निम्न हैं - 'शबनम', 'आहत' और लाल कमल ।

वियोगी हरि- बुन्देलखण्ड की साहित्यिक प्रगति में योगदान देने वाले तथा हिन्दी साहित्य के विकास में बुन्देलखण्ड का प्रतिनिधित्व करने वाले साहित्यकार हैं। इन्होंने पुराने कृष्णोपासक के भक्त कवियों पर बहुत से रसीले पदों की रचना की। वियोगी हरि ने वीर सतसई नामक ग्रन्थ की रचना की है। इन्होंने अनेक ग्रन्थों का सृजन किया है।

अम्बिका प्रसाद दिव्य - बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न साहित्यकार अम्बिका प्रसाद दिव्य का जन्म १६ मार्च १६०७ में अजयगढ़ (पन्ना) मध्यप्रदेश में हुआ था। इन्होंने अपने उपन्यासों में बुन्देलखण्ड के लोकजीवन का चित्रण बड़ी ही सहजता से किया है। आपकी काव्य प्रतिभा बुन्देलखण्ड अंचल में प्रस्फुटित हुई और राष्ट्रीय वातावरण में प्रेरित होकर अधिक विकसित हुई। आपकी प्रमुख कृतियां निम्न है - निमियां, मनोवेदना, बेलकली, खजुराहो की अतिरुपा, जयदुर्ग की रंगमहल, पीताद्रि की राजकुमारी, जोगीराजा, सती का पत्थर, फजल का मकबरा, जूठी पातर, काला भौंरा और प्रेमतपस्वी आदि उपन्यास है। गाँधी परायण, खजुराहो की नारी, दिव्य दोहावली, पावस, पिपासा, स्त्रोतस्विनी, अनन्यमानसा आदि काव्य ग्रन्थ है। इन्होंने अनेकों नाटक एवं निबन्धों की भी रचना की। आप श्रेष्ठ साहित्यकार होने के साथ-साथ अच्छे चित्रकार भी थे।

घासीराम व्यास- राष्ट्रकवि व्यास जी का जन्म सं० १६६० वि० को मऊ में हुआ था। व्यास जी में देश प्रेम व राष्ट्रीयता की भावना समाई हुई थी। व्यास जी राष्ट्रकवि होने के साथ राष्ट्रीय आन्दोलनों के कर्मठ कार्यकर्ता भी थे। ये भावुक एवं रससिद्ध कवि थे।

रामचरण ह्यारण मित्र- मित्रजी एवं श्री सेवकेन्द्र जी ने झाँसी में अपनी आलौकिक काव्य साधना के क्षेत्र में अपना अमूल्य योगदान दिया। बुन्देलखण्ड के श्रेष्ठ कवियों में मित्र जी को गिना जाता है। बुन्देली भाष में भी आपकी सर्वोत्तम कृतियां हैं। आपकी प्रमुख कृतियां निम्न हैं - भेंट, सरसी, लौलइयों, साधना, ओरछा दर्शन, लोक गायिनी, गीता दर्शन, बुन्देलखण्ड की संस्कृति और साहित्य, उदय तथा विकास। मिश्र जी ने राष्ट्रीय भाषा से ओत-प्रोत अनेकों विषयों पर रचनायें लिखी।

पं० मोहन लाल शांडिल्य 'मोहन'- इनका जन्म बुन्देलखण्ड के जनपद जालौन के कोटरा नामक स्थान पर संवत् १६६० की भाद्रशुक्ल पक्ष द्वितीया को हुआ था। इनके पिता श्री 'भैरवप्रसाद' थे। आप कालपी इण्टर कालेज में संस्कृत के अध्यापक पद पर नियुक्त रहे। मोहन जी बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। इनका निधन ५ जून १६८४ को हुआ था। आपकी कृतियां निम्न हैं -

१. पारिजात २. दिव्यालोक (प्रकाशित रचनायें)

१. विन्ध्यातवी २. वेतवावावनी (अप्रकाशित रचनायें)

अभिनन्दन ग्रन्थ २६ मार्च १६७६ में प्रकाशित हुआ, जिसमें अनेकों सम्पादकों एवं प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने आपकी काव्य रचनाओं की प्रशंसा में अपने विचार व्यक्त किये।

केदारनाथ अग्रवाल- प्रगतिशील कवि, बहुयुवाा प्रतिभा सम्पन्न श्री केदारनाथ अग्रवाल हिन्दी साहित्य के प्रतिष्ठित कवि है। आपकी भाषा शैली, व्यंजना, चिंतन अनुभव, दर्शानिकता से आपकी प्रगतिवादी कविता में उत्तर निखार हुआ है। आप मार्क्सवादी एवं जनपद के गौरव हैं।

मोहनलाल चातक- चातक का जन्म नैनीताल में ६ मई १६४१ को हुआ था। आप लक्ष्मी व्यायाम मन्दिर में हिन्दी के पद पर कार्य कर रहे हैं। हिन्दी के आप प्रसिद्ध कवि हैं। आपकी प्रमुख रचनायें निम्न है - १. चित्रकूट (काव्य) २. प्रेमबीती (काव्य)

सुभद्रा कुमारी चौहान- सुभद्रा कुमारी चौहान का जन्म सं० १६६१ वि० में प्रयाग में हुआ था। १५ वर्ष की आयु में इनका विवाह खण्डवा निवासी एक प्रतिष्ठित वकील डा० लक्ष्मण सिंह चौहान के साथ

हुआ था। बचपन से ही आपकी रुचि काव्य में थी। आपने अपने पति के साथ राष्ट्रीय आन्दोलन में सक्रियता से भाग लिया और अनेकों बार अपने पति के साथ जेल गई। बुन्देलखण्ड की पावन धरा जबलुपर की आप निवासी थी। आपने बुन्देलखण्ड की साहित्यिक प्रगति में महत्वपूर्ण योगदान दिया। झाँसी का रानी नामक कविता ने आपको हिन्दी साहित्य के इतिहास में प्रमुख स्थान दिलाया - इनकी काव्य पंक्तियां निम्न है -

बुन्देले हरबोलों के मुँह, हमने सुनी कहानी थी।

खूब लड़ी मर्दानी वह तो, झाँसी वाली रानी थी।

इस कविता ने इन्हें आलौकिक ख्याति दिलाई। इनकी कविता में राष्ट्र प्रेम की भावना प्रधान रुप में उपलब्ध है। इनकी कृतियाँ निम्न हैं -

काव्य ग्रन्थ- मुकुल, त्रिधारा, बालोपयोगी- सभा के खेल

कहानी संग्रह- बिखरे मोती, उन्मादिनी, सीधे साधे चित्र, हिन्दी साहित्य की मौन आराधिका, वेदना की सहचरी।

डा० मोती लाल त्रिपाठी 'अशान्त'- अशान्त का जन्म १० नबम्बर १९२२ को ललितपुर जिले में हुआ था। १९४८ में आगरा विश्वविद्यालय से स्नातक तथा १९५१ में नागपुर विश्वविद्यालय से स्नात्कोत्तर परीक्षा उत्तीर्ण की। १९४१ में मैकडोनल हाईस्कूल- सम्प्रति विपिन बिहारी इण्टर कालेज में 'रवीन्द्र स्मृति संघ' की स्थापना में अशान्त जी का सतत् व्यक्तित्व उभर कर आया। आपने अनेक पत्र-पत्रिकाओं (अमरवाणी, राजा-बेटा, दैनिक प्रभात, परिचय प्रबोध, सप्त लहर, नई कहानियाँ, वीणा-वादिनी, नई चेतना, तुलसी पत्रिका) का सम्पादन किया। आपके द्वारा कई फिल्मों में संवाद एवं गीत दिये गये हैं - जैसे 'माटी के पुतले', पनाह, सावधान, बाम्बे क्लब, डालिंग आदि। आपकी विभिन्न कृतियाँ निम्न हैं -

१. काव्य- दिल्ली चलो, बापू का बलिदान, चेतना के गीत, साधनांजलि, नई प्रेरणा।

२. कहानी- सप्त लहर, नई कहानियाँ, कला और जिन्दगी।

३. निबंध- परिचय प्रबोध ४. उपन्यास- नई झलक ५. इतिहास - झाँसी दर्शन, ओरछा दर्शन, बुन्देलखण्ड दर्शन, खजुराहो दर्शन, बुन्देलखण्ड का साहित्यिक इतिहास।

यज्ञदत्त त्रिपाठी- पं० यज्ञदत्त त्रिपाठी का जन्म बुन्देलखण्ड अंचल के जालौन जनपद में ऐर नामक ग्राम में सन् १६३८ में हुआ था। इनके पिता पं० शियाकुमार त्रिपाठी जनपद के उच्चकोटि के कर्मकाण्डीय, ज्योतिषी ब्राह्मण थे। आपकी शिक्षा उरई एवं लखनऊ विश्वविद्यालय (स्नातक एवं एल. एल.बी.) में पूर्ण हुई। आपकी प्रकाशित रचनायें- तपस्या के प्रसून, अनेक बालकवितायें, अप्रकाशित रचनाओं में विषघूँट, दुष्यंत प्रिया, क्यों आदि हैं। वर्तमान में आप लेखन के साथ-साथ वकालत का कार्य कर रहे हैं।

मैत्रेयी पुष्पा- पुष्पा जी का जन्म ३० नबम्बर १६४४ अलीगढ़ जिले के सिकुर्रा गाँव में हुआ था। आपका आरम्भिक जीवन जिला झाँसी के खिल्ली गांव में व्यतीत हुआ। आपने एम०ए० की शिक्षा (हिन्दी साहित्य) बुन्देलखण्ड कालेज, झाँसी से प्राप्त की। आपकी प्रकाशित रचनाएं निम्न हैं -

वेतवा बहती रही, इदन्नमम, झूला नट, अल्मा कबूतरी, चाक, विजन, अगन पाखी, कही ईसुरी फाग, त्रिया हठ (उपन्यास)

गोमा हंसती है , ललमनियाँ, चिन्हार (कहानियां)

कस्तूरी कुण्डल बसै (आत्मकथा)

खुली खिड़किया, सुनो मालिक सुनो (स्त्री विमर्श)

मंद्राकान्ता (नाटक)

फैसला कहानी पर टेलीफिल्म 'बसुमती की चिट्ठी'

इदन्नमम उपन्यास पर आधारित सांग एंड ड्रामा

डिवीजन द्वारा निर्मित छायाचित्र मंद्राकान्ता आदि।

बुन्देलखण्ड के अन्य साधकों ने भी अपनी साहित्य साधना द्वारा बुन्देलखण्ड को हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में अत्यधिक विकसित किया है। बुन्देलखण्ड को आधुनिक हिन्दी साहित्य परम्परा में योगदान देने वाले साहित्यकार निम्न है - "श्री अम्बिका प्रसाद अम्बिकेश, हरगोविन्द त्रिपाठी पुष्प, गुण सागर सत्यार्थी, कुसुमाकर, वीरेन्द्र मिश्र, रामकुमार चतुर्वेदी चंचल, परशुराम विरही, त्रिभुवन नाथ त्रिवेदी, परम, अशोक चतुर्वेदी वियोगी, विद्रोही, व्याकुल रायकवार, रमेश हयारण अभिराम, फटीचर, श्रीवत्स, रमेश चौबे, शरद, चतुरेश, भैयालाल व्यास, द्वारिकेश मिश्र, नादान, जगदीश सहाय खरे जलज, सुधाकर

बेधड़क, छैलबिहारी त्रिपाठी 'दीपक', हरगोविन्द गुप्त, कन्हैयालाल शर्मा, कलश, कंज, तन्मज बुखारिया, शिखरचन्द्र मुफलिस, शिवानन्द बुन्देला, यतीन्द्र तिवारी, वंशीधर पंडा, महेन्द्र कुमार मानव, बल्लभ सिद्धार्थ, कैलाश अवस्थी, दुर्गेश दीक्षित, भगवानदास बालेन्दु, जगदीश शरण विलगैयां, शिवाजी चौहान, राघव सेठ, बरसैयाँ, रामस्वरुप गोस्वामी, रामेन्द्र, बिहारीलाल बबेले, महेश पाण्डेय, लालचन्द्र जैन 'सलज', कृष्णगोपाल चतुर्वेदी, शुकदेव तिवारी, कैलाश निर्भीक, बृजमोहन सरवरिया मोहन, रामकिशोर मिश्र, मदनमानव, जनक प्रसाद द्विवेदी, नरेन्द्र आदि।"५

साहित्य कला, शौर्य इस वसुन्धरा के कण-कण के इतिहास में समाहित है।

"ऐसी ऐतिहासिक, साहित्यिक परम्पराओं से पूर्ण बुन्देलखण्ड
की यह पावन बसुन्धरा सराहनीय, पूजनीय और वन्दनीय है।"६

द्वारिका प्रसाद मिश्र 'द्वारिकेश'

---

५. बुन्देलखण्ड दर्शन - मोतीलाल त्रिपाठी 'अशान्त' (पृ० संख्या- ३८४-३८५)

६. बुन्देलखण्ड की संस्कृति और साहित्य - रामचरण ह्यारण 'मित्र' (पृ० संख्या- ११)

अध्याय - २

बुन्देलखण्ड का लोकजीवन

२.१ लोक संस्कृति -

१. पर्व, उत्सव, व्रत एवं अनुष्ठान

२. लोकदेवता ३. मेले

४. रीति-रिवाज एवं संस्कार

५. लोकगीत, नृत्य तथा वाद्ययन्त्र

६. लोकगाथाएं एवं कथाएं

७. लोकोक्ति, मुहावरे एवं बुझौबल

८. जातीय सद्‌भाव ९. साम्प्रदायिक सौहार्द

२.२ लोक कलाएं -

१. भूमि तथा भित्ति अलंकरण

२. लोक कला में प्रतीक योजना

३. मूर्ति कला तथा खिलौने

४. काष्ट शिल्प ५. वेश-भूषा

६. आभूषण ७. गोदना

८. अन्य

२.३ लोक सभ्यता -

१. परिवार २. पति-पत्नि संबंध

३. आवास-प्रवास ४. दिनचर्या

५. भोजन और व्यंजन ६. लोकाचार

७. लोकरंजन

२.१ लोक संस्कृति-

संस्कृति एक व्यापक शब्द है। वास्तव में संस्कृति एक जीवित प्रक्रिया है, जो लोक के स्तर पर अंकुरित होती है, पनपती है, और फैलती है। ये पूरे लोक को संस्कारित करती है। यह धरोहर अनुभूति की परम्परा को लेकर बढ़ती है। लोक स्तर पर वह संस्कृति है जिसमें जनसामान्य के आदर्श, विश्वास, रीतिरिवाज आदि निहित होते हैं। विशिष्ट स्तर पर वह संस्कृति होती है, जिसमे परिनिष्ठित मूल्य, आचार-विचार रहन-सहन के ढंग आदि संघटित रहते है।

कहने का तात्पर्य यह है कि लोकसंस्कृति और परिनिष्ठित संस्कृति दोनों एक-दूसरे से जुड़े होते हुए भी भिन्न है। बुन्देलखण्ड की लोकसंस्कृति भारत और विश्व के अनेक जनपदों की लोकसंस्कृतियों से भी प्राचीन है। किसी भी जनपद की लोकसंस्कृति उसके लोकमानस और लोकाचरण से निर्मित होती है। लोकमानस व लोकाचरण तत्काल परिस्थितियों से क्रिया प्रक्रिया करते रहते है। लोकमूल्यों का सीधा संघर्ष बदलती हुयी परिस्थितियों से होता है। लोकसंस्कृति को गतिशील प्रक्रिया के रुप में ग्रहण किया जाता है।

लोकजीवन के संस्कार उसकी मान्यतांए, लोकाचार, लोकधर्म, लोकसाहित्य, लोककला, लोकसंगीत और वाद्य इनका समन्वित रुप ही लोकसंस्कृति है। लोकसाहित्य के अंतर्गत लोकगीत, लोकगाथाएँ और लोककलाओं में परिगणित लोकचित्र, लोकमूर्तियाँ लोकसंगीत आदि लोकसंस्कृति के प्रमाणिक अभिलेख है। जिनका काल निर्धारण मोटे तौर पर कालखण्डों में किया गया है।

लोकसंस्कृति आंचलिक होते हुए भी अनेकों संस्कृतियों के समन्वयों का संगम है। बुन्देलखण्ड में ही कई जातियाँ जैसे कोल-भील, शबर, किरात एवं द्रविण आदि से कई मूल्य और लोकविश्वास आए है जैसे कि वृक्ष-पूजा, बलि आदि। कोलों से मूर्ति पूजा, अवतार की कल्पना-द्रविण से और तंत्र-मंत्र-किरात जातियों की देन है। गोड़ों ने भी लोकसंस्कृति को प्रभावित किया और वे बाद में स्वंय उसमें घुल-मिल गये । तात्पर्य यह है कि लोकसंस्कृति की धारा सभी प्रभावों को अपने में एकचित्र कर निरंतर गतिमान रही है ।

"अक्सर लोकगीतों के आधार पर लोकसंस्कृति का निर्धारण कर लिया जाता है और काल विशेष की चेतना या किसी भी ऐतिहासिक क्रमबद्धता को अनदेखा करना उचित सा समझा जाता है। एक लोकगाथा या लोकगीत इस्लाम-युग के पूर्ण का है, एक मुगलयुग का और एक अंग्रेज के समय का तीनों को एक साथ लेकर लोकदर्शी, रीति-रिवाजों आदि की चर्चा अभिव्यक्ति की एक सामान्य प्रणाली बन गयी है। इस तरह अब तक लोकसंस्कृति के

स्थिर रूपों की कल्पना की गयी है, जिससे किसी भी युग की लोकसंस्कृति का सही रुप प्रकाश में नहीं आ पाया । लोकसंस्कृति का इतिहास लोकचेतना और लोकाचरण का इतिहास है। वह किसी राजा, सामंत या किसी विशिष्ट नाम की परवाह नहीं करता, वरन् लोक प्रवृत्तियों और लोकदशाओं का लेखा जोखा पेश करता है।"१

लोकसंस्कृति ने दसवीं ग्यारहवीं सदी से लेकर आज तक विजातीय तत्वों से जिस लड़ाई को जारी रखा है, वह इतिहास में दुर्लभ है। सूफी, मुस्लिम, मुगल, अंग्रेजी जैसी विजातीय संस्कृतियाँ निरंतर दबाव डालती रही, लेकिन लोकसंस्कृति निरंतर संघर्ष करती हुयी आगे बढ़ती रही । आज भी लोकसंस्कृति का विकसित रुप सक्रिय है-लेकिन उसे सूक्ष्मदर्शी आँखों से देखने की आवश्यकता है।

विश्व की लोकसंस्कृति कोई असंभव वस्तु नहीं है। लोकसंस्कृति के व्यापीकरण के दो प्रबल आधार है। एक है सामाजिकता का मनोविज्ञान एवं सामूहिकता, जो 'रक्षा' 'पारस्परिक सहानुभूति' या 'प्रेम' और 'सामाजिकता की मनोवृत्तियों' या 'लोकभावों' से संपुष्ट है।

"बुन्देलखण्ड के सांस्कृतिक परिवेश को समझने के लिए यहाँ बुन्देली लोकगीतों का जो अक्षय भंडार बिखरा पड़ा है उसमें यहाँ की संस्कृति का स्पष्ट चित्र मिलता है। यहाँ के जन-जीवन, आचार-व्यवहार, धर्म, उपासना, रीति-रिवाज आदि का जो रूप लोकगीतों में अभिव्यक्त हुआ है। वही यहाँ का वास्तविक परिवेश है। अतीत काल में उन्हीं लोकगीतों की लय में यहाँ बुन्देली बालाओं ने अकती के ब्याह रचायें है, नैनों से नीर बहाकर बेतवा की जलधारा को प्रेयसी के अधरों से भी अधिक मधुर बनाकर महाकवि कालिदास की आखों में आश्रु भर आयें है, विरहणियों ने हृदय बतलायें है। और बुन्देली रणबांकुरों ने अपने शौर्य से शत्रु के छक्के छुड़ाये है। गीतों की उसी स्वरवेला में उसी लोकसंगीत की तरंगों में यहाँ की संस्कृति का रूप युगानुरूप परिवर्तित होता रहा है।"२

लोकगीतों के इन्हीं स्वरुपों को सैरे, सोहरे, सावन, सुआटा, राछरे, मल्हारे, विलयारी, दिवारी, भजन, फागे, गारी, रसिया, गोटे, अचरी, कहरवा, मामुलियाँ, धुबियायी आदि गीत बन कर समाज के सम्मुख प्रकट हो गये । बुन्देली संस्कृति के निम्न उदाहरण-

---

१. बुन्देलखण्ड की लोकसंस्कृति का इतिहास - नर्मदा प्रसाद गुप्त (पृ० संख्या - ४५६)
२. सांस्कृतिक बुन्देलखण्ड - श्री अयोध्या प्रसाद गुप्त 'कुमुद' (पृ० संख्या - ८८)

१. बुन्देलखण्ड अंचल में अतिथियों का विशेष सम्मान करना यहाँ की संस्कृति है। अतिथि को देवता तुल्य मानकर उन्हें 'अतिथि देवो भव' कहकर पुकारा जाता है।

२. यहाँ की संस्कृति में सूर्योदय के पूर्व उठकर लीपापोती कर मकान को स्वच्छ बना देने की परम्परा बुन्देलखण्ड में चिरकाल से प्रचलित है- "तिल के फुल तिली के दाने, सूरज ऊबे बड़े भुनसारे ।

ऊगई न पाये बारे सूरज, सब घर हो गऔ लिपना पुतना ।।"

३. लज्जाशीलता यहाँ की नारी के भावों में कूट-कूट कर भरी है नारी अपने पति से माता-पिता के सामने बात करने में संकोच करती है-

"नजर से औलट तो हो जैयो, औलट तो हो जैयो, मोरे खड़े मताई उर बाप हो ।"

४. हिन्दू धर्म में तैतींस करोड़ देवता है। सभी देव पूज्य है, लेकिन यहाँ की अपनी परम्परायें है। इस अंचल में हरदौल, कालका, शारदा भवानी आदि लोकप्रचलित देवता है। देवी देवताओं के संबंध में लोकगीत निम्न है- "पहले मानाओ देवी शारदा रे हो माँ, दूजे लाला हरदौल भवानी मइयाँ ।

मंदिर ठहरे देवी शारदा मैया, बागन लाला हरदौल भवानी मैया ।"

५. बुन्देली संस्कृति के अंतर्गत लड़की पति को अपना देवता मानकर उसी को अपना सर्वस्व मान लेती है। पति का घर उसका अपना घर होता है। प्रत्येक लड़की त्यौहारों पर अपने मैके में रहने की लालसा रचाती है। माँ से विदा होते समय उसकी करूण भावना निम्न शब्दों मे व्यक्त होती है-

"मोरी मइया भूल न जइयो, जलदी बुलइयों मोरे लाल
सावन होरी और दिवारी भइया वेरा पठइया मोरे लाल
मिले सवारी जो न भइया, भइये रिगत पठइयो मोरे लाल ।"

भारतीय दर्शन के विशाल ग्रन्थ जिस नश्वरता का सत्य बखान करते हैं, वह यहाँ की अचरियों में कितनी शालीनता के साथ व्यक्त हुआ है।

"अमर तो नैयां मारे सब कारीगर, जिन मोरे भवन बनाओ ओ माँ
अमर तो नैयां मोरे पृथ्वी के बासुक, धरती कौ धरौं भार जिन पेओ माँ ।"

यहाँ पर प्रत्येक अवसर पर हर माह यही गीत अधरों पर थिरक कर जनमानस को उद्धेलित करते रहे हैं। इन्हीं लोकगीतों के भावों में यहाँ का सांस्कृतिक वैभव मे छिपा पड़ा है।

२.१ लोकसंस्कृति

१. पर्व, उत्सव, व्रत पूजन और अनुष्ठान -

भारत धार्मिक मान्यताओं को प्रधानता देने वाला देश है। यहाँ पर पर्व, उत्सव, तीज, त्यौहार सभी जगह मनाये जाते हैं, किन्तु कुछ अंचल विशेष में मनाये जाने वाले उत्सवों के स्वरूप तथा पूजा-विधान में भी अंतर होता हैं। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी होने के नाते समाज की सारी मान्यताओं को सहर्ष अपनाता है। वह समाज में रहकर पत्रों पर प्रेम-स्नेह बाँट कर सुख व शान्ति का अनुभव करता है। पर्व, उत्सव, व्रत, पूजन और अनुष्ठान मानव जीवन को सुख आनंद एवं रस प्रदान करते हैं। जिस जाति व समाज में ये क्रिया-काण्ड नहीं होते। वे लोग अलग रहकर नीरस जीवन व्यतीत करते हैं। उनका समाज से कोई सम्बन्ध नहीं रहता।

"त्यौहार, पर्व और मेले मानव जीवन के वे सुन्दर अवसर हैं जिन के आगमन से प्राणी मात्र अपनी आंतरिक वेदनाओं को भूलकर सुख में नाच उठता है, स्वंय को पूर्ण रूप से भुला देता है और अपनी सारी समस्याओं को भूलकर आलौकिक आनंद में लीन हो जाता है।"[१]

बुन्देलखण्ड की संस्कृति को यहाँ के पर्व, उत्सव, व्रत और पूजन विशिष्ट रूप से निरूपित करते हैं। ये कार्यक्रम केवल एक मनुष्य पर निर्भर नहीं होते है। इनका आयोजन सम्मिलित रूप से होता हैं। इस प्रान्त में पर्व, उत्सव, व्रत, पूजन और अनुष्ठान का अधिक महत्व है। फसल कटने या ऋतु परिवर्तन पर सामूहिक गान व नृत्य का आयोजन किया जाता हैं। सभी अपने मधुर कंठों द्वारा स्वर लहरी प्रवाहित कर नृत्य में आनंद लीन हो जाते हैं। पूरा मानव समूह झूम-झूम कर नाच उठता हैं। भारत धर्म प्रधान देश है। अपने-अपने इष्ट देव पर आधारित अनेक पर्व सभी जगह मनाये जाते है, परंतु कुछ अंचल विशेष में ही मनाये जाते हैं। प्रत्येक अंचल में इनके मनाने को रीति में अंतर होता हैं।

बुन्देलखण्ड में **"यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता ही सर्वोपरि है। यहाँ पर महिलाओं के सम्मान में भी अनेकों त्यौहार मनाये जाते है जैसे 'कुनघुसू पूनों' में बहुओं की पूजा, हरी जोत में बेटियों की पूजा, सौभाग्यवती स्त्रियों को महावर तथा सुहाग चिन्हों से सजाकर ससम्मान पूजा जाता है,गौरा देवी, नवरात्रि आदि इसी का विधान है। अनेकों देवी देवता, ग्राम्य देवता, कुल देवता आदि पूजना यहाँ की परम्परायें है। जैसे कृषि कार्य के**

---

१. बुन्देलखण्ड दर्शन - मोतीलाल त्रिपाठी 'अशान्त' (पृ० संख्या- २३१)

अनुरुप हरायतें, गाय बछड़ों की पूजा, 'दरसइयाँ' कुठला-पूजन, आदि। करवाचौथ पर पति की दीर्घायु की कामना का पर्व हर्ष व उल्लास के साथ मनाया जाता है।"२

बुन्देलखण्ड के भू-भाग की संस्कृति के यहाँ के प्रत्येक नगर और ग्राम में प्रायः समान रूप से दर्शन होते है पर्व, उत्सव, व्रत, पूजन आदि भी प्रायः एक ही ठंग के प्रतीत होते हैं। बुन्देलखण्ड में त्यौहारों की विवेचना ऋतुओं और हिन्दू महीनों के अनुसार है। यहाँ पर त्यौहार बड़े ही उत्साह पूर्वक भजन-कीर्तन के साथ मनाये जाते हैं तथा आस-पड़ोस में पूजन के समय बुलावा भेज कर सभी को प्रसाद दिया जाता हैं। भजन कीर्तन गाने के लिए सभी से आग्रह किया जाता है। बुन्देलखण्ड में छोटे-छोटे पर्व पर लागों को आमंत्रित करने की प्राचीन परम्परा आज भी है।

बुन्देलखण्ड में प्रचलित पर्व, उत्सव, व्रत, पूजन और अनुष्ठान निम्नवत् हैं-

१. गनगौर- "यह पर्व-चैत्र शुक्ल तृतीया को होता है। व्रत में अधिकांशतः सुहागिन स्त्रियाँ दिन-भर उपवास करने के पश्चात् सायंकाल पार्वती का पूजन करती हैं। पूजन में चढ़ाने के लिए स्त्रियाँ रेहन (चने की दाल का आटा) के आभूषण बनाती हैं और वेसन के नैवेध के ही गनगौरा बनातीं है। इसकी बनावट कान की माला के सदृश होती है। यह प्रसाद पुरूषों को वितरण नहीं किये जाते, केवल स्त्रियों को ही बाँटे जाते हैं। इस पर एक कहावत यहाँ प्रचलित हैं। "गनगौर के गनगौरा, पुरूषों खाँ न देऊ एकउ कौरा।"३

२. शीतला अष्टमी- यह पर्व चैत्र कृष्ण पक्ष की अष्टमी को मनाते है, इस त्यौहार को 'बासेरी आठे' भी कहते है। इस पर्व पर माँ शीतला देवी का पूजन कर उन्हें शीतल व ठण्डा (एक रात्रि पहले का बासा) भोजन प्रसाद में चढ़ाते है। एक दिन पूर्व का बना भोजन ही दूसरे दिन घर के सभी सदस्य ग्रहण करते है। उस दिन अतिथि के आने पर भी घर में चूल्हा नहीं जलाया जाता है।

३. जगन्नाथ जी का पूजन- जगन्नाथ जी की बड़ी पूजा चैत्र माह के अंतिम सोमवार को की जाती है। जगन्नाथ पूजन का क्रम चैत्र मास के प्रथम सोमवार से शुरु होकर अंतिम सोमवार को पूरा होता है। यदि किसी परिवार का कोई सदस्य जगन्नाथ पुरी के दर्शन कर आता है, तो उन परिवारों में यह पूजा होती है।

४. चैतीपूनों - चैत्र की पूर्णिमा को बुन्देलखण्ड में चैती पूनों के नाम से भी मनाया जाता है। पाँच

---

२. बुन्देलखण्ड का लोकजीवन - अयोध्या प्रसाद गुप्त 'कुमुद' (पृ० संख्या- ५६)

३. बुन्देलखण्ड की संस्कृति और साहित्य - रामचरण हयारण 'मित्र' (पृ० संख्या - २७०)

या सात मटकियों को चूना या खड़िया से रंग कर पोत दिया जाता है। एक करवा रखा जाता है। करवे पर दो माताओं की प्रतिमा और एक पूजन कुमार की प्रतिमा बनाई जाती है। सभी मटकियों में लड्डू भरकर व चौक पूर कर, चौक पर मटकियों को रखकर विधि-विधान से पूजन किया जाता है। कहानी कही जाती है। इसके पश्चात् परिवार का लड़का मटकियों को हिलाकर करवे में से लड्डू निकाल कर माँ की झोली में डालता है। माँ लड़के को लड्डू खिलाती है। प्रसाद वितरण करते समय "पूजन के लड़ुआ पजनै खायें, दौड़-दौड़ वह कोठरी में जाय" कई स्थानों पर यह पूजा वैशाख कृष्ण अष्टमी को होती है। इसे मटका पूजन भी कहते है।

<u>५. आसमाई-</u> यह पर्व वैशाख की दौज को मनाया जाता है। इस व्रत को कार्य सिद्धि के लिए किया जाता है। इस पर्व के दिन चौक पूर कर, पटा रखकर, पान पर सफेद चंदन से एक पुतली बनायी जाती है। इसी पर चार गाँठ वाली चार कौड़ियाँ रखी जाती है, इसी की पूजा की जाती है। नैवेध में सात आसें बनायी जाती है। जिन्हें व्रत करने वाली स्त्रियाँ खाती है। घर का छोटा बच्चा कौड़ियों को पटे पर पारता है। आसमाई की कथा होती है। ये कौड़िया पूजन के पश्चात् अपने पास रखी जाती है। और प्रत्येक वर्ष पूजा होती ।

<u>६. हरायतें लेना -</u> यह पर्व वैशाख वदी अमावस्या को मनाया जाता है। यह कृषकों की पूजा का पर्व है। कृषक खेती प्रारम्भ करने के लिए वैल, हल, भूमि, व 'हलधर' का टीका करते है। चौक पूरकर गुड़ तथा सन्त से भोम लगाते है। इसके पश्चात् कृषि कार्य प्रारम्भ करते है।

<u>७. अक्ती (अक्षय तृतीया) -</u> यह पर्व वैशाख शुक्ल तीज को मनाया जाता है। अक्षय तृतीया बुन्देलखण्ड का प्रमुख त्यौहार है। यह त्यौहार अक्ति, अक्तीज या अक्षय तृतीया नाम से भी जाना जाता है। इसमें घड़ा भरा जाता है, गीले 'सोन' देवल पूजा करके बाँटे जाते है। कपड़े के गुड्डे-गुडियों को बनाकर उनकी पूजा की जाती है। यह लड़कियों का पर्व है। हमारे बुन्देलखण्ड की संस्कृति है कि अगर इस त्यौहार के समय लड़की अपनी ससुराल में है तो उसे अपने मायके बुलवा लिया जाता है। बुन्देलखण्ड के कुछ विशेष पर्व होते है जिनमें लड़की की ससुराल बुलावा भेज कर माँ-बाप अपनी लड़की को अपने घर बुलवा लेते है। यह यहाँ की प्राचीन परम्परा है। ग्रामों में अक्ती का पर्व अधिक उमंग एवं उत्साह से मनाया जाता है। देवर ननद भावी से उनके पतियों का नाम चटखोर लेकर पूछती है। कहा जाता है। कि इसी दिन सतयुग का प्रारम्भ हुआ था आज ही के दिन प्रसिद्ध तीर्थ बद्रीनाथ के कपाट भी खुलते है।

८. वर बरसातें- यह पर्व ज्येष्ठ कृष्ण अमावस्या पर पड़ता है। इसे वर-अमावस्या भी कहते है। यह व्रत व पूजन सुहागिन स्त्रियाँ ही करती है स्त्रियाँ अपने पति व पुत्र की आरोग्य, दीर्घायु व अखण्ड सौभाग्य की कामना करती है। स्त्रियाँ वट वृक्ष के समीप जाकर वट वृक्ष की पूरी विधि-विधान से पूजन करती है। वट के तूल में ब्रह्मा, मध्य में विष्णु, ऊपर शिव और समग्र में सावित्री है। महिलायें सती सवित्री की कहानी कह कर व नैवेध ' बरगदा' (वेसन तथा गुढ़ मिश्रित आटा से) चढ़ाती है। प्रसाद में 'शरबत' व 'वरगदा' को ग्रहण कर स्त्रियाँ व्रत का समापन करती है। सती-सावित्री के सम्मान में यह व्रत मनाया जाता है।

६. असाढ़ी देवता- इस महिने में सभी देवी-देवताओं को पूजने एवं 'असाढ़ी कथा' कराने की परम्परा है। यह पूजन असाढ़ के पूरे महिने तक चलता है। एकादशी को देवशयन के पश्चात् यह पूजा पूरी की जाती है। कालका माता के सवैया' मे सवा किलो आटा की पूड़ी व हलुवा बनाकर चढ़ाते है। महिलायें जंगल या बाग-बगीचों में जाकर 'वन देवताओ' की पूजा करती है। स्त्रियाँ जंगल में आटा, दाल, सब्जी आदि ले जाकर गकरिया बनाती है। स्वादिष्ट भोजन का भोग लगाकर स्वयं व परिवार के लोगों के स्नेहपूर्वक खिलाती है। इस प्रकार ग्रामीण अंचल की महिलाओं की यह वार्षिक पिकनिक है।

१०. कुनघुसू पूर्णिमा- आषाढ़ शुक्ल पूर्णिमा को बुन्देलखण्ड के प्रत्येक घर में ग्रह वधुओं का पूजन किया जाता है इसलिए यह पर्व कुनघुसू के नाम से जाना जाता है। घर के पूजा वाले स्थान पर सास या वरिष्ठ महिला चारों कोनों में दीवाल पर गोबर तथा पोतनी मिट्टी पोतकर हल्दी से 'पुतरियों' की आकृति बनाकर उसका पूजन हल्दी, चावल से करती हैं, गुड़ घी होम करती हैं। सास आरती उतारकर ऐसी कामना करती है कि परमेश्वर मेरी बहू घर में लक्ष्मी बनकर घर को धन-धान्य तथा सन्तान से भर दे । उनकी मंगल कामना करती हुई 'दूधन नहाऔ पूतन फलौ' का आशीष देती है। यह पर्व बुन्देली लोकजीवन में स्त्रियों को सम्मान प्रदान करता है। जहाँ नारियों का सम्मान होता है वहाँ देवता निवास करते हैं। यह पर्व इसी भावना को प्रकट करता है।

११. गुरुपूर्णिमा - आषाढ़ शुक्ल पूर्णिमा को ही गुरुपूनो के नाम से मनाते हैं। इस महिने में पूर्णिमा के पर्व को मनाने का महत्व है। गुरु पूर्णिमा के शुभ अवसर पर शिष्य अपने गुरुजनों का पूजन कर उन्हें श्रद्धा सुमन चढ़ाते हैं और अपने स्वर्णिम भविष्य के लिए उनसे आशीर्वाद प्राप्त करते हैं।

१२. हरजोती या हरीजोत - यह पर्व श्रावण मास की अमावस्या को मनाया जाता है। इसमें परिवार

की कुंवारी कन्याओं की पूजा उनके सम्मान के प्रति की जाती है।

यह पूजन भी कुनघुसू पूनों की तरह किया जाता है। पूजा स्थल पर कन्याओं का हल्दी से पूतरियां उनकी पूजा करते हैं। कहानी कही जाती है। यह पर्व कन्याओं के सम्मान का सूचक है तथा पारिवाारिक एकता को मजबूत करता है।

<u>**१३. सावनतीज -**</u> श्रावण शुक्ल तृतीया को बुन्देलखण्ड में सावन तीज का त्यौहार बड़े उल्लास के साथ मनाया जाता है। सावन तीज के दिन भगवान को सुन्दर कपड़े, गहनों, फूलों आदि से सुशोभित कर सुन्दर झूलों में झुलाया जाता है। आज के दिन से ही ग्रामों, कस्बों व शहरों में झूले पर सभी लोग झूलना प्रारम्भ करते हैं। झूले का यह उत्सव अत्यधिक दर्शनीय एवं महत्वपूर्ण है। आज के दिन बुन्देलखण्ड वृन्दावन जैसा प्रतीत होता है। ओरछा, झांसी और सागर में यह महोत्सव विशेष दर्शनीय है।

<u>**१४. नाग पंचमी -**</u> श्रावण शुक्ल पंचमी के दिन सांपों की पूजा की जाती है। नागपंचमी के दिन महिलायें 'बांमी' पर जाकर बांमी तथा सर्पों का पूजन कर उन्हें दूध पिलाती हैं। कुछ स्त्रियाँ घरों में ही नाग पंचमी का आलेखन कर उसमें पांच नाग की आकृतियां बनाकर पूजन करती है। यह पर्व सर्पों को प्रसन्न करने तथा परिवार को उनसे क्षति न पहुँचे इस कामना से मनाया जाता है। इस दिन सपेरे घर-घर जाकर बीन बजाकर सभी को सर्पों के दर्शन करवाते हैं और महिलायें उन्हें पीने के लिए दूध देती हैं।

<u>**१५. सावन सुदी नमें -**</u> सावन शुक्ल नवमी के दिन स्त्रियों का त्यौहार होता है। यह त्यौहार धनधान्य से पूरित रहने की मनोकामना तथा पति-पत्नी के मध्य समरसता का पर्व है। आज के दिन कुठला में अनाज भरकर गंगाजल छिड़ककर पोतनी मिट्टी व गोबर से उस पर नौ पुतरियाँ बनायी जाती हैं। महिलायें उनकी विधि-विधान से पूजन व व्रत करती हैं और ईश्वर से प्रार्थना करती हैं कि हमारा घर धन-धान्य से भरा रहे। इसी प्रसंग पर आधारित विलक्षण कहानी कही जाती है।

<u>**१६. रक्षाबन्धन-**</u> श्रावण शुक्ल पक्ष की पूर्णमासी के दिन रक्षाबन्धन का पर्व मनाया जाता है। इसपर्व का महत्व अन्य प्रान्तों की अपेक्षा बुन्दलेखण्ड में अधिक है। यह पर्व वीर आल्हा-ऊदल के समय से अधिक प्रचलित है। इस पर्व यह बहिनें अपने प्यारे भाइयों के हाथ में राखी बाँध उनके कल्याण की कामना करती हैं। अपनी सुरक्षा का भार उनके कन्धों पर डालती हैं। सबसे पहली राखी ईश्वर को समर्पित की जाती है। आज के दिन पकवान में समूंदी रोटी बनायी जाती है। रक्षाबन्धन का यह पर्व अत्यंत ही पावन व पुनीत माना जाता है और परिवार में बहन व बेटियाँ भी पूज्य मानी जाती है। इस पर्व में जाति भेद

का बन्धन परे है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि वीरांगना कर्मवती ने हुमांयु जैसे विधर्मी को इसी एक डोरे से भातृत्व के बन्धन में बांधकर अपने राज्य की रक्षा की। बुन्देलखण्ड में यह पर्व अत्यधिक महत्वपूर्ण है। इस पर्व के अवसर पर बहिन अपने भाई की प्रतीक्षा करती हुई अपने उद्गार व्यक्त करती है - "वीरन। तेरे बिन कोऊ नैयां,राखी का बंदवैया। एक दिन सावन में रैगऔ, लेव सुद मोरे भैया।"

१७. भुजरियाँ - भाद्रपद कृष्ण प्रतिपदा को राखी के त्यौहार के अगले दिन बासौ सावन या भुजरियों का त्यौहार मनाते हैं। इस पर्व को कघलियाँ का त्यौहार भी कहते हैं। सावन सुदी नमे के दिन भुंजरियों की मिट्टी पत्ते के दोनों में डाल देते हैं, जिनमें जबा व गेंहूँ वो देते हैं। गाँव की लड़कियाँ भुजरियों को ले जाकर जलाशय में विसर्जित करती हैं। ग्रामीण जन भुजरियां एक दूसरे को भेंट करके उससे गले मिलते तथा बड़ों को भुंजरियां लेते या देते समय उनके पैर छूते हैं। कई स्थानों पर भुंजरियों के मेला लगते हैं। महोबा में कीरत सागर के किनारे तथा उरई में माहिल तालाब पर ऐतिहासिक कजली मेला होता है।

१८. हरछठ - भाद्रपद कृष्ण षष्ठी (हल धर षष्ठी) को बुन्देलखण्ड में हरछठ के रुप में मनाते हैं। आज के दिन ही श्रीकृष्ण के बड़े भाई बलराम का जन्म हुआ था। इस व्रत को पुत्रवती स्त्रियाँ ही करती हैं। इस व्रत में हल चली हुई जमीन का बोया हुआ अनाज व गाय का घी, दूध आदि खाना मना है। इस व्रत में पेड़ों के फल, बिना बोया अनाज व मेवे की खीर व भैंस के दूध का ही सेवन करते हैं। हरछठ का आलेखन मिट्टी गोबर से किसी दीवाल या पटा पर बनाकर जरिया-छेवला की पूजा की जाती है। कहानी भी स्त्रियाँ कहती हैं।

१९. जन्माष्टमी- भाद्र कृष्ण अष्टमी को श्रीकृष्ण जन्मोत्सव मनाया जाता है। बुन्देलखण्ड में यह जन्मोत्सव ब्रजभूमि से किसी प्रकार कम नहीं होता है। मंदिरों में विभिन्न आकर्षक झांकियां सजाई जाती हैं और कृष्ण का जन्म रोहिणी नक्षत्र में अर्धरात्रि को सम्पन्न होता हैं जन्मोत्सव मनाते समय बाल कृष्ण की मूर्ति को पहले यमुना जल में स्नान कराकर खीरा को काटकर बीच में रखा जाता है। कुछ समय पश्चात् खीरे से मूर्ति को निकालते हैं। इसप्रकार श्रीकृष्ण का जन्म हो जाता है। मूर्ति को स्नान कराकर नवीन वस्त्राभूषण पहनाकर सिंहासन पर विराजमान करते हैं। श्रीकृष्ण जन्मोत्सव पर बुन्देलखण्ड में विशेष पकवान बनते हैं- जैसे -गुड़ का सिठौरा, पंजीरी, पंचामृत, लड्डू, खीरा तथा मिष्ठान का भोग लगता है। आरती उतारते हैं। इसके पश्चात् स्त्री-पुरुष अपना व्रत खोलते हैं।

२०. बाबू की दौज- यह पर्व भाद्रपद शुक्ल द्वितीया तथा माघ शुक्ल द्वितीया को मनाया जाता है। इस

पूजन में परिवार के कुलदेवता 'बाबू' की पूजा होती है। कई जगह इसे 'मांय बाबू' या बाबू गुसाई की पूजा के नाम से भी जाना जाता है। यह पूजन कुछ परिवारों में ही होता है। बाबू की इस पूजा में परिवार के सभी सदस्य एकत्रित होते हैं लेकिन कुंवारी कन्यायें इस पूजन को नहीं देखती हैं। पूजा की आरती की ज्योति तक लड़कियों को देखना निषेध है। पूजा देखने पर विवाह के पश्चात् लड़की ऐसे परिवार में जाती है जहाँ पर यह पूजा की जाती है तो वह पूजा में सम्मिलित हो सकती है।

२१. हरितालिका व्रत – यह त्यौहार भाद्र शुक्ल पक्ष तृतीया को मनाया जाता है। यह व्रत निर्जल रखा जाता है। इस व्रत में अन्न,फल-फूल, जल आदि कुछ ग्रहण नहीं किया जाता है। इसमें शिव-पार्वती की मिट्टी की बनी मूर्तियों की पूजा की जाती है। इस व्रत में निर्जल व्रत रहकर शिव-गौरी के समकक्ष स्त्रियां पूरी रात जागकर भजन-कीर्तन करतीं हैं। व्रत के एक दिन पूर्व महिलायें दौज के दिन सिंवई की खीर ग्रहण कर जामुन की दातुन से मुख शुद्ध करती हैं। पूजन के पश्चात् स्त्रियाँ सुबह मूर्ति विसर्जन के उपरान्त तालाब से लौटकर 'खीर' सेवन किया जाता है। इसके पश्चात् व्रत को सम्पूर्ण करते हैं।

२२. गणेश चतुर्थी – यह भाद्र शुक्ल पक्ष की चौथ को पड़ती है। गणेश जन्म चतुर्थी के रूप में भी यह पर्व मनाया जाता है। काली मिट्टी की गणेश प्रतिमा बनाकर स्त्रियां एवं पुरूष उसका पूजन करते है। इस व्रत का महत्व बुन्देलखण्ड में मराठों के शासन काल के बाद अधिक बड़ा। गणेश चतुर्थी की कहानी भी पड़ी जाती है। यह व्रत महाराष्ट्र में अधिक प्रचलित हे तथा गणेशजी वहाँ के इष्ट हैं।

कोंच, मऊरानीपुर झाँसी में गणेश उत्सव को जन्म से लेकर एकादशी के दिन जल बिहार एवं प्रतिमायें विर्सजित करने तक मनाते हैं।गणेश महोत्सव के पर्व पर भक्तगण 'गणपति बब्बा मोरया' 'उदयावर्ती लोकरया' के नारे लगाते है। यह उत्सव बुन्देलखण्ड के अधिकतर जनपदों में उत्साह पूर्वक मनाया जाता है।

२३. ऋषि पंचमी- भाद्र शुक्ल पंचमी को ऋषि-पंचमी का व्रत भी बुन्देलखण्ड में अन्य प्रान्तों की अपेक्षा अधिक मनाया जाता है। ग्रामीण अंचल की महिलायें इस व्रत को "रिग पांचे" के नाम से पुकारती है। आज के दिन महिलायें व वयस्क, लड़कियाँ व्रत रखती है एवं पूजन करती हैं। यह व्रत रजस्वला स्त्रियों को रजस्वला हो जाने पर अनजाने में वर्जित ग्रहकार्य करने के प्रायश्चित स्वरूप मनाया जाता है। इस व्रत की कथा भी पड़ी जाती है।

लकड़ी के एक पाटे पर चंदन द्वारा सप्तऋषियों की मूर्ति बनाकर उनका पूजन किया जाता है।

इस व्रत में भी हल की जोती हुई वस्तु खाना वर्जित है। समारी की खीर, भैंस का दूध, मेवा, फल-फूल आदि प्रसाद सप्त ऋषियों को अर्जित कर स्त्रियाँ स्वयं ग्रहण करती है।

२४. मौराई छठ- भाद्र शुक्ल षष्ठी को यह पर्व मनाया जाता है। जिन परिवारों में गत एक वर्ष में विवाह हुआ है, उनमें विवाह की मौर जलाशय में विसर्जित करने के निमित्त यह त्यौहार मनाया जाता है। नव-विवाहिता लड़कियों के माता-पिता लड़की की ससुराल में वस्त्र, आभूषण, गृहस्थी का सामान आदि अनेकों प्रकार की वस्तुयें नाई द्वारा भेजते है। सायंकाल महिलाओं का बुलौआ वर-पक्ष के यहाँ लगता है। सभी स्त्रियाँ मौरई छठ की सामग्री देखकर पारंपरिक गीत-गाकर मौर विसर्जित करती है। इस कार्यक्रम को "मोर सिरावौ" कहते है। 'सांउनी' तथा 'मौराई छठ' विनिमय कार्यक्रम हैं। सावन के महीने में वर-पक्ष द्वारा 'साउनी' भेजी जाती है, उसके पश्चात् कन्या-पक्ष के द्वारा मौराई छठ भेजी जाती हैं।

२५. सन्तान सप्तमी - भाद्र शुक्ल सप्तमी को बुन्देलखण्ड की सभी महिलाएँ संतान सप्तमी का व्रत करती हैं। कहा जाता है कि इस व्रत की प्रथा द्वापर काल से प्रचलित है। यह त्यौहार संतानों के कल्याण की भावना के साथ मनाया जाता है। स्त्रियाँ भगवान शिव-पार्वती की पूजा करती है। तथा व्रत रखती हैं। पूजा में शिव-पार्वती के समक्ष स्त्रियाँ अपने हाथों में सात पुआ तथा एक चूड़ी रखती हैं। स्त्रियाँ पुआ प्रसाद में ग्रहण करती है। संतान सप्तमी का व्रत आज भी समग्र बुन्देलखण्ड में श्रद्धा पूर्वक मनाया जाता है।

२६. गड़ा लेनी आठें - यह भाद्रपद शुक्ल अष्टमी को मनाया जाता है। आज के दिन महालक्ष्मी पूजन का संकल्प किया जाता है। यह संकल्प 'गड़ा' के रूप में लिया जाता है। गड़ा से तात्पर्य है 'ग्रन्थि गुंथित डोरा' इसमें सोलह गाठें लगाई जाती है। 'गाँठे' बाधना- किसी कार्य को करने का संकल्प पूरे पक्के मन से करने के रूप में होता है। आज के दिन पंडित 'गड़ा' यजमान को सौपते है। यजमान पन्द्रह दिन उसकी नित्य पूजा करके १६ वें दिन, यानी क्वाँर कृष्ण आठें को महालक्ष्मी की पूजा करते हैं। गड़ा लेते समय महालक्ष्मी व्रत महात्म्य की कथा सुनाई जाती हैं।

२७. डोल ग्यास - यह पर्व भाद्रपद शुक्ल एकादशी को पड़ता है। यह पर्व 'जल-बिहार' नाम से भी जाना जाता है। इस जल के बिहार का अपना विशेष महत्व है। वर्षाकाल में नदियों का जल अपवित्र माना जाता है। उस जल को पवित्र करने के लिए भगवान उसमें अपने चरण पखारते हैं,जिससे वह पवित्र हो जाता है और फिर वही जल मानव-समाज के कार्य में आता है। इस यात्रा को 'डोल' कहते हैं। यह पर्व 'डोल ग्यास' कहलाता है। आज के दिन महिलायें व्रत रखती, एकादशी महात्म्य सुनती हैं।

२८. ओक द्वादशी – यह पर्व भाद्रपद शुक्ल द्वादशी को मनाते है। आज के दिन गाय-बछड़े की पूजा की जाती है। प्रसाद में बेसन की पपरियाँ, उबले तथा तले हुये चने बाँटे जाते हैं।

२६. अनंत चतुर्दशी – भादों शुक्ल चतुर्दशी को इस क्षेत्र में अनन्त भगवान की अर्चना बड़ी श्रद्धा भावना से प्रत्येक घर में होती है। इस व्रत को प्रायः सभी स्त्री-पुरूष करते है।दिन में व्रत को प्रायः सभी स्त्री-पुरूष करते हैं। दिन में व्रत रखकर मध्याह्न में पूजन करते हैं। एक चौक के ऊपर पटा पर अनंत रखते हैं। अनंत सूत या सोम के धागा से चौदह बिंदिया हल्दी से लगाकर उस पर गुंथे आटे की लोई रखकर चौदह पर सरकाई जाती है तथा 'धाप अनंत' कहकर पूजा करते हैं। पूजन के समय अनन्त भगवन की कथा कही जाती है। पूजन के बाद ब्राह्मण को भोजन कराते हैं।

३०. बुढ़वाँ मंगल – भाद्रपद माह के अंतिम मंगलवार को 'बढ़वा मंगल' का मेला हनुमान मंदिरों पर भारी जन शैलाब के साथ लगता है। बुन्देलखण्ड के निवासी हनुमान दर्शन के लिए अनेकों सिद्ध स्थानों पर जाकर पूजन करते एवं व्रत रखते है। प्रसाद में देशी घी के मीठे पुआ,वेसन के लड्डू, पेड़ा, बताशा आदि का भोग लगाते है। यह प्रसाद सभी भक्तगणों को वितरित किया जाता है।

३१. कनागत – भाद्रपद शुक्ल पक्ष की पूर्णिमा से आश्विन (क्वाँर) कृष्ण पक्ष की अमावस्या तक पितृ-पक्ष मनाते है। बुन्देलखण्ड में इसे कनागत कहते है। यह पर्व पितरों की पूजा स्मरण तथा दानपुण्य का पर्व है। इस अवधि में शुभ कार्य करने का निषेध होता है। इसे बुन्देली शब्दावली में 'करये दिन' भी कहते है। 'करये' का अर्थ हैं 'कड़ुवा'। रिश्ता विवाह आदि की बात इन दिनों प्रारम्भ नहीं की जाती है।

३२. महालक्ष्मी – यह क्वाँर माह के कृष्ण पक्ष की अष्टमी को होती है। यह व्रत भी सौभाग्यवती व पुत्रवती स्त्रियाँ ही करती हैं। इस पर्व में महालक्ष्मी के साथ-साथ हाथी की भी पूजा होती है। आज के दिन विशेष प्रकार का पकवान बनाया जाता है। जिसको 'सुरा' कहते है आज के दिन जलाशय में स्नान का महत्व हैं। सोलह बार स्नान कर सोहल बार सुरा खाकर पूजा करनी होती है। ऐरावत हाथी 'काली मिट्टी' का बनाया जाता है। इसके ऊपर महालक्ष्मी तथा राजारानी की सवारी बनाई जाती हैं।

३३. मामुलिया – अश्विन कृष्ण पक्ष में कन्याओं का एक सुन्दर त्यौहार इस क्षेत्र में होता है, यह मामुलिया के नाम से प्रसिद्ध है। इस त्यौहार में अविवाहित लड़कियाँ वेर वृक्ष की डाली को पुष्पों से संजोकर अपने पुरा-पड़ोसियों के द्वारों पर जाकर उसका प्रदर्शन करती हुई यह लोकगीत गाती है।

"ल्याओ-ल्याओ, चंपा, चमेली के फूल, सजाओ मेरी मामुलिया।

मामुलिया के आये लिवौआ, झमक चली मेरी मामुलिया।।"

पड़ोसियों से बालिकाओं को उपहार में जो कुछ प्राप्त होता है, उन पैसों या गेंहू से खाने की कोई वस्तु खरीद कर आपस में वितरित कर लेती हैं।

३४- नवरात्रि-सुआटा – अश्विन शुक्ल प्रतिपदा से दुर्गा-पूजन (नवरात्रि) प्रारम्भ होता है। आज के दिन से ही 'सुआटा' का मनोरम खेल प्रारम्भ हो जाता है। बुन्देलखण्ड की कुवांरी कन्याओं के लिए 'सुआटा' अनोखा खेल है। इस खेल का अलग विधान है। इस खेल में सम्मिलित होने वाली बालिकायें सुआटा को मिट्टी से दीवाल पर थापती हैं। राजा हिमांचल निःसन्तान थे। उनकी कन्यायें जन्म लेकर काल कलवित हो जाती थी। राजा को इस रहस्य का पता चला कि 'सुआटा' नाम का राक्षस (दैत्य) उनकी कन्याओं का भक्षण करता है। इस प्रकार दैत्य को प्रसन्न करने के लिए पूजा का विधान वनाया गया, वही आज के सुआटा का प्रतिरूप है।

३५. दशहरा – अश्विन मास की शुक्ल पक्ष की दशमी के दिन यह पर्व विजयादशमी (दशहरा) इस प्रान्त में बड़े हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता हैं इस पर्व पर बर्षा ऋतु की समाप्ति एवं शरद ऋतु का आगमन प्रारम्भ होता है। इसी दशमी के दिन मर्यादा पुरूषोत्तम राम ने अत्याचारी, दुराचारी महाबली दैत्य रावण का बध कर विभषण को लंका का राजा नियुक्त किया था। आज के दिन नीलकंठ, मछलियों के दर्शन अत्यंत शुभ माने जाते है तथा मंदिरों में भगवान पर 'वीरा' (पान) 'बताशा' चढ़ाया जाता है। आस-पड़ोस के लोगों, घर परिवार एवं रिश्तेदारों को खिलाया जाता है। यह पर्व श्रीरामचन्द्र जी के 'विजय पर्व' के रूप में भी मनाया जाता है।

३६. शरद पूर्णिमा – यह पर्व बुन्देलखण्ड में क्वाँर की शुक्ल पक्ष की पूर्णमासी के दिन मनाया जाता है। आज के दिन से ही कार्तिक स्नान शुरू होता है। मंदिरों में उत्साह एवं उल्लास के साथ पूर्णिमा के दिन कीर्तन और भजन होता है। पुराणों के अनुसार चन्द्रमा में अमृत का वास होता है और शरद पूर्णिमा की रात को पृथ्वी लोक पर बरसता है जो व्यक्ति इन किरणों का आनंद उठाता है, उसे संजीवनी शक्ति प्राप्त होती है। शरद पूर्णिमा के दिन स्त्रियाँ खीर बनाकर चन्द्रमा का भोग लगाकर पूरी रात खुले आसमान के नीचे रख देती है। जिसमें रात को अमृत गिरता है ऐसा लोगों का मानना है। यह खीर को खाने से अनेक रोग व्याधियाँ भी दूर होती है।

३७. करवा चौथ – कार्तिक कृष्णपक्ष चौथ को यह पर्व हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है। आज के

दिन सौभाग्यवती स्त्रियाँ अपने पति की दीर्घायु की कामना हेतु निर्जल व्रत रखती हैं। रात्रि को चन्द्रोदय होने के पूर्व चन्द्रमा को अर्ध्य देकर ही जलपान ग्रहण करती हैं। स्त्रियां सोलह श्रृंगार करती हैं। महिलायें करवे की पूजा कर सास के पैर छूकर आशीर्वाद प्राप्त करती है। स्त्रियां अनेकों प्रकार के व्यंजन तैयार कर चन्द्रमा एवं गणेश जी को प्रसाद अर्पित करती है। आज के दिन नये वस्त्राभूषण धारण किये जाते हैं। कहानी कही जाती है तथा ब्राह्मण को दान दिया जाता है।

३८. अहोई अष्टमी – (बैमाता की पूजा) यह कार्तिक कृष्ण अष्टमी को पड़ती है। इस पर्व को कई जगह 'अहोई आठें', होई मांई की पूजा तथा कई जगह 'बैमाता की पूजा' भी कहते है। इस पूजन में दीवाल पर एक आलेख बनाया जाता है। इस आलेखन के समकक्ष रात्रि में आठ नांदों में मिठाई तथा फल भरकर रखे जाते है। पकवानों से बनी एक चारपाई रख देते हैं श्रद्धापूर्वक कहानी कही जाती है। पूजन के पश्चात् भजन-कीर्तन आदि का गान करते हैं।

३९. धनतेरस – यह कार्तिक कृष्ण पक्ष की तेरस को मनाया जाता है। आज के दिन नवीन वस्तुओं को खरीदना (ताँबा, पीतल, स्टील के वर्तन व सोने, चाँदी के आभूषण) शुभ माना जाता है। धनतेरस के दिन यमराज और भगवान धनवन्तरि की पूजा का विशेष महत्व है। आज के दिन घर के द्वार पर घी के पाँच दीपक जला कर रखे जाते हैं।

४०. नरक चौदस – कार्तिक माह की कृष्ण चतुर्दशी को नरक चतुर्दशी कहते हैं। इस दिन को छोटी दिवाली भी कहते हैं। चतुर्दशी का यह दिन उत्साह, उल्लास, श्रद्धा एवं पवित्रता के साथ मनाया जाता है। इस दिन सरसों के तेल के चौदह दिये घर के विभिन्न भागों में रखकर जलाते हैं।

४१. दीपावली – कार्तिक मास की अमावस्या को यह त्यौहार मनाया जाता है। यहाँ पर दीपावली के पर्व का विशेष महत्व है। यहाँ के निवासी यह पर्व हर्ष, उल्लास व उत्साह के साथ मनाते हैं। इस दिन कृष्ण पक्ष होने के कारण रात्रि में अन्धकार का साम्राज्य रहता है लेकिन पृथ्वी पर लाखों दीपों का प्रकाश उस अन्धकार को नष्ट कर देता है। पटाखों की गूंज से कोलाहल फैला रहता है। उस दिन की रात बड़ी सुहावनी प्रतीत होती है। घर में सभी नये वस्त्र पहनते व अन्न, फल, मेवा, मिष्ठान सभी का प्रसाद लगाया जाता है। यह घरों की सम्पूर्ण साफ-सफाई का भी त्यौहार है।

दीपावाली की पारंपरिक पूजा घर के भीतर 'सुरौती से' होती है। पूजा घर में भूमि या दीवालों पर गोबर से लीप पोत कर 'सुरौती' का आलेखन बनाते हैं। वहाँ पर लक्ष्मी-गणेश की मूर्ति स्थापित कर

पूजन करते हैं। सातियाँ बनाते हैं। घी व तेल के दीप जलाते हैं। बच्चे पटाखे चलाते हैं। व्यापारी वर्ग अपनी-अपनी दुकानों पर लक्ष्मी पूजन करते हैं। मंदिरों में सजावट होती है। बाजारों, दुकानों, इमारतों पर भी प्रकाश की झांकियां दर्शनीय होती हैं।

४२. गोधन – दीपावली के उपरांत कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा को यह पूजन होता है। इसे गोवर्धन पूजन भी कहते हैं। घर के बीच आंगन में गोबर से 'गोवर्धन' बनाते है। इसे 'गोधन' भी कहते है। गोधन से पूजाघर तक खड़िया तथा गेरू की दो समानान्तर रेखायें खीचते हैं। पूजा स्थल के पास कोरे घड़े आदि रखकर पूजन किया जाता हैं। इस पूजन का प्रसाद केवल बालकों को ही दिया जाता है। इस दिन 'समूदी रसोई' बनती है। मिट्टी के पात्रों में पकवान भरकर, परिक्रमा कर पूंजन समाप्त किया जाता है। आज के दिन द्वापर युग में श्रीकृष्ण ने अपनी दायीं हाथ की छिंगुरी पर गोवर्द्धन पर्वत धारण करके इन्द्र के प्रकोप से ब्रज मण्डल को बचाया था।

४३. भैया दोज – यह पर्व कार्तिक शुक्ल द्वितीया को मनाया जाता है। इस पूजन में द्वार पर दोनों तरफ गोवर की छोटी-छोटी मूर्तियाँ स्थापित की जाती है। इनमें कृषक जीवन से संबन्धित मूर्तियाँ मनायी जाती है। इसके पश्चात् स्त्रियाँ विधिवत् पूजन करके मूर्ति स्थापित करती है। भाई बहन के घर जाकर भोजन ग्रहण करता है।भाई बहन से टीका करवा कर कुछ उपहार देकर अपने घर वापिस लौट आता है।

४४. गोपाल अष्टमी – यह पर्व कार्तिक शुक्ल अष्टमी को मनाते है। इसमें गाय की पूजा की जाती है।

४५. इच्छा नौमी – यह पर्व कार्तिक शुक्ल नवमी को मनाया जाता है। इस दिन स्त्रियाँ आँवले के वृक्ष के समीप जाकर पूजन कर उसकी छाया में परिजनों के साथ भोजन करती है। प्राचीन मान्यता है कि जो व्यक्ति इच्छा नौमी के दिन आँवले के वृक्ष के नीचे भोजन कर मन में जो भी इच्छा करते है वे पूर्ण होती है। आज के दिन से ही आँवला खाना प्रारम्भ होता है।

४६. देवोत्थानी एकादशी – कार्तिक शुक्ल एकादशी को यह व्रत किया जाता है। आज चतुर्दशी को भगवान शंकर का उत्सव मनाया जाता है। इस पर्व को रात्रि में, आँगन में ईख की झोपड़ी बनाकर उसमें भगवान की पूजा के बाद धान डालकर परिक्रमा लगाते हैं। इस त्यौहार के पश्चात् सारे शुभ कार्य शुरू होने लगते है। "गया गदाहार प्रयाग माधव, उठो देव तुव वारे आये

क्वारिन के ब्याह कराओ, विवाहिन के चलाव कराओ"

४७. संक्रान्ति – यह पर्व अंग्रेजी महीनों के अनुसार १४ जनवरी को पड़ता है। हिन्दी विक्रमीय पंचाग

से तिथि निश्चित नहीं होती है। आज के दिन सूर्योदय से पूर्व स्नान करने के पश्चात् अग्नि पर तिल-घी चढ़ाते है इस पर्व पर तिल के लड्डू, तिल व खिचड़ी दान करते है। कई स्थानों पर मेले लगते है। 'समूदी रसोई' बनाई जाती है।

<u>४८. भंवरात -</u> मकर संक्रान्ति पर्व के अगले दिन 'भंवरात' मनाते है। 'भंवरात' के दिन रात में मिट्टी के हाथी, घोड़ा, गाड़ी एवं चकिया की पूजा करते हैं। लड़के घोड़ा से एवं लड़कियाँ मिट्टी की चकिया से (ग्रामीण अंचल) में खेलती हैं। सर्वप्रथम चौक पूरकर उस पर लकड़ी का सिंहासन रखकर उस पर घोड़ा, चकिया, हाथी, गाड़ी एवं गौनों सहित रखकर उनकी विधि पूर्वक पूजा करते है। गौनों की संख्या परिवार के सदस्यों की संख्या के बराबर होती है। पकवानों में अनेकों तरह के लड्डू - मूँग, आटा, काली-सफेद तिली, खील, लइया, देवल तथा मेवा आदि के बनते है।

<u>४९. बड़े गणेश -</u> माघ महीने के कृष्ण पक्ष को चतुर्थी को बड़े गणेश का पूजन होता है। आज के दिन श्री गणेश भगवान का व्रत, स्मरण, वंदन उत्साह के साथ किया जाता है। तिल व बेसन के लड्डुओं का भोग लगाया जाता है। मनुष्य अपने दुख एवं क्लेशों से मुक्ति पाने के लिए विघ्न विनायक से प्रार्थना करते हैं।

<u>५०. बसन्त पंचमी -</u> माघ शुक्ल पक्ष की पंचमी के दिन बसंत पंचमी का पर्व मनाया जाता है। बुन्देलखण्ड का प्रमुख त्यौहार वसन्तोत्सव-ऋतोत्सव का एक प्रमुख पर्व है। वसन्त ऋतु के आगमन पर निर्जीव वन वृक्ष परिवर्तन ही जीवन का सास्वत नियम है।" आज के दिन माँ सरस्वती का जन्मोत्सव मनाया जाता है। पीले पुष्प, बेसन के लड्डू आदि का भोग लगाया जाता है। तथा पीले वस्त्र धारण किये जाते हैं। विभिन्न विद्यालय में सरस्वती पूजन के साथ प्रसाद वितरण किया जाता है। ऋतुओं में बसन्त ऋतु श्रेष्ठ है। कविकुल शिरोमणि कालीदास का बसन्त वर्णन-

> "द्रुमाः सपुष्पाः सलिलं सपद्ध, स्त्रियः सकाम पवान सुगन्ध सुखाः।
> प्रदोषा दिव साश्चरभ्यः, सर्व प्रिये चारुतर बसन्ते ।।"

<u>५१. सूर्य पूजा -</u> माघ माह के आखिरी रविवार को सूर्य भगवान को पूजन किया जाता है। इस पूजन के लिए घर के आँगन या घर के बाहर चबूतरे पर गेहूँ के आटे से बनी अठवाई (छोटे आकार पूड़ी) वृत्ताकार सजाते है तथा बीच में गोल कटोरी में खीर रखते हैं। यह रचना सूर्य की तरह बन जाती है उसका पूजन करके खीर, अठवाई प्रसाद में बाँटते है और कथा कहते हैं।

<u>५२. शिवरात्रि -</u> फाल्गुन मास की कृष्ण पक्ष की चौदस के दिन शिवरात्रि का पर्व मनाया जाता है।

शिवजी के विशाल मंदिरों में प्रातः काल आज के दिन भारी मात्रा में भक्तगण दर्शन के लिये जाते है। भक्त पूजन में बेलपत्र, धतूरे के गट्टा, गेहूँ की बालें, बेर, शकला, जल, हल्दी, चावल एवं पुष्प आदि का प्रयोग करते हैं। आज के दिन शिव एवं पार्वती मंगल परिणय के बंधन में बँधे थे। इस दिन रात्रि जागरण, भजन-कीर्तन आदि होते हैं।

५३. होलिकोत्सव – फाल्गुन माह की शुक्ल पक्ष की पूर्णिमा को यह पर्व मनाया जाता है। यह पर्व ग्रीष्म ऋतु के आगमन पर अत्यन्त हर्ष के साथ मनाया जाता है। होली के शुभ अवसर पर नर-नारी होली के रंगों से मस्ती में झूम उठते हैं। होली के आठ दिन पूर्व होलिकाष्टक आरम्भ हो जाता है। इसमें घर में गोबर के बरुले आदि बनाये जाते हैं, इनके बीच में एक छेद होता है। होली के दिन इन बरुलों की मालायें बनाकर घर में छोटा डंडा गाड़कर धरती पर स्थापित कर होलिका दहन किया जाता है। होली के पर्व पर एक-दूसरे को गुलाल से टीका करते, रंग डालते एवं गले मिलते हैं। यह पर्व साम्प्रदायिक सद्भाव एवं एकता बनाये रखने में भी सहायक है। इस त्यौहार में नये-नये पकवान गुजियां, लड्डू, पपड़िया, नमकीन सेव के लड्डू आदि का विशेष महत्व है।

५४. भाई दोज – होली के एक दिन बाद भाई दौज का पर्व आता है, इसे होली की दौज 'यम द्वितीया' भी कहते हैं। बहिन गोबर की दौज की पूजा कर अपने भाई को टीका कर मिष्ठान खिलाती हैं और भाई के दीर्घायु की भगवान से प्रार्थना करती हैं। बहिन अगर अपनी ससुराल में होती है तो भाई बहिन के घर जाकर टीका करवाता है और भोजन ग्रहण करता है। यह बुन्देलखण्ड की विशेष रीति है। भाई दौज का यह पर्व वर्ष में दो बार पड़ता है। पहली दीवाली की दौज, दूसरी होली की दौज ।

५५. अन्य पूजन, व्रत व अनुष्ठान – बुन्देलखण्ड उत्सव प्रिय क्षेत्र है। यहाँ पर किसी न किसी घर में कोई न कोई कार्यक्रम होता ही रहता है। त्यौहारों के अलावा यहाँ पर स्त्रियाँ अपने परिवार की मंगल कामना हेतु तथा अनिष्ट निवारण के लिए अनेक प्रकार की सुहागलें करती हैं। इस व्रत में केवल सौभाग्यवती स्त्रियाँ ही भाग लेती हैं। इस पूजन की निश्चित तिथि नहीं होती है। इस क्षेत्र में निम्न प्रकार की सुहागलें होती हैं। गौरइयां, हुर्रइयां, दशारानी, बीजासेन, संकटा तथा पुरखन(सौतन) की सुहागलें आदि।

दशारानी – गाय ब्याने तथा तुलसी के पौधे में पहली बार 'बाल' आने पर बुन्देलखण्ड की स्त्रियाँ दशारानी का व्रत रखती हैं। इस व्रत में गड़ा लेने के पूर्व दस दिन नियमपूर्वक व्रत एवं पूजन किया जाता है। प्रतिदिन एक कहानी सुनी जाती है। इस प्रकार दस दिन तक दस कहानियां सुनी जाती

हैं। दसवें दिन दशारानी की सुहागलें की जाती हैं।

मलमास – जिस वर्ष अधिमास पड़ता है। उस महीने 'मलमास' नहाया जाता है। मलमास के महीने में कच्ची मिट्टी के १०८ शिवलिंग बनाकर प्रतिदिन उनका पूजन कर वेलपत्र चढ़ाकर उन्हें जलाशय में विसर्जित करते हैं। यह कार्यक्रम पूरे माह चलता है। रामचरित मानस का पाठ होता है। आखिरी दिन शिवजी के मन्दिर में पूजन कर कन्याओं को भोजन करवाने के पश्चात् उन्हें दान दक्षिणा देकर विदाई करते हैं।

सोमवती अमावस्या – सोमवार के दिन पड़ने वाली अमावस्या 'सोमवती अमावस्या' कहलाती है। आज के दिन स्त्री-पुरुष स्थानीय तीर्थों में जाकर पूजन करते हैं। महिलायें तुलसी या पीपल के वृक्ष के १०८ परिक्रमा लगाती हैं। पूजन के पश्चात् भोजन ग्रहण करती है।

मंगलवार व्रत – मंगलवार के दिन हनुमान मंदिरों पर 'चोला' चढ़ाया जाता है। घृत मिश्रित सिन्दूर का लेपन हनुमान जी की प्रतिमा पर किया जाता है तथा नैवेद्य अर्पित कर कपूर व घी की आरती की जाती है। यह पूजा स्त्रियों व लड़कियों के लिए निषेध है। इसे पुरुष वर्ग के लोग ही करते हैं।

बुन्देलखण्ड ऋषियों की तपोभूमि रही है। यहाँ पर अनेकों अनुष्ठान व्रत पूजन मंदिरों एवं घरों में अनिष्ठ को दूर करने के लिए किये जाते हैं। महाकाली जप, शिर्वाचन, महामृत्युंजय जप एवं शतचण्डी आदि ऐसे ही महाअनुष्ठान में आते हैं। ये अमंगल को दूर करने वाले हैं।

२. लोकदेवता –

बुन्देलखण्ड के प्रत्येक क्षेत्र में लोक देवता एवं स्थान देवताा की पूजा की जाती है। लोकदेवता वह देवता है,जो लोककल्याण करें। इसी भावना को लेकर लोकदेवता की पूजा की जाती है। वह लोक द्वारा मान्य और प्रतिष्ठित होता है। प्रत्येक इन्सान किसी न किसी अभाव से पीड़ित रहता है,और उससे छुटकारा पाने की आशा में वह किसी तरह प्रयत्न करता है। जब वह सभी तरह से निराश हो जाता है, तो वह देवताओं की शरण में जाता है, वहाँ पर मानसिक संतुष्टि प्रसाद रुप में अवश्य प्राप्त होती है। यह आवश्यक नहीं है कि जो देवता एक गाँव या कस्बे में पूजित हो, वही देवता दूसरे गाँव या कस्बे में पूजित हो।

विचारकों के अनुसार देवताओं का वर्गीकरण तीन भागों में लिया जा सकता है–

१. **लोकदेवता**– हरदौल, दूलादेव, मैकासुर, हीरामनदेव, कारसदेव

२. **ग्राम्य देवता**– खैरमाता, ठाकुर बाबा, बेलदार बाबा, खाती बाबा, महतर बाबा, कोरी बाबा

३. स्थान देवता- घटोइया बाबा, भेड़िया बाबा आदि।

'लोक' में देवता कई तरह के होते है। भारत देश में विभिन्नता में भी एकता है। इसी तरह बुन्देलखण्ड अंचल में अनेक प्रकार के लोग निवास करते है,और अलग-अलग देवी देवताओं का पूजन अर्चन करना यहाँ की परम्परा है।

"डा० वासुदेवशरण अग्रवाल के अनुसार- वेद और लोक की कोटियों के आधार पर वैदिक देवता और लोक देवता के दो वर्ग बनाये गये है। उनके अनुसार वैदिक देवता टकसाली और पद प्रतिष्ठा में बहुत ऊँचे हैं। जबकि दूसरे घुटभैये देवता हैं। क्योंकि उनका संबंध आदिम जातियों से है अथवा उनकी परम्परा सामान्य लोक में हैं। एक सीमा तक तो श्री अग्रवाल की टिप्पणी अपना औचित्य रखती है, पर लोक देवताओं और लोक देवियों को 'घुटभैये' कहना इसलिए ठीक नही है कि वे लोंक द्वारा स्वीकृत देवता है, जबकि वैदिक देवता एक विशिष्ट वर्ग या संप्रदाय द्वारा मान्यता प्राप्त होते हैं।

लोक देवताओं को निम्न वर्ग में रखा जा सकता है-

१. प्रकृति परक देवता- वृक्ष, भूमि, पर्वत, नदी, पवन, सूर्य, चन्द्र आदि।

२. अनिष्टकारी देवता- अग्नि, सर्प, भूत, प्रेत, आँधी, मृत्यु आदि

३. आदिवासियों के देवता- बड़ा देव, ठाकुर देव, नारायण देव, धनसेन देव आदि।

४. स्थान परक देवता- गाँव की देवी, खेरमाई, मिड़ोइया, घटोइया, पौंरिया बाबा आदि।

५. जाति परक देवता- कारसदेव, ग्वालबाबा और गुरैयादेव(अहीरों के) मसानबाबा(तेलियों के) भियाराने (काछियों के), गोंड़बाबा आदि ।

६. अतिप्राकृत देवता- यक्ष, गंधर्व, भूत, राक्षस या पानव, नाग आदि ।

७. स्वास्थ्यपरक देवता- गाँव की देवी, खेरमाई, भिड़ोइया (खेत की मेड़ के देवता), घटोइया (घाट के देवता), पौंरिया बाबा आदि ।

८. अर्थ या समृद्धि-परक - मणिभद्र, कुबेर, लक्ष्मी, नाग आदि ।

९. विवाहपरक देवता- दूलादेव, हरदौल, पार्वती या गौरी, गणेश आदि ।

१०. शक्तिपरक देवता- शिव, दुर्गा, काली, हनुमान, चंडिका, भैरोंदेव आदि ।

११. वरदापी देवता- शिव, इन्द्र, वासुदेव, राम, शारदामाई, दशारानी आदि ।

१२. कुलदेवता- गोसाई बाबू, सप्तमातृकाएँ, खुरदेवबाबा आदि ।

१३. संतानपरक देवता- रक्कस बाबा, बीजासेन, षष्ठीदेवी, बेइया माता आदि ।

१४. विघ्नहरण देवता- गणेश, पितृदेव, संकटा देवी आदि ।

निम्न देवी-देवताओं में सबका अपना-अपना अलग महत्व है। निश्चित समय एवं परिस्थिति के आधार पर इनका पूजन-अर्चन किया जाता है।"[1]

एक लोक प्रसिद्ध उक्ति है- "भक्ती द्रविड़ उपजी लाये रामानंद' जिसका आशय यह है कि भक्ति का मूल द्रविड़ों में है। यह सिद्ध हो चुका है कि मूर्तिपूजा और अवतार की कल्पना द्रविड़ों से वृक्ष पूजा और बलि कोलों से तथा तंत्र-मंत्र किरातों से आये है। इस जनपद में भक्ति का स्रोत गोंड़ों द्वारा प्रवाहित किया गया था । उनके बड़े देव महादेव के रूप में देवों के देव बन गये, ठाकुरदेव गाँव भर के ठाकुर हो गये और खेरमाई गाँव भर की खेर देवी बन गयी ।" अतः यह कहा जा सकता है कि किसी एक जनपद की जंजीरों में लोकदेवत्व को जकड़ा नहीं जा सकता है।

वीर हरदौल- बुन्देलखण्ड के लोकदेवताओं में सबसे अधिक पूज्य एवं मान्य वीर हरदौल है। गाँव-गाँव में इनके नाम के चबूतरे बने हुए है। ओरछा नरेश वीरसिंह देव बुन्देला के पुत्र जुझार सिंह व हरदौल थे । जुझार सिंह हरदौल के बड़े भाई थे । इस राज्य में राजा के छोटे भाई को दीवान कहते थे । दीवान को भाई जुझार सिंह व रानी का अपार स्नेह प्राप्त था । भाभी के निःसंतान होने के कारण हरदौल को अधिक स्नेह करती थी । हरदौल ज्यादातर अपना खाली समय महल में ही विताते थे । दीवान हरदौल से जलने वाले किसी चुगल खोर ने जुझार सिंह को भड़काया । हरदौल का महलों में अधिक रहना रानी के प्रति जनता के मन में संदेह पैदा कर सकता है। पहले तो जुझार सिंह ने इस बात को टाल दिया, लेकिन बार-बार कहने पर उनका संदेह दृढ़तर हो गया । राजा ने अपनी पत्नी से अनुरोध किया कि तुम्हें अपने को निर्दोष सावित करने के लिए हरदौल को विषाक्त भोजन देना होगा । रानी की परीक्षा की घड़ी बड़ी ही जटिल एवं दृढ़ थी ।एक ओर पतिव्रत धर्म और दूसरी ओर पुत्रव्रत वीर हरदौल । वीर हरदौल ने अपनी मातृस्वरूपा भाभी को परीक्षा में खरा उतारने के लिए जानबूझकर विषयुक्त भोजन ग्रहण कर अपने प्राणों का उत्सर्ग किया । उनका पार्थिव शरीर नहीं रहा पर वे सदा के लिए अमर हो गये ।उनके साथ उनके अनुचर 'महतर' ने भी सदा की भाँति उस दिन भी उनके जूठे भोजन को पाकर अमरत्व और देवतत्व को प्राप्त हुआ । इसलिए वीर हरदौल के चबूतरे के पास 'महतर बाबा' का चबूतरा भी होता है।

---

१. बुन्देलखण्ड की लोकसंस्कृति का इतिहास - नर्मदा प्रसाद गुप्त (पृ० संख्या-२७६)

हरदौल की बहिन कुंजाबाई की पुत्री का विवाह था । बुन्देलखण्ड में विवाह के समय भाई के यहाँ 'भात' का निमंत्रण देने की परम्परा होती है। बड़े भाई जुझार सिंह को बन्धु हत्या को दोष लगा हुआ था। बहिन किसको निमंत्रण दे ? कुंजाबाई वीर हरदौल के चबूतरे पर गई और उन्हें निमंत्रण दिया । मन ही मन अश्रुपूरित हो कुंजाबाई वहाँ से वापिस अपने घर लौट आई । अपनी भाँजी की शादी में वीर हरदौल सारी सामग्री सहित आये और उनकी छाया सभी को दिखाई दी। तभी से विवाह के शुभ अवसर पर सर्वप्रथम हरदौल लाला को आमंत्रित किया जाता है। इस अंचल में हरदौल गणपति की तरह पूज्य है। हरदौल के साथ इनके भानेज दामाद 'दूलादेव' की पूजा होने लगी ।

दूलादेव- यह हरदौल (भानेज दामाद) व कुंजाबाई के दामाद थे। लाला हरदौल ने अपने दामाद को बारह गाँव दहेज में दिये थे । उन गाँवों में हरदौल की पूजा नहीं होती है। 'दूलादेव' का पूजन हरदौल के सहयोगी देवता के रुप में होता है। दूलादेव का चबूतरा हरदौल के चबूतरे के निकट बनाया जाता है। पूजन में दूल्हे का बेष, नारियल एवं पकवान चढ़ाये जाते है। सफेद व केसरिया या लाल रंग का झण्डा चढ़ाते है। ऐसा माना जाता है कि विवाह के पूर्व इनके पूजन करने से विवाह में विघ्न-बाधायें नहीं आती है।

रतनगिरी की माता - सेवढ़ा से आठ मील दक्षिण-पश्चिम की ओर रतनगढ़ नामक स्थान है जो कि दतिया जिले में है। घने जंगल के बीचों-बीच यह स्थान अत्यन्त रमणीक है। यहाँ पहाड़ी पर देवी का प्राचीन मन्दिर बना हुआ है। जिन्हें 'रतनगढ़ की माता' के नाम से जाना जाता है। इनकी ख्याति दूर-दूर तक सिद्धपीठ के रुप में है। यहाँ सात-आठ किमी० दूरी पर देवगढ़ का किला है जो आज भी अच्छी स्थिति में है।

कार्तिक शुक्ल द्वितीया को यहाँ एक मेला भरता है जिसमें अनेकों लोग मनौती मनाने के लिए आते हैं, देवी के पास ही कुंवर साहब का चबूतरा है। यहाँ पर मुसलमानों का युद्ध स्मारक हजीरा पास में ही बना हुआ है। 'हजीरा' उस स्थान को कहते हैं जहाँ हजार से अधिक मुसलमान एक साथ दफनाये गये हों। विसेण्ट स्मिथ ने इस देवगढ़ का उल्लेख किया है जो ग्वालियर से दस मील की दूरी पर है।

कुँवर साहब - कुँवर साहब रतनगिरि के भाई थे। किसी भी इन्सान व पशु को सर्प द्वारा काटने पर प्रायः कुँवर साहब के नाम का बँध लगाया जाता है। जिससे विष का प्रभाव सारे शरीर में व्याप्त नहीं होता है। यह बंध कुँवर साहब की आन देकर उस स्थान के चारों ओर उंगली फेर देते है, इसी को बंध कहा जाता है। दीपावली के पश्चात् पड़ने वाली द्वितीया के मेले में इस चबूतरे के पास सर्प दंश वाले ऐसे लोगों और गाय, बैल, भैंस असदि के बंध काटते ही उस व्यक्ति को मूर्छा दूर हो जाती है।

मातृका पूजन- "शास्त्रों में षोडषमात्रिका, सप्तधृतमातृका का उल्लेख पाया जाता है, मांगलिक अवसर पर इनके आवहन पूजन के मंत्र भी है, जिनसे इनकी पूजा की जाती है। इसे मातृपूजा कहा जाता है। मांगलिक अवसर पर कल्याण प्राप्ति और कार्य की निर्विघ्न सम्पन्नता के लिए कहीं गोबर तो कहीं मिट्‌टी अथवा शक्कर की पुतलियाँ बनाकर उनकी प्रतिष्ठा एवं पूजा की जाती है। विवाह आदि कार्य सम्पन्न हो जाने पर इन्हें विदा किया जाता है। कुल देवता और मातृका को मिलाकर 'मायं बाबू' की पूजा कहा जाता है। निषेधपरक अर्थ में देवी-बाबू की पूजा भी कहा जाता है। सहयोग के लिए कहा जाता है अथवा निषेधपरक अर्थ में देवी-बाबू भी कहा जाता है। सहयोग के लिए कहा जाता है- हमारे उनके माय बाबू एक ही है। असहयोग के लिए कहा जाता है- हमारे उनके देवी बाबू अलग-अलग है।"२

मैकासुर- मैकासुर का पूजा बुन्देलखण्ड के ज्यादातर सभी गांवों में पशुरक्षक देवता के रूप में होती है। कंगूरेनुमा ऊँचे टीले पर इनके चबूतरे बने रहते है। मैकासुर 'महिषासुर' का अपभ्रंश है। इनका पूजन प्रत्येक माह शुक्ल पक्ष की चतुर्थी को होता है किसी जानवर के ब्याने पर सबसे पहले दूध प्रसाद रूप में चढ़ाया जाता है, इसके पश्चात् ही वह उपयोग में लाया जाता है। पशुरक्षा की प्रार्थना इन्हीं से की जाती है। इनके प्रसाद में देशी घी, सवा किलो पूड़ी का मलीदा तथा सफेद ध्वजा इन्हें चड़ाई जाती है। मैकासुर पूजन से 'पशु परिवार' की विभिन्न बीमारियों से रक्षा होती हैं।

कारसदेव- बुन्देलखण्ड के प्रायः प्रत्येक ग्राम में कारसदेव का चबूतरा बना रहता है। कारसदेव एक ऐतिहासिक व्यक्तित्व रखते है। ये हैयद वंशी राजा अजयपाल की शिष्य परम्परा में बताये जाते है। जनश्रुतियों के आधार पर राजा अजयपाल ने अनेक तांत्रिक अनुष्ठानों द्वारा मंत्र सिद्ध करके उसका ज्ञान अपने शिष्य कारसदेव एवं अपने सहयोगी साथी हीरामन को दे दिया। कारसदेव का पूजन पशुरक्षा के साथ 'झाड़-फूँक' के लिए भी किया जाता है।

अजयपाल- सिन्ध नदी के तट पर सेवढ़ा में अजयपाल का एक प्रचीन स्थान जंगल में स्थित है, वहाँ पर कोई मूर्ति नहीं है। उसे अजयपाल का किला समझा जाता है यहाँ पर वर्ष में एक बार अनेकों जगहों से लोग इनकी पूजा अर्चना के लिए आते है। अजयपाल का संबंध देवी भागवत की एक प्राचीन कथा से जोड़ा जाता है। इस प्रदेश में झाड़-फूंक के कई शावर मंत्र प्रचलित है। जिनमें अजयपाल की आन धराई जाती है। ये सभी मंत्र हमेशा प्रभावकारी सिद्ध होते है।

---

२. बुन्देलखण्ड का साहित्यिक, ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक वैभव - डा० रमेश चन्द्र श्रीवास्तव(पृ० संख्या-१३६)

कुलदेवता- कुल में जिसकी पूजा प्राचीन काल से चली आ रही हो,वह देवी या देवता कुलदेवता कहलाते है। कुलदेवताओं का पूजन वर्ष में मुख्यतः एक बार सामान्यतः नौ बार होती है। अनेक संस्कारों में कुलदेवताओं का पूजन होता है। इस पूजन में परिवार के सदस्य ही भाग लेते है। कुलदेवी या देवताओं के पूजन में अविवाहित लड़कियों को सम्मिलित नहीं किया जाता है। मिट्टी की छोटी-सी चौतरियाँ उनका आसन होती है। जो एक बार बना दी जाती है और हमेशा उनका ही पूजन होता है। उस पर फरका (कपड़ा) रखा जाता है। जिस पर कुल देवता का चित्र अंकित किया जाता है, कुलदेवता की पूजा प्रत्येक क्षेत्र में होती है पर कुलदेवता अलग-अलग होते है।

प्रसिद्ध इतिहासकार वी.ए. स्मिथ चन्देलों की कुलदेवी मनियाँ देवी को घोषित करते है। (आरक्योलोजिकल सर्वे रिपोर्ट भाग सात) में जे. डी. बैगलर की टिप्पणी है कि मनियागढ़ में एक छोटे से सादा मंदिर के अवशेषों में हाथ में तलवार लिय हुए एक स्त्री प्रतिमा का समन्वित रूप है। वह गोड़ों का द्वारा पूजित देवी से अधिक भिन्न नहीं है (पृ.४४)। स्मिथ का यह मत महोवा के 'मनियाँदेव' के आधार पर बना है असल में, मनियागढ़ उसके मंदिर में प्राप्त प्रतिमा उसी के नाम पर मनियाँ देवी और महोवा के महन सागर के किनारे स्थापित मनियाँदेव में मनियाँ नाम का संबंध बैठाया गया है, जबकि मनियागढ़ में प्राप्त देवी-मूर्तियों को मनियाँ क्यो कहा जाय? फिर मनियाँ देव को मनियाँ देवी कैसे माना जाय?

परमाल रासो (१६ वीं शता.) एवं जगतराज की दिग्विजय (१७२२-२३ ई०) के प्रमाणों से सिद्ध है कि मानियों देव माणिभद्र यक्ष ही है, जो पारसमणि के स्वामी भी हैं।

'गजानन माता' खंगारों की कुल देवी थी। जिनकी स्थापना गढ़कुण्डार में कुण्ड के पास की गयी थी। वीर बुन्देलों की देवी 'विन्ध्यवासिनी' थी। किसी के कुलदेव 'गोसाई बाबू' कहलाते हैं। इस क्षेत्र में 'बाबू' की पूजा भी कुलदेवता की पूजा कहलाती है। बुन्देलखण्ड में प्रत्येक जाति और वर्ग में अलग-अलग तिथियों में यह पूजन होता है किसी के घर माघ मास की शुक्ल पक्ष की द्वितीया को, तो किसी के यहाँ मार्गशीर्ष द्वितीया अथवा फाल्गुन शुक्ल पक्ष की द्वितीया को यह पूजन होता हैं। बुन्देलखण्ड का क्षेत्र शक्ति पूजक रहा है। माय-मैर की पूजा भी कुलदेवी की पूजा में आती है। यह पूजन ज्यादातर घरों में देखने को मिलता है।

अन्य ग्राम देवता- "गाँव में अनेक ऐसे लोक सेवीय धार्मिक व्यक्ति हो जाते हैं। जिसकी मृत्यु के पश्चात् उनके चबूतरे बना दिये जाते है। इन प्रेरक, शौर्यवान, सदाचारी, लोकहितकारी व्यक्तियों के प्रति

श्रद्धा तथा आस्था का भाव इस सीमा तक बढ़ जाता हैं कि नर-नारी उन्हें देवता मानकर पूजने लगते हैं तथा उनसे मनौतियों मनाते है। किसी भी व्यक्ति की मनौती पूरी होने पर वहाँ ध्वजायें चढ़ाई जाती हैं। यह देवी-देवता 'ग्राम्य देवता' के रूप में पूजे जाते हैं इनके नाम कहीं-कहीं जातिपरक भी मिलते हैं। जैसे बेलदार बाबा, मेहतर बाबा। कहीं इन्हें सिद्ध बाबा, खैर बाबा, खैर बाबा, खैर माता आदि नाम से भी पुकारते हैं। अनेक स्थानों पर किसी देवी के प्रतीक पाषाण की पूजा करके उसके निकट वृक्ष पर लाल या सफेद वस्त्र के टुकड़े बाँध देते हैं उन्हें 'चिथरयाऊ देवी' कहते है।"३

घटोइया बाबा - घटोईया वरुण देवता का लोकपूजित स्वरूप माने जाते है। इनके चबूतरे नदी नालों के घाटों में या जलाशयों के निकट मिलते हैं। नदी-नाला पार करते समय बारात, वर-वधू की निर्विघ्न यात्रा, मत्स्य उद्यम के लिए निकले मछुआरों की सकुशल वापिसी तथा बाढ़ के समय पड़ोसी ग्रामों की रक्षा के निमित्त इनकी पूजा की जाती है। इनके विशेष भक्तों में प्रायः वे वर्ग हैं जिनका जल से जुड़ा व्यवसाय है, जैसे मछुवारे, ढीमर तथा धोबी। किन्तु बारात निकलते समय सभी बाराती या बाढ़ के समय सभी जातियों के ग्रामवासी इनकी पूजा करते हैं। इनका झंडा सफेद होता है। प्रसाद में नारियल चढ़ाया जाता है। अनेक स्थानों पर बकरे की बलि देकर उसका मांस वहीं पकाकर खाने की परम्परा है।

मिडोई बाबा- गाँव की सीमा को बुन्देली में मेवड़ा या मेड़ कहते हैं। मेंड़ पर निवास करने वाले देवता को मिड़ोई बाबा या गेंवड़े बाबा कहते हैं। गाँव की सीमा में प्रवेश करके सकुशल कार्य संपादन करने के निमित्त गेवड़े पर इनकी पूजा की जाती है। इनके चबूतरे पर दो ईटों का त्रिकोणनुमा आकार बना होता है। सफेद झण्डा लगा होता है। प्रसाद श्रद्धानुसार चढ़ाया जाता है। मान्यता है कि इनकी पूजा से जिस मार्ग से होकर आये हैं, उसमें साथ आई अनेक प्रेत-बाधाओं आदि का शमन होता है तथा गाँव की रक्षा होती है। आषाढ़ माह के शुक्ल पक्ष में सभी ग्रामवासी इनका पूजन करते हैं।

मनियाँ देव - महोबा के मनियाँदेव लोक प्रसिद्ध है। महोबा चंदेल राजाओं की राजधानी होने की बजह से पूरे देश में प्रसिद्ध रहा। महोबा में चंदेलकालीन मंदिर, दुर्ग, प्रासाद, प्रस्तराभिलेख, मूर्तियां आदि पुरातात्विक महत्व के अनेक अवशेष मिले हैं, लेकिन लोकगाथाओं में सबसे पहले मनियादेव की वन्दना होती है। चंदेलों के समय में मनियाँदेव लोकदेवता के रुप में प्रसिद्ध थे। हिन्दी के प्रसिद्ध कवि जगनिक ने अपने लोकगाथात्मक महाकाव्य में मनियादेव को काफी महत्व दिया है।

---

३. बुन्देलखण्ड का लोकजीवन - अयोध्या प्रसाद गुप्त 'कुमुद' (पृ० संख्या-५५)

प्रसिद्ध इतिहासकार वी०ए०स्मिथ के अनुसार "महोबा के मनियाँदेव को मनियाँदेवी माना गया है और उन्हें चंदेलों की कुलदेवी कहकर चंदेलों को गोड़ों का आर्यकृत वंशज सिद्ध किया गया है।"४

महोबा के कुल देवताओं में मनियाँदेव की पूजा प्रमुख होती है।

३. मेले-

किसी भी प्रदेश की संस्कृति को वहाँ के वन, पर्वत, सरिताएं और पशु-पक्षी एवं ईश्वर प्रदत्त प्राकृतिक सम्पदा पूर्णतः प्रभावित करती है। कविकुल गुरु कालीदास ने बुन्देलखण्ड को भारत के मध्य भाग में स्थित 'दशार्ण देश' माना है। इसके नगरों व गाँवों के नर-नारी बुन्देलखण्डी बोलते हैं।

बुन्दलेखण्ड की लोक संस्कृति के यहाँ प्रत्येक क्षेत्र में समान रुप से दर्शन होते हैं। तीज, त्यौहार, व्रत, उत्सव तथा मेले भी प्रायः एक ही ढंग के होते हैं। यहाँ पर मेलों का महत्व प्रचुर मात्रा में देखने को मिलता है। मेले में ज्यादातर ग्रामीण बच्चे, स्त्री-पुरुष भारी संख्या में देखने को मिलते हैं तथा भरपूर आनंद उठाते हैं।

बुन्देलखण्ड में मेले किसी विशेष अवसर या देव स्थान पर लगाये जाते हैं। मेले बच्चों के मनोरंजन का साधन तथा मीनव जीवन को सुख, आनंद की अनुभूति प्रदान करते हैं। मनोरंजन के ये ऐसे साधन है कि इनमें मनुष्य अपनी आंतरिक वेदना को भूलकर खुशी में झूम उठते हैं।

बुन्देलखण्ड में अनेक त्यौहारों से संबंधित (नवरात्रि, दशहरा, दिवाली, संक्रान्ति(बुड़की), कार्तिक पूर्णिमा, अक्ती, भुजरिंया, नागपंचमी) मेले देवस्थानों पर उत्साहपूर्वक लगाये जाते हैं। इन मेलों में लोकांचल के लोक जीवन को छटा स्पष्ट रुप में दृष्टिगोचर होती है। बच्चे, बूढ़े और स्त्रियाँ पारम्परिक साज-सज्जा के साथ हंसते-गाते, नाचते-झूमते, मेलों में देखने को मिलते हैं। खाद्य पदार्थों के नये-नये तरीकों से सजी दुकानें, आकर्षक खिलौने, हस्तशिल्प के अद्भुत नमूने सभी का मन मोह लेते हैं। बच्चे अपनी जिद पर अडिग अपनी मनपंसद चीजें खरीदने को बेताव रहते हैं। मेले का आनंद लेने के लिए लोग दूर-दूर से सजी-धजी बैलगाड़ियों, साइकिलों पर अथवा पैदल चलते दिखाई देते हैं।

स्त्रियाँ अपनी गृहस्थी की वर्षभर की खरीददारी इन मेलों में करती हैं। महिलायें गुदनारी की दुकान पर गोदना गुदवाते दिखेगी तो कहीं मेंहदी की दुकान पर ठप्पे द्वारा मेंहदी लगवाते दिखेगी।

छोटे-छोटे बच्चे, गुब्बारें, बुढ़िया के बाल आदि खरीदते दिखेंगे। बताशे, शक्कर के घुल्ले, ढुड़कीला (मोटे सेब), लइया, खील, लायचीदाना, रेवड़ी, पेड़ा आदि मेले के विशेष खाद्य पदार्थ हैं इन्हें खाये बिना.

---

४. बुन्देलखण्ड की लोकसंस्कृति का इतिहास - नर्मदा प्रसाद गुप्त (पृ० संख्या-३०७)

मेले का आनंद अधूरा है।

मेले में मनोरंजन के विशेष साधन सरकस,जादू, सीसाघर, नौटंकी, दिल-दिल घोड़ी, मदारी (बन्दर, भालू के नाच) झूले, हिडोला, लोकनृत्य आदि है। कहीं-कहीं लाठी और तलवार का शौर्य प्रदर्शन करते, दंगल का प्रदर्शन करते युवक दिखते हैं। यहाँ के प्रमुख मेले निम्न हैं -

१. नवदुर्गा मेला- बुन्देलखण्ड में नवदुर्गा पूजन और जवारों का मेला वर्ष में दो बार लगता है- प्रथम चैत्र शुक्ल पक्ष में और दूसरा आश्विन शुक्ल पक्ष में। झाँसी में पचकुइंया के स्थान पर यह मेल लगता है। आश्विनशुक्ल पक्ष की नवरात्रि को शारदीय महानवरात्रि के नाम से भी पुकारते हैं। इस क्षेत्र में लोग मनौती के अनुसार जवारे बोकर उन्हें नाचते-गाते माँ को चढ़ाने के लिए इन मंदिरों में लाते हैं। स्त्रियाँ पेड़े भरकर (साष्टांग दंडवत की मुद्रा में) यात्रा पथ पूरा करती हैं। स्त्रियाँ काफी दूर-दूर से पैदल चलकर जवारे अपने सिर पर रखकर भक्ति भावना के साथ माँ के मंदिरों में जाती हैं। जवारों के प्रसिद्ध मेले झांसी में लहर की माता, पचकुइया, शारदा देवी (बैरागढ़) संदेसुर देवी (हमीरपुर), अक्षरा देवी(सैदनगर) तथा स्कंद माता (नावली) में लगते हैं।

२. श्रीराम तथा केशवदास का जन्मोत्सव- "ओरछा में एक विशाल मेला श्रीराम और केशवदास की जयन्ती (चैत्र शुक्ल नवमी) के उपलक्ष्य में लगता है। ये दोनों महोत्सव यहीं एक साथ बड़ी धूमधाम के साथ मनाये जाते हैं। जयन्ती के शुभ अवसर पर बुन्देलखण्ड के साहित्य-प्रेमी जन प्रसिद्ध कवि केशवदास के जन्मस्थान पर श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं। ओरछा भारतीय संस्कृति का प्रमुख केन्द्र बिन्दु है। इस संबंध में केशवदास ने स्वयं अपने काव्य में लिखा है- **"वारिये नगर और ओरछे नगर पर"१**

३. अछरु माता का मेला- इस प्रदेश की प्रमुख विशेषता यह है कि यहाँ पर षट् ऋतुएँ समय-समय पर आकर प्रदेश की प्रदक्षिणा करती हैं, इन ऋतुओं के विशेष उपलक्ष्य में यहाँ पर अनेक मेले लगते हैं।

बुन्देलखण्ड की भूमि के प्राकृतिक सौन्दर्य और यहाँ की प्राचीन संस्कृति के वास्तविक दर्शन अछरु माता के मेले में ही होते हैं। यहाँ के रीति-रिवाज, वेश-भूषा और बुन्देली लोक गीतों का आनंद अनुपम है। बुन्देलखण्ड में पहले लड़की व लड़के के माता-पिता अपने बच्चों के रिश्ते यहीं मेलों में तय कर देते थे।

इस पर मेले में दूर-दूर के व्यापारी क्रय- विक्रय करने आते हैं। चिरौंजी, महुआ, धनियां, जीरा, मिर्च आदि का बाजार इस मेले में लगता है तो दूसरी तरफ गाढ़ा (खादी), लूँगा, करवी और ऊनी

---

१. बुन्देलखण्ड की संस्कृति और साहित्य - रामचरण ह्यारण 'मित्र' (पृ० संख्या-२७३)

कम्बलों तीसरी ओर मड़ावरे जखीरा, महरौनी टीकमगढ़ आदि में निमार्ण किये गये पीपल, काँसे के वर्तनों का। चौथी तरफ कांसे अथवा पीतल के ढले हुए कला-पूर्ण रजवाड़ी साज से सज्जित हाथी, घोड़ा ऊँट, रथ आदि खिलौनों का।

४. अकती का मेला- यह मेला कैलाश पर्वत पर, वैशाख पक्ष तृतीया को लगता है, तथा एक सप्ताह चलता है। बरूआसागर तथा झाँसी में विशाल रूप में यह मेला लगता हैं।

५. भुजरियों का मेला- यह मेला भाद्रपद कृष्ण प्रतिपदा को कीरत सागर के किनारे लगता है। पृथ्वीराज चौहान तथा अल्हा-ऊदल के मध्य हुई भुजरियों की लड़ाई में आल्हा-ऊदल की विजय स्मृति में यह ऐतिहासिक मेला लगता है। यह महोबा का प्रसिद्ध मेला है। नगर में आल्हा गायन की अखिल भारतीय प्रतियोगितायें होती हैं। ऐसा ही मेला उरई के माहिल तालाब पर लगता है।

६. नागपंचमी का मेला- सावन शुक्ल पंचमी को नागपंचमी का मेला विभिन्न स्थानों पर भरता है। इस अवसर पर महिलाएं सर्पों का पूजन कर उन्हे दूध पिलाती है। इन्हीं दिनों झाँसी के गोपाल बाग में रामायण का वृहत् मेला भरता है जो बुन्देलखण्ड के प्रान्तीय रामायण महासभा द्वारा संचालित हैं।

७.गणेश मेला- यह मेला भाद्रपद शुक्ल चतुर्थी से एकादशी तक चलता है। इस मेले में विभिन्न संस्थाओं तथा व्यापारिक संगठनों द्वारा गणेश जी की विशाल प्रतिमाये स्थापित कर सप्ताह भर उनका पूजन-अर्चन होता है। लोकशिल्प की दृष्टि से ये गणेश प्रतिमायें बेजोड़ होती है। इस प्रदेश के प्रमुख नगरों में हर गली कूचे में, यह प्रतिमायें स्थापित होने से सारा नगर एक सप्ताह तक मेले में परिवर्तित हो जाता है। दशमी को छोटे गणेश तथा एकादशी को बड़े गणेश विग्रहों को विमानों पर बैठाकर उनकी शोभा यात्रा निकलती है। इन विमानों के निर्माण में भी स्थानीय लोकशिल्प दर्शनीय है। ये विमान विभिन्न भागों से परिक्रमा करते हुए तथा भक्तजनों का टीका स्वीकार करते हुए धनु तालाब (कोंच जालौन) पहुँचते है। जहाँ पर इन विशाल मूर्तियों का विसर्जन होता है।

८. जलबिहार मेला- भाद्रपद शुक्ल दशमी तथा एकादशी को बुन्देलखण्ड के अधिकांश शहरों तथा ग्रामों में जल-बिहार मेला बड़े साज-सज्जा के साथ मनाया जाता है। यह जल-बिहार का मेला झाँसी, मऊरानीपुर, छतरपुर, सागर, जबलपुर और चरखारी में विशेष रूप से लगते है। सांस्कृतिक तथा धर्मिक कार्यक्रम स्थानों पर चलतें रहते है। पूरे नगर में मेलें की धूम मची रहती है।

९. बुड़वा मंगल का मेला- भाद्रपद माह के अंतिम मंगलवार को यह मेला उरई के ठड़ेश्वरी मंदिर

पर लगता है। उसके सामने घटिया वाले महावीर जी पर रामकुण्ड के मैदान में अखिल भारतीय दंगल का आयोजन होता है। यह दंगल दो दिन तक चलता है। जिसमें लाखों व्यक्ति दर्शन के रूप में भाग लेते है। रात्रि के समय अंचरी लाँगुरियाँ तथा लोकगीतों की प्रतियोगितायें होती है।

१०. कंस मेला- यह मेला मौदहा-हमीरपुर में भाद्रपद शुक्ल १४ को मीरा तालाब पर लगता हैं इस मेले में कंस का डील, पूतना का पुतला, कुबलया हाथी तथा अकाषुर, बकाषुर के पुतले घूमते है। भगवान कृष्ण विमान पर आरूढ़ होकर इन असुरों के पुतलों का बध करते है।

११. पितृ-मेला- यह मेला पूरे पितृपक्ष भर चलता है। इस मेले मे दूर-दूर के लोग मछलियों को आटा चुगाने आते है। यह मेला परासन-जालौन में लगता है। ऐसी मान्यता है कि जो व्यक्ति दाना चुगाने आये उसके पितृ मत्स्य रूप में उसके समक्ष आते है। कुछ व्यक्ति मछलियों को नथ आदि पहनाते है। जनश्रुति के अनुसार वही नथ वाली मछली दाना चुगाने वाले के समक्ष अगले पितृ रूप में दर्शन देती है।

१२. दशहरा मेला- "जालौन जिले के कोंच नगर में धनुताल पर विजय दशमी के दिन यह मेला लगता है। इस मेले का आयोजन डेढ़ सौ वर्ष पुरानी रामलीला समित करती है। मेले में रावण तथा मेघनाद के ५०-५० फुट ऊँचे पुतले सचल वाहनों पर दौड़ते है। भगवान राम, लक्ष्मण, विमान पर हनुमान हाथी पर सवार होकर इन पुतलों के पीछे तेजी से दौडकर संग्राम करते है। यह दृश्य देखने लायक होता है। संजीवनी वूटी लाते हुए हनुमान जी को आकाश मार्ग से आते हुए दिखाया जाता है। इसके पश्चात् राम-लक्ष्मण, मेघनाद-रावण का वध करते है तथा सीता जी को लंका से निकालकर विमान पर बैठाकर अयोध्या के लिए प्रस्थान करते हैं।

बुन्देलखण्ड के अनेकों स्थानों पर दशहरों का मेला लगता है। दतियाँ इस मेले के लिए बहुत प्रसिद्ध है। यहाँ पर दशहरे के दिन राजा द्वारा भैसा मारा जाता था। यह प्रथा इस प्रकार थी कि 'सुरई' के मैदान में एक पुष्ट भैसे को पूजन करके छोड़ दिया जाता था। उस भैसे पर राजा अपने भाले द्वारा वार करता था। भाले के बार होने से भैसा तेज गति से भगता था , इस संघर्ष में कभी-कभी अनेकों सैनिक घायल हो जाते थे। लेकिन भैंसे पर गोली नहीं चलायी जाती थी। भैसे के मरने के पश्चात् ही राजा महल में पहुँचते थे और उनकी पटरानी उनका पूजन करके आरती उतारती थीं। यह प्रथा इस राज्य में महाराज गोविन्द जूदेव के समय तक चलती रही। इस प्रथा के संबंध में यह कहा जाता है कि दतिया वक्रदन्त दानव की राजधनी थी और दशहरा के दिन यह बलिदान की प्रथा उसी काल से चली आ रही

थी। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् से देशी रजवाड़ों की समाप्ति हुई। तब से केवल नीलकंठ उड़ाया जाता है, भैसे का बलिदान बन्द हो गया। दशहरे के मेले का आयोजन तब से आज तक चला आ रहा है।"२

१३. कार्तिक मास में मेले- बुन्देलखण्ड में कार्तिक माह में सभी शहरों और ग्रामों में मेले लगते है। इन मेलों की छटा झाँसी, मऊरानीपुर, छतरपुर, सेवढ़ा, दतिया एवं चरखारी में दर्शनीय है। नित्य प्रातः काल पूरे माह भर स्त्रियाँ लोक गीत गाती हुयी स्थानीय नदी या सरोवरों पर जाकर स्नान करती है। सरोवर के निकट स्त्रियाँ रेत के ठाकुर जी स्थापित कर पूजन करती है। कुछ स्त्रियाँ चार मास पूर्व, आषाढ़ शुक्ल एकादशी को बुढ़की लेती है। वह स्थान चित्रमासा के नाम से विश्खात् है जो महिलाएँ कार्तिक कृष्ण प्रतिपदा से बुड़की लेती है उसे कार्तिक स्थान से कहाँ जाता है। कार्तिक स्थान में पूजन समय जो लोकगीत गाये जाते हैं, वे प्रायः श्री कृष्ण की लीला संबंधी एवं भक्ति भावपूर्ण होते है। कार्तिक मास के अंतिम सप्ताह में मेले लगते है एवं ठाकुर जी का विसर्जन किया जाता है।

१४. दिवाली मेला- दिवाली 'दीपमालिका' का त्योहार है। बुन्देलखण्ड में विशेषरूप से इस त्योहार को हसोल्लाष के साथ मनाया जाता है। प्रतिवर्ष चित्रकूट में अमावस्या के दिन विशेष मेला भरता है। भक्तगण धार्मिक आस्था के साथ कामदगिरि की परिक्रमा करते है। बारह वर्ष भगवान राम ने यही विश्राम किया था। चित्रकूट की पावन स्थली भगवान राम और सीता जी के वन काल की विशेष भूमि है। परिक्रमा में लाखों लोग भाग लेते है। यह परिक्रमा न केवल धर्मिक महत्व रखती है। बल्कि सामाजिक रूप से लोग एक स्थल पर आकर अपनी धार्मिक भावनाओं को तुष्ट करते है। इस प्रकार दीपावली का त्यौहार लोग अपनी आस्था और धार्मिक भावना के साथ मनाते है।

१५. गोवर्धन मेला- दीपावली के उपरान्त प्रतिपदा को प्रत्येक गृह में गोवर्द्धन का पूजन होता है। कृषि संस्कृति में उत्सव धार्मिता की अपनी एक खास पहचान होती है। भारत गाँवों का देश है और 'उत्सव' यहाँ की संस्कृति के प्राण है। गोवर्धन उत्सव इसी बात का प्रमाण है।

गोबर्धन उत्सव के समय पर गोबर की प्रतिमा के मध्य गाय, ग्वाला, खेत, गोवर्धन आदि बनाये जाते है। फिर चारों ओर मिट्टी के पात्रों में पकवान भरकर, परिक्रमा कर पूजन समाप्त किया जाता है। सायंकाल ग्वाले अपनी-अपनी टोपी बनाकर दीपावली का यह लोकगीत गाते हुऐ एक ग्राम से दूसरे ग्राम जाते है।

धनुष चढ़ाये राम ने भैया थकत भये सब भूप। मगन भई श्री जानकी जू, देख राम कौ रूप रे।

---

२. बुन्देलखण्ड का लोकजीवन - अयोध्या प्रसाद गुप्त 'कुमुद' (पृ० संख्या-६६)

आज दिवाली गालौ भैया,काल की जाने राम रे। बाजत आवै ढोल रे भैया,नाचत आवै गुलाल रे ।

यह मेला प्रतिवर्ष चरखारी एवं हमीरपुर में बड़े ही उत्साह पूर्वक कार्तिक कृष्ण प्रतिपदा से अमावस्या तक लगता है।

१६. सूर्ययात्रा मेला- गुलौली गाँव के निकट मदराफुर, लालपुर नामक स्थान पर (कालपी तहसील में) पुराण कालीन कालप्रियनाथ के भग्न सूर्य मंदिर के टीले पर यह मेला अगहन मास के अन्तिम रविवार को लगता है। इस मेले में जालौन के अतिरिक्त कई पड़ोसी जिलों के लोग भी भाग लेने आते है। कहा जाता है कि संस्कृत नाटककार भवभूति के 'उत्तरराम चरित' नाटक का प्रथम मंचन इसी मेले के समय मंदिर के तत्कालीन प्रेक्षाग्रह में हुआ था ।

१७. शिवरात्रि मेला- यह मेला फाल्गुन कृष्ण १४ को ऐतिहासिक कालिंजर किले में नीलकंठ महादेव के मंदिर पर लगता है। बाँदा में भी यह मेला बड़े उत्साह-पूर्वक लगता है। दूर-दूर से लोग आकर मेले का आनंद लेते है। बुन्देलखण्ड में बड़े-बडे शिव मंदिरों पर यह मेला लगता है। मेले में शिवजी के भक्तगण भांग के नसे में झूमते नजर आते है।

१८. उन्नाव का फाग मेला- "उन्नाव बुन्देलखण्ड का प्रमुख तीर्थ स्थान है, जो बालाजी के नाम से विख्यात है। यहाँ पर पहूज नदी के (पुष्पावती) तट पर बालाजी सूर्यदेव का दुर्ग सदृश कलापूर्ण मंदिर अवस्थित है, जिसकी सिंह पौर सरिता के अंचल में खड़े होकर अवलोकन करने में अधिक रमणीक लगती है। उन्नाव के समीप ही अशोक का शिलालेख है। इससे सिद्ध होता है कि यह सूर्य मंदिर लगभग ढाई हजार वर्ष पूर्व निर्मित हुआ। यहाँ इन्हीं सूर्यदेव की मान्यता में प्रत्येक वर्ष चैत्र कृष्ण पंचमी की फाग को मेला भरता है। इस स्थल पर दूर-दूर से व्यापारी क्रय-विक्रय करने और दर्शनार्थी अपनी मनोकामना की सिद्ध के लिए उपस्थित होते है। अवलोकन कीजिए ग्राम्यजनों की सजी बैलगाड़ियाँ, जिनमें ग्राम युवतियाँ अपने मधुर कंठ से लोकगीत गाती हुयी आती हैं।" **बाला जू बराबर देव नैया।**"[३]

देखते ही देखते पहूज नदी के तट पर अपार जन-समूह एकत्र हो गए और रंग से भरी पिचकारी और गुलाल भरे कुमकुमा घलने लगे। युवकों की टोलियाँ, ढोलक और मंजीरों के स्वर में स्वर मिला फाग के लोक गीत गाने लगे। " जा होरी खेलैं, रामलला, तो राम लला गोविन्द लला। जा होरी....

केसर भर पिचकारी मारे, मानौं भदैइयां परै झला। जा होरी....

---

३. बुन्देलखण्ड की संस्कृति और साहित्य - रामचरण ह्यारण 'मित्र' (पृ० संख्या-३७५)

एक ओर ग्रामीण युवतियाँ अपनी टोली बनाये हुए मधुर कंठ से गा रही थी-

"जसुदा जू तुमाये दुआर हमारौ, खेलत मोंती गिर गऔ।

मोती कों मोती गऔ। उर चंपाकली की हार। हमारौ....

१९. खजुराहो का मेला- "बुन्देलखण्ड को जिस प्रकार इतिहासवेत्ताओं ने भारतवर्ष का हृदयस्थल माना है, उसी प्रकार कलाकारों ने खजुराहों को बुन्देलखण्ड की ललितकला का उद्गम घोषित किया हैं। यहाँ के मंदिर ऋषि वात्सायन के काम सूत्रों के आधार पर निर्मित है।

यह मनोरम स्थान छतरपुर और पन्ना राज्य के मध्य में अवस्थित है। इसकी रक्षा सदैव बुन्देला नरेश करते आए हैं और बुन्देला वीर छत्रसाल ने तो इसकी रक्षा हेतु अस्सी वर्ष की वृद्धावस्था तक शत्रुओं ने डरकर युद्ध किया है। आज भी अपनी पूर्व परम्परानुसार छतरपुर नरेश इसकी रक्षा के लिए तत्पर है, और वहा की कलाकृति के प्रसाद के लिए एक बहुत विशाल मेला इस खजुराहो के प्रांगण में प्रत्येक वर्ष लगवाते हैं जो फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशी (शिवरात्री) से चैत्र कृष्ण चतुर्दशी तक भरता है।

इस मेले में आपको ग्रामीणों लोक साहित्य जो बुन्देलखण्ड की साहित्य-निधि माना जाता है, सुनने को प्राप्त होता है। खजुराहों के इस विशाल मेलें में रीति-रिवाज रहन-सहन, आहार व्यवहार देखने के साथ-साथ क्रय-विक्रय के लिए गाँवों से लोग आते है। कलापूर्ण निर्मित पीतल और मिट्टी के बर्तन व खिलौने मेले का आर्कषण केन्द्र होते हैं महुआ और तेंदू के पत्तों का व्यवसाय भी इस मेले में होता है। सिंदूर, रंग, महावर, नेलपालिस, विन्दी व चिमटी आदि गावों की महिलाएं मेलें में बड़े चाव के साथ खरीदती है। घर गृहस्थी की सामग्री (पत्थर का हुलसा, बेलन आदि) भी स्त्रियां लगन के साथ पसंद करती है।"४

२०. ग्वालियर का मेला- यह प्रतिवर्ष २५ दिसम्बर से २५ जनवरी तक लगता है। इसका विशाल प्रांगण ग्वालियर राज्य के राजाओं के समय से ही निर्धारित है। पशु मेला इससे पहले लगता है। राज्य सरकार की ओर से इस मेले में प्रत्येक वस्तु पर छूट दी जाती है।

मेलों में आकर्षण की तीव्रता अधिक होती है। मनुष्य को नये-नये तरीकों से आकर्षित कर दुकानदार अपनी सामग्री का विक्रय करते है। मेले में व्यक्ति मनोरंजन, हर्षोल्लास व आनंद प्राप्ति के लिए जाते हैं एवं अपनी जरूरतों की पूर्ती के लिए आवश्यक वस्तुओं का क्रय करते है।

---

४. बुन्देलखण्ड की संस्कृति और साहित्य - रामचरण ह्यारण 'मित्र' (पृ० संख्या-३७६-३७७)

४. रीति-रिवाज एवं संस्कार-

"रीति-रिवाज (लोकाचार) किसी भी संस्कृति के वास्तविक स्वरूप को प्रदर्शित करते है। किसी जनपद की संस्कृति का वास्तविक इतिहास जानना है, तो वह उसके जन के आचार मे मिलेगा । अतः आचार वही है, जो लोक में प्रचलित है। उसी को हम लोकाचार कहते है। किसी भी लोकाचार का जन्म एक विशिष्ट अवधि में एक विशिष्ट परिस्थिति की कोख से होता है, लेकिन लोकोपयोगी होने पर ही लोकगृहीत होकर लोकाचार बनता है।"१

लोकाचार लोकजीवन के वर्तमान है, लेकिन उसके इतिहास में अतीत की झाँकी मिलती है, और उपयोगिता में भविष्य का संकेत। वास्तविकता में लोकाचार लोकसंस्कारों, लोकरीतियों, लोकप्रथाओं और लोकवर्जनाओं के सामुच्चय है, इसी कारण वे दीर्घजीवी होते है। उनका लोप इतनी तेजी से नहीं होता, जितनी तेजी से वेश-भूषा और भोजन-पेय का होता है। आज भी बहुत से लोकाचार रूढ़ियों के रूप में अनेकों जगह अडिग स्थान लिये हुये है, और कई जगह उनमें परिवर्तन भी आया लेकिन शताब्दियाँ लग गयी ।

रीति-रिवाज, जाति तथा अंचल के सापेक्ष होते हैं। प्रत्येक जाति एवं अंचल में अलग-अलग रीति-रिवाज विद्यमान हैं। लोक जीवन में सामाजिक स्वीकृति के आधार पर रीति-रिवाज का स्वरूप ग्रहण करते है। कई रीतियाँ कुल तक ही सीमित होती हैं उन्हें कुल रीति कहते है। बुन्देलखण्ड अंचल में रीति-रिवाजों का फैलाव काफी विस्तृत है।यहाँ पर प्रत्येक व्यक्ति अपने परिवार एवं समाज की परम्पराओं में जकड़ा है। जब व्यक्ति अपने समाज एवं परिवार के विरुद्ध कोई कार्य करता है। तो यह रीतियों के खिलाफ है। उसे परिवार व समाज दण्ड देता है या उस व्यक्ति को समाज हमेशा के लिए बहिष्कृत कर देता है।

मनुष्य जिस समाज में जन्म लेता है उसी समाज के अनुरूप अपना जीवन यापन कर, रीतियों को अपनाता है। प्रत्येक अंचल एवं परिवार की अलग-अलग रीतियाँ होती है। उन्हीं कुल रीतियों के अनुसार चलना एवं उनका पालन करना व्यक्ति का धर्म होता है। व्यक्तिगत जीवन से सामाजिक समारोहों तक का प्रत्येक आचरण एक परम्परा का रुप ग्रहण करके 'रीति' बन जाता है। रीति-रिवाज प्रत्येक अवसर या कार्य से जुड़े होते है। तथा असीमित संख्या में है। इन्हें 'लोकाचार' भी कहते है।

---

१. बुन्देलखण्ड की लोकसंस्कृति का इतिहास - नर्मदा प्रसाद गुप्त (पृ० संख्या-१५६)

बुन्देलखण्ड अंचल के प्रमुख अवसरों के रीति-रिवाज एवं संस्कार निम्नवत् है-

१. फूल चौक- नव दम्पत्ति प्रथम बार संतान कामना का विचार कर सहवास करते है, तब उसके पूर्व फूल चौक नामक विधि का विधान किया है। इसके पूर्व नव दम्पत्ति को स्नान, चंदन-लेप, कस्तूरी सेवन करके सुरक्षित एकाकी वातावरण में यज्ञादि तथा देव पूजन का विधान है। गर्भिणी की इच्छा पुत्र अथवा पुत्री किसके जन्म की है। इसके आधार पर ऋतु-स्नान के आठवें दिन के पश्चात् मुहूर्त शोधन करके यह फूल चौक आयोजित होता है।

२. पुंसवन- प्रथम बार गर्भिणी होने पर यह विधान गर्भ से दूसरे या तीसरे माह किया जाता है। संस्कार शब्दावली में इसे पुंसवन संस्कार कहते हैं। स्त्री के गर्भवती होने के पश्चात् परिवार व रिश्तेदारों को निमंत्रण भेजकर वंश-वृद्धि की अग्रिम सूचना दी जाती है। गर्भवती स्त्री को चौक पर बैठाकर हवन-पूजन कराया जाता है। गर्भिणी को सलाह दी जाती है कि अगन्ना होने के पश्चात् ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करे तथा गिलोय, केशर, कस्तूरी आदि का सेवन करें। १६ संस्कारों में से यह प्रथम संस्कार है।

३. सादें - गर्भधारण करने के सातवें व आठवें माह सादें होती हैं। इस रीति को हम 'सादें' या 'सादन का चौक' भी कहते हैं। सातवें महिने में इस अवसर पर गर्भवती स्त्री को रुचि विशेष 'साध' के अनुसार भोज्य पदार्थ खिलाना परिजनों का दायित्व माना जाता है। इस अवसर पर गर्भिणी स्त्री के मायके से वस्त्र, आभूषण, सूप, बाँसुरी, नौ प्रकार की मिठाई, नौ प्रकार के पक्वान, दलिया के वास्ते कठिया गेहूँ, घी, मेवा, गुड़ आदि आता है।

४. बच्चे का जन्म- शिशु जन्म को बुन्देली भाषा में 'भऔ' कहते हैं। जिस वर्ष बुन्देलखण्ड के किसी परिवार में शिशु जन्म या विवाह होता है। उस वर्ष को यहाँ के लोग 'भय-ब्याह की साल' कहते हैं। उस वर्ष के सभी त्यौहार विशेष हर्ष-उल्लास पूर्वक मनाये जाते हैं। बच्चे के जन्म के पूर्व, प्रसव कक्ष के बाहर मंगल गीत गाकर प्रभु से प्रार्थना की जाती है कि वह गर्भिणी को प्रसव पीडा सहने का सामर्थ्य दे तथा स्वस्थ शिशु को जन्म दे । इस अवसर पर कालका माँ की अचरी भी गाई जाती है-

'आम घने महुआ घने बिच-बिच घने है अनार'।

बुन्देलखण्ड में जन्म के समय प्रचलित रीति-रिवाज एवं संस्कार -

१. नामकरण- शिशु जन्म के दूसरे दिन पंडित जी घर आकर जन्म का नक्षत्र विचार कर जन्मांक बनाते है। उसे पट्टी पर खड़िया से लिखकर पट्टी चारपाई के नीचे रख दी जाती है। पट्टी पर उसका

राशि का नाम लिख दिया जाता है। इस विधि-विधान को 'खरी पटा' या 'नामकरण' कहते हैं। इस अवसर पर पुरुषों का बुलौआ लगाकर गुड़ या लड्डू बाँटा जाता है।

२. छठी- बुन्देलखण्ड में शिशु जन्म के छठवें दिन छठी मनाई जाती है। उस दिन समूंदी भोजन बनाया जाता है। प्रियजनों तथा रिश्तेदारों को भोजन के लिए आमंत्रित किया जाता है। जो व्यक्ति छठी का चावल खाते हैं उन्हें शिशु को नाम लेकर पुकारने का अधिकार मिल जाता है। कम उम्र का व्यक्ति अपने से बड़ो का नाम नहीं लेता है। अगर कोई छोटा व्यक्ति बड़े उम्र वाले व्यक्ति का नाम लेकर पुकारता है तो कहते हैं कि **"का तुमने छठी के चाँवर खाय, सो नाम लै रये"** इसी कारण बुन्देलखण्ड में यह रीति अपनायी गयी है।

३. दस्टौन- दसवें दिन दस्टौन होता है। इस दिन सारे रिश्तेदारों आस-पड़ोस के लोगों को आमंत्रित किया जाता है। भोजन के साथ-साथ मंगल गायन (सोहरे, बधाव गीत) आदि गाये जाते हैं। विधि विध ाान पूर्वक चौक पूरकर प्रसूता का पूजन किया जाता है। इसके बाद शिशु के कान में'कू' करने की परम्परा है। बच्चे के कान में तीन बार हल्की सी फूक लगाकर कू कही जाती है। धीमे-धीमे परिवार के सभी सदस्यों के नाम उसके कान में कहे जाते हैं। बुन्देलखण्ड में इस रीति को 'कानाबाती' कहते हैं।

४. कुँआ पूजन- शिशु जन्म के मसवारौ स्नानोपरान्त मुहूर्त शोधन करके प्रसूता घर के बाहर कुँआ पूजने जाती हैं। घर से कुँए तक के मार्ग में छह चौक पूरे जाते हैं। सातवाँ चौक कुँआ के घाट पर पूरा जाता है। इन सभी चौकों पर प्रसूता पैर रखती हुई कुँए के समीप जाती है। कुँआ का पूजन कर सभी स्त्रियाँ मंगलगान करती हुई घर लौट आती हैं। जच्चा सिर पर पानी की भरी गागर रखकर घर के द्वार पर तब तक खड़ी रहती है जब तक देवर सिर से गगरी न उतार दे। देवर गगरी उतारने का नेक माँगता है। इस कार्यक्रम के पश्चात् प्रसूता स्त्री को ग्रहकार्य की अनुमति दे दी जाती है।

५. रक्कस- बुन्देलखण्ड के कुछ परिवारों में बच्चे के जन्म के समय छितरियाँ कढोरी जाती है।'छितरियाँ' बाँस की एक डलियाँ होती हैं। कुछ परिवारों में 'रक्कस बाबा' का रक्कस चढ़ाया जाता है। यह एक विशेष प्रकार की रीति है। 'रक्क्स' के पूजन के लिए कोरा बनाये जाते है। पूजन के बाद नारियल तोड़कर उसके टुकड़े सभी कोरों पर रख देते है। कोरा केवल परिवार के सदस्यों को दिया जाता है। नारियल का प्रसाद उन लोगों को भी दिया जाता है जिनके यहाँ रक्कस की पूजा होती है। जिस बच्चे के जन्म पर रक्कस पूजा जाता है। उसे 'रक्कसिया' कहते है।

६. **मूल नक्षत्र** - शिशु जन्म मूल नक्षत्र में होना अच्छा नहीं माना जाता है। इसीलिए मूल नक्षत्र का प्रभाव कम करने के लिए बच्चे के मूल उतारे जाते है मूल उतारने के लिए जोशी व पंडित घर पर बुलाये जाते है। जोशी को बालक का पिता अपने हाथों से वस्त्र, पादुकायें, मिठाईया, अन्न, सोना एवं चाँदी आदि दान देते है। ब्राह्मणों, प्रियजनों को भोजन कराया जाता है। शनिदेव का हवन किया जाता है।

७. **अन्नप्राशन संस्कार**- बच्चे के जन्म के बाद स्त्री जब अपने मायके जाती है तब वहाँ पर यह कार्यक्रम होता है। इसे लोक भाषा में 'पासनी' कहते है। शिशु का मामा या नाना पासनी करवाता है। एक कटोरे में खीर, दूध, चावल रखकर चम्मच से बच्चे को चटाते है। सम्पन्न परिवारों में चाँदी की चम्मच से 'पासनी' कराना शुभ मानते है। परिवार के आर्थिक स्तर के मुताबिक चाँदी, पीतल एवं स्टील आदि धातु के बर्तन इस शुभ अवसर पर बच्चे को उपहार में देने का रिवाज बुन्देलखण्ड में प्रचलित है।

८. **मुण्डन**- यह कार्यक्रम कुलदेवता या इष्ट देवता के समीप या किसी स्थल पर किया जाता है। बुन्देलखण्ड में रतनादेवी, उन्नाव बालाजी, सैदनगर, ओरछा आदि ऐसे स्थान है जहां बालकों का मुण्डन कराते है। बच्चे के जन्म के लगभग एक वर्ष बाद बालक का मुण्डन संस्कार होता है। जन्म के बाद सिर पर जो बाल निकलते हैं उन बालों को 'झालर' कहते हैं। मुण्डन के समय बच्चे का पूजन किया जाता है। इसके पश्चात् नाऊ धीमे-धीमे अपना छुरा चलाता है। बच्चे की बुआ काटे गये बालों को गीले आटा या बेसन की लोई में लपेटी जाती है तथा उसे मंदिर में चढ़ाकर जलाशय या नदी में विसर्जन कर देती है। मुण्डन के पश्चात् पवित्र स्थल का पूजन एवं नारियल तोड़ा जाता है। घर आने पर 'बुलौवा' लगाकर आस-पड़ोस में मिठाईयाँ या बताशे बाँटे जाते हैं।

९. **यज्ञोपवीत**- इस परम्परा का उच्च वर्णों व ब्राह्मणों में उच्च विशेष महत्व है। कई परिवारों में विवाह के समय जनेऊ संस्कार होता है। ब्राह्मण बालकों में यह ९ वर्ष की आयु में होता है। जिस बालक का जनेऊ होता है। उसे 'बरुआ' कहते हैं। ब्राह्मणों में यह कार्यक्रम विधि-विधान पूर्वक आयोजित होता है।

१०. **कर्णछेदन** - इस संस्कार को 'कंछेदन' भी कहते हैं। रिश्तेदारों एवं परिवार के सदस्यों को एकत्रित करके सभी बालक का मुँह मीठा करवा के सुनार को बुलाते हैं। सुनार बच्चे को सोने या चाँदी की कील से रेशम की डोर डालकर कान छेदता है। बच्चे को बाली पहनाई जाती है। कई घरों में समारोह पूर्वक इस कार्यक्रम को पूरा करते हैं। महिलायें ढोलक व मजीरे के साथ लोकगीत गाती हैं।

५. **विवाह** - विवाह रुपी यह संस्कार विश्व के सभी समाजों में किसी न किसी रुप में विद्यमान है।

परिवार व नातेदारी का आधार है। हिन्दुओं में विवाह संस्था का सामाजिक संरचना में विशिष्ट स्थान है। भारतीय समाज में हिन्दू धर्म में विवाह को एक धार्मिक संस्कार के रुप में स्वीकार किया गया है। हिन्दू धर्म ग्रहस्थ आश्रम में विवाह के द्वारा ही प्रवेश करता है। ग्रहस्थ आश्रम को सभी आश्रमों का मूल कहा गया है। हिन्दू के लिए विवाह एक आवश्यक कर्तव्य माना गया है। इस धर्म में चार पुरुषार्थों- धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष की व्यवस्था की गयी है। इन सभी की पूर्ति गृहस्थाश्रम में ही सम्भव है। हिन्दुओं में प्रत्येक व्यक्ति पर तीन ऋण-पितृ ऋण, देव ऋण एवं ऋषि ऋण चुकाने का भार माना गया है। पितृ ऋण से मुक्ति पाने के लिए विवाह के पश्चात् सन्तानोत्पत्ति करना आवश्यक माना गया है। मनु विवाह को यौन-संबंधों के उचित नियंत्रण एवं यह लोक और परलोक के सुख के लिए आवश्यक मानते हैं। शास्त्रों में लिखा है कि पति-पत्नी एवं बच्चों से युक्त मानव ही पूर्ण मानव है। वेदों में अविवाहित व्यक्ति को अपवित्र माना गया है।' धार्मिक दृष्टि से वह अपूर्ण है और वह संस्कारों में भाग लेने योग्य नहीं है। सथपथ ब्रह्माण्ड में कहा गया है कि पत्नी निश्चित रुप से पति का अर्धांश है अतः जब तक पुरुष पत्नी प्राप्त नहीं करता एवं सन्तान उत्पन्न नहीं करता तब तक वह पूर्ण नहीं होता। विवाह करके व्यक्ति संतान उत्पन्न करता है और सभी ऋणों से उऋण होकर मोक्ष प्राप्त करता है।

भारतीय समाज में रुढ़ियों का विशेष महत्व है। प्रत्येक क्षेत्र में रहने वाले लोग परम्परानुसार प्रचलित रीतियों को अपनाते हैं। एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तथा दूसरी पीढ़ी से तीसरी पीढ़ी के सदस्य इन रीतियों एवं संस्कारों को अपनाते चले जाते हैं। समयानुसार थोड़ा बहुत परिवर्तन होता रहता है। प्राचीन परम्पराओं को भारतीय समाज आज भी स्वीकार कर उनका स्वागत करता है। परम्परायें पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तान्तरित होती हैं।

बुन्देलखण्ड में विवाह के समय प्रचलित रीति-रिवाज एवं संस्कार -

१. सगाई- सगाई का अर्थ है कि रिश्ता पक्का होना। धर्मशास्त्रों में सगाई के लिए 'वाग्दान' शब्द प्रयुक्त किया गया है। इसका अर्थ है 'वचन' देना। सगाई के पूर्व लड़की देखने की रीति होती है। सगुन में लड़की को वस्त्राभूषण भेंट करते हैं। इसके पश्चात् 'गोद' या 'ओली' भरने का कार्यक्रम होता है। दहेज इस क्षेत्र की जटिल समस्या है सगाई में दोनों पक्षों के रिश्तेदार आमंत्रित किये जाते हैं। वर-पक्ष कन्या-पक्ष के दरवाजे पर मिठाई, मेवा, फल, वस्त्र, आभूषण आदि लेकर सगाई पक्की करने जाते हैं। वर-पक्ष की कोई महिला सदस्य या लड़की कन्या को आभूषण पहिना कर उसकी ओली में मिठाई, साड़ी

आदि रख देती है। महिलाएं बन्ना-बन्नी लोकगीत गाती हैं।

२. सुतकरा – सगाई पक्की होने के पश्चात् विवाह का मुहूर्त निकलने की सूचना कन्या-पक्ष की ओर से पर पक्ष को भेजी जाती है। मुहूर्त को पंडितों द्वारा शोधन कराकर पीली चिट्ठी के रुप में वर-पक्ष के नाई द्वारा भेजा जाता है। इसके साथ सामर्थ्य के अनुार सोने-चाँदी की मुद्रा भेजी जाती है। इसे सुतकरा कहते हैं। सुतकरा स्वीकार करने के पश्चात् विवाह की तैयारी शुरु होती है।

३. लगुन- यह कन्या-पक्ष के घर पर पड़ोसियों व प्रियजनों का बुलौआ लगाकर पंडितों द्वारा लिखी जाती है। इसे नाई के द्वारा वर-पक्ष के यहाँ भेजते हैं। नाई बुन्देलखण्ड में विवाह-संस्था का सबसे खास व्यक्ति होने के कारण 'खवास' भी कहा जाता है।

४. मटियानौ- बुन्देलखण्ड में प्रचलित रीति के अनुसार लगुन के दिन ही मटियाने में परिवार की स्त्रियाँ, पड़ोसिनें समूह बद्ध होकर गाँव के बाहर मिट्टी लेने जाती हैं। इसी से विवाह में प्रयुक्त होने वाले चूल्हे, चकिया, बरोसी, दीपक, दीपाधार वं हवन कुंड आदि बनाते हैं। इसी दिन घर में सिल छूकर उस पर दाल पीसकर मिथौरियाँ बनती हैं। इस कार्यक्रम में महिलाओं को माटी मिथौरी का बुलौआ दिया जाता है। देवी देवताओं के लोकगीत गाकर निमंत्रण दिया जाता है। बटौना में खरपुरी या बताशा बाँटे जाते हैं।

५. छेई का बुलौआ- यह बुलौआ पुरुषों को दिया जाता है। पुरुष एकत्रित होकर गाँव के बाहर अपनी-अपनी कुल्हड़िया लेकर आते हैं। कुल्हड़ियों का पूजन कर बटौना में उबले चने, गुड़ या बताशा बाँटते हैं। सभी व्यक्ति अपनी सामर्थ्य भर जंगल से लकड़ी काटते तथा गट्ठा बाँधकर विवाह के घर में डाल देते हैं। लकड़ी के सभी गट्ठों को धूप में सुखाकर विवाह में खाना पकाने के कार्य में लिया जाता है।

६. भात माँगना – इसे चीकट निमंत्रण भी कहते हैं। विवाह पुत्र का हो या पुत्री का, उसकी माँ अपने मायके जाकर निमंत्रण अपने भईया-भाभी को सौपती है तथा विवाह में भात लेकर आने तथा सहयोग की याचना करती है। इसे ही 'भात माँगना या भात कौ नोतौ' कहते है। इसे चीकट का निमंत्रण भी कहते है। विवाह के समय मामा अपनी बहिन व बहिनोई के परिवार के सभी सदसयों के लिए वस्त्राभूषण लेकर जाते है। पुरुषों को 'चिकटया' या 'भतैया' तथा महिलाओं को 'भतैतिन' कहते है। बुल्देलखण्ड में वीर हरदौल मृत्यु के पश्चात् भी अपनी भांजी के विवाह में बहिन के घर भांत लेकर गये थे। वही परम्परा आज तक इस क्षेत्र में चली आ रही है।

७. अरगौ- विवाह के लगभग एक सप्ताह पूर्व वर या कन्या को अर्ध देकर अरगा जाता है। वर व

कन्या का उवटन होता है, चंदनादि बूटियों से तथा इत्र फुलेला से लेपन करके उसके सुरभितीकरण का कार्य होता है। परिवार की महिला सदस्य इस कार्य में उसके साथ रहती है। उसे 'अरगेवारी' कहाँजाता है। उबटन कार्य हेतु वर पक्ष के यहाँ नाई तथा कन्या पक्ष के यहाँ नाईन आती है। 'अरगौ' होने के बाद गाँव की सीमा बाहर, वर और कन्या को जाना वर्जित होता है।

८. **तेल-(हल्दी तेल चढ़ाने की रीति)**- विवाह के लगभग तीन दिन पूर्व वर कन्या के घर हल्दी व तेल का कार्यक्रम होता है। इस दिन महिलाओं का बुलौआ लगता है। महिलाये देवताओं के पूजन के लिए मंदिरों पर हल्दी तेल चढ़ाने जाती है। इसके पश्चात् कन्या या वर को तेल फुलेल चढ़ाया जाता है। तेल के एक दिन पूर्व तिलाई का बुलौआ लगता है स्त्रीयाँ बन्ना-बन्नी गाती है। बटौना में आटे की खकरिया (पपड़िया) बाँटी जाती है। तेल वाले दिन कन्या को पाँच महिलायें तथा वर को सात महिलायें हल्दी, तेल चढ़ाती है। यह रस्म बहिनों,बुआ आदि द्वारा पूर्ण की जाती है।

९. **मण्डप**- टीका के एक दिन पूर्व मण्डपाच्छादन का कार्यक्रम होता है। जिसमें वेरी की लकड़ी का नक्कासीदार सुन्दर मण्डप बढ़ई द्वारा तैयार किया जाता है। लड़की की शादी में बड़ा तथा लड़के की शादी में छोटा मण्डप तैयार होता है। शुभ मुहूर्त में भूमि में गड्डा कर, पंचरत्न डालकर इसे गाढ़ते है। मण्डप गाढ़ने का कार्य पंडितों, पाँच रिश्तेदारों (फूफा एवं बहनोई) से सम्पन्न होता है। मण्डप गाड़े जाने के बाद वर या कन्या की बुआ सभी उपस्थित जनों की पीठ पर, हल्दी से रंगे हाथ के थापे लगाती है।

१०. **राछरी** - गावों में बारात जाने के पूर्व राछरी घुमाई जाती है। अब यह राछरी घुमाने की पाम्परा लगभग समाप्त हो गयी है। वर मौर लगाकर सारे गाँव का भ्रमण करता था। प्रियजनों व महिलाओं का समूह लोक गीत गाते हुए पीछे-पीछे चलता था। पड़ोसी गण अपने द्वारों पर वर का टीका कर कुछ भुद्राये भेट करते थे।

११. **निकासी** - विवाह के समय वर जब बारात लेकर वधू के घर जाने के लिए तैयार होता है, उसी समय महिलायें उसे घर से बाहार निकालने का जो विधान रचती है, उसे 'निकासी' कहते है। वर की भावी वर को 'काजल' लगाती है। बुआ 'खौर' काढ़ती है। 'खौर' एक विशेष प्रकार का टीका होता है। फूफा 'पाग' बाँधते है। बहिन 'पान' खिलाती है। इसके बाद वर को घर के दरवाजे के बाहर लाया जाता है। चौक के ऊपर उसे खड़ा किया जाता है। वर के ऊपर एक चादर वितान नुमा तानकर उसके चारों खूट पकड़कर मान्य खड़े हो जाते है। वर की माँ राई नौन से नजर उसारती है। कोई मूसर, कोई रोटी, कोई पूड़ीयाँ उसार कर, सिर के ऊपर छाये गये कपड़े के ऊपर से, एक ओर से दूसरी ओर फेंकती जाती है। माँ वर को आँचर

ओढ़ाती है। वर के पैरों के सामने दो कच्ची दिवुलियाँ एक-दूसरे के मुहरों को स्पर्श करते हुए सूत में बाँध कर दाये-बायें रख देते है। माता कहती है "बहू लेकर लौटना, खाली हाथ मत आना।"

१२. बारात- निकासी के बाद बरात प्रस्थान करती है। जिन क्षेत्रों में परिवाहन के साधन की व्यवस्था नहीं होती उन स्थानों पर बैलगाड़ियाँ, ट्रैक्टरों आदि से बारात जाने की व्यवस्था की जाती है। यहाँ पर बारात बड़े धूमधाम के साथ प्रस्थान करती है।

१३. अगवानी व मिलन- जनवासे में बारात जाने के पश्चात् कन्या पक्ष के प्रमुख लोग आगवानी के लिए जाते है। तत्पश्चात् वर व कन्या के पिता एक दूसरे से हृदय मिलते हैं। समधियों के मिलन के लिए नाई पावड़ा डालता है। पावड़ा लाल रंग की टूम का कपड़ा होता है। इस पर पहले कन्या व वर के मामा आमने-सामने खड़े होकर एक दूसरे का आलिंगन करते है। कन्या के पिता वर के पिता को मुद्रा भेंट करता है। इसे 'सजन भेंट' कहते है।

१४. टीका- बारात दरवाजे पर आने के पश्चात् वर का टीका लड़की के मामा या फूफा द्वारा किया जाता है। वर वहीं पर अपने सभी मान्यों का भी टीका करता है। लड़की का भाई एक थाल में श्रीफल टीका की सामग्री आदि लेकर वर को समर्पित करता है।

१५. वरमाला- आजकल शादियों में जयमाल (वरमाला) का प्रचलन जोरो पर है। कन्या, वर को वरण करने के लिए वरमाल वर के गले में डालती है। इसके पश्चात् वर कन्या के गले में जयमाल डालता है। वहाँ उपस्थित सभीजन फूलों की वर्षा करते हैं।

१६. चढ़ाव व मांग भराई - बुन्देलखण्ड में चढ़ावा पर विशेष ध्यान दिया जाता है। जयमाल के पश्चात् मण्डप के नीचे पंडित वधु को बुलाकर सात या आठ वर्ष की कुंवारी कन्या द्वारा चढ़ावा चढ़वाता है। छोटी कन्या (बहिन) वधु की माँग भरती है। वरपक्ष के लोग नव वधु द्वारा कन्या को वस्त्राभूषण पैसा आदि स्वेच्छानुसार दिलवाते है। वधु के चढ़ावा में सुन्दर-सुन्दर बस्त्र, गहने आदि आते है। इसके बाद वधु विवाह में ससुराल के वस्त्राभूषण ही ग्रहण करती है।

१७. सुहाग मागवौ - यह बुन्देलखण्ड की प्राचीन रीति है। चढ़ावा के पश्चात् नव वधु को धोविन के घर पालकी में बैठाकर सुहाग माँगने के लिए भेजा जाता है। धोबिन उसका स्वागत करती है और उसे अपनी माँग का सिंदूर देती है। इसी सिंदूर का उपयोग मण्डप के नीचे मांग भरने में किया जाता है। धोविन के घर जाने की रीति समय की व्यस्ता के कारण समाप्त हो चुकी है।

१८. भाँवर एवं गठजोड़ी – भाँवर के समय वर कन्या का गठबन्धन कर दिया जाता है। विधि पूर्वक हवन करके वर व कन्या सात फेरे लेते है। तथा विवाह पूर्ण माना जाता है।

दूब भाँवर – कई क्षेत्रों में लड़का टीका के बाद घोड़े पर बैठाकर गाँव के बाहर एक कुँयें पर जाता है। वहाँ दूव चढ़ाकर पूजन करके उसकी परिक्रमा लगाता है।

घूरौ भाँवर – कुछ क्षेत्रों में वर घूरे (कूड़ा के ढेर) पर जाता है। वहाँ उसकी पूजा करके उसकी परिक्रमा करता है, उसे घूरौ भाँवर कहते है।

१६. पैर पखराई – पैर पखराई के समय पीतल या कांसे की बड़ी परात में हल्दी का घोल डाला जाता है। कन्या पक्ष के सभी परिजन व रिश्तेदार वर व कन्या के पैर तीन बार धुलकर उस हल्दी तिश्रित जल से पूजते है, तथा टीका करते है। भेंट स्वरूप वर को रूपया व कन्या को सोने व चाँदी के गहने मिलते है। कन्या के छोटे भाइयों को पैर पूजने के समय नारियल तथा महिलाओं के वर्तन आदि वर-पक्ष द्वारा देने की परम्परा है।

२०. वर द्वारा वधू की मांग भरना एवं ग्रन्थि बंधन – वर द्वारा वधू की मांग में सिंदूर भरा जाता है, इसके बाद ग्रन्थि बन्धन होता है। तथा ध्रुव दर्शन कराया जाता हैं

२१. कोहवर (लहकौरी की रीति) – सुहागिन स्त्रियाँ वर व वधू को कोहबर (कुलदेवता के स्थान) में ले जाती है। मंगल गीत गाकर लौकिक रीति पूर्ण करवाती है। वर व कन्या एक दूसरे को घी शक्कर खिलाते हैं। वर दीपक में अलग-अलग रखी बाती को एक कर प्रज्वलित करता है। महिलाएँ हास परिहास करती है। वर से अपने कुल देवता का पूजन करवाने व पैर छुलवाने का प्रयास करती हैं। वर इससे इन्कार कर देता है।

२२. जेवनार करवाना एवं गारी गाना – कन्या के विवाह में जो भोजन दिया जाता है। उसे जेवनार, बढ़ार या बड़ी पंगत कहते हैं। विवाह के दौरान होने वाले अन्य भोजन को छोटी पंगत कहते हैं। वर व कन्या-पक्ष के पुरुष इसमें एक साथ बैठाकर भोजन करते हैं। कहीं कच्ची रसोई की बढ़ार 'कच्ची पंगत होती है, कहीं पक्की रसोई की, तो कहीं कच्ची-पक्की मिश्रित। कच्ची पक्की रसोई को 'मिरजापुरी पंगत' कहते हैं। इस पंगत में दाल, चावल या माड़े के साथ पूड़ी कचौड़ी भी परोसी जाती है। पाँच या सात भाँति की मिठाइयो का दोना विवाह की प्रतिष्ठा का सूचक होता है।

महिलायें जेवनार के समय लोकगीत एवं गारी गाती है। बुन्देलखण्ड में विवाहों में गारी गाने का

प्रचलन बहुत अधिक है। गारियों को सभी समधी तथा बराती प्रसन्नतापूर्वक सुनते हैं तथा गारी गाने वाली महिलाओं को पुरस्कार स्वरूप नेग में पान तथा बताशे बाँटे जाते है।

२३. कलेवा एवं जूता चुराई – लहकौरी रीति के पश्चात् वर को कलेवा के लिए बुलाया जाता है। वर के साथ उसके मित्र एवं भाई उपस्थित रहतें है। वर को भिन्न-भिन्न प्रकार के मेवा-मिष्ठानों से मुँह मीठा करवाते हैं। कलेवा के समय वर जब मण्डप के समीप आता है, तब वह अपने जूते उतार देता है। मौका पाते ही कन्या की छोटी बहिने जूते चुरा लेती हैं। अपना नेग मिलने के बाद ही जूते वापिस करती है।

२४. धान बुआई – विवाह में फेरों के समय कन्या का भाई सूप में जौ-धान्य लेकर वर-कन्या के हाथ पर डालता है। यह दंपत्ति की वंशवृद्धि का प्रतीक है। धान बुआई के समय कन्या के भाई को वस्त्राभूषण दिये जाते है।

२५. रास बँधावा – वर व वधू विवाह के पश्चात् जनवासे में जाते है। वर पक्ष का वरिष्ठतम व्यक्ति नवदम्पत्ति का टीका करते है। नववधू को आभूषण पहिनाते है। वहाँ उपस्थित अन्य व्यक्ति भी टीका लगाकर आरती उतारते है। वधु के साथ उसकी सहेलियाँ भी जनवासे में जाती हैं।

२६. दैर छपौ – जिस ग्राम या कस्बे में बारात जाती है। उस ग्राम में वर के गाँव की जो लड़कियाँ तथा रिश्तें की बहिनें व्याही है, उनको सम्मान में वस्त्र आदि वर जाकर भेट करता है। वहाँ बहिन द्वारा वर का टीका किया जाता है। तथा उसे कुछ भेंट दी जाती है।

२७. दहेज देना – दहेज की यह रीति सर्वाधिक लोक प्रचलित है। कन्या पक्ष दहेज देते-देते थक जाता है, पर वर पक्ष लेते-लेते कभी नहीं थकता है। वर पक्ष की मांग बढ़ती ही जाती है। प्राचीन काल से चली आ रही यह परम्परा एक सामाजिक कुरीति है।

२८. डलियाँ – बुन्देलखण्ड में विवाह की डलियाँ का विशेष ही महत्व है। विदाई के समय कन्या के साथ यह डलियाँ उसकी ससुराल जाती है। डलियाँ विभिन्न प्रकार के पकवानों तथा व्यंजनों का पिटारा होती है। डलियाँ में मैदा के बड़े आकर की नमकीन पापड़ी (खाकड़े), होती हैं। मीठे तथा नमकीन माठे, बड़े-बड़े बुंदी के लड्डू, खोवा के गोजा आदि कलात्मक तथा अलंकृत करके बनाये जाते हैं। लड्डू १-२ किलो का एक बनता था कुछ लड्डू काजू, किसमिस, बादाम कुछ अखरोट, मूँगफली, रामदाना आदि के बनाये जाते हैं।

२९. विदाई- कलेबा के पश्चात् वधू-वर के घर जाने के लिए तैयार होती है। विदाई के समय कन्या के सभी परिजनों व रिश्तेदारों से आकर गले मिलती है। इसे 'भेंट करना' कहते हैं। विवाह का सबसे

अधिक करुण समय होता है। रोती बिलखती नव-विवाहिता को मामा अपने कंधे पर लाद कर वाहन पर बिठाता है। नाइन पानी पिलाती तथा जल उसारती है। कन्या की माँ वर को टीका कर अपनी पुत्री को वर के साथ विदा कर देती है।

३०. सरबत - नववधू जब अपनी ससुराल पहुँचती है तो वर की बहिनें अपनी नई भाभी को सरबत पिलाकर उनका स्वागत करती हैं। उसके लिए उन्हें नेग दिया जाता है।

३१. देवी-देवताओं का पूजन एवं द्वार प्रवेश - नव-वधू के घर में प्रवेश करने के पूर्व लोकदेवताओं तथा ग्राम देवताओं की पूजा होती है। वर-वधू अपने सभी देवी देवताओं पर हाथे लगाकर व पूजन करके घर वापस लौटते हैं। वर की माँ घर पर वधू की आरती तथा पैरों को धोकर तिलक करती हैं। इसके पश्चात् दोनों घर में प्रवेश करते हैं। भारत में नववधू को लक्ष्मी का स्वरुप माना जाता है। वधू के चरण जल को पूरे गृह में छिड़क दिया जाता है। वधू को घर में प्रवेश करने से पहले सुंदर रंगोली आदि दरवाजे पर सजायी जाती है। द्वार पर चावल को छोटा सा कलश रख दिया जाता है। जिसमें वधू दाँया पैर मारकर आगे कदम बढ़ाते हुए घर में प्रवेश करती है। इस रीति को ही द्वार प्रवेश कहते हैं।

३२. मुँह दिखायी - इस रीति को 'निहारन व मौचायनौ' भी कहते हैं। सारे रिश्तेदारों व परिजनों की स्त्रियाँ मुँह दिखायी में आभूषण पैसा आदि उपहार में देती हैं। इस समय बुन्देली गीत गाये जाते हैं।

३३. कंकन छूटना एवं मछली मारना - यह बड़ी ही प्राचीन रीति है। मुँह दिखायी के पश्चात् वर एवं वधू मण्डप के नीचे एक दूसरे का कंकन छोड़ते हैं। वर की भाभी इस कार्य में दोनों की मदद करती है। महिलाओं द्वारा एक आटे की मछली बनायी जाती है। उसके गले में धागा बाँध दिया जाता है।

वधू एक पीतल के थाल में हल्दी के पानी में उसे घुमाती है। वर का छोटा भाई वर को तीर कमान बनाकर देता है। वर उस मछली पर अपने वाण का प्रहार कर उसे मार देता है। छोटे भाई को नेग दिया जाता है।

३४. सुहागरात - यह दो हृदयों के मिलन का पर्व होता है। लोक परम्परानुसार जिस कमरे में नव दम्पत्ति को लेटना होता है, वहाँ पर फूलों से सजावट की जाती है। वर की भाभी वर व वधू को सजा-सवाँरकर देर रात में कक्ष में कराती हैं। वर व वधू एक दूसरे का मुँह मीठा करवाकर कोई प्रिय वस्तु एक दूसरे को उपहार में देते हैं और अपने नव जीवन का प्रारम्भ करते हैं।

३५. दसवारी मांय - विवाह (टीका) के दिन कुलदेवता के कक्ष में मांय पसारकर उनकी पूजा की जाती है। कोरा लगाये जाते हैं। इनका पुनः पूजन विवाह के दसवें दिन करके मांय उठाते हैं। यह मांय

परिवारजनों को बाँट दी जाती हैं। उसी दिन मण्डप का पूजन कर उसको उखाड़ते हैं। दसमाननी की सुहागलें तथा सत्य नारायण की कथा भी की जाती है।

३६. चौथी चलाना - विवाह के बाद पहली बार शुभ मुहूर्त में नवविवाहिता के घर उसका भाई विदा कराने जाता है। इसे चौथी चलाना कहते हैं। अपनी बहिन को लेने के लिए भाई बहिन अपने साथ मिठाई, वस्त्र, पकवान आदि लेकर जाते हैं। वर के यहाँ इन सबका खूब स्वागत किया जाता है। नववधू का भाई वर की महिलाओं को रुपये देकर पैर छूता है। चौक पूरकर लाल कपड़ा (पावड़े) बिछाया जाता है। नव विवाहिता बहिन अपने भाई से मिलने इसी पावड़े पर आती है। भाई-बहिन की गोदी में नारियल, बताशा डालता है। बहिन के साथ ससुराल से डलियाँ भी जाती है।

३७. गौना - विवाह के पश्चात् जब दुबारा लड़की की विदा ससुराल के लिए होती है। तो इस रीति को गौना कहते हैं। इसे आधे विवाह का महत्व दिया जाता है। इस विदा में भी दान, दहेज एवं डलियाँ दी जाती है। दान-दायजे में भोजन बनाने व खाने के कम से कम पाँच बर्तन देना आवश्यक होता है। नव वधू से ससुराल में जाकर सर्वप्रथम खिचड़ी बनबाई जाती है।

३८. रोटी छुलाई व बहू का नामकरण- बहू का गौना होकर जब वह अपनी ससुराल आती है तब उसे गृह कार्यों में निपुण करने हेतु 'रोटी छुलाई' जाती है। इस रीति के अंतर्गत बहू, अपने हाथों से खाने का कोई एक विशेष व्यंजन बनाती है। जैसे- खिचड़ी, खीर आदि। रिश्तेदारों व प्रियजनों को आमंत्रित किया जाता है। भोजन करने वाला प्रत्येक व्यक्ति नवविवाहिता को नेग देता है और बहू का नया नाम रक्खा जाता है। जैसे- कमलारानी, रानी दुलैया, फूला दूलैया आदि। अनेक जातियों में मैके के स्थान वाचक नाम जोड़कर रखा जाता है। जैसे- उरईवारी एवं जालौनवारी आदि।

६. मृत्यु से संबंधित रीति रिवाज- जब व्यक्ति के शरीर की स्थिति पूर्ण शिथिल एवं अचेत सी होने लगती है तो मृत्यु के पूर्व ही उसे भूमि पर लिटा दिया जाता है। व्यक्ति को गीता का पाठ सुनाते हैं। मऊरानीपुर तरफ के क्षेत्र में कुछ लोकगीत मृत्यु शैया पर लेटे व्यक्ति को सुनाये जाते हैं। इन भजनों एवं लोकगीतों में संसार की नश्वरता का वर्णन मिलता है। सर्वप्रथम बाँसों से निर्मित विमान बनाकर मृतक के पार्थिव शरीर को उस पर लिटा देते हैं। मृतक के शरीर के ऊपर व नीचे सफेद चादर डाल दिया जाता है। फूलों से बनी मालायें, इत्र एवं सुगन्धित फूल मृतक के ऊपर डाल दिये जाते हैं। अंत्येष्टि करने वाला व्यक्ति घर के द्वार पर प्रथम पिण्ड दान करता है। इसके पश्चात् द्वार पर उपस्थित सभी व्यक्ति राम नाम

सत्य है बोलते हुए शमसान घाट जाते हैं।

शमशान जाते हुए मार्ग में रुककर पुनः पिण्डदान किया जाता है। इस यात्रा में पुरुष ही शमशान घाट जाते हैं। महिलाओं का जाना वर्जित है। विमान में कंधा पहले पुत्र बाद में अन्य लोग देते हैं। शव को स्नान शमशान घाट पर ही करवाते हैं। मृतक को शमशान पर ले जाने के पश्चात् नाई वहीं पर अंत्येष्टिकर्ता के सिर के बाल बनाता है। वह स्नान करके पुनः पिण्डदान करता है। चिता पर लिटाकर उसके वक्ष, मुँह, आँख पर देशी घी, जौ, तिल, चावल, चंदन, शक्कर लगा देते हैं। शव को लकड़ी अथवा कंडे से जलाते हैं। बांस के एक डंडे में एक किनारे मिट्टी की छोटी सी गगरी बाँध देते हैं। उसमें घृतादि भरा रहता है उसे मृतक के सिर पर डाल देते हैं इसे 'कपाल क्रिया' कहते हैं। शमशान में उपस्थित सभी जन कपाल क्रिया होने तक वहाँ शव के जलने की प्रतीक्षा करते हैं। अंत्येष्टिकर्ता व उपस्थित जन चिता की सात बार परिक्रमा लगाकर, हाथ जोड़कर शमशान से विदा होते हैं। शवयात्री मार्ग में कुंए, तालाब या हैण्डपम्प आदि पर स्नान करके मृतक के घर जाते हैं। घर पर नाई सभी व्यक्तियों को नीम की पत्तियाँ तोड़कर देता है। लोग उसे मुँह में रखते हैं। मृतक का ज्येष्ठ उत्तराधिकारी सभी से सहयोग बनाये रखने तथा सरंक्षण देने की प्रार्थना करके सबसे हाथ जोड़ता है। इसके बाद सभी व्यक्ति अपने-अपने घर चले जाते हैं।

मृतक के घर पर पंडित के बताये नियमानुसार शुद्धता होती है। शुद्धता के दिन घर-परिवार के सभी जन सिर के बाल बनवाते हैं। घर को साफ-सुथरा किया जाता है। कच्चा खाना बनाया जाता है। प्रियजन आकर अंत्येष्टिकर्ता एवं परिवारजनों को किसी मंदिर में ले जाकर दर्शन करवाते हैं। इसे महादेव भी कहते हैं। गृहशुद्धि के लिए शुद्धता के दिन मेहतर, बसोर, मचार, नाई, धोबी को भोजन करवाया जाता हैं।

मृतक की अगर पत्नी जीवित है। तो उसे शुद्धता के दिन किसी नदी में स्नान करवाते हैं। वहाँ पर उसको श्रृंगार करके ले जाया जाता है और नदी पर ही उसका श्रृंगार (सौभाग्य सूचक) आभूषण आदि उतारे जाते हैं। यह कार्य नाइन करती है। स्नान के पश्चात् महिला के मायके से आये वस्त्र तथा चाँदी की चूड़ियाँ उसे पहिना दी जाती है। अस्थि कलश के विसर्जन के समय वह सामने रहकर पति को अंतिम रुप से विदा करती है।

"मृत्यु की तिथि से त्रयोदशी तक मृतक के घर में कोई व्यक्ति किसी के चरण स्पर्श नहीं करता है। किसी परिवार में यदि मांगलिक कार्य हो, तो वह मृतक के घर शोक संवेदना करने भी नहीं जाता

है। शोक संवेदना व्यक्त करने यदि बाहर से कोई व्यक्ति आता है, तो अन्य किसी के घर उसका जाना अशुभ माना जाता है।"२

नौवार (शुद्धता) के पश्चात् मृतक के रिश्तेदार उसके घर फेरे के लिए आते हैं। त्रयोदशी करके वापिस चले जाते हैं। सभी रिश्तेदार व प्रियजन प्रवेश द्वार पर रुपये रखते हैं। मान्य जनों के रुपये नहीं लिये जाते हैं। त्रयोदशी के दिन शान्ति हवन कराकर तेरह पंडितों को गीता, बर्तन, भोजन, वस्त्र आदि दान देते हैं। रिश्तेदारों, व्यवहारी व परिवारजनों को मृतक भोज कराया जाता है। गरुण पुराण का पाठ अवश्य कराया जाता है।

७. अन्य रीति रिवाज- १. बुन्देलखण्ड की पारिवारिक रीतियों में विशिष्ट रीति है पुत्री के चरण छूकर नारी को सम्मानित करना। चाहे वह उम्र में छोटी हो या बड़ी। सभी बृद्ध छोटे-बड़े इस परिपाटी का पालन करते हैं।

२. पिता अपनी पुत्री की ससुराल का अन्न, जल ग्रहण नहीं करते। प्राचीन समय में यहाँ तक रिवाज था कि मुहल्ले या गांव में पुत्री जिस जगह ब्याही हो तो उस जगह का लोग जल भी ग्रहण नहीं करते थे। धीरे-धीरे अब इस रीति में बदलाव आया है।

३. इस क्षेत्र में बेटी की विदा बुधवार तथा बहू की विदा गुरुवार को नहीं होती है।

४. ग्रामीण क्षेत्रों में अपने से बड़ों का नाम नहीं लेते हैं। किसी भी जाति का हो उसे कक्का-दादा, भौजी आदि कहते हैं। जैसे- चमार कक्का, बसोर दादा, लुहारिन भौजी आदि।

५. विवाह संस्कार की कुछ रीतियाँ भी अद्भुत हैं। जैसे सुतकरा जाने के बाद कन्यापक्ष का व्यक्ति अंत्येष्टि अशुभ कार्यों में सम्मिलित नहीं होता है। कन्या तथा वर तालाब, नदी, कुँए आदि पर स्नान करने नहीं जाते हैं। विवाह की सामग्री को पूजा के पहले छूना गाँवों में वर्जित है।

६. इस जनपद में पूजन को होम दैवो कहा जाता है। करइया सिराबे में पांच सुहागलें की जाती हैं अर्थात् पांच सुहागिन स्त्रियों को चार-चार अठवाई या चार-चार बरा दिये जाते हैं।

७. सुहागिन स्त्रियाँ मांगलिक कार्यों या सुहागलों की पूजा में महावर लगाकर जाती हैं।

८. गाँवों में किसी का दामाद हो वह पूरे गाँव वालों का दामाद माना जाता है। अगर वह किसी के घर जाये तो उसे दामाद के समतुल्य मानकर भेंट दी जाती है।

---

२. बुन्देलखण्ड का लोकजीवन - अयोध्या प्रसाद गुप्त 'कुमुद' (पृ० संख्या-८०-८१)

९. घर का कोई व्यक्ति घर से बाहर जाता है, तो नवें दिन लौटकर घर वापस नहीं आता है।

१०. गाँवों में गाय, भैंस बियाती है तो उसका तेलू प्रियजनों को व्यवहार में बाँटते हैं।

११. ग्रामीण क्षेत्रों में टोटके के रिवाज होते हैं। तंत्र-मंत्र पर विश्वास रखने वाले ग्रामवासी रोगों को दूर करने, प्रसव पीड़ा न होने, और तुरन्त प्रसव होने, बच्चे को नजर न लगने, बच्चा न होना आदि के लिए तंत्र-मंत्र अथवा टोटका करते हैं। इनकी अपनी अलग रीतियाँ होती हैं। प्रत्येक अंचल अपने लोक द्वारा उन्हें ढाल लेता है।

१२. सांयकाल के समय दीपक, लालटेन जलाते समय प्रकाश को सिर झुकाकर अथवा पैर छूकर नमन करते हैं।

वास्तव में "कुलाचार में वैयक्तिकता का तत्व अधिक प्रभावी होता है। इसलिए एक कुल तक सीमित आचार अपनी उपयोगिता के कारण कभी कभी लोक के लिए अनुकरणीय बन जाते हैं। रघुकुल की रीतियाँ आज तक समाज में आदर्श की प्रतिमान मानी जाती हैं। धार्मिक व्यक्ति धर्म पर आधारित होने के कारण व्यापक भूमिका अदा करते हैं। देशाचार में आंचलिक प्रकृति, परिवेश और जलवायु का प्रभाव होताा है। इसलिए वे एक अंचल तक व्याप्त रहते हैं। सभी तरह के आचार समन्वित होकर एक अंचल के लोकाचार बनते हैं और उनमें एक अवधि तक स्थिरता बनी रहती है। जो अधिक शाश्वत प्रकृति के होते हैं। वे परम्परा के अंग बनकर परम्परित रुप में एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक संचरित होते हैं, लेकिन जो अस्थाई प्रकृति के अनुपयोगी सिद्ध होते हैं, वे परिवर्तित या परिवर्द्धित होकर ही गतिशील हो पाते हैं। आंचलिक लोकाचार अपनी सार्वदेशिक अस्मिता बनाकर अंचल के बाहर प्रचलित होते हैं और धीरे-धीरे राष्ट्रीय हो जाते हैं। इस अंचल को गर्व है कि उसके कुछ लोकाचार राष्ट्रीय मंच पर प्रतिष्ठित हुए हैं।"३

५. लोकगीत, नृत्य तथा वाद्ययन्त्र -

(अ) लोकगीत- बुन्देलखण्ड के प्रत्येक घर मे होने वाले मांगलिक एवं परिवारिक समारोह लोकगीत एवं लोकसंगीत के साथ आयोजित किये जाते है। मानव हृदय की कोमल भावनायें इन गीतों में सहजता के साथ व्यक्त होती है। मनुष्य अपनी कसक व उल्लास लोक गीतों के माध्यम से प्रकट करता है।

बुन्देली लोकगीत लोकसंस्कृति का दर्पण है। यहाँ की लोक संस्कृति व आचार-विधान की झांकी इन गीतों के माध्यम से प्रकट होती है। ये लिखित कम, वाचिक अधिक मात्रा में प्राप्त होते है। ग्रामीण स्त्रियों

---

३. बुन्देलखण्ड का लोकजीवन - अयोध्या प्रसाद गुप्त 'कुमुद' (पृ० संख्या-१८६ -१९०)

अपने कंठो से सबसे अधिक लोकगीत प्रवाहित करती है। इनके पास ये कंठस्थ रूप से एकत्रित होते है। ये गीत पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तान्तरित होते रहते हैं। शिक्षित वर्ग के लोग अपनी इस सांस्कृतिक विरासत को अपनाने से कतराते हैं। लोक की इस विरासत को लिपिबद्ध, स्वर लिपिबद्ध तथा अन्य तरीकों द्वारा शीघ्र एकत्रित कर लिया जाये, तो यह लोक संस्कृति के लिए कल्याणकारी होगा ।

लोकगीतों की विशिष्ट धुने एक जैसी ही पूरे बुन्देलखण्ड में गायी जाती है। स्थान परिवर्तन होने पर भाषागत या उच्चारणगत परिवर्तन अवश्य हो जाता है। विशेष परिवर्तन नहीं आता। ये गीत एक दो पंक्तियों को छोड़कर जैसे के तैसे प्राप्त होते है । इन गीतों में स्वर, रगिनी व केन्द्रीयभाव वही रहता है।

इस प्रान्त के लोकगीतों का विभाजन निम्नवत् है ÷

"१. देवी देवताओं के पूजा विषयक गीत २. बालक/ बालिकाओं के खेल संबंधी उपासना गीत
३. संस्कार गीत ४.ऋतु विषयक गीत ५. श्रंगार गीत ६.श्रमदान गीत
७. जातियों के गीत ८. शौर्य/ प्रशस्ति गीत ६.. स्फुटगीत"१

१. देवी देवताओं के पूजा विषयक गीत- बुन्देलखण्ड श्रद्धा और भक्ति पूर्ण प्रान्त है। यहाँ के निवासी देवी-देवताओं पर अटूट विश्वास एवं आस्था रखते है। इस क्षेत्र में प्रत्येक अवसर पर अलग- अलग गीत गाये जाते है। हरदौल यहाँ के लोकदेवता हैं, इनके गीत हर विवाह या मांगलिक कार्य में अवश्य गाये जाते हैं। आँधी, तूफान आदि के विनाश को रोकने के लिए 'हनुमान' (पवन पुत्र) है।उनके प्रति लोकगीत मुखरित होते है। कार्तिक स्नान में स्त्रियाँ 'कृष्ण राधा' के चरित्र विषयक गीत प्रातःकाल एकत्रित होकर अपने कंठों द्वारा प्रकृति में प्रवाहित करती हैं। यह रमणीय दृश्य देखने लायक होता है।

'माँ दुर्गा', 'महिषमर्दिनी' तथा 'माँ शारदा' यहाँ की अधिष्ठात्री देवियाँ है। महिषासुर का मर्दन करने वाली माँ विपत्तियों से रक्षा करने के लिए विशेष पूज्य है। बुन्देलखण्ड में देवी के प्रति यह आस्था 'अचरियों' द्वारा व्यक्त होती है। अचरियाँ धुनों के आधार पर छैः प्रकार की मिलती हैं। माँ वाली अचरी, जिकड़ी, डंगइयाँ, झूला की अचरी शब्द बानी एवं अमारा अचरी । नवरात्रियों में हर गाँव नगर में अचरियों के मंगल गान की धुन गूँजती रहती है।

इन गीतों में स्त्री एवं पुरूष का समान अधिकार है। "कार्तिक गीत" महिलाएँ गाती है "गोटे" पुरूष गाते है। अचरियाँ केवल माँ दुर्गा जी की ही नहीं 'राधा जी', 'सीता जी', 'कालका माता' और 'भैरव बाबा'

---

१. बुन्देलखण्ड का लोकजीवन - अयोध्या प्रसाद गुप्त 'कुमुद' (पृ० संख्या - १)

की भी गायी जाती है। इसी क्रम में लांगुरियाँ गीत भी आते हैं।

देवी माँ की पूजा में, 'देवी मार्ग' पूजने का विधान है। इस पूजन में 'शक्ति' व 'गणेश' के ''मायले'' गाये जाते हैं। 'कारसदेव' की "गोटें" पशुरक्षा की पूजा में कथा के रूप में गाई जाती हैं।

१. देवीजू की अचरी –

(क) कैसें कि दरसन पाउंरी , माई तोरी सकरी दुआरियाँ

माई कें दुआरे एक भूखा पुकारे, देऔ भोजन घर जाऊँरी । माई तोरी ....

माई के दुआरे एक अंधा पुकारे , देऔ नैना घर जाऊँरी । माई तोरी ....

माई के दुआरे एक बांझन पुकारे, देऔ ललन घर जाऊँरी । माई तोरी ....

(ख) फूलौं जार पहर करौंदी वन फूलौ हो मांय ।

कौना वरन जाकी बोड़ी जगतारन, सुरंग वरन फुल होय हो मांय।

गेउआं वरन जाकी बोड़ी जगतारन, सुरंग वरन फुल हौंय हो मांय ।

पैलो फूल जब टोरौ जगतारन, वेला भरौ रंग होय हो मांय ।

दूजौ फूल जब टोरौ जगतारन, नांद भरौ रंग होय हो मांय ।

कौना की रंग दउँ सुरंग चुनरियाँ, कौना की पचदंग वाग हो मांय।

ज्वाला की रंग दउँ सुरंग चुनरिया , लंगुरा की पचरंग पाग हो माय

कैसे कै सूके सुरंग चुनरिया कैसे कै पचरंग पाग हो मांय ।

घुल्लन सूखै सुरंग चुनरियाँ ढ़ावे पचरंग पाग हो माँय ।

कौनें उड़ा दऊँ सुरंग चुनरियाँ कौनें पचरंग पाग हो माँय ।

ज्वाला उड़ा दऊँ सुरंग चुनरियाँ लंगुरा बँधा दउँ पाग हो माँय।

माइ के भुवन कौ दे परकम्मा नैकैं परौं दोउ पाँव हो माँय ।

इस गीत में प्रकृति का वर्णन है, यह चंदेल राजाओं के युग का प्रतीत होता है। इस गीत में धार, पहाड़ का वर्णन आया है, यह झाँसी में चंदेल द्वारा बसाये गए लहर ग्राम के निकट ही है। इसी के समीप माँ जगदम्बा का प्राचीन मंदिर है, जो उर्दिया और तेलिया पत्थर का बना है। मंदिर के प्रांगण में एक पत्थर का चीरा मढ़ा है जो चंदेलों का प्रमाण देता है। चंदेल राजाओं ने जहाँ पर जो भी निर्माण कार्य करवाया है, वहाँ पर पत्थर, चीरा या टीवट बनवाया है। इस देवी गीत में करौंदी वन का वर्णन है। यह वन झाँसी

से छः मील पश्चिम सातार नदी के तीर से प्रारम्भ होता है, और ओरछा तक इसकी सीमा है।

२. सीता जू की अचरी -

(क) अब रथ आ गये राजा राम के हो मॉंय

काहे के रथला बने, काहे के जोताचार , चंदन के रथला बने रेशम के जोताचार । हो मॉंय..

को जौ रथला पै बैठियो, को जो हांकन हार, सीता रथला पे बैठियों, लक्ष्मण हांकनहार । हो मॉंय..

३. राधा जू की अचरी -

(क) धीरे से झुला दो राधा पालना हो मॉंय, मन मोहन उदक न जांय । धीरे से ......

काहे के पालन बने, काहे के जोता चार, चंदन के पालना बने, रेशम के जोता चार ।धीरे से...

४. कालका काजू की अचरी -

(क) आम घनों, महुआ घनों, बिच-बिच घनों है अनार

गुनन की आगरी हो कालका, रखे संत बिलमाय ।

किन्नें बंधा दये नोंने चौतंरा , किन्ने दुराये नोंने बान। गुनन की ....

राधा बंधा दये नौने चौतरा, रनियाँ दुराये नौने बान। गुनन की.............

आम गुड़े महुआ गुड़े, बिच-बिच गुड़े हैं अनार। भगेलिन रखै संत बिलमाय । गुनन की........

५. हरदौल के गीत -

(क) हमाये हरदौल लाला ऐसे लगत है , जैसे इन्द्र अखाड़े ।

पवन के हनुमत हैं रखवारे ।

काना सो दल उनये हो , लाला काना करै मिलान ।

बुन्देला देस के हो, रैया राव के हो, बेटा साव के हो , तुमरी जोय रही तलवार ।

बिजली चमके चंबल मांय ।

६. राम के भजन-

(क) राम नहिं सुमरौं नहिं रे मोरे प्यारे ,करौ न हरि सों हेत

वे नर ऐसे जायेगे रे भैया, ज्यों मूली के खेत । भजन तो करों हो................

(ख) भजन तो बोलो सिया रघुवर के सिया रघुवर के ,भजनई में लगादो बेड़ा पार हों...........

भजन बिन सगुनी देहरिया रे देहरिया रे, हिरदे में बसालो सियाराम हो ।

७. कृष्ण के भजन -

(क) सखीरी, मै भई न बिरज़ की मोर ,

कहाँ रहती , कहाँ चुनती , काना करत किलोल ।

बन में रहती , बन फल खाती , बनई तें करत किक्रोल ।

उड़-उड़ पंख गिरे धरती पे, बीने जुगल किशोर ।

मोर पंख को मुकुट बनाओ , बांदे नंद किशोर ।

(ख) बसौ रे मन बृन्दावन की ओर

बृन्दावन में बाग भौत हैं कलियां अजब अमोल । बसौ रे

बृन्दाबन में झूला चलत है झूलत नन्द किशोर । बसौ रे.........

बृन्दावन में रहस होत है, नाचत गोपी ग्वाल । बसौ रे

बृन्दावन में साधू भौत है, रखियों अजब अमोल । बसौ रे........

८. कार्तिक गीत-

(क) नैक पठै दो गिरधर जू को मैया, गिरधर मोरे हिरदै बसत है ।

सो उनई के हात लगै मोरी गैया, इतनी सुनके जसोदा मुसक्यानी ।

जाऔ-जाऔ लाल, लगायाऔ गैया, कछु कारे, कछु ओंढे कमरिया ।

उनको देख, बिचक गई मोरी गैया, कऊँ देखें, कऊँ सेट चलावें ।

मुख पै दूध गिरै मोरी मैया, अब तो हमाओं त्यारौ बारौ है कन्हैया ।

६ - गणेश तथा शक्ति पूजा का गीत (मायले)

(क) भाइ रे सुमरौ ए गनपत, सुमरौ गनेश, दाता विघन विदार नहार हो स्वामी ।

बड़े-बड़े पैर गनपत राजा सोंहेगे, शक्ति माई के खम्भा बनेंगे हो स्वामी ।

लम्बी-लम्बी पूंछ गनपत राजा सोंहेगे, शक्ति माई के कुड़रा बनेंगे हो स्वामी ।

बड़ी-बड़ी पीठ गनपत राजा सोंहेगे, शक्ति माई गदिया बनेंगे हो स्वामी ।

बड़े-बड़े कान गनपत राजा सोंहेगे, शक्ति माई पंखा बनेगें हो स्वामी ।

छोटे-छोटे नैनवा गनपत राजा सोहेंगे, शक्ति माई दियलग जरेंगे हो स्वामी ।

बडे-बड़े दांत गनपत राजा सोहेंगे, शक्ति माई चुनरियां बनेगी हो स्वामी ।

बड़ी-बड़ी सूँड़ गनपत राजा सोहेंगे, शक्ति माई झूला बनेंगे हो स्वामी ।

१० - भैरव जू की अचरी

(क) तोरी सांकर लुट-लुट जाय, लाड़ले भैरव रे.........

कहना धरी तोरी पनही रे बाबा, कहना धरी तरवार। लाड़ले भैरव रे..........

आरे धरी तोरी पनही रे बाबा, दुआरै धरी तरवार । लाड़ले भैरव रे..........

११ - कारसदेव की गोटे

(क) बारा बरस तपिया तपी, करे न अन्न अहार।

'सरनी' गइ असनान खौं, अहेले तला की पार।

कमल पै पौड़ो राज कुमार, सौ-सौ दल कमला खिले, भमर रये गुंजार।

एक कमल पै ऐसौ लगै, जैसे दियला जरै हजार। कमल पै पौड़ौ राजकुमार।

उठ सरनी ओली लये, 'करस' खौ पुचकार।

जप-तप सब पूरन भये, मोरी शिव ने सुनी पुकार। कमल पै पौड़ों राजकुमार।

सुरजा थके चंदा थके, मौ की जोत निहार,

जनम-जनम कौ सरनी घर कौ, मिट गओ सब अंधियार।

झूलना झूलै राजकुमार, कमल पै पौड़ो राजकुमार।

२. बालक/बालकाओं के उपासना संबधी गीत- बच्चों से संबन्धित अनेकों खेल बुन्देलखण्ड में खेले जाते हैं- मामुलिया, सुआटा, टेसू, झिंझियाँ आदि। ग्रामीण बालिकायें इन खेलों को बड़ी तन्मयता के साथ खेलती है। खेलों के साथ-साथ बुन्देली गीत गाते है जो कि निम्न है-

१. अक्ती गीत -

(क) "अक्ती की बनी सक्ती,लत्ता की बनी पुतरिया, रासो विदा करदो नई होत दुफरियां"

(ख) अक्ती खेलने कैसे जाऊँरी वर तेरे मेरे लिवउआ, मेले लिवउआ, मोरे मेले चलउआ

पैले लिबौआ मोरे नाऊ कक्का आये, नाऊ के संग नई जाऊंगी। वर तेरे..........

दूजे लिबौआ मोरे ससुरा जू आये, ससुरा के संग नई जाऊंगी। वर तेरे........

तीजे लिबौआ मोरे जेठा जू आये, जेठा के संग नई जाऊंगी। वर तेरे ....

चौथे लिबौआ मोरे देउरा जू आये, देउरा के संग नई जाऊँगी। वर तेरे............

पाँचवे लिबौआ मोरे राजा जू आये, अपने राजा संग मैं डोली चढ़ जाऊँगी। वर तेरे........

२. मामुलिया गीत -

(क) मामुलिया के आए लिबौआ, झमक चली मोरी मामुलिया

जितै आजुल जी के बाग, उतै मोरी मामुलिया

रानी आजी देखन आयी बाग, सजाय ल्याई मोरी मामुलिया

ल्याऔ-ल्याऔ चंपा चमेली के फूल सजाओ मोरी मामुलिया।मामुलिया के आए.......

ल्याऔ घिया तुरइया के फूल, सजाओ मोरी मामुलिया।

जितै-जितै वीरन जू के बाग, उतै मोरी मामुलिया।

रानी भावी देखन आई बाग, सजाय ल्याई मामुलिया। मामुलिया के आए...........

ल्याओं-ल्याओं चंपा चमेली के फूल सजाओ मेरी मामुलिया।

जितै-जितै बाबूल जू के बाग, उते मोरी मामुलिया।

रानी मैया देखन आयी बाग, सजाय ल्याई मामुलिया। मामुलिया के आए...........

३. सुआटा (नौरता) गीत

(क) हिमांचल जू की कुंअरि लडायतीं नारे सुआटा

गौरा बाई नेरा तो बंधाइयों बेटी नौ दिना । नारे............

दस दिन करियो उपास, उपास करें माई मेड़े लड़े। नारे.........

झिलमिल हो झिलमिल तेरी आरती, महादेव तेरी पार्वती। नारे.........

को बाओं नैनी, चंदा बाओ नौनी, सूरज बाऔ नौनी । नारे.........

नौनी सलौने भैाजी कंत तुमाये, विरन हमाये। नारे.........

(ख) तिल के फूल तिली के दाने,चंदा ऊगे, बड़े भुनसारे ।

ऊंग न पाऔ बारौ चंदा, सब घर हो गऔ लिपना पुतना ।

सास न होय दै है गरियां, ननद न होय कोसें विरना ।

भाई को कहौ न करिहौ, बाबुल को कहौ न करिहौ।

पानी की खेप न धरिहौं, चकिया को डड़ा न गैहों ।

बासी को कौर न देहो, ताती सो लप-लप खैहों ।

खेल लो बेटी खेल लो, माई बाबुल के राज । ।लिवा ल्याहों मोय............

४. गौरा का गीत -

(क) अपनी गौर की आई देखौ, झाई देखौ, काहौ पहिरें देखौ ।

कान तंरूकुला देखौ, नाक नथुनियाँ देखौ, हाथन चूरा देखौ, पांव पैजनियाँ देखौ ।

लंगुरा ओढ़े देखौ, लटका लये देखौ, पराई गौर की आई देखो, झांई देखो।

काहौ पहिरें देखों, नाक नकटी देखौ, कान बूंची देखौ ।

मोरी' गौर मांगे धतूरे के बन्ना, सो कहाँ पाहौ लाला रे ।

मोरे भैया भतीजे हारे गये है ,कारी लै कुंजल चौक बसंतो, ले मोरी गौर, लेव महादेव ।

५. हप्पू गीत -

(क) हमाई गौर को पेट पिरानौ, सारे लड्डुआ हप्प ।

हमाई गौर के लरका भऔ, सारे लड्डुआ हप्प ।

परायी गौर को पेट पिरानौ, सारे लड्डुआ हप्प ।

परायी गौर को बिटियाँ भई, सारे लड्डुआ हप्प ।

६. टेसू-झिझिया विवाह के गीत -

(क) हरी री चिरैया तोरे पियरे पियरे पंख

सो उड़ जाय बबूरा तोरी डार, काजर की कजरौटी ल्याव ।

सेंदुर की सिदरौटी ल्याव , आंचल फार उड़निया ल्याव ।

बेलाभर तिल चांउरी ल्याव, ऊपर गुर की बटी धराव ।

पाँच टका पावन के ल्याव, लौंग सुपारी रुपया ल्याव । आज विदा विदा हो रई झिझियाँ जू ।

७. टेसू के गीत -

(क) टेसू टेसू कां गये ते, हथिया खिलाउन गये ते ।

पच्चीसन की जोड़ी आई, बिलइया जूझ गयी ।

सास बहू रूठ गयी , सास को टूटो घूंटौ, बहू को करम फूटौं ।

(ख) बड़ौ दुआरौ, बड़ी अटरिया, बड़ौ जानके टेसू आये ।

मेड़न मेड़न रोंसा फूलै, बन फूलैं कचनार ।

सदा वखरिया ऐसे फूलें जी में हाथी झुक दुआर। ईमें हाथी झुकें हजार।

(ग) हिरन खुरी भई, हिरन खुरी, हिरना मांगे, तीन खुरी ।

तीन खुरी को पाइया, देहरी दूध जमाइया, देहरी पे बैठे कूकरा, खुशी रहे तेरौ पूतरा।

(घ) टेसू अगड़ करें, टेसू झगड़ करै, टेसू लैई कें टरे ।

टेसू को भई कोउ न खाय, खाय-खाय चौकड़िया खाय ।

८. झिझिया के गीत -

(क) साटुंल सांटुल सांटली, संटला के लबें बार ,ऐसी बिटिया भई सांटुला, झकोरना जाय ।

कौना ने मारी सांटुली, कौना ने बोले बोल, भैया ने मारी कांकरी, भावी ने बोले-बोल ।

जिन मारो मोय कांकरी, जिन बोलौ भावी बोल, हम तौ चिरैंया परदेस की, आज उड़ै कैं काल ।

३. संस्कार गीत - "बुन्देलखण्ड का लोक जीवन सुसंस्कृत है। हिन्दू शास्त्रों में वर्णित सभी संस्कारों से यहाँ विधि-विधान पूर्वक जातक को संस्कारित किया जाता है। यहाँ मांगलिक संस्कार, संगीत की लय और ताल पर लोकगीतों के साथ होते हैं। शास्त्रोक्त संस्कार निम्नलिखित हैं -

१. गर्भधान संस्कार २. पुंसवन ३. सीमान्तोन्नयन ४. जातकर्म ५. नामकरण ६.निष्क्रमण ७.अन्तप्राशन ८. चूड़ाकर्म ९. वेदारंभ १०. उपनयन ११. कर्णवेधन १२. समावर्तन १३. विवाह १४. बानप्रस्थ १५. सन्यास १६. अंत्योष्टि संस्कार ।"२

निम्न संस्कारों में प्रथम तीन संस्कार जन्म के पूर्व होते हैं। शेष जन्म से मृत्यु पर्यन्त तक पूर्ण होते हैं। संस्कारों को वैदिक रीतियों में जीवन का अभिन्न अंग माना गया है। प्रारम्भ से अंत तक ये मनुष्य के जीवन के साथ चलते रहते हैं। बुन्देलखण्ड में लोकगीतों एवं लोकदेवताओं के पूजन-अर्चन के साथ संस्कारों को पूर्ण किया जाता है। संस्कारों से सम्बन्धित लोकगीत निम्न हैं -

१. गर्भादान संस्कार (फूल चौक) गीत-

(क) दुलैया चौके आई, सोने को दिया जगाऔ, दुलैया चौकें आई ।

चंदन चौक पुराऔ, दुलैया चौकें आई ,बम्मन बुलाऔ पत्रा दिखाओ, गुन के गनित लगाऔ ।दुलैया.

२. पुसंवन संस्कार गीत-

(क) राजा तो पोंटे पंलग पै, रानी मलें पिड़री महराज ,हंस हंस पूछें राजा दशरथ कैसी धन अनमनी महराज।

---

२. बुन्देलखण्ड का लोकजीवन - अयोध्या प्रसाद गुप्त 'कुमुद' (पृ० संख्या - ४-५)

भौतउतौ है गो राजा अन्नधन, भौतउ, लक्ष्मी महराज, सूनौ अजुध्या को राज, अकेली संचत बिना महराज

३. सीमान्तोन्नयन (सादें) गीत

(क) ऐसी किरपा कब कर हैं भगवान , मेरे आंगन बजै बधाऔ.........

४. जन्मसंस्कार गीत

(क) मोरे डरे-डरे कहरॉय, गुविन्दा भू पै डरे,.........२

जाय जो कैयो उन राजा ससुर सो, रतना देय लुटाय । गुविन्दा ....

५. नामकरण संस्कार गीत

(क) दशरथ जू की रनियां रामा लयें कइयां ।

कौना के रामा भये , कौन के लछमनियां । दशरथ जू को.........

कौसिल्या के रामा भये, सुमित्रा के लछमनियां । दशरथ जू को.........

कौन बेरा रामा भये, कवै लछमनियां । दशरथ जू को.........

शुभ घरी ललना राम भये हैं, झूल परे लछमनियां ।द शरथ जू को.........

६. निष्क्रमण संस्कार गीत

(क) ऊपर बदर घहराये हो, नैचे गोरी पानी खो निकरी ।

जाय जो कहयों उन राजा ससुर सो, अंगना में कुइया खुदायं, बहु तुमाई पानी खों निकरी ।

७. अन्नप्राशन संस्कार गीत

(क) जनक जू के महलन में कैसी परी भीर, हरस भरी भीर हुलस भरी भीर ।

नाना चटा रयें, ललन को खीर, काहे की बिलिया काहे की खीर,सोने की बिलिया, इमरत की खीर ।

८. चूड़ाकर्म गीत

(क) साजन ललन कौ मुड़नौ कराऔ, साइत दिखाऔ, घड़ी बिचराऔ ।साजन........

गोरी नउआ बसै ससुरार, बहिना ससुरार, बहिना ससुरार । साजन........

९. वेदारंभ संस्कार गीत

(क) कौशिल्या जू माई, कैकई जू माई । पंडित जू नेग मांगे, वेद की पढ़ाई ।

राजा जू को घोड़ा मांगे , वेद की पढ़ाई । सूक-सूक पट्टी , चंदन घुट्टी ।

राजा आये महल उठाये, महल में गाड़ौ झंडा ,झंडा गऔ टूट पट्टी गई सूक ।

सूक-सकू सुकायेगी, पांचों विद्या पेट में ।

१०. उपनयन संस्कार गीत

(क) तीन तगा कौ डोरा री, दमरी कौ सूत ए भैया, तीन तगा को जनवारी, कैसो मजबूत ए भैया, पैले में विश्नू , दूजे में बरमा, तीजे में शंकर, अवदूत ए भैया ।

११. कर्ण वेधन संस्कार गीत

(क) सोने के सिंहासन बैठे राजा आजुल, नाती ने रार मचाई रे............

कै तौ आजुल मोरे कान छिदाऔ, कै तो पढ़ाऔ चटसार रे..........

१२. समावर्तन संस्कार गीत

(क) झालर जबई मुड़ाय हो, जब आजुल घर होंय, झालर मोरी पाहुनी ।

१३. विवाह संस्कार गीत

(क) पैली भांवर के परतई भौजी मन मुसकाई, दूजी भांवर के परतई, भाई मन सकुचाई ।

तीजी भांवर के परतइ बिरन की आँख भर आई, चौथी भांवर के परतई, सखियन खुशी मनाई ।

छठई भांवर के परतई, मैना मन बिलखाई, सातई भांवर जब परी, वेटी भई पराई ।

१४. वानप्रस्थ संस्कार गीत

(क) राम-राम खौं भज लै प्यारे, क्यों करते सैना कानी, हम जानी कै तुम जानी ।

रामा आई ज्वानी लाल भई अखियां, अलियां-गलिन, इठला जानी । हम जानी................

आये बुढ़ापे थकित भई देहिया, लै लठिया पसताजानी । हम जानी...............

१५. सन्यास संस्कार गीत

(क) मन लागौ है राम फकीरी में ।

जो सुख है मोय राम भजन में, सो सुख नैया अमीरी में । मन लागौ है..............

हाथ में सौटा में तूमा, चारऊ धाम जंजीरी में। मन लागौ है..............

लगी भली सबकौ सुन लीजे, चलिए चाल गरीबी में । मन लागौ है.............

१६. अन्त्येष्टि संस्कार गीत

(क) चलन चलन सब कोऊ कहै, चलबौ हंसी न खेल

चलबौ सांचे, आई कौ, जी कौं भैरों बुलावे टेर । चलन चलो..................

४. ऋतु विषयक संस्कार गीत - ऋतु परिवर्तन पर गाये जाने वाले बुन्देली लोकगीत निम्न हैं -

१. बरसाती गीत

(क) गाड़ीवारे मसक दे रे बैल, अबै पुरवइया के बादर ऊनये ।

कौन बदरिया ऊनई रसिया, कौन बरस गये मेघ । अबै............

२. सावन गीत

(क) मोरे राजा किवरियां खोलो, रस की बूँदें परी ।

पहले आँधी बाहर आई, दूजें बादर खेत दिखाई,

तीजें कठिन अंधेरी छाई उठी-उठी घटा घनघोर । रस की बूँदें परीं................

३. झूला गीत

(क) सदा न तुरैया फूले अमाना जू सदा न सावन होय, सदा न राजा रन चढ़े सदा न जीवन होय।

राजा मोरे असल बुंदेला कौ राछरौ, सबकी बहिनियां झूलें हिंडोरा ।

तुमरी बहिन बिसूरें परदेस, नऊआ पठै दो बम्मन पठे दो ।

बैइया जू को दिन घर आये, राजा मोरे असल बुंदेला को राछरौ ।

४. कजली (भुंजरियन) गीत

(क) सबरे उरगिया उरई गये, मैया हमऊ उरई खौं जाय ।

मैया भली है उरई की चाकरी ।

कहां तौ मैया धरौ घीन पलेंचा, कहां धरे हथयार ।

खुटियन टंगे है जीन पलेंचा, उतईं धरे हथयार । मैया ....

५. फागें

(क) मौ पे रंगा न डारो सांवरिया ।

मैं तो ऊसई अतर में डूबी, लला । मो पै रंगा...........

केसर डार रस गंगा बनाई, हरे बांस पिचकारी लला। मो पै रंगा...........

भर पिचकारी मोरी सम्मुख मारी, भींज गयी तन सारी लला । मौ पे रंग...........

६. दिवारी गीत

(क) धनुष चढ़ायें राम ने, सो प्यारे थकित भये सब भूपरे ।मगन भई श्री जानकी, सो देख राम कौ रुप रे ।

आज दिवारी इते है, पैले पार है काल रे । बाजत अबै ढोल सो, नाचत आवै ग्वाल रे ।

५. श्रृंगार गीत – नारी मन भावनाओं को श्रृंगार गीत द्वारा कवि बड़ी ही सहजता के साथ प्रकट कर देता है। श्रृंगार नारी जीवन के लिये महत्वपूर्ण अंश है, जिस प्रकार भावों के बिना कविता अधूरी रह जाती है। उसी प्रकार श्रृंगार के बिना नारी। नारी अपने प्रिय को मोहने के लिए श्रृंगार करती है। प्रिय के बिना नारी श्रृंगार अधूरा है। मेंहदी लगाना, गोदना गुदवाना, आभूषण पहनना ये सब नारी श्रृंगार के अभिन्न अंग हैं। भारतीय नारी अपनी सुन्दरता के प्रति हमेशा सजक रहती है। बुन्देलखण्ड में ग्रामीण स्त्रियाँ सुन्दर दिखने के लिए कष्टकारी गोदना गुदवाती एवं मेंहदी लगाती हैं ।

१. श्रृगार से संबंधित लोकगीत

(क) काय बोली रे काय बोली, भुन्सारें चिरैया काय बोली ।

चिरैया काय बोली, रे बड़े तड़के चिरैया काय बोली

ठंडौ रे पानी गरम कर लाई, सपरन न पायें पिता, फिर बोली, काय........

२. मेंहदी गीत

(क) अग्गम मेंहदी ऊगी केसरिया लाल, पच्छम मोल बिकाय कै मांदी रचनूं मोरे लाल ।

छोटे से देवरा केसरिया लाल, लियाने मेंहदी के पान ।

ल्याऔ भौजी सिलौटा केसरिया लाल, बांटौ मेंहदी के पान ।

३. गुदना की गारी

(क) आरी ऐरी गोदे जा गुदनारी, भौअन पै गिरधारी ।

आरी ऐरी माथे मुकुट मुगरी लिखिये

६. श्रम के गीत – बुन्देलखण्ड में कृषक खेती से अपना जीवन यापन करते हैं। किसान बुबाई के समय, फसल काटते समय, चक्की पीसते समय या मजदूरी करते समय अपने मन को खुश करने या शारीरिक थकान को दूर करने के लिए लोकगीतों का सहारा लेते हैं। स्त्रियाँ लोकगीतों में तन्मय होकर अपने अपने कार्यों को रुचिपूर्वक करती हैं। इनकी अपनी -अपनी धुनें हैं।

१. चकिया के गीत

(क) मोरी चकिया के गेरऊं गेर चुख्खा । कायरे रे फिरत अँधियारे में ।

अरे हां चुख्खा, मोरे जेठा घरे नइयां, जेठानी को उठाय लयें जाय। चुख्खा......

२. दिनरी गीत

(क) देखें होय तौ बताव री, सहेलरी राते के बीरा मोरे पांहुने

ए वे तो एक दिन देखे मैने दरजी की दुकनियां,बैठे-बैठे बटुआ सिमाय, री सहेलरी। राते.....

३. बौनी को रसिया गीत

(क) अरे रामा हो, ऊचे से सेंमरा डगमगे,

फूले है लाल गुलाब, कौन बरन बाकी बौड़िया, कौन बरन फूल होय ।

४. बिलवारी गीत

(क) दिन डूबे के धरा रई लंबी माँग, किसानों भैया, बेरा तौ भई है घर जावे की।

घालौ घालौ रे धरम के दो-दो हाथ। कठोइरा ने कसक न जानी मोरे लिपरा की। बेरा तौ.....

७. जातियों के गीत - विभिन्न जातियों विशेषकर पिछड़ी जातियों में 'ढिमरियाऊ, धुवियाऊ, गड़िरियाऊ, कहार विभिन्न अवसरों पर गाये जाने वाले अपने लोक गीत तथा धुने लोक प्रचलित है

१. गड़रियाऊ गीत

(क) आड़र दीनी,गाड़र दीनी, डला भर ऊन दीनी

रूपे की घरी, सोने की माल, रहंढ चलें, पानी ढरै

नित ये औलाद बढ़े, कऔ पंच भांवरे परी कि नई?

२. ढिमरियाऊ गीत -पानूं कौ रुजगर ढिमर तौरौ, पानी को रुजगर। पानू कौ...........

३. ढिमरियाऊ गारी- काहे दिल डारे गौरी ठाड़ी आँगन, काहे के तोरे बाजूबंदा, काहे के कंगना ।

४. ढिमरिया राग- ढीमर जाति के द्वारा गाये जाने वाले परंपरागत लोक गीतों का नाम ही ढिमरिया राग है।

८. शौर्य प्रशस्ति गीत- आंचलिक ख्याति प्राप्त लोगों की प्रशंसा एवं शौर्य को बनाये रखने के अनेकों गीत बुन्देलखण्ड के साहित्य में प्राप्त होते हैं। यहाँ पर गाये जाने वाले गीत, आला, राछरे एवं पांवरे है। यह गीत शौर्य परक होने पर रासो परम्परा में गिने जाते हैं। कथानक गीतों को लोकगाथा की श्रेणी रखा जाता है।

१. चन्द्रावली का राछरा -

(क) सरग उड़त है एक चील री आधे सरग मड़राय।

जाय जो कहियो मोरे ससुर सों, सासू सो कहियों समझाय ।

जाय जो कहियो बारे बलम सों, बन्दी है तेरी चन्दरावली, जाके है लम्बे-लम्बे केस।

२. तमूरा भजन- तमूरा (इकतारा) पर पारंपरिक शब्द बानी भजन कबीर पंथी भजन अथवा धार्मिक चरित्रों पर आधारित लोक गाथाओं गाने की परम्परा अब विलुप्तोन्मुख है। प्रमुख वाद्य तमूरा ढ़ोलक, कांसी, झीका तथा चंग है।

३. ख्याल लावनी - बुन्देलखण्ड की गड़बाजी में ख्याल तथा लावनी विशेष लोकप्रिय हैं। ख्याल का अर्थ है यह खेल के रूप में गीत शैली में प्रतिस्पर्द्धात्मक होते हैं।

(ब) लोकनृत्य - बुन्देली लोकनृत्य के साथ बुन्देलखण्डी लोक साहित्य और गीत की भावनायें सन्निहित होती है। लोक साहित्य जनता द्वारा ही निर्मित तथा जनता के लिए होता है, जिसमें लोक नृत्य आनंद की रसानुभूति का प्रस्फुटन होता है। बुन्देली लोक नृत्य विशेषज्ञ 'श्री मोहनलाल श्रीवास्तव' का मत इस प्रकार है-"लोक नृत्य, लोककला का एक आदर्श अंग है। शब्द के माध्यम से जिस सत्य की अभिव्यक्ति होती है, वह साहित्य है और गीत के माध्यम से जिस प्रकाश का प्रस्फुटन होता है, वह नृत्य हैं। साहित्य साधना-साध्य है, वाणी का तप है। नृत्य स्वयंम्भू है, इसलिए अधिक स्वाभाविक है। साहित्य में जीवन सत्य की अनबोली छाया स्वर पाती है। लेकिन नृत्य में जीवन-शक्ति का आनंदात्मक आन्दोलन चित्रित होता है। मेरा मतलब यहाँ साहित्य और नृत्य का तुलात्मक विवेचन नहीं है। वरन् मैं कहना यह चाहता हूँ कि नृत्य शिशु की शैशव क्रीड़ा की तरह स्वाभाविक है। उसमें तारुण्य है, यौवन है, उभार है, गति है, और सबसे परे सृजन की तल्लीनता है। यदि साहित्य ऋषि की तरह वृक्ष है, तो नृत्य ब्रह्मचारी की तरह तरुण वीर्यवान है।"

प्राचीन परम्परा के नृत्यों में विविध प्रकार के भावों का प्रदर्शन है। लोकनृत्य में सामाजिक चेतना का समावेश होता है। बुदेली जन प्रचलित परम्परा सांस्कृतिक धरोहर की गंभीरता, गतियां एवं प्राचीनता प्रदर्शित करती है। बुन्देलखण्ड में लोकनृत्य परम्परा प्रमुख है। इस क्षेत्र में आदिवासियों का वास है और उनकी प्रत्येक क्षेत्र में अपनी विशेषतायें हैं।

आदिवासी लोग पर्वो पर उल्लास पूर्ण ढंग से सामूहिक नृत्य का आयोजन करते हैं। शास्त्रीय नृत्यों में व्यक्तिकता तथा नियमों का बन्धन नहीं है। लेकिन लोक नृत्यों में ऐसा नहीं है। इन नृत्यों में सामूहिक सामाजिक चेतना का आभास होता है। इस नृत्य में जीवन का वास्तविक स्वरुप परिलक्षित होता है।

बुन्देलखण्ड में लोक नृत्य विन्ध्य श्रेणियों के निवासी ढीमर, धोबी, कंजर, ग्वाला, गौंडवैगा आदि आदिवासियों की लोक नृत्य परम्परायें आज भी सुरक्षित हैं। त्यौहारों, पर्वो, विवाह एवं जन्मोत्सव के अवसर

पर ये लोग अनेकों प्रकार के नृत्यों का आयोजन कर लोक नृत्यों का प्रदर्शन करते हैं । अपने असित्व को कुछ क्षणों के लिए उसी में विलीन कर देते हैं। **"बुन्देलखण्डी लोकनृत्यों में कृष्णलीला का प्रभाव स्पष्ट रुप से प्रतिलक्षित होता है। दीपावली का त्यौहार तो समस्त भारतवर्ष में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखता है। परन्तु बुन्देलखण्ड के ग्रामीण अंचल में इस त्यौहार का विशेष महत्व है। इस अवसर पर बुन्देलखण्ड के ग्वाले बड़े उमंग के साथ दीपावली नृत्य का प्रदर्शन करते हैं। बुन्देलखण्ड लोकनृत्य की यह परम्परा प्राचीन है और यहाँ पर सुरक्षित है। इस दीपावली नृत्य में समूह नृत्य होता है, व्यक्ति नृत्य नहीं। अन्य प्रान्तों में यह नृत्य व्यक्ति विशेष द्वारा ही सम्पन्न होता है और श्रृंगार पूर्ण होता है। परन्तु बुन्देलखण्ड की वीर प्रसाविनी भूमि पर यह दीपावली लोकनृत्य लाठी के खेतों के नट-नाट्य के रुप में होता है। इस लोकनृत्य के द्वारा वीरत्व की भावना का प्रदर्शन होता है। "१**

लोक नृत्य सामूहिक होते हैं। इनमें स्त्री-पुरुष दोनों का सहभाग होता है। ये नृत्य कृष्ण की रासलीला से प्रेरित होते हैं। भक्त अपने आराध्य की स्मृति जागृत करने के लिए नृत्य का आयोजन करते हैं। लोकनृत्य की परम्परा बुन्देलखण्ड का ज्वलंत उदाहरण है। अहारी नृत्य भी भगवान कृष्ण की दही चुराने की लीला पर आधारित है। इय नृत्य में व्यक्ति एक घेरे में खड़े होकर एक दूसरे का हाथ पकड़कर नटों की तरह नृत्य करता है। आदिवासियों में सुआ नृत्य की प्रथा प्रचलित है। इनके करमा नृत्य भी लोकप्रिय है। यह आदिवासियों वन जीवन के संघर्ष का प्रतीक है। भगवान कृष्ण को वे अपना लोकनृत्य देवता मानते हैं। इस नृत्य में संघर्ष, जीवन सत्य और जीवनकर्म की भावना छिपी हुई है। शैला नृत्य भी बहुप्रचलित है। यह विवाह के अवसर पर दृष्टव्य होता है। 'बुन्देलखण्ड में प्रायः तीन प्रकार के लोकनृत्य होते हैं -

"१. आदिवासियों के लोकनृत्य २. सार्वजनिक लोकनृत्य ३. पारिवारिक लोकनृत्य"२

(क) आदिवासियों के लोकनृत्य- आदिवासियों के नृत्य संक्षिप्त रुप में इस प्रकार हैं -

१. करमा - यह कर्मप्रधान नृत्य है। यह नृत्य बेंगा काबर, भूमियां आदि आदिवासी 'कदम्ब' (करमवृक्ष) की डालियों को गाड़ कर उसका व्रत बनाकर करते हैं। यह श्रमिकों का कृषिपरक नृत्य है। इस नृत्य को पुरुष करते हैं। प्रमुख नर्तक कदम की टहनी हाथ में लेकर नृत्य करता है। इसके देवता "कृष्ण"

---

१. बुन्देलखण्ड दर्शन - मोतीलाल त्रिपाठी 'अशान्त' (पृ० संख्या - २६६)

२. बुन्देलखण्ड का लोकजीवन - अयोध्या प्रसाद गुप्त 'कुमुद' (पृ० संख्या - ३५)

हैं। केन्द्रिय पुरुष टेर लगाता है। इसके तत पश्चात् शेष लोग गाते हैं।

"इस नृत्य को ई०टी० डाल्टन ने विश्वज्ञानीन कहा है, क्योंकि यह बहुत सी वन-जातियों का प्रिय नृत्य है। वस्तुतः यह नृत्य वन संस्कृति का प्रतिनिधि नृत्य है। आदिवासियों के जीवन का कठिन संघर्ष जैसे पिघलकर गति की रेखाओं में ढल गया हो, और अवश्य ही यह कर्म का नृत्य है। जीवन के हर कोने में इस नृत्य की पैठ है, यहाँ तक किसी की मृत्यु के बाद भी आदिवासी करमा नाचते हैं। अवश्य ही यह नृत्य सृजन और जीवन पर अटूट विश्वास का नृत्य है।"३

लहकी करमा - लहकी शब्द का अर्थ होता है कंपन । इसमें औरत और मर्द आमने सामने नाचते हैं। वाद्य-वादन पुरुष ही करते हैं। औरतों की कतार हाथ पकड़े हुए झुककर बड़ी सुन्दरता और लयात्मकता के साथ पद-संचालन करती हुई आगे बढ़ती है। कदम एक साथ ही उठते हैं, फिर वे सीधी होकर पीछे पिछलती हैं औद मर्द झुककर उनके सामने उतना ही आगे बढ़ते हैं। इस प्रकार यह क्रम बहुत त्वरित गति से आगे बढ़ता है। सारा वातावरण गीत की त्वरा गति को झूम और वाद्य की झनकार से एकाकार होकर जीवन-स्वप्न का सृजन करता है। इस नृत्य की विशेषता इसकी त्वरा में है।

थादी करमा - इसका क्रम लहकी की तरह ही होता है। परन्तु इसमें झूम की उस त्वरा का अभाव रहता है। जो लहकी का आकर्षण केन्द्र है। गति भी इसका मन्थर होता है।

झूमर करमा या झमुलिया- यह मंडलाकार नृत्य है।

खलहा करमा या झमुलिया- यह अर्द्धमंडलाकार नृत्य है। इसमें औरतें पुरुषों को घेरकर नाचती हैं। पहले स्त्रियों की कतार सीधी होती है। फिर वह वाद्य-ध्वनि की गति के साथ मंडलाकार होती हुई पुरुषों को आधा घेरती हैं और घेरा अपने पूर्व आकार को पहुँच जाता है। इसमें स्त्रियों की गति प्रधान है।

"करमा की सुन्दरता पैर उठाकर नृत्य रखने की सामूहिक संगीत-नियोजना में है। यह पद परिवर्तन का नृत्य है। आंगिक चेष्टा ओं का इसमें प्रदर्शन नहीं होता, लेकिन पुरुषों में अवश्य ही आंगिक चेष्टा होती है। पुरुष गले में मादर बाँधकर उमड़ते अंगड़ाते मेघों की तरह झुककर और फिर उठकर नाचते हैं।"

"करमा गीत के बोल या राग के अलाप के साथ ही यह नृत्य होता है। इस गीत के बोल हो हो रे, ओ हो हाय रेगा, आय हाय रेगा" आय हाय हाय हो रे आदि हैं।"

२. सुआ-नृत्य - यह औरतों का नाच है। तोता पक्षी का भारतीय लोक-जीवन में विशिष्ट स्थान

---

३. बुन्देलखण्ड की संस्कृति और साहित्य - रामचरण ह्यारण 'मित्र' (पृ० संख्या - २४७-२४८)

है। तोता बुद्धि विद्या सम्पन्न पक्षी है। तोता शब्दों को रटने में तेज होता है। भारतीय नारी जीवन भी पिंजरे के तोते से कम दयनीय नहीं है। यह नृत्य छत्तीसगढ़ के आदिवासी भी नाचते हैं।

यह नृत्य करते समय स्त्रियाँ वृत्ताकार होकर लय से क्रमशः आगे पीछे पद चालन करती हुई और एक साथ मंडल में घूमकर नाचती हैं। प्रत्येक स्त्री एक बार झुककर ताली बजाती है। ताली द्वारा किया गया लयात्मक संगीत इस नृत्य का प्राण है। सुआ नृत्य कृषि युग की संस्कृति का परिचालक है।

३. शैताम नृत्य - शैताम भोर जाति का समारोहिक नृत्य है। यह प्रायः विवाह आदि शुभ अवसरों पर किया जाता है। महिलायें वृत्ताकार चटकोरा लेकर उसे बजाती हुई नाचती हैं, ओझा ढांक लेकर बीच में खड़ा हो जाता है। ओझा टेर लगाता है। तथा महिलायें उसे दुहराकर गतिशील हो जाती हैं।

४. शैला नृत्य- इस नृत्य को पुरुषों द्वारा किया जाता है। इसे डंडा नृत्य भी कहते हैं। नर्तक अपने हाथ में डंडा लेकर नाचते हैं डंडे की आवाज ओखा संगीत प्रस्तुत करती है। पुरुष अपनी पगड़ी में मोर-पंख लगाकर डंडियां लेकर नाचते हैं।

यह नृत्य शिकार युग के समय से चला आ रहा है। इसमें पुरुषों का मंडल दो-तीन कदम आगे रखता है। इसके पश्चात् दो-तीन कदम पीछे रखता है। पहले अपने हाथों की डंडियां एकबार सामने बजाते हैं। फिर दूसरी बार हर व्यक्ति अगल-बगल के व्यक्ति की डंडियों सं अपनी डंडी बजाता है। सभी पुरुष अपने मंडल में भी घूमते हैं और अपनी धुरी पर भी घूम जाते हैं। ये लोग त्वरित गति से नाचते हैं और विशिष्ट तरह की समूह-ध्वनि पैदा करते हुए गीत गाते हैं। इन गीतों का आलाप लयात्मक और लम्बा न होकर लघु होता है। इस गीत का आलाप है- तरहर, नाना ना नरे, नानारे नाना, तरहर नारे नाना आदि। शैला नृत्य के कई प्रकार हैं -

भरौली शैला - यह शादी के अवसर पर नाचा जाता है। और मंडलाकार नाचा जाता है। घेरा फैलता-सिकुड़ता है क्योंकि सब क्रम से कूदकर पीछे जाते हैं और हाथ में फैलते हुए फिर आगे जाते हैं तथा दो शैला बजाते हैं।

हरौनी शैला - जब दो गाँव के लोग एक-दूसरे को हराने की प्रवृत्ति में यह नाच नचाते हैं तो इसे हरौनी शैला कहते हैं।

लहकी शैला - यह मंडलाकार नाचा जाता है और यह अधिक गीत प्रधान होता है।

झुलनियां लहकी शैला - यह झुककर और झूलकर तन्मयता से नाचा जाता है इसलिए इसे झुलनिया

कहते हैं। गीत इसके साथ भी चलता है।

बैठक शैला - जब नाचते-नाचते पुरुष मंडल एक एड़ी के बल बैठ जाय और दूसरा पैर आगे फेंक ले और दूसरे क्षण पहला पैर आगे फेंक ले और फिर दूसरे पैर के बल बैठ जाय और शैला बजाने का क्रम भी अटूट रहे तो यह बैठक शैला कहलाता है।

शिकार शैला - इसमें पुरुष सीधी कतार में रहते हैं और दूर-दूर पर सधे रहते हैं। फिर शिकार को घेरते हुए से मंडल बनाते हैं। यह एक अप्रचलित नृत्य है जो बहुत कम नाचा जाता है।

(ख) सार्वजनिक नृत्य -

१. दिवारी - अहीर लोग दीपावली के शुभ पर्व पर इस नृत्य का अयोजन करते हैं। बुन्देलखण्ड में यह नृत्य प्रत्येक गाँवों में प्रचलित हैं, नर्तक गाँवों के प्रत्येक मुहल्ले में जाकर अपने नृत्य का कर्तव्य निभाते हैं, ये नर्तक अपनी कमर में घुंघरु बाँधे रहते हैं। प्रमुख नर्तक मोर पंख के मूंठ हाथ में लिए रहते हैं। शेष पीठ की ओर जांघिया में खोंसे रहते हैं। हाथ में डंडे लिए रहते हैं। इसका प्रमुख वाद्य ढोलक है तथा नगड़िया होते हैं। इसके साथ गाये जाने वाले गीत दो पंक्तियों के होते हैं -

सदा भवानी दाहिनीं सन्मुख रहें गनेश, पाँच देव इच्छा करें ब्रह्मा विष्णु महेश हो...

खेल लै लरका, खेल लै, आज कौ खेलो कब पाय है।

वृन्दावन बसवो तजौ,अरे होन लगी अनरीत, तनक दही के कारें, फिर वैंया गहत अहीर हो.....

२. सैरा नृत्य - इस नृत्य में नर्तक दोनों हाथों में छोटे-छोटे डंडे लेकर गोलाकार खड़े हो जाते हैं। आमने-सामने खड़े नर्तकों को डंडा पर डंडा मारते हैं। समस्त नर्तकों के डंडों की चोटें एक साथ स्वर देती हैं। नर्तक कभी आड़े-तिरछे होते कभी झुकते ये क्रम सभी का एक साथ चलता है।

३. राई नृत्य - यह फागुन माह का नृत्य है। इसमें फागें गायी जाती हैं। यह बेड़नी जाति का नृत्य है। यह नृत्य धनाड्य रसिक वर्ग को रिझाने के लिए होता है अतः पूरे वर्ष चलता है। नाचने वाली सोलह कली का रंग-बिरंगा घांघरा तथा चोली पहनती हैं। तथा लम्बी चूनरी ओढती हैं। मृदंगवादक भी नर्तकी के साथ-साथ नृत्य करता है। मशालची राइ की मशाल लिए नर्तकी के दोनों ओर रहते हैं। इसी कारण इस नृत्य का नाम राई नृत्य पड़ा।

४. झिझिया नृत्य - इस नृत्य में एक स्त्री झिंझिया सिर पर रखकर नाचती हैं। शेष महिलायें गोलाकार बनाकर तालियां बजाती हैं। तालियों की तेज आवाज के साथ नृत्य की गति तेज हो जाती है।

यह नृत्य गुजराती के गरवा की तरह है। क्वांर माह में टेसू-झिंझिया के विवाह के अवसर पर यह नृत्य बालिकाओं एवं महिलाओं द्वारा किया जाता है।

५. मोनिया नृत्य- भगवान कृष्ण की कथा से जुड़े होने के कारण इसे मोहनिया नृत्य भी कहते हैं। यह दिवारी नृत्य की तरह ही होता है। लेकिन इसमें मोनिया मौन धारण कर नृत्य करते हैं। इसलिए इसे मौनिया नृत्य भी कहते हैं। मोनिया दीपावली से देवोत्थान एकादशी तक अनेकों गाँवों की यात्रा करते-करते नृत्य करते हैं।

६. ज्वारा - नवरात्रि के समय ज्वारें निकालते समय किया जाता है। एक व्यक्ति सांग गाल में छेद कर चलता है तथा साथ में अनेकों पुरुष व स्त्रियाँ नाचते गाते चलते हैं।

७. ठिमरयाई- यह नृत्य विवाह के समय ढीमर जाति की स्त्रियों द्वारा किया जाता है।

८. कानड़ा (धुवियाई)- यह नृत्य विवाह के अवसर पर धोबी जाति में किया जाता है। नृत्य सहयोगी वृत्ताकार घेरे में खड़े हो जाते हैं। नर्तक सिर पर पाग बाँधता है, बागौ पहनता है, पैरों में घुंघरु बांधता है। गीत में विरहा गाया जाता है।

९. रावला- यह नाच धोबी, काछी-चमार, मेहतर, बसौर, कौरी, गड़रिया आदि जातियों में किया जाता है। इस नृत्य में एक पुरुष स्त्री का वेष दूसरा विदूषक का।

१०. अहारी नृत्य- यह मनोरंजन प्रधान नृत्य है। इसे नृत्य न कहकर नटों का खेल कहते हैं। एक घेरे के एक-एक व्यक्ति के कंधों पर एक-एक पुरुष खड़े रहते हैं और एक-दूसरे का हाथ पकड़े रहते हैं। नीचे के व्यक्ति कूल्हे मटका-मटकाकर नाच का प्रदर्शन करते हैं।

वैरियार एलीवन ने इसकी व्याख्या करते हुए कहा है कि - "शायद यह घर छत को घोषित करता है जहाँ से कोई तरुणी झाँकती हो या घास की फुनगी काटने को घोषित करता है।"

११. कहरवा नृत्य - कहार जाति के मांगलिक पर्वों पर किया जाने वाला नृत्य है।

(ग) पारिवारिक नृत्य -

१. रास बंधाना नृत्य- बहू की विदाई के पूर्व कन्यापक्ष की महिलाएं डेरों पर जाकर इसे करती हैं। इसे रास बंधाना या लाकौर कहते हैं। विशेषकर बालिकायें यह नृत्य करती हैं। गीत बन्नी गाये जाते हैं। वाद्य यंत्र मृदंग प्रयुक्त होता है। स्त्रियाँ पुरुषों पर रंग गुलाल डालती हैं। हिजड़े नृत्य करते हैं।

२. बहू उतराई नृत्य- यह नृत्य वर-पक्ष के यहाँ नव-वधू के आगमन पर बहू-बेटा लेते समय किया

जाता है। सास लक्ष्मी के समान अपनी बहू की आरती उतार कर पैर छूती है। इसे "नई बहू की पांयलांगन" कहते हैं। इसके बाद सास देवरानी, जिठानी, बुआ आदि रिश्तेदार बहू तथा लड़का को क्रमशः गोदी लेकर नाचती हैं।

३. चंगेल नृत्य- चंगेल 'पालना' को कहते हैं। यह नृत्य बच्चे के जन्म के समय बुआ द्वारा लाये गये बधाये के साथ किया जाता है। इस अवसर पर बुआ कलश चंगेल या टिपनियां सिर पर रखकर नाचती है। वाद्य यंत्र में ढोलक नगाड़े प्रयुक्त होते हैं। इस समय सोहरे बधाये आदि गाये जाते हैं।

जीवन के महत्वपूर्ण अवसरों के समय लोक नृत्यों का आयोजन बुन्देलखण्ड के प्रायः सभी परिवारों में किया जाता है। ग्रामीण जन अपने सुःख-दुःख को लोक नृत्यों में समावेश करने का प्रयास करते हैं। ये लोक जीवन की कठिनाईयों एवं विपत्तियों के भार से मुक्ति पाने के लिए लोक नृत्यों में अपना समय व्यय कर आनंद की प्राप्ति करते हैं। वास्तव में अगर देखा जाए तो लोक नृत्यों की पृष्ठ भूमि में मानव के जीवन का आनंद छिपा हुआ है।

बुन्देलखण्ड के लोकनृत्य संगीत कलाप्रेमियों को आज भी सुप्रसिद्ध स्थानों में भरने वाले मेलों में देखने को मिलते हैं जैसे- उन्नाव, खजुराहो, ओरछा आदि जगहों पर।

(स) लोक वाद्य - संगीत मानव जीवन के लिए उसी प्रकार आवश्यक हैं, जिस प्रकार पेट भरने के लिए भोजन, रहने के लिए घर, सोने के लिए आरामदायक बिस्तर, इसी प्रकार हृदय व मन को आनंदित करने के लिए संगीत। ग्रामीण किसान हारा-थका दिन भर खेतों में काम करने के बाद जब घर लौटता है तब वह अपनी थकान को दूर करने के लिए सायंकाल के समय भजन-कीर्तन कर अपने मन को आनंदित कर अपने दिन भर की सारी थकान को दूर करता है। स्त्रियाँ देव स्थानों पर जाकर दीप प्रज्जवलित कर भजन कीर्तन करती हैं। इनका प्रमुख वाद्य यंत्र ढोलक, मंजीरा तथा खंजरी होता है। सांयकाल के समय देवस्थान का वातावरण संगीत के कोलाहल से गूँज उठता है।

वर्तमान भागदौड़ की दुनिया में शारीरिक एवं मानसिक थकान को दूर करने का सर्वोत्तम उपाय संगीत है। ''संगीत मन की पीड़ा को हर लेता है और व्यक्ति को अपने में समाहित कर अनोखे आनंद की अनुभूति प्रदान करता है। मानव जीवन के प्रत्येक दिन की शुरुआत एवं अंत संगीत के द्वारा ही होती है। प्रातःकाल जब मनुष्य उठता है तो नित्यकर्म करने के पश्चात् भजन-कीर्तन कर अपने दिन की शुरुआत करता है तथा सांयकाल के समय भी व्यक्ति यही क्रिया करता है।

संगीत की आधार शिला गायन, वादन एवं नृत्य तीनों पर आधारित है। अगर इनमें से किसी भी एक को अलग कर दें तो संगीत की कल्पना करना व्यर्थ है। इन तीनों के सहभाव से ही संगीत की उत्पत्ति हुयी है। इसी पर आधारित लोक संगीत है।

" मानव मन की भावनाओं तथा मनःस्थितियों की ध्वनियों के साथ अनुभूतिपरक अभिव्यक्ति का नाम ही लोकसंगीत है। यह भाव संप्रेषण का एक सशक्त माध्यम है। यह वह भाषा है जिसमें शब्द नहीं बल्कि स्वर, लय ही भावों को व्यक्त करते हैं। घर की महिलायें जब चक्की पीसती, आटा गूंथती या मट्ठा भांती हैं तब उनके आभूषणों से निकली ध्वनियां उनकी तन्मयता में वृद्धि कर देती हैं। उनके मुँह से निकले गीतों के बोल तथा आभूषणों से निकले स्वर मिलकर एक आनंदमयी वातावरण का निर्माण करते हैं। रसधार प्रवाहित होने लगती है। यह रसधारा लोक संगीत का उत्स है। संगीत रत्नाकर के अनुसार गीत वाद्य और नृत्य की त्रयी ही संगीत है। **"गीत वाद्यं तथा नृत्यं सीतामुच्यते"**

संगीत के निम्न तीन वर्गीकरण हैं।

१. मार्गी संगीत   २. गान्धर्व संगीत   ३. देशी संगीत

इसमें प्रथम दो वर्गीकरण शास्त्रीय नियमों से बंधे हैं तथा अंतिम निर्बध। इसकी निर्बधता तथा सहजता से ही इसे देशी कहा जाता है। देश-देश में यानी विभिन्न अंचलों में इसका स्वरुप बदलता रहता है। यही लोक संगीत का दूसरा नाम है।"१

लोकसंगीत को वाद्य नहीं कहा जा सकता है। बल्कि वाद्य के सुचारु प्रभावोत्पादन में अपना विशेष योगदान देते हैं। प्रायः देखा जाता है कि ग्रामीण प्रकृति प्रेमी होती है क्योंकि उनका अधिकांश समय प्रकृति की गोद में ही निकलता है। लोकसंगीत की भी उत्पत्ति प्राकृतिक लयों से हुई। संगीत में ध्वनियों का विशेष महत्व होता है। वाद्य यंत्र इन्हीं पर आधारित होते हैं। पेड़ों के पत्ते के खड़कने की ध्वनि, वायु की ध्वनि, पशु-पक्षियों की ध्वनि इसमें प्रमुख होती हैं। गृहणियों के आभूषणों की ध्वनि, पशुओं के घुंघरुओं को ध्वनि इन सब ध्वनियों पर लोकसंगीत आधारित है। स्त्रियों के कंठ से ही लोक संगीत की धुनें बनीं हैं जो शास्त्रीय संगीत में राग की जनक है। बुन्देली लोक संगीत में यह धुनें पचास हजार के लगभग हैं। इन धुनों को बुन्देली का स्वर संदर्भ कहा जाता है।

ग्रामीण अंचल की महिलायें भावात्मक एवं संगीत प्रेमी होती हैं। पारिवारिक समारोहों एवं पर्व

---

१. बुन्देलखण्ड का लोकजीवन - अयोध्या प्रसाद गुप्त 'कुमुद' (पृ० संख्या - ३८)

उत्सवों के समय बुन्देलखण्ड में लोक गीतों के साथ -साथ लोक वाद्य भी प्रयुक्त किये जाते हैं। लोक वाद्य यंत्र सभी के घरों में मिल जाते हैं। अगर किसी कारण वश न हो। ते महिलाएं कटोरा, लोटा, मटका, चमीटा, कांसे की थाली या लकड़ी की डंडियों से किसी वस्तु पर आघात कर लयवद्ध तथा संगीतमय ध्वनि उत्पन्न कर देती है। ग्रामीण जीवन में यह उपकरण लोक वाद्यों का कार्य करते हैं। इस प्रकार कहा जा सकता है कि शास्त्रीय वाद्य लोक वाद्यों का विकसित रुप है। लोकवाद्य निम्न प्रकार के होते हैं -

१. खाल द्वारा तैयार वाद्य- ये वाद्य यंत्र पशुओं की खाल से मढ़कर विशेष रुप से तैयार किये जाते हैं। लकड़ी के फ्रेम को गोल आकार देकर इनके मुंह पर चमड़ी मढ़ दी जाती है। डोरी द्वारा इन्हें कस दिया जाता है। इन पर दोनों हाथों की थाप एवं लकड़ी से आघात कर ध्वनित किया जाता है। लोक भाषा में इन्हें खाल वाद्य एवं शास्त्रीय भाषा में 'अवनद्य वाद्य' कहकर पुकारते हैं। इन लोक वाद्यों में ढोलक, नगड़िया एवं डमरु आदि आते हैं।

२. फूंक द्वारा ध्वनित वाद्य- इन वाद्य यंत्रों को मुंह की हवा अथवा फूंक के द्वारा नाद उत्पन्न करके ध्वनित करते हैं। आंचलिक भाषा में इन्हें फूंक वाद्य एवं शास्त्रीय भाषा में 'सुषिर वाद्य' कहते हैं। जैसे -बांसुरी, तुरही एवं अनगोजा आदि।

३. तत वाद्य- वाद्य यंत्रों पर तार से आघात करने पर जो ध्वनि उत्पन्न होती है। उसे नाद कहते हैं। इन वाद्य यंत्रों की ध्वनियां संगीत में चार चाँद लगा देती है। लोक भाषा में इन्हें तत वाद्य एवं शास्त्रीय भाषा में तंत्र वाद्य कहते हैं। लोकवाद्यों में जैसे- इकतारा, तम्बूरा आदि।

४. घन वाद्य - परस्पर आघात द्वारा जिन वाद्य यंत्रों में स्वर की जगह विशेष ध्वनि उत्पन्न हो उन्हें घनवाद्य कहते हैं। इन्हें आधे वाद्य में गिना जाता है। जैसे- चटकोला आदि। उपर्युक्त चार श्रेणी के वाद्य बुन्देली लोक जीवन में प्रयोग में लाये जाते हैं।

बुन्देली लोकजीवन में प्रयोग किये जाने वाले वाद्य यंत्रों का परिचय निम्न है।

१. खंजरी- यह एक मुँख का छोटा वाद्य यंत्र हैं। यह गोल आकार का होता है। इसका व्यास ६" तथा ४" होता है।

२. चंग- यह डमरू का आधा हिस्सा होता है। इसका मुह ढोलक से बड़ा होता है., इसे ढप या ढफ भी कहते है।

३. झाँझ- झाँझ पीतल व काँसें से बना वाद्य यंत्र है। यह गोलाकार वाद्य यंत्र है। इसके बीच में छेद होता है छेद में डोरी डालकर अंदर की तरफ से गाँठ लगा देते है। ऊपर पकड़ने के लिए कपड़ा लगाते हैं। इसका व्यास लगभग आठ अंगुल से सोलह अंगुल होता हैं।

४. मंजीरा- यह वाद्य यंत्र वृत्ताकार होता है। इसे बनाने के लिए कांसे या पीतल की धातु को इस्तेमाल में लाया जाता है। इसमें केन्द्र बिन्दु में गहरा छेद होता है जिसमें डोरी डाल कर कपड़ा बाँध देते है अथवा इन्हें पारस्परिक घर्षण से बजाते हैं। यह सुपरिचित लोक वाद्य यंत्र है।

५. नगाड़ा- इस वाद्य यंत्र को दुंदुभि भी कहते है। यह नगड़िया का विशाल रुप है। यह बड़े उत्सवों, समारोहों एवं विवाह में बजाया जाता है।

६. तुरही व रमतूला- रामतूला का छोटा आकार तुरही है। यह मंगलवाद्य है। बुन्देलखण्ड में बारात आने पर सर्वप्रथम रमतूला बजाया जाता हैं रमतूला बारात आने का सूचक है। इस अंचल में यह कहावत लोक प्रचलित है।"बब्बा बजन लगौ रमतूला, चलौ देखियें दूला" रमतूला में पीपल व तांवे की नलिका का मुख होता है। ऊपरी भाग सर्पाकार होता हैं

७. नगड़िया- यह मिट्टी व चमड़े से बना वाद्य है। इस वाद्य यंत्र को लकड़ी की छोटी डंडियों से बजाते हैं। यह नगाड़े का छोटा रुप है।

८. छुड़क- यह डमरुनुमा ढोलक की तरह होता हैं इसे एक ओर से बजाते हैं।

९. कसेरु- यह कांसे की थाली जैसी होती है। इसको लकड़ी के टुकड़ों से आघात करके बजाते हैं।

१०. पखावज- यह ढोलक नुमा एक तरफ लम्बे मुँह वाला होता है। इसके दो मुख होते हैं। एक तरफ स्याही एक तरफ आटा लगाते हैं। ऊपर बद्धी में लकड़ी के गट्टे बाँधे जाते हैं।

११. ढोलक- यह लोकप्रचलित वाद्य है।

१२. बाँसुरी- यह भी लोकप्रचलित वाद्य है। यह सुषिर वाद्यों में आती है। यह बाँस की बनी होती है। इसमें समान दूरी पर आठ छेद होते हैं। सात स्वरों के निर्गमन के लिए सात छेद होते हैं। आठवां छिद्र वायु निकलने के लिए होता है। यह वाद्य भगवान कृष्ण द्वारा प्रयोग किये जाने के कारण अधिक लोक प्रचलित है।

१३. चटकोला- इसके दो भाग होते हैं। दोनों ओर अंगुलियाँ तथा अँगूठा फंसाने का स्थान होता है, लेकिन आघात करने पर किट-किट ध्वनि निकलती है।

६. लोक गाथाएं एवं कथाएं -

बुन्देलखण्ड के ग्रामीण कृषक वर्षा ऋतु के दिनों में कृषि कार्य से निश्चिन्त होकर लोक गाथाएं एवं बड़ी तन्मयता के साथ सुनते एवं गाते हैं। गाथाओं में कहानी गीत के माध्यम से आगे बढ़ती है। इसी कारण लोक गाथाओं को लोक कला के रुप में भी जाना जाता है। लोकगीतों से लोक गाथाओं का आकार बड़ा होता है। अनेकों लोक गाथायें तो महाकाल की भाँति ६००-७०० पृष्ठों में मिलती हैं। महाकवि जगनिक द्वारा लिखा आल्हाखण्ड बुन्देलखण्ड में गायी जाने वाली बहुप्रचलित लोक गाथा है। आल्हा वीर छन्द का वीर गीत काव्य है। जो कि लोक गाथाओं के नाम से बहुप्रचलित है। यह काव्य लयमुक्त और काव्य अभिव्यक्ति के प्राचीन रुपों में से एक है। ये महाकाव्य लोक विस्तृत मानवीय भावनाओं की प्रचलित अभिव्यंजना के रुप में प्रसिद्ध है। अन्याय के प्रति युद्ध लड़ना, पौरुष द्वारा कीर्तिमान स्थापित करना। आल्हाखण्ड में आल्हा-ऊदल द्वारा लड़ी गई ५२ लड़ाईयों की विस्तृत कहानी है। लोक गाथाओं का आकार बड़ा होने के साथ-साथ छोटा भी होता है। ये छोटे रूप में भी प्राप्त होता है। आल्हाखण्ड में बारहबी सदी के वीरों का वर्णन संग्रहीत है। इसके प्रमुख नायक आल्हा, एवं मलखान योद्धा रहें । महाकाव्य में युद्धोत्साह का वर्णन किया गया है।

"यह ग्रन्थ कहीं पर आल्हा छंद और कहीं पर वीर छंद के नाम से विख्यात् है, किन्तु पिंगलशास्त्र में इसके विषय में किसी नियमादि का वर्णन अलिखित नहीं है। य छंद मात्रिक छंद की तुलना के अंतर्गत आता है। यह छंद इकतीस मात्राओं का होता है, और सोलह तथा पन्द्रह मात्राओं पर इसमें यति रहती है। अंत में एक गुरू, एक लघु मात्रा का इसमें प्रतिबन्ध रहता है, किंतु कही-कही पर प्राचीनता के कारण इन छंदों में यति और मात्रिक दोष भी ज्ञात होते है।"[१]

"लोक गाथाओं में प्रायः लोकनायकों का शौर्य, लोक जीवन में चर्चित प्रेम-गाथाओं,देवी-देवताओं के कथानक प्रसंग तथा पौराणिक आख्यान वर्णित होते हैं। जिन कथाओ में शौर्य वर्णित होता है वे प्रायः राछरे या पांवरे कहलाते है। यह रासों परम्परा में गिने जा सकते है। इस क्रम में आल्हा, अमानसिंह का राछरा, चंदावलि का राछरा, जगदेव का पंवारा प्रायः हर गाँव में सुने जा सकते है। देवी देवताओ से संबधित गाथायें 'गोट' के रूप में मिलती है। इनमें कारसदेव की गोटें तथा हीरामन की गोटे लोकप्रिय है। पौराणिक आख्यानों में मोरध्वज-कथा, भरथरी -कथा हरिश्चन्द्र, शंकर जी का विवाह तथा स्थानीय आख्यानों में

---

१. बुन्देलखण्ड की लोकसंस्कृति और साहित्य - रामचरण हयारण 'मित्र' (पृ० संख्या - २३७)

हरदौल-कथा गाने सुनने का प्रचलन अपेक्षाकृत अधिक है। प्रेमगाथाओ में ढोलामारू बड़े चाव से गाया जाता है।"२

लोक गाथाओं में प्रत्येक स्थान पर कुछ न कुछ परिवर्तन मिलता है। इनका कोई प्रमाणिक मूल पाठ या आकर नहीं है। यहाँ तक के पद तथा वाक्य में भी बदलाव मिलता है। परिवर्तन होते हुए भी लय, ध्वनि, मेयता,सुरक्षित रहती है। गाथाओं में संगीतात्मकता का प्रधांन्य होता है तथा टेक पंक्तिया प्रत्येक पद के पश्चात् दुहराते है। इनके साथ तम्बूरा तथा इकतारा वाद्यों का प्रयोग किया जाता है। कहीं-कहीं पर गाथाओं में गायन, वादन के साथ नृत्य का भी प्रयोग किया जाता है।

(क) लोकगाथाएं -

१. चंद्रावली का राछरा-

"सरग उड़त है एक चील री आधे सरग मड़राय ।

जाय जी कहियो मोर ससुर सें, सासू सो कहियो समझाय जाय जो कहियो बारे वलम सों ।

बन्दी है तेरी चन्दावली, जाके है लम्बे-लम्बे केस, ससुर सुनके रो पड़े बहू तमुओं के बीच ।

वीरन ने खाई है पहाड़, बहिन तमुओं के बीच ससुर मिलालै ले चलो ले चलो हथिया हजार ।

ये रे मुगल लै ले हथियाँ, बहू तो घोड़ौ चन्दरावली, ज़ाके है लम्बे-लम्बे केस ।

२. अमान सिंह का राछरा -कुछ पंक्तिया निम्न है-

सदा न तुरैया फूले अमाना जू ,सदा न सावन होय।

सदा न राजा रनू चढ़े, सदा न जीवन होय ।

राजा मोरे असल बुन्देला की राछरा,सबकी बहिनियाँ झूले हिडोरा।

तुम्हारी बहिन बिसूरे परदेश ,नौउआ पठैदो, बमना पठै दो।

भैइया जू लिवा घर आये । राज मोरे.........................

(ख) लोक कथायें- बुन्देलखण्ड में लोक कथाएँ प्राचीन काल से सुनी व सुनाई जाती है। गोधूली के समय बच्चे अपनी माँ को गृहकार्य करने में परेशान करते हैं। बच्चे का मनोभाव रहता है कि इस समय उसकी माँ उसके साथ में हो । सारा दिन तो वे पढ़ने-लिखने व खेल कूद के साथ व्यतीत करते है। घर की बूढ़ी महिलाऐं बच्चों को बहला- फुसला कर कहानी सुनाने बैठ जाती हैं। बच्चे बड़े चाव के

---

२. बुन्देलखण्ड का लोकजीवन - अयोध्या प्रसाद गुप्त 'कुमुद' (पृ० संख्या - ४०)

साथ सुनते हैं। बीच-बीच में प्रश्नों को कर उत्तर पूछते हैं। दादी, दादा, ताऊ आदि बड़े रोचक ढंग से उनके प्रश्नों का उत्तर देते है, इसके साथ-साथ गाँवो के बड़े-बूढ़ों का समय भी अच्छे से व्यतीत होता है। इन कथाओं में मर्यादित शब्दावली में ज्ञानवर्द्धक सामग्री पर्याप्त मात्रा में प्राप्त होती है।

ग्रामीण जन लोक जीवन में प्रयुक्त होने वाली भाषा का प्रयोग करते है। यह कहानियाँ लोक कथा के रूप में प्रचलित है। इन कथाओं में पौराणिक, उपदेशात्मक एवं मनोरंजक कथानक होता है। अनेकों लोक कथाऐं तो रोमांच एवं तिलस्म से भरपूर होती है। इस क्षेत्र में प्रत्येक पर्व, व्रत, पूजन के समय पंडित जी को बुलाकर कहानी सुनते हैं, उन्हें सम्मान में विदाई, प्रसाद एवं गेहूँ दान कर भोजन करवाते हैं। पंडित न मिलने पर घर की वरिष्ठ महिलायें कथा कहती हैं। व्रत कथाओं में कथा सुनने व कहने के बाद जो फल प्राप्त होता है उसका भी आख्यान इनमें रहता है। इन कथाओं से पूजा-पाठ के प्रति स्त्रियों में लगाव रहता है। मानव कल्याण के हित के लिए ये कथायें लोक प्रचलित हैं। कथाओं के अंत में कहा जाता है- ''जैसी भगवान ने इनकी सुनी, तैसी सबकी सुनै, सबकौ भलौ करै, सुख में रक्खै और दूधन भरौ, पूतन फरौ।'' की भावना निहित रहती है।

बुन्देली भाषा में लोक कथाएं निम्न हैं -

१. पूजन बारी बहू की कथा - ऐसे-ऐसे एक माते के चार बहुएं हतीं। तीन घर-गृहस्थी के कामन में चतुर-चालाक, एक सीधी-सरल और दसा रानी के पूजन व चिन्तन में मगन रहती। जईसे बाकी घर में कोनऊ पूँछ न हती। एक बेर माते ने निश्चय करी के जा पूजन वाली बहू कछू काम दंद की तो है नइया, तासें जाखो खेत में रखवाली के लाने भेज देवे कर है। बहू विचारी खेत में बाँस लाय हरिया (तोता) जो ज्वार,बाजरा के भुट्‌ठे खाने आत हैं, सो उनई को भगाव कर है।

बहू ने खेत की रखवारी खूब मन लगाय के करी। जइसे बाके खेत में नियरे के खेतन से अच्छी भुट्‌टन की फसल भई । जईसे सब बहू की खूब सराहना करन लगे। जब खेत कटन लगो तब बाये जुनई के दाने न निकरे बामें निकरे मुतियन के दानें सब भौंचक्के हो गये। कटइयन ने जा सूचना माते को दई तो माते सोच में पर गये। माते ने जब खेत में जहाँ-तहाँ मुतियन को दमकते देखो, सो तुरतरई मुतियन को भरवे को इन्तजाम लगाव। गाँव भर में हल्ला मच गओ। गाँव के लोग-बाग माते से पूछन लगे - "माते जू। खेत में ज्वार बोईती, कै मोती।" माते ने उत्तर दऔ-''भैया हौरे हमने तो ज्वारंइ बोईती मैं का जानौ भइया

जौ तो हमाई पूजन वारी बहू जानै, बानेइं जौ खेत रखाऔ है- बइसौ पूछत है।"

पूजनवारी बहू से पूछो गऔ तो बाने घूंघट की आड़ करके सरल सीधे भाव से उत्तर दऔ"दाउजू मैं का जानौं जौ हमाई दसा रानी जानैं। दसई रानी की कृपा से अब बहू को परवार में बड़ौ आदर सत्कार होन लागौं। मातें को धरऊँ गाँव में नामी धनियन में गिनो जान लागौ। हती कथा सो पूरी भई।

<u>२. मनोरंजक लोक कथा-</u> एक बकरिया हती। बाके चार बच्चा हते। बकरिया जब दाना-पानी को हिल्लो करबे खेत पे जाबे , तो चारऊ बच्चन से कह जावे के जब तक हम खेत से घरे न आ जावे तौनो घर के किवार न खोलियो, नई तो लिड़ईया तुम सब को खा जैहे। चारऊ बच्चा (अल्लू, बल्लू, चुनमुन एवं मुनमुन) डरन के मारे किबाड़ न खोले। बकरिया की बात लिड़ईया ने चुप-चाप सुन लईती। वो पेड़े की ओट में छिपो बैठातो। जैसेई वो गई लिड़ईया ने किवाड़ तोड़े भीतर गओ और भीतर से किवाड़ बन्द करके चारऊ बच्चन को सीधो हजम कर गऔ और पछीत की दीवार से फांग गऔ।

बकरिया हार-थकी घरे लौटी तो किबार खट-खटाने पर कोनऊ उत्तर न मिलो। बोली अल्लू बल्लू चुनमुन-मुनमुन खोल किवाड़ माँ ठाड़ी है तेरे द्वार। बाने किबारे फारे-डारे, जब वो भीतर गई तो एकऊ बच्चा न दिखो। बकरिया सोच में पर गई, बाने हिम्मत से काम लऔ। पहले वा बड़ई के इते गई सो खूब सींग छिलवाये, फिर लुहार के इते गई सो खूब सींग पिटवाये और फिर तेली के इते गई खूब सींगन की मालिश करवाई। फिर गई खेत में चारा चरबे गई। उते पे मिल गऔ लिड़ईया, बाने लिड़ईया के पेट में सींग घुसा दये। लिड़ईया को पेट फट गऔ. चारऊ बच्चा बाहर निकर आये। बकरियां ने अपने चारऊ बच्चन से पूँछी अल्लू, बल्लू, चुनमुन, मुनमुन तुम का गये ते? बच्चन में उत्तर दऔ दद्दा के पेट में।

७. लोकोक्तियाँ, मुहावरे एवं बुझौअल -

प्रत्येक प्रदेश की अपनी परम्परागत विरासत होती है, यही विरासत इस प्रदेश की संस्कृति कहलाती है। लोकजीवन का प्रतिबिम्ब उसका लोक साहित्य है। किसी भी देश के सामाजिक साहित्यिक और धार्मिक जीवन को अनुप्रमाणित करने वाली शक्ति उसका लोक साहित्य होती है। लोक साहित्य में अनेकों विधाएं निहित है- लोक गीत, गाथाएं एवं कथाएं, पहेलियां, लोकोक्तियां- बुझौअल, मुहावरें, अहाने, लोरियां एवं सूक्तियों का भंडार है। इनमें बुन्देली लोक जीवन और लोक संस्कृतिक का समुज्जल दृष्टिगोचर होता है।

(क) लोकोक्तियाँ-

"बुन्देलखण्ड में लोकोक्ति-साहित्य का अपार भंडार भरा पड़ा है यह साहित्य न तो किसी ने प्रकाशित किया है और न ही संग्रहीत । किन्तु इस जनपद में इनका ऐसा महत्व है कि ग्राम पंचायतों के निर्णय तक भी इन लोकोक्तियों पर होते हैं।

इस प्रदेश में प्रचलित प्राचीन लोकोक्तियों का बुन्देलखण्ड में संरक्षण स्व० जुगलेश जी ने अपनी काव्य-प्रतिभा द्वारा बड़ी सफलता पूर्वक किया है। जुगलेश जी का जन्म बुन्देलखण्ड के विख्यात नगर कन्नरगढ़ (सेवड़ा) में वि० सम्वत् १६२० में हुआ था।

(क) खीर में सौंज महेरी में न्यारौ ।

सुख में सुख देख मनावै खुशी, दुख में दुख देख भगै दई मारौ।

गर्ज सरै फिर नाहीं मिलै, उस गर्ज परैं नहीं छोड़त द्वारौ।

''जुगलेश' दगैल की प्रीत बुरी नहीं कीजिये डूब मरै मंझधारौ।

मित्र न ऐसो करै सपने रहै खीर में सौंज महेरी में न्यारौ ।"

(ख) "हमतौ मन मार कैं बैठीं हतीं बनकैं तुम आये चढ़ाये की नाइन ।।"१

(ग) "धोबी कैसो कूकर, न घर के न घाट के।"

लोकोक्तियां प्रायः नीतिपरक या उपदेशात्मक मिलती हैं। यह स्वास्थ्य संबंधी, नीति या सामाजिक व्यवहार संबंधी प्रकृति, कृषि कार्य संबंधी अथवा अन्य विषयों से संबंधित ज्यादातर प्राप्त होती है जो

---

१. बुन्देलखण्ड की लोकसंस्कृति और साहित्य - रामचरण ह्यारण 'मित्र' (पृ० संख्या- २०७-२०८)

निम्न है-

१. स्वास्थ्य संबंधी लोकोक्तियां -

(क) चैते गुर, वैशाखै तेल, जेठे मउआ, असाढे बेर ।
साउन दूध ,भादौं दही, क्वार करेला, कातिक मही ।
अगहन जीरौ, पूसे धना, माघें मिसरी, फागुन चना ।
इतनी चीजें खैहो जभई मरहौ नई तौ पर हौ सही ।

(ख) ठंडो नहाय, तातौ खाय, ताके बैद कबऊ नई जाय।

(ग) निन्ने पानी जे पियें हर्र भूंज के खाय, दूदन ब्यारु जे करें तिन घर वैद न जाय।

(घ) हर्र, बहेरौ आंवरौ, घी सक्कर सों खाय, हांती दाबै कांख में सात कोस लों जाय।

२. सामाजिक व्यवहार व नीति संबंधी -

(क) जाके जैसे बाप मताई ताके तैसे लरका, जाके जैसे नदिया नारे, ताके तैसे भरका।

(ख) छींकत नाहिये छींकत खैये छींकत रैये सोय
पर घर छींकत कबहु न जइये, चाय स्वर्न सो होय।

(ग) पुन्य पुरानों, घी नऔ, उर कुलवन्ती नार, जे तीनों जब पाइये हुय प्रसन्न करतार ।

(घ) अधिक सिदाई परहरौ, सूदें टका बिकाय, टेड़े लागै पालकी, वे पच्चीसौ जाय।

(ङ) माता जनमें दो जने, कै दाता के सूर, नाहीं तौ बांझई भली वृथा गंवायै नूर।

३. स्थान या जाति संबंधी -

(क) कोस-कोस पै बदलै पानी, पांच कोस पै बानी।

(ख) झांसी गले की फाँसी, दतिया गले कौ हार।
नहीं ललितपुर छोड़ियो, जौ नों मिले उधार।

(ग) बामन, बनियाँ, नाऊ, जात देख गुर्राऊ ।

४. कृषि संबंधी -

(क) मघा न बरसौ भरै न खेत, माई न परसै, भरै न पेट।

(ख) खेती आपस सेती, नई तो बंजर होती।

(ग) जो कऊं बरसै हांती, तौउं लग है छाती।

(ब) मुहावरे -

वाक्य को आकर्षक एवं चुस्त बनाने के लिए विलक्षण अर्थपरक वाक्यांश प्रयोग करते हैं यह मुहावरें कहलाते हैं। मुहावरेदार भाषा का प्रयोग व्यक्ति को विद्वता तथा वाक्य चातुर्य का प्रतीक है। यह वाक्य का अंश होता है। अतः इसका स्वतंत्र प्रयोग नहीं किया जा सकता है। किंतु किसी वाक्य में यशोचित स्थान पर रख देने से उसका अर्थ एवं महत्व बढ़ जाता है। बुन्देली लोकजीवन में मुहावरोंका प्रयोग बहुतायत से होता है।

कुछ उदाहरण निम्न है -

१. मन मन भावै, मूंड हिलावै।

२. तुमायें जैसे, तो हमाये अंटी में बंदे।

३. बड़ी पातर को बड़ौ बरा।

४. पीसवे सांस को, सकेलवे कौ बऊ।

५. चलनी में गैया हुऔ दोस कपारै देव।

६. नौनी के नौ मायके, जित भावै तित जाय।

७. जैसे सैया घर रये, तैसे रये विदेश।

८. छटांक भर दूद, गांव भर डंड पेलें

९. पानी को डूबो, सूकौ नई कड़त।

१०. हाथ भर लिड़इया, नौ गज पूंछ।

(स) बुझौअल -

सांकेतिक ढंग से रहस्यात्मक बात कहना तथा दूसरे पूछना और सहा अर्थ जानना- यह बुन्देली में बुझौअलक कहलाता है। बुझौअल बुझने (पूछना) से बना है। यह संस्कृत के पहेलियां शब्द का पर्यायवाची हैं। हिन्दी या अन्य लोकभाषाओं में इसे पहेली भी कहते हैं।"

१. जान कहनियां मोरी, मुड़ी मताई तोरी। "सुपारी"

२. हरदी सी चूरचार, पीतल सो लोटा।

बताओ तो बताऔ नई तुमाये हम बेटा।　　“वेलपत्र”

३. इते गई, उते गई। कोने में ,टिक गई।　　“लाठी”

४. तनक सी मनक सी हरदी कैसी गांठ

चटाक चूमा ले गई तू हाय मोरे राम　　“ततइया”

५. लाल लाल लहंगा महुआ की तोई

बरै तोर लहंगा, मैं रात भर रोई ।　　“लाल मिर्च”

६. हात है तो पांय नइंया

सर्त बदौ तो मूड़उ नइयां।　　“कमीच”

७. एक अचंभौ मैने देखों मुरदा रोटी खाय।

टेरे में ज्बब न दैवे, मारे से चिल्लाय।　　“ढोलक”

८. घन गरजै बिजली चमके होय ठनन ठनन।

हे सखी वे हुआं गये जहां भरे ली सांस चलंत।　“हंसिया के पिटने पर”

८. जातीय सद्भाव -

बुन्देलखण्ड अपनी भू-सीमा के अन्दर तमाम जातियों-विजातियों का निवास स्थान है। जिनमें कुछ चतुर्वर्ण के अंतर्गत कुछ जनजातियों के अंतर्गत समाजशास्त्रियों एवं नृविज्ञानियों के अनुसार परिगणित की जाती है।

चतुर्वर्ण के अनुसार- ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र

जनजातियों के अंतर्गत- कोल, भील, शबर, किरात एवं द्रविण आदि आते हैं।

चतुर्वर्ण व्यवस्था ऋग्वेदकाल से लेकर आज तक अपने किसी न किसी रुप में विद्यमान है। प्राचीनकाल में जाति व्यवस्था मनुष्य के कार्यों पर निर्धारित थी। जन्म से किसी व्यक्ति को किसी जाति का सदस्य नहीं माना जाता था। जो व्यक्ति जिस कार्य को करता था। कर्म के आधार पर उसको उस जाति का सदस्य माना जाता था। जैसे- पाण्डित्य कर्म करने वाले व्यक्ति को पंडित, कपड़ा धोने वाले को धोबी, लोहा पीटने वाले को लोहार, सोने-चाँदी आभूषण बनाने वाले को सुनार मान लिया जाता था।

प्राचीन समय में जन्म पर आधारित वर्ण अथवा जातीय भेद नहीं था, यदि जातीय भेद था तो केवल कर्म पर आधारित था। उस समय विभिन्न जातियों के बीच विवाह में कोई बाधा नहीं थी।

मनु के अनुसार 'जातियाँ अनेक हैं। वर्ण केवल चार हैं। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र। इनमें पहले तीन वर्णों को द्विज कहा जाता है। इन लोगों को यज्ञोपवीत धारण करने का अधिकार होता है। जबकि चौथे वर्ण को यज्ञोपवीत ग्रहण करने का अधिकार नहीं है।

"जाति एक बंद वर्ग है।" जबकि अन्य लेखक के अनुसार जब एक वर्ग पूर्णतः आनुवंशिकता पर आधारित होता है, तो हम उसे जाति कहते हैं। सद्भाव से तात्पर्य अच्छे भाव से है। यह भाव हमें प्रत्येक मानव से प्रेम करने की शिक्षा देता है। विश्व का सम्पूर्ण मानव समाज मनु की संतान है। हमारे माता पिता एक हैं। फिर हमारा समाज ही आपस में हमें भेद-भाव करना क्यों सिखाता है?

जाति व्यवस्था पर आधारित ब्राह्मण का कर्म अध्ययन-अध्यापन कर धर्म रक्षा करना था। क्षत्रियों का कर्म रक्ष एवं दान शीलता था। वैश्यों का कर्म वाणिज्य में क्रय-विक्रय कर धनोपार्जन कर लाभ कमाना था। शूद्रों का कर्म कृषि, पशुपालन एवं सवर्णों की सेवा करना था।

प्राचीन समय में छुआ-छूत एवं अंधविश्वासों के कारण शूद्रों पर घोर अत्याचार हुए। निम्न जाति

के लोगों को शहर या गाँव के बाहर अलग बसाया जाता था। इनका मंदिरों में प्रवेश वर्जित था। ये सवर्णों के कुँआ, सरोवरों से जल नहीं भर सकते थे। प्रायः अछूतों से ब्राह्मण का दृष्टिपात होने पर वे अपवित्र हो जाते थे। अछूतों को कठोर दंड दिया जाता था। शूद्रों द्वारा ब्राह्मण या क्षत्रिय को भला-बुरा कहने पर उनकी जिह्वा काट ली जाती थी। जिस प्रकार वर्ण व्यवस्था में शूद्रों की जो स्थिति थी, उसी प्रकार जाति व्यवस्था में निम्न जातियों की वही स्थिति थी। भारतीय समाज में जातीय व्यवस्था बहुत समय तक बनी रही। इसी कारण सामाजिक असमानता, सजातीय विवाह, भोजन पर प्रतिबन्ध, देश के चुनाव में स्वतन्त्रता का अभाव, जाति प्रथा के ही प्रमुख लक्षण बन चुके थे।

धीरे-धीरे समय परिवर्तन के साथ वर्ण एवं जाति व्यवस्था कर्म के आधार पर न मान कर जन्म के आधार पर मानी जाने लगी। इसी प्रकार जिस व्यक्ति का जन्म जिस वर्ण या जाति में हुआ उसे उसी वर्ण या जाति का सदस्य माना जाने लगा। ब्राह्मण कुल में जन्म लेने वाला ब्राह्मण हो गया, क्षत्रियों में जन्म लेने वाला क्षत्रिय हुआ, वैश्यों में जन्म लेने वाला वैश्य एवं शूद्रों में जन्म लेने वाला शूद्र हुआ।

अंग्रेजी शासन काल में जिन आर्थिक शक्तियें का जन्म हुआ, उन्होंने जाति व्यवस्था का आर्थिक आधार ही धराशयी कर दिया। धीरे-धीरे जाति प्रथा में ह्रास होने लगा। **"इस कार्य में जाति प्रथा विरोधी आन्दोलनों के साथ ही वर्ग संघर्ष, राजनीतिक आन्दोलन, आधुनिक शिक्षा, नया न्यायतन्त्र आदि का भी योगदान रहा है। शहरीकरण के कारण जाति का कुछ अंशों में ह्रास हुआ है। लेकिन शूद्रों, अस्पृश्यों एवं दलितों की सामाजिक स्थिति एक सी रही है। आज के दलित की स्थिति जाति व्यवस्था के अस्पृश्यों एवं वर्णव्यवस्था के शूद्रों जैसी ही है। आज का दलित देहातों में रहकर कपड़ा, घर, पानी एवं रोटी के लिए मोहताज रहता है। आज शहरों में उसको सामाजिक दृष्टि से समानता प्राप्त हुई सी महसूस होती है लेकिन देहाती समाज में दलित की वही दयनीय एवं विपन्न दशा है जो शूद्रों एवं अस्पृश्यों की थी।"[१]**

गाँधी जी राष्ट्रीय एकात्मकता की दृष्टि से अस्पृश्यता निवारण अनिवार्य समझते थे। आपस के सजातीय एवं प्रान्तीय भेदभाव तब तक नहीं मिटेंगे, जब तक भारत एकात्मक नहीं बन पायेगा। उनका कहना है कि **"हम सारे भारत को अपना परिवार क्यों न मानें? और दरअसल सारी**

---

१. हिन्दी साहित्य में दलित चेतना - डा० आनंद वास्कर (पृ० संख्या- २२-२३)

मनुष्यता जाति हमारा परिवार है। क्या हम सब एक ही वृक्ष की शाखाएं नहीं ? जब छुआ-छूत जड़ से नष्ट हो जायेगी, तब ये सारे भेदभाव अपने आप को दूसरों से ऊँचा नहीं समझेगा। इसका सीधा नतीजा यह होगा कि गरीबों और दलितों का शोषण बन्द हो जायेगा। और चारों तरफ परस्पर प्रेम और सहयोग में आयेगा।"२

भारतीय परम्परानुसार बुन्देलखण्ड में भी जाति व्यवस्था में समयानुसार परिवर्तन आया है। वर्तमान में जन्म को आधार मानकर जातियों का वर्गीकरण होता है। यहाँ पर वर्णव्यवस्था से हटकर कुछ अन्य जनजातियां भी निवास करती हैं। यहाँ के ग्राम एवं कस्बों में निवास करने वाली जनजातियां कंजर, लोह पीटा आदि हैं। **"कंजर लोग बंजारों की ही एक उपशाखा है। आज कोंच नगर के चतुर्दिक बाहरी क्षेत्र में कंजर/बंजोर अस्थायी निवास बनाकर रहते हैं। यहाँ लोहा पीटने वाले लोगों की भी अपनी जीविका चलाने का अच्छा अवसर मिल जाता है वे सड़कों के किनारे फुटपाथ पर रहते हैं। वही भट्टी बनाकर लोहे को गरम कर पीट-पीट कर उन पर धार लगाते हैं।"३** उनकी स्त्रियाँ पुरुषों का भरपूर सहयोग करती हैं। ये जनजातियां अधिक देखने को मिलती हैं। कबूतरा जनजाति भी यहाँ पर झाँसी के आस-पास अधिक है। इनका कार्य लूट-पाट कर जीविकोपार्जन करना है। इसके अतिरिक्त कोल, भील, शबर, किरात, द्रविण आदि जनजातियां यहाँ के वन प्रान्तों में अधिक पायी जाती हैं। इन्हें निम्न जातियों की श्रेणी में माना जाता है।

समय परिर्वतन के साथ जातियों में एक दूसरे के प्रति सम्मान व सौहार्द की भावना का ध्यान रखा जाने लगा है। वर्तमान समय में कोई भी जाति का व्यक्ति किसी के बंधन में नहीं है, वह पूर्णरुप से स्वतंत्र है।

बुन्देलखण्ड के गाँव व कस्बों में जातियों में भेद-भाव होने पर भी उनमें सद्भाव देखने को मिलता है। यहाँ पर छुआ-छूत की भावना व्याप्त होने पर भी उच्चवर्णों द्वारा निम्न वर्ण के व्यक्तियों के प्रति प्रेम, स्नेह व सौहार्द देखने को मिलता है। इसके निम्न उदा० है-

१. वैवाहिक कार्यक्रमों में ब्राह्मण व नाई का बराबर काम होता है। वे एक-दूसरे से जुड़े रहते हैं। ब्राह्मण नाई का ध्यान रखता है, नाई ब्राह्मण का, जिससे दोनों को अधिक से अधिक आर्थिक लाभ व सम्मान प्राप्त

---

२. हिन्दी साहित्य में दलित चेतना - डा० आनंद वास्कर (पृ० संख्या- २५-२६)

३. कोंच के मंदिर, सरोवर एवं स्मारक - डा० रामसजीवन शुक्ल (पृ० संख्या- १२)

होता है।

२. हिन्दू विवाहों में ब्राह्मण कन्या को धोबिन सुहाग देती है। इसलिए धोबिन को आदरपूर्वक बुलाकर उसे सामर्थ्यानुसार दान-दक्षिणा प्रदान करते हैं।

३. सफाई के लिए महतर को बुलाया जाता है। फिर उसे पावन (भोजन) दिया जाता है।

४. नाई के द्वारा सभी को बुलावा भेजा जाता है। नाई को कपड़ा भोजन, रुपये-पैसे, अनाज आदि दिया जाता है।

५. बढ़ई लकड़ी द्वारा मंडप एवं मृत्यु के बाद अनेक वस्तुयें आदि बनाने का कार्य करता है।

६. कुम्हार शुभ-सगुन के घड़े, दिवुलियाँ, पारे बनाकर लाता है। इनको बदले में गेहूँ, भोजन एवं रुपया पैसा आदि देकर प्रसन्न किया जाता है।

७. लुहार द्वारा विवाह एवं दीवाली के अवसर पर अनेक लोहे की वस्तुयें प्रदान की जाती हैं।

८. ढीमर द्वारा विवाह, त्रयोदशी एवं अन्य अवसरों पर पानी भरने का कार्य किया जाता है।

९. वसोरों द्वारा विवाह के समय मूसर बदला जाता है तथा ये बाँस निर्मित वस्तुयें भी देते हैं।

१०. जोशी द्वारा बच्चे के जन्म होने पर मूल उतारे जाते हैं।

११. काछियों (कुशवाहा) द्वारा विवाह, त्रयोदशी में सब्जियाँ दी जाती हैं।

१२. कोरियों द्वारा विवाह में अनेक स्वनिर्मित वस्तुयें प्रदान की जाती हैं।

१३. वारियों द्वारा पत्तलें उठायी जाती हैं।

१४. शादी-ब्याह एवं अन्य समारोहों में ब्राह्मणों के बताये दिशा-निर्देशन के अनुसार ही कार्य होते हैं।

१५. चमार लोग कृषि से संबंधित अनेक वस्तुओं का निर्माण कर उच्च्व जाति के लोगों को देते हैं।

कहने का तात्पर्य यह है कि एक-दूसरे के सहयोग के बिना सभी अधूरे है। उच्च के बिना निम्न, निम्न के बिना उच्च्व अधूरे हैं। इसलिए जातियों में भिन्नता होते हुए भी एक-दूसरे के सहयोग द्वारा इनमें सामंजस्य देखने को मिलता है। ग्रामीणजन निम्न जाति के व्यक्तियों को आदर सूचक शब्दों द्वारा सम्बोधित करते हैं। ताकि एक-दूसरे के प्रति आदर व सौहार्द बना रहे। जैसे- उम्र के अनुसार, नाईन को नाईन कक्को, धोबिन को धोबिन बहू, नाई को नाई कक्का, मेहतर को मेहतर बब्बा आदि आदर सूचक शब्दों द्वारा पुकारा जाता है।निम्न जाति के लोग उच्च्व वर्ग के व्यक्तियों को सम्मान के साथ पुकारते है। जैसे- ब्राह्मण को महाराज, क्षत्रिय को ठाकुर साहब, वैश्य का सेठ जी आदि ।

भगवान कृष्ण भी निम्न जाति के लोगों को प्रेम करते थे। वे भक्त विदुर जो कि शूद्र जाति के थे,

उनके यहाँ साग ग्रहण करते थे। भगवान राम न तो शबरी, केवट, निशादराज जैसे अधम कुल में जन्मे व्यक्तियों को अपनी कृपा का पात्र बनाया तथा उनके द्वारा दी गई वस्तुओं को ग्रहण किया।

कबीर ने हमेशा जाति-पाति, ऊँच-नीच का विरोध कर उन पर अपने कठोर व्यंगों का प्रहार किया - ऊँचे कुल का जनमियाँ करनी ऊँच न होय। सुबरन कलश सुरा भया साधू निन्दा सोय ।।

कबीर ने ब्राह्मण पंडितों के ब्रह्मतत्व को चुनौती देते हुए कहा-

'एक रक्त से सबहि बने हैं, को ब्राह्मन को सूदा।'

वर्तमान समय में जाति व्यवस्था में काफी परिवर्तन आया है। आधुनिक पांत-पंगतों में सभी वर्णों के लोग एक साथ भोजन करते हैं। वेश-भूषा एवं रहन-सहन में परिवर्तन होने के कारण किसी में कोई भेद-भाव समझ में नहीं आता है। निम्न जाति के लोग धीरे-धीरे जागरुक होकर उच्च्व पदों पर आसीन हो रहे है। उनके बच्चे सवर्णों के साथ विद्यालय-महाविद्यालयों में उच्च्व शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। विद्यालयों में उच्च्व-निम्न में कोई भेद-भाव नहीं होता है। सभी समान रुप से शिक्षा ग्रहण करते हैं। प्रतियोगिताओं में सभी एक साथ भाग लेते हैं। निम्न वर्ग के लिए कुछ रिक्त स्थान भी सरकार ने उनकी तरक्की के लिए छोड़ दिये हैं। जिससे उनका स्तर समाज में बराबर हो जाय। इनको प्रताड़ित या शोषित करने पर सरकार द्वारा कड़ा दण्ड दिया जाता है। इस कारण ये पूर्णरुप से स्वतंत्र हो गये हैं। ये लोग निडर होकर इच्छानुसार (बिना दबाब) के सवर्णों का कार्य करते हैं।

बुन्देलखण्ड के कुछ गाँवों में आज भी शूद्र वर्ण ब्राह्मणों की सेवा करना अपना कर्तव्य समझते हैं। उच्च्व वर्ण के व्यक्ति इनको समय-समय पर आवश्यकतानुसारर इनकी मदद करते हैं। तीज-त्यौहार पर भोजन, वस्त्र, अनाज, रुपये उपहार स्वरुप भेंट देते हैं, ताकि इनके परिवार का भरण-पोषण सुचारु रुप से होता रहे। ये लोग कृषि कार्य में सवर्णों का सहयोग करते हैं। बुन्देलखण्ड में सभी की वेश-भूषा लगभग एक ही जैसी है इस लिए भी जातियों में भेद-भाव कम देखने को मिलता है। वर्तमान समय में शूद्र वर्ण को मंदिर में प्रवेश के लिए कोई प्रतिबंध नहीं है। गांवों में तो थोड़ा बहुत प्रतिबन्ध देखने को मिल जाता है, लेकिन नगरों में पूर्णतयः समाप्त है।

बुन्देलखण्ड में विभिन्न वर्णों के लोग बिना किसी भेदभाव के एक-दूसरे के पूरक बनकर निवास करते हैं। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि बुन्देलखण्ड के ग्रामों एवं नगरों में जातीय सद्भाव पूर्णरुप से देखने को मिलता है।

६. साम्प्रदायिक सौहार्द -

हमारे देश की सभ्यता -संस्कृति मानव जाति की धार्मिक, आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक एकता बनाये रखने में सहायक सिद्ध होती है। आर्य जीवन के आचार-विचार, हिन्दू धर्म एवं हिन्दू सभ्यता का सांस्कृतिक एकता को कायम रखने में विशेष योगदान है।

मानवीय एकता स्थापित करने के लिए साम्प्रदायिक सौहार्द की महती आवश्यकता है। हिन्दू धर्म में मानव को मानव के प्रति प्रेम, सौहार्द तथा भाई-चारे की शिक्षा दी जाती है। "विश्व की सम्पूर्ण मानव जाति एक पिता की संतान है, विश्व हमारा घर है जिसमें हम निवास करते हैं। अर्थात् **'वसुधैव कुटुम्बकम्'** विश्व धरा पर रहने वाली सम्पूर्ण मानव जाति एक ही कुटुम्ब की है। हिन्दू धर्म ने सभी धर्मों को अपने सद्कर्मो से प्रभावित कर भारत में ही नहीं वरन् एशिया के अनेक धर्मी समाज को **'सर्वधर्म समभाव'** के रूप में प्रस्तुत होने का पाठ पढ़ाया। हिन्दू धर्म राष्ट्र में 'धर्मनिरपेक्ष' समाज के निर्माण में सहायक हुआ।

लोकतंत्र के लिए निरपेक्षता आश्यक है। लोकतंत्र का मतलब है हमारे मूल अधिकारों की रक्षा से है जैसे- विचारों को प्रकट करने की आजादी, व्यक्ति को संगठित होकर अधिकारों की मांग करने का हक, अत्याचार व हिंसा से आजादी, एकत्रित होने का हक। लोकतंत्र एवं धर्म निरपेक्षता का अर्थ है कि धर्म राजनीति से अलग है। राजनीति देशवासियों को समान रूप से मानती है और धर्म के आधार पर भेदभाव नहीं करती।

भारत एक धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र के रूप में विश्व मानचित्र पर अंकित है। साम्प्रदायिक सौहार्द के लिए 'सर्वधर्म समभाव' आवश्यक हैं। इसीलिए हमारी सदियों पुरानी परंपरा एवं संस्कृति ने अपने-अपने रीति-रिवाजों, तीज-त्यौहारों के विभिन्न रंगों के बीच भी साम्प्रदायिक सौहार्द के रंगों को फीका नहीं पड़ने दिया। हमारी धरती,हमारे खेत,हमारे घर,हमारे जीवन एवं प्रकृति में सदियों से समन्वय रहा है। यहां पर प्रत्येक धर्म और संस्कृति में जीवन और आजादी का अधिकार प्राप्त है।

भारत के दो बड़े धर्म हिन्दू व इस्लाम में मानवीय मूल्य प्राप्त हुए है। जिसके आधार पर कहा जा सकता है कि धर्म मानव विकास का महत्वपूर्ण आध्यामिक तत्व है।

प्रत्येक धर्म के अपने-अपने एकात्मक लक्षण है जिनके आधार पर धर्मों की श्रेष्ठता को आंका जा सकता है। सामान्यतः सभी धर्मों में इस बात को बार-बार दोहराया गया है कि "हम सब एक पिता

परमेश्वर की संतान है और आपस में भाई-भाई है।"

ईश्वर, अल्हा, बाहगुरू सब एक है। यह मानते हुए भी धर्मावलम्बी धर्म का पालन देश काल, परिस्थितियों के अनुसार विभिन्न रुपों में करते हैं। मानव जिस धर्म पर आस्था रखने वाला होता है। उसे अपने धर्म के अनुसार समाज में चैन-अमन रखते हुए, प्रेम व भाई-चारे की भावना के साथ एक जुट रहना चाहिए। व्यक्ति को अपने कर्तव्यों का पालन व्यवहारिक जीवन में निष्पक्षता के साथ करना चाहिए ।

विभिन्न धर्मों में जो धर्म के आधार स्तम्भ माने गये लोग हैं। उनके अनुसार -

"संसार की भलाई के लिए कल्याण-भावना में तुम्हें कर्म करना चाहिए। जिस तरह अज्ञानी जन मोह-माया के वशीभूत होकर कर्म करते हैं। हे अर्जुन! उसी तरह तुम्हें अनाशक्त होकर विवेकपूर्वक जगत के हित की इच्छा से कर्म करते रहना चाहिए।" (श्रीकृष्णः श्रीमद भागवत्)

भगवान गौतम बुद्ध का कहना है कि **"भिक्षुओं तुम जाओ और भ्रमण करते हुए अनेकों की सुख शान्ति, कल्याण, जन-जन के हितों उनके लाभ और भलाई तथा उनके सुख के लिए मनुष्यों को धर्म शिक्षा दो ।"**

ईसाई धर्म के संस्थापक प्रभु यीशु कहते हैं **"क्या तुम समझते हो कि तुम्हें उन लोगों से प्यार करने का श्रेय मिलता है जो तुम्हें प्यार करते हैं। यह तो नास्तिक भी करते हैं। यदि तुम उनकी भलाई करते हो तो वे तुम्हारी भलाई करते हैं तो क्या यह आश्चर्य जनक है। पापी भी तो यही करते हैं। अपने शत्रुओं से प्यार करो और उनकी भलाई करो तब स्वर्ग में इसका उत्तम फल मिलेगा और तभी तुम सच्चे ईश्वर पुत्र के समान काम करोगे ।"**

गुरुनानक देव ने सभी धर्मों के जीवनोपयोगी तत्वों को सिक्ख धर्म में स्थान दिया और राम-कृष्ण, कबीर के महत्वपूर्ण उपदेशों को गुरु-ग्रन्थ में सम्मिलित कर सर्वधर्म-समभाव की एक अनूठी मिशाल कायम की ।"[१]

इन महापुरुषों के अनुसार यदि मनुष्य के विभिन्न रुपों को एक मानकर अपने-अपने धर्म का

---

१. धर्म और समाज : मानवीय एकता के परिपेक्ष्य में - (पृ० संख्या- ७३)

पालन कर आपस में भाई-चारे की भावना से मिल-जुल कर रहें, तो निश्चित ही हिंसा का हमेशा के लिए अंत हो जायेगा। मनुष्य चैन व अमन के दीप जलाकर अत्याचार व धर्म के नाम पर होने वाले दंगों को हमेशा के लिए समाप्त कर सकता है। इकबाल की काव्य पंक्तियों के अनुसार -

'मजहब नहीं सिखाता आपस में बैर रखना, हिन्दी हैं हम वतन, हिन्दोस्ता हमारा।'

"भारत के हृदय स्थल बुन्देलखण्ड में साम्प्रदायिक एकता के अनूठे नमूने परिलक्षित होते हैं, जिन्हें देखकर हम कह सकते हैं कि देश के साम्प्रदायिक एकता बनाये रखने में इस क्षेत्र का महत्वपूर्ण योगदान है। यहाँ की प्रमुख विशेषता यह है कि जब यहाँ पर किसी नगर या ग्राम में कोई भी छोटा या बड़ा आयोजन होता है, तो यहाँ के निवासी एक-जुट होकर उस कार्य को पूर्ण करने में अपना अपूर्व सहयोग प्रदान करते हैं। वे चाहे किसी भी जाति या धर्म के हो सभी एकजुट होकर श्रमदान कर अपनी साम्प्रदायिक एकता का परिचय देते हैं। साम्प्रदायिक सौहार्द को बुन्देलखण्ड के पर्वों व उत्सवों में विशेष रुप से देखा जा सकता है। जैसे-

शारदीय नवरात्रि प्रारम्भ होने से पूर्व कई मुस्लिम कलाकार माँ शारदे की विशाल प्रतिमायें बनाते हैं। वे बड़ी श्रद्धा व लगन के साथ इन प्रतिमाओं को बनाकर हिन्दू जन समूह को पूजन-अर्चन के लिए सौंप देते हैं। झाँसी की काली बाड़ी में एक मुस्लिम परिवार रहता है जो कि माँ दुर्गा की भव्य प्रतिमायें बनाता है। वह कलाकार प्रतिदिन स्नानादि कर देवी माँ का स्मरण कर उन्हें धूप गंधादि देकर मूर्ति बनाने का कार्य प्रारम्भ करता है। कवि व कलाकार के विषय में कहा जाता है कि कवि अपने भावों को कविता द्वारा एवं कलाकार अपने भावों को अपनी कला द्वारा व्यक्त करता है।

कवि या कलाकार की भावनायें धर्म व जाति से जुड़ी न होकर कविता व कला के माध्यम से अपने भावों को व्यक्त करने के लिए सम्पूर्ण मानव सम्प्रदाय से जुड़ी होती है।

बुन्देलखण्ड में हिन्दू-मुस्लिम चित्रकार मिलकर चित्रकारी का कार्य करते हैं। यहाँ पर ऐसे अनेक हिन्दू परिवार हैं जो कि ताजियां बनाने का कार्य करते हैं।

हिन्दू कलाकार मुस्लिमों को उनके अवसर पर सुन्दर व आकर्षक ताजिये बनाकर देते हैं। मुस्लिम जर्दा व रेवड़ी बाँटकर अपने उत्साह को व्यक्त करते हैं। यहाँ पर साम्प्रदायिक सौहार्द का अनोखा चित्र अंकित होता है।

बुन्देलखण्ड के कई स्थानों झाँसी, उरई, कोंच, कालपी व कोटरा आदि में बड़ी धूमधाम के साथ ताजियें निकाले जाते हैं। ताजिया निकालते समय विभिन्न सम्प्रदायों का जन-समूह उन्हें देखने के लिए एकत्रित हो जाते हैं। स्त्रियाँ अपने घरों की छतों से ही यह आनंद प्राप्त कर लेती हैं। हिन्दु-मुस्लिम परिवारों के बच्चे ढोल, नगाड़ों की ध्वनि सुनकर ठुमके लगाने लगते हैं। बच्चे इस पर्व पर हर्ष का पूर्ण आनंद लेते हैं।

होली-दिवाली, ईद एवं मुहर्रम हिन्दू-मुस्लिमों के विशेष पर्व हैं। ये पर्व बड़े उत्साह व श्रद्धापूर्वक मनाये जाते हैं। इन त्यौहारों पर हिन्दू-मुसलमान एक दूसरे को गले लगाकर परस्पर बधायी देते हैं।

हमारे बुन्देलखण्ड में ऐसी अनेकों सिद्ध मजारें हैं जहाँ पर भारी संख्या में हिन्दू व मुस्लिम परिवार जाते हैं। मन्नत पूरी होने पर प्रसाद व चादर समर्पित करते हैं। झाँसी में 'जीवन शाह' व 'खाकीशाह' की मजारें बहुत ही सिद्ध हैं। प्रत्येक गुरुवार के दिन यहाँ पर हिन्दू-मुस्लिम का भारी जन समूह देखने को मिलता है। यह समूी दोनों धर्मों की साम्प्रदायिकता को बया करता है। कोंच में 'खुर्रम खाँ' की मजार, 'सैयद वली' लौना वाले, उरई में 'पीर बाबा' एवं 'बेरी बाबा' की प्रसिद्ध मजारें हैं। इस्लाम धर्म के लोक देवता 'सैयद बाबा' के चबूतरें प्रत्येक गाँव व नगर में देखने को मिलते हैं, जिन्हें हिन्दू-मुस्लिम दोनों पूजते हैं।

बुन्देलखण्ड का झाँसी राज्य साम्प्रदायिकता एकता का प्रमाण है। झाँसी की सेना में बुन्देलों और मराठों के समय हिन्दू व मुस्लिम सम्प्रदाय के लोगों का महत्वपूर्ण स्थान था। स्त्रियों में सुन्दर-मुन्दर, मोती बाई, जूही, काशीबाई, वक्शिन जू एवं झरकारी बाई। पुरुषों में खुदा बक्श, गुरुमुहम्मद, गुलाम गौस खाँ, रघुनाथ सिंह, जवाहर सिंह, देशमुख आदि के नाम प्रमुख थे। इन विभिन्न जाति व सम्प्रदाय के महान योद्धाओं ने अंग्रेजों से जमकर युद्ध किया एवं झाँसी राज्य की सुरक्षा के लिए अपना बलिदान दिया। आज भी महारानी लक्ष्मीबाई के साथ इन वीर योद्धाओं का बलिदान स्मरण किया जाता है। झाँसी के किले की चारदिवारी के प्रत्येक द्वार पर एक तरफ हनुमान मंदिर और दूसरी तरफ मुस्लिम पीर की मजार साम्प्रदायिकता की मिशाल है। शिवरात्रि पर किले में लगने वाले मेले में हिन्दू-मुस्लिम दोनों धर्मों के लोग एकत्रित होकर सर्व-धर्म समभाव का अनोखा परिचय देते हैं ।

झाँसी में सीपरी बाजार चौराहे पर एक अति प्रसिद्ध तीर्थ है। जिसको **'सबका मालिक एक'** के

नाम से जाना जाता है। वहाँ पर सभी धर्मों को समान रुप से स्थान दिया गया है- मंदिर-मस्जिद, चर्च-गुरुद्वारा एवं सूफी संत की मजारें हैं। इस साम्प्रदायिक तीर्थ स्थल पर प्रत्येक दिन लंगर होता है। लंगर में सभी धर्मों के व्यक्तियों को आदर पूर्वक भोजन करवाया जाता है।

"बुन्देलखण्ड में चित्रकूट साम्प्रदायिक एकता का प्राचीन काल से केन्द्र रहा है। जिसका प्रमाण आज भी देखने को मिलता है और वह मंदिर है, औरंगजेब द्वारा निर्मित बालाजी का मंदिर, जिसे औरंगजेब द्वारा चित्रकूट से प्रभावित होकर निर्मित कराया गया था और इस मंदिर में बैठे भगवान बालाजी के लिए भोग, आरती, प्रसाद व अतिथियों के भोजन आदि पाने के लिए सैकड़ों बीघा भूमि ताम्र-पत्र में लिखकर दान की गई थी, जो आज भी चित्रकूट राजस्व विभाग के रिकार्ड में दर्ज है।"२

मुस्लिम सम्प्रदाय मध्य ऐशिया से भारत आया। इन्होंने भारत पर सैकड़ों वर्षों तक राज्य किया और अपनी छाप हिन्दुस्तानियों पर छोड़ी। लेकिन भारतीय संस्कृति इतनी विशाल और ग्राही है कि उसने मुस्लिम सभ्यता को ही अपने में समाहित कर लिया। दोनों सम्प्रदाय एक-दूसरे के पूरक हैं। दोनों ने एक-दूसरे के भोजन, खानपान, रहन-सहन, बोली को अपनाया है।

बुन्देलखण्ड के गाँवों में हिन्दू-मुस्लिम एक-साथ एक ही मुहल्लों में निवास करते हैं। ग्रामीण मुस्लिमों का पहनावा व रहन-सहन भी हिन्दुओं की तरह रहता है। हिन्दू-मुस्लिमों में कोई भेद-भाव देखने को नहीं मिलता है। किसी भी धर्म में कोई व्यक्ति अगर परलोक वासी हो जाता है। तो सभी धर्मों के व्यक्ति एकत्रित होकर उसे कन्धा देकर उसकी अंतिम क्रिया में अपना सहयोग प्रदान करते हैं। यह भी साम्प्रदायिकता की अनूठी पहचान है। हिन्दू-मुस्लिम दोनों सम्प्रदाय के व्यक्ति समय आने पर एक दूसरे का भरूपर सहयोग करते हैं। पर्व, उत्सवों पर दोनों धर्मों के लोग दूसरे को गले लगाकर बधायी देते हैं। जिससे साम्प्रदायिक एक मजबूत होती है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि बुन्देलखण्ड में आज भी साम्प्रदायिक एकता मजबूत है।

---

२. दैनिक आज समाचार पत्र (६ नबम्बर २००७) - कानपुर से प्रकाशित

२.२ लोक कलाएं-

भारतीय संस्कृति में मानव जीवन का परम उद्ददेश्य चारों पुरुषार्थो की प्राप्ति करना है। त्रिवर्ण 'धर्म, अर्थ, काम' की प्राप्ति होने पर मनुष्य को मोक्ष स्वतः ही प्राप्त हो जाता है। चारों पुरुषार्थ मानव जीवन के लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होते है।

पघमपुराण के अनुसार -'धर्मोदर्थो' दर्शतः कामार्द्धम फलोदयः अर्थात् धर्म से अर्थ, से काम और काम से धर्म के फल 'आनन्द' का उदय होता है। भारतीय मनीसियों ने इस त्रिवर्ग के साधनभूत शास्त्रों की रचना की, मनु ने मानवधर्मशास्त्र तथा व्रहस्पति ने अर्थशास्त्र की रचना की जिसका पुनःसंस्करण कोटिल्य के रूप में दृष्टिगोचर हुआ, 'कामशास्त्र' की रचना आचार्य नन्दी ने की। वात्सायन ने 'कामसूत्रम्' के रूप में इसका संक्षिप्तीकरण किया।

वात्सायन के अनुसार ''व्यक्ति को अपने शतायु काल में 'धर्म, अर्थ और काम का संतुलित सेवन इस प्रकार करना चाहिए, कि ये तीनों परस्पर संबद्ध भी रहे और एक दूसरे के बाधक भी न हो।

''धर्म के अंतर्गत 'शिष्ट पुरूषों के आचार को 'सदाचार 'परमधर्म' बताया गया है। अर्थ को धर्म और काम का मूल निरूपित किया गया है, बिना अर्थ के धर्म और काम की प्राप्ति संभव नंही है।'काम' को 'रागात्मिका वृन्ति' अथवा 'मानस-व्यापार' माना गया है, अर्थात् प्रत्येक प्राणी जो कुछ करता है, उसके मूल में 'काम' का भाव है। 'कामसूत्रम' के प्रणेता मुनि वात्स्यायन ने 'काम' के उचित रूप में सेवन का विधान बताते हुये उसकी अंगीभूत चौसठ कलाओं का निरूपण किया है। 'कामसूत्रम्' के 'विधा समुददेश प्रकरण' में वर्णित हुए चौसठ कलाओं को पॉच वर्गो १ चारू 'ललितकलायें' २. कारू 'उपयोगीकलायें'३.औपनिषिदिक कलायें ४. बुद्धि वौचक्षण्य कलायें तथा ५. क्रीडा कलायें में विभाजित किया गया है। नृत्य,गीत,वाघ,चित्रकला प्रसाधन आदि कलाओं को 'ललित कला' वर्ग में रखा गया है। वात्स्यायन ने इनमें सर्वोच्च स्थान गीत,नृत्य,वाघ तथा चित्रकला 'आनन्द' को देकर इन सभी कलाओं को श्रेष्ठतम माना गया है।

भरतमुनि ने 'नाट्यशास्त्र' को इसी कोटि मे रखा है। इन कलाओं में निपुणता व्यक्ति के अभ्युदय और सर्वागीण विकास में सहायक है, जब इन कलाओं का विस्तार 'लोक' में सामूहिक अभिव्यक्ति के माध्यम से होता है, तब यह 'लोक कलायें' उस समाज,क्षेत्र या लोक को सांस्कृतिक सम्पन्नता का

उद्घोस करती है।"[1]

विन्ध्याचल पर्वत शिखरों के प्रांगण में बसा बुन्देलखण्ड एक ऐसा क्षेत्र है, जहाँ पर लोककला के अनेकों नमूने प्रचुर मात्रा में देखने को मिलते हैं। इस प्रान्त में निम्न लोककलायें देखने को मिलती है। लोकगायन,लोकनाट्य,लोकनृत्य तथा लोक चित्रकला की अनेकों विधायें स्वतंत्र ग्रन्थ का विषय है। 'पंडित परमानंद जी' **"बुन्देलखण्ड धरा को जर्मनी का एक भाग कहते थे, जहाँ का हर नागरिक शेर है, चाहे साहित्य का क्षेत्र हो या व्यायाम कला,संगीत,हॉकी या युद्ध भूमि का, हम हमेशा आगे रहे और रहेगें।**

नौनौं खण्ड बुन्देल हमारों,नौउंउ खण्ड को प्यारो ।

आला,उदल,मधुकर,चम्पत,बैरिन को मद झारों

बीर वृसिंहदेव छत्ता भओ, रन मे कबहु न हारो।

बाई लक्ष्मीरानी जई में, धारों नगन दुधारौ।

दानी सूर सिरोमन जई में,भये अनगिनत विचारों।

माहुर कवि कहॉ लौ कहियत, जौ हैजग उजियारो

सियाराम् ने हू पुरछिन में जईको लओ सहारों ।"[2]

(नाथूराम माहौर)

---

१. सांस्कृतिक बुन्देलखण्ड - अयोध्या प्रसाद गुप्त 'कुमुद' (पृ० संख्या- ६४)

२. बुन्देलखण्ड का साहित्यिक, ऐतिहासिक, सांस्कृतिक वैभव - डा० रमेश चन्द्र श्रीवास्तव (पृ० संख्या-११५)

२.२ लोक कलाएं

१. भूमि तथा भित्ति अलंकरण -

कलापक्ष की दृष्टि से बुन्देली लोक जीवन बहुत समृद्ध हैं। बुन्देली कला शिल्पियों ने ग्रामीण व अनपढ़ होते हुए भी कला के क्षेत्र में अपनी बहुमुखी प्रतिभा का प्रदर्शन किया है।

बुन्देलखण्ड में भूमि अंलकरण प्रातःकाल घर के 'उरैन' से शुरू होता है, गृहलक्ष्मी प्रातःकाल उठकर सबसे पहले अपने घर के द्वार खोलती है, तत् पश्चात् दरबाजे की सफाई कर उरैन डालती है। द्वार पर उरैन डालना भूमि अंलकरण का प्रथम उदाहरण है। शुभ अवसर पर गृहणियाँ आटे से चौक पूरती हैं, तथा रंगोली बनाती है। भूमि पर बनाये जाने वाले चित्रों को भूमि अंलकरण कहते हैं।

भित्ति अलंकरण मे व्यवसायिक स्तर पर विभिन्न अवसरों पर चित्रकारों द्वारा बनाये जाने वाले 'चितौरी' लोककला चित्र मंन्दिरों अथवा अन्य भवनों मे बने भित्ती चित्र, बुन्देली कला के लघु चित्र हैं। यह विवाह या जन्मोत्सव पर घर की बाहरी दीवाल पर बनाते है, जिनमे घट धारिणी, वर-वधु, अश्वारोही, गजारोही, कलश सॉतियॉ मयूर आदि का चित्रांकन होता है। सूर्य पूजन के लिये दीवाल पर सूर्य की आकृति को लोग गोवर आदि का प्रयोग कर बनाते है। इसी प्रकार ग्रामों में सुआटा का प्रचलन भी अधिक है,जो कि गाँवों मे घरों की दीवालों पर जगह -जगह दखेने को मिल जाते है। यह मिट्टी से बनाये जाते हैं। फिर उसको अनेक रंगो से सजाया जाता है। त्यौहारों पर हरछठ, सुरौती, करवाचौथ,देवउठान, नागपंचमी तथा मांय के पट पर बनायी गयी संरचनाये लोककला की दृष्टि से दर्शनीय है। भित्ती' दीवाल' पर बनाये जाने वाले अंलकरण 'भित्ती अंलकरण' अथवा 'थापे कहलाते है।

२. लोककला में प्रतीक योजना -

"इन कलाकृतियों मे अंकित प्रतीक भारतीय संस्कृतिं प्रतीकशास्त्र तथा चित्रकला के अनुपम उदाहरण हैं। इन्हें बनाने वाले स्वंय नहीं जानते कि इन प्रतीकों के अर्थ क्या हैं ? किन्तु काल के प्रवाह में परम्परा से बनाये जा रहे चित्रों को, इन कलाकारों ने अपने वरिष्ठजनों से सीखा है। इनके चित्रांकन इसी पांरपरिकता की विरासत हैं। इनमें अधिकांश आलेखन महिलाओं द्वारा बनाये जाते है, शिशु जन्मोपलक्ष्य पर सांतिया गोबर से बनाते है, तथा उस पर जौ के दाने चिपकाते है। करवा चौथ तथा देवउठान के आलेखन चावल,घेल तथा गेरु से बनाते हैं।"[१]

---

१. बुन्देलखण्ड का लोकजीवन - अयोध्या प्रसाद गुप्त 'कुमुद' (पृ० संख्या - ८५)

बुन्देलखण्डीय की पंरपरा की इस विरासत में प्रतीकों का सुन्दर प्रयोजन-मूलक तथा सुरूचिपूर्ण समावेश है। अनेक प्रतीक इनमें प्रयोग किये जाते है,कुछ प्रतीक अधिकांश आलेखनों में प्राप्त होते है। प्रतीकों के अर्थ तथा भाव-बोध इस प्रकार है-

१-गणेश जी- यह विघ्ननाशक तथा प्रथम पूज्य देवता हैं, इनका चित्रांकन सबंधित आयोजन या प्रजा-अवधि में विघ्नों के निवारण के लिए तथा क्षेमपूर्वक आयोजन करने के लिए किया जाता है।

२-सांतिया (स्वास्तिक)- "यह गणेश जी का लिपि स्वरूप है, जो गतिशीलता का प्रतीक है। क्षेम एवं विघ्नरहित कार्यो के प्रतीक रूप में चित्रित किया जाता है। गणेशजी का चित्र बनाकर स्वास्तिक (सांतिया) बना दिया जाता है, इसका अर्थ है स्वस्ति (यानी मंगल) करने वाला । चक्राकार सांतिया भी इसी का विकसित रूप है। स्वास्तिक अनेक धर्मो में आस्था का प्रतीक है। ईसाई धर्म का क्रास इसी क्रम में गिना जाता है।"२

३-गज तथा अश्वारोही - यह प्रतीक चिन्ह समृद्धि ऐश्वर्य एवं शक्ति के प्रतीक हैं। गजारोही या अश्वारोही व्यक्ति का चित्राकंन शक्ति एवं सामर्थ्यवान पुरूषों के प्रतीक रूप में किया जाता है। श्री सूक्त में इनकी गणना श्री के अंतर्गत की गई है।

४-दीपक- यह अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाने का प्रतीक हैं। दीप ज्योति शुभ-जीवन परहितकारी,भावना,सात्विकता एवं माँ लक्ष्मी का प्रतीक है। मिट्टी का दीपक लोक पंरपरा बोधक है।

५- कलश - विवाह के अवसर पर दरवाजे के दोनों ओर समृद्धि के रूप में कलश का प्रयोग किया जाता है। कलश पूजन पूजा-पाठ के समय भी किया जाता है। यह किसी भी शुभ कार्य को प्रारंभ करने पर सर्वप्रथम कलश भर कर रख दिया जाता है।

६- पैरों के निशान- 'श्री चरण' लक्ष्मी के आगवन का प्रतीक है।

७- सीढी- उत्तोत्तर प्रगति का घोतक है।

८- सूर्य और चंद्र - ये दोनों शाश्वतता, चिन्तनता तथा पवित्रता का प्रतीक है। सूर्य तेजस्विता गतिशीलता,जीवंता एवं अन्न जल प्रदान करने के कारण जगपालक व अरोग्यता का प्रतीक है। चंद्रमा शीतलता प्रदान करने वाला,अमृत का प्रतीक है।

---

२. सांस्कृतिक बुन्देलखण्ड - अयोध्या प्रसाद गुप्त 'कुमुद' (पृ० संख्या - १०)

९ -कमल/शंख- जहाँ पर ये दोनों उपलब्ध होते है,वहाँ लक्ष्मी जी का निवास स्थान होता है। यह उत्पादक शक्ति,शुचिता अलिप्तता तथा शाश्वत-शोभा के प्रतीक है। बंगाल तथा अन्य प्रान्तों में शंख की चूड़ी दाम्पत्य के रूप में पहनी जाती है। शंख पवित्रता व ज्ञान का प्रतीक है।

१० -हथेलियों की छाप- पंचतत्वों की समग्रता,पंचो की साक्षी,पारिवारिक एकता, सात्विकता तथा दो हाथों की छाप युगल सहयोग की प्रतीक है।

११ -मोर- जीवन में सौन्दर्य-बोध एवं रूचि-विविधा का प्रतीक है।

१२ - घटधारिणी स्त्रियाँ- इनका चित्रांकन कला के क्षेत्र में, समृद्धिवाहक देवी के रूप में किया जाता है। वैवाहिक घरों के द्वारों पर चित्रकारों द्वारा ये आकृति अंकित कर दी जाती है।

३. मूर्ति कला तथा खिलौनें -

मूर्तिकला के क्षेत्र में बुन्देलखण्ड का एक महत्वपूर्ण स्थान है। मूर्तियाँ लोक जीवन का अभिन्न अंग हैं, मूर्तिकार छेनी द्वारा पत्थरों को काँट-छाँट कर मूर्तियों में रंग-रूप, आकार आदि प्रदान करता है। कलाकार की छेंनी में सभी गुण विघमान रहते हैं, जिस के बल पर वह मूर्ति में सजीवता को प्रदर्शित करता हैं। मूर्ति द्वारा कलाकार अपने भावों को व्यक्त करता हैं।

"जैसे जैसे वाह्य सामग्री का आश्रय कम होता जाता है और
भावों की व्यंजना बढ़ती जाती है, वैसे कलायें ऊँचा स्थान पाती है।"(जर्मन आचार्य हैगल)

वास्तुकला में बाह्य सामग्री का बाहुल्य रहता है और भावनाओं की अभिव्यक्ति कम रहती है, लेकिन मूर्तिकला में स्थापत्यकला की अपेक्षा सामग्री कम लगती है,और भावनाओं की व्यंजकता अधिक मानव के हृदयांगत भावों का स्पष्टी-करण होता है।"[1]

"बुन्देलखण्ड में प्राप्त अधिकांश मध्यकालीन मूर्तियाँ शिला-पटों पर उकेर कर बनायी गयी हैं। गोलाई में उकेरी मूर्तियाँ कम हैं। प्रमुख मूर्ति के दोनों ओर के किनारे शार्दूल,मकर आदि से सुसज्जित हैं, इनके प्रभा मण्डल विविध प्रकार के हैं, दोनों ओर विद्याधरों को प्रदर्शित किया है। देवी की प्रतिमाए अलंकृत, रथिकाओं के अंतर्गत प्रदर्शित है।"[2]

लोकांचलों में मूर्तिकला तथा हस्ति,गणगौर,सुआटा,दीवाली पर बनी गणेश लक्ष्मी की प्रतिमायें

---

१. बुन्देलखण्ड दर्शन - मोतीलाल त्रिपाठी 'अशान्त' (पृ० संख्या - २७८)

२. बुन्देलखण्ड का साहित्यिक, ऐतिहासिक, सांस्कृतिक वैभव - डा० रमेश चन्द्र श्रीवास्तव (पृ० संख्या - १४५)

मलमास में काली मिट्टी की शिव प्रतिमाये,संकरात पर अश्व,गज तथा गढियाँ,साँउनी के लिये रंग-बिरंगी मटकियाँ, दीपक आदि बनाने की परंपरा इस लोकांचल में विद्यमान है।यह लोक कला आगे बढकर व्यवसायिक स्वरूप ग्रहण करती जा रही हैं।

बुन्देली मूर्ति कला के अंतर्गत मिट्टी से बनी मूर्तियाँ बहुत प्रचलित है। यहाँ पर विवाह के समय झूमर,महालक्ष्मी पूजन पर 'रंगीन मटकिया'गनगौर पूजन पर 'गनगौर' तथा दीवाली पर दीपक एवं दीप धारिणी महिलाओं की रंग बिरंगी मूर्तियाँ बनाते है। ये मूर्तियाँ बड़ी आकर्षक एवं लुभावनी होती है। लोक-जीवन में मूर्तियों का बहुत महत्व होता है।वे मिट्टी से निर्मित होती है। "इसी प्रकार रंग-बिरंगे मिट्टी से निर्मित खिलौनें लोक जीवन में बच्चों के लिए बहुत महत्व रखते है। लगभग सभी मूर्तियों और खिलौनों पर रंगों के प्रयोग से चित्रकारी की जाती है। जिससे उनका सौन्दर्य द्विगुणित हो जाता हैं।"३

महोबा, ललितपुर में धातु की मूर्तियों तथा खिलौनों का उत्पादन औद्योगिक स्तर पर होता है। आध्आधुनिक युग में प्राचीन लोक कलाओं का ह्रास होता जा रहा है। कुम्हार किसानों के घर पर मूर्तियाँ वितरित कर, उसके बदले में 'पावन' ले आते थे। कलाकृतियों को रूपय-पैसों में नही तौला जाता था। कारीगर को बस पेट भरने के लिए भोजन ही पर्याप्त था। सच कहा जाता है कि कला का कोई मोल नहीं होता हैं। वर्तमान समय में आधुनिकीकरण के कारण कला का क्षेत्र लुप्त होता जा रहा है। मिट्टी के बर्तन व खिलौंने आज के समय में पूर्णतः समाप्त होते जा रहे हैं।

गाँवो मे प्राचीन समय में और आज भी कहीं-कहीं 'पुतरा-पुतरियाँ खेलने की परंपरा है। उसके लिए स्त्रियाँ कपड़ों के द्वारा इन्हें तैयार करती है। वर्तमान 'डॉल़' (गुड़ियां) अपेक्षा यह 'पुतरा' पुतरियाँ मौलिक तथा कलात्मक होते है। मोराई छठ पर बिजना,बटुआ,कथरी,कुड़री,कांस की डलियाँ आदि लोक कला के आकर्षक नमूने हैं।

४- काष्ट शिल्प -

यह बुन्देलखण्ड की बहु प्रचलित लोककला है। काष्ट शिल्प के अंतर्गत नक्काशीदार पूजा-चौकिया,जेवर रखने की पेटियाँ,पूजा की चौकी,मण्डप,मूसल,कृषि के उपकरण,खिलौने,इत्रदान,सुन्दर दरवाजे चौखट,कलमदान,आसन एवं लकड़ी के आकर्षक फर्नीचर कलाकुशल शिल्पियों द्वारा तैयार किये जाते

---

३. बुन्देलखण्ड की लोक चित्रकला - डा० श्रीमती मधु श्रीवास्तव (पृ० संख्या- ७३)

है। बांस की खपच्चियो द्वारा ताजियाँ,सुआटा एवं मंन्दिरों के विमान आदि तैयार किये जाते है।

अन्य कलात्मक शिल्प - बाँस,खजूर,सरकंडा व खाडू से बनी घरों में प्रयोग की जाने वाली वस्तुएं। जैसे- सूप,पंखे,डलियाँ आदि लोककला के सुन्दर नमूने प्रस्तुत करते है। निम्न साम्रगी की सजावट के लिए उन पर लोक चित्रकारी भी की जाती है।

५- वेश-भूषा -

वेश-भूषा के संबंध में बुन्देलखण्ड में आम व्यक्ति की सह धारणा रहती है-'खाबे को मउआ,पैरबे को अमौंआ।' बुन्देली अमौना बस्त्र आम के पत्रों से बने रंग में रंगा होता है। किसी समय अमौना बहुत प्रचलित रहा होगा और उसमें लोक की रूचि वस्त्र चयन में रही होगी। एक बुन्देली युक्ति चरितार्थ है-

"कपड़ा पैरे जग भाता,खाना खैये मन भाता।"

लोक में कपड़ों को पहने के संबंध कुछ नियंत्रण एवं वर्जनाएँ भी लागू है। इस संबंध में लोक मान्यता है-'बुध-बृहस्पति-शुक्रवार कपड़ा पहने तीन बार' अर्थात् नया वस्त्र पहनने के लिए तीन दिन शुभ होते है। नवीन वस्त्र धारण करते समय उन्हें भगवान,कन्या,तुलसी एवं पृथ्वी से स्पर्श कराते है।

बुन्देली पुरुषों के पारंपरिक परिधानो में सिर पर साफा,अगौछी,पगड़ी,टोपी (खादी की) शरीर पर कुर्ता धोती,मिमर्जई (अंगरखा) बंड़ी,फतुई,परदनी (पुरूष की धोती) तहमद,कमीज,जाड़े में रूई भरी बंड़ी आदि प्रमुख है। कंधे पर पिछौरिया,तौलिया या साफी अवश्य डालते है। पैरों में चमरौधा जूते या पनइयाँ पहनी जाती हैं। स्त्रियों के लोक परिधान पहनने का तरीका कुछ ऐसा होता है,कि जिससे उनके अधिकांश आभूषण दिखाई देते रहे। कुंवारी लड़कियाँ 'कदेला' डालती है। विवाहितायें 'आंचल' डालती है। यहाँ पर महिलाओं द्वारा विशेष रूप से 'बाँड़' की जरी से इस पर कड़ाई मिलती है। यह विशेष प्रकार का घाघरा होता है। बुन्देलखण्ड के कुर्मी समुदायों मे आज भी स्त्रियाँ 'बाँड़' पहन कर खेतों पर कृषि कार्य हेतु जाती है।

निम्न वर्ग की महनतकश स्त्रियाँ 'काछ' लगाकर धोती पहनती हैं। ज्यादातर परिवारों में रंगरेज से रंगवाई गई धोती पहनने का रिवाज है। रंगाई प्रायः गाढ़े रंग से होती है। कपड़ों पर कढ़ाई द्वारा बेलें बनाने का प्रचलन भी देखने को मिलता है।

६- आभूषण -

लोक जीवन में आभूषणें का महत्वपूर्ण स्थान है। यह मानव को आकषर्क बनाने, सौन्दर्य को बढ़ाने के साथ-साथ समृद्धि का भी प्रतीक होते हैं। सामान्य जन अपनी साज-सज्जा मे सोने,चाँदी,पीतल आदि के आभूषणों का प्रयोग करते है। इन आभूषणों में मोती,माणिक्य,पन्ना,हीरा आदि का प्रयोग गहनों में चार-चाँद लगाने के लिए किया जाता है। बुन्देली लोग अपनी सामर्थ्य के अनुसार गहनों का प्रयोग करते है।

"आभूषण लोकसंस्कृति के लोकमान्य अंग है। सौन्दर्य की बाहरी चमक-दमक से लेकर शील को भीतरी गुणवत्ता तक और व्यक्ति की वैयक्तिक रूचि से लेकर समाज की सांस्कृतिक चेतना तक आभूषणों का प्रभाव व्याप्त रहता है। आभूषणों के उपयोग का प्रभाव तन-मन दोनों पर पड़ता है। उनके धारण करने से शरीर का सौन्दर्य ही प्रकाशित नहीं होता, वरन् स्वास्थ्य भी सुरक्षित रहता था। शरीर-विज्ञान के आधार पर ही आभूषणों का चयन किया गया है। पायल और कड़े धारण करने से एड़ी,टखनों और पीठ के निचले भाग में दर्द नहीं होता। ज्योतिषविदों ने ग्रह-नक्षत्रों के प्रभाव से आभूषणों के प्रभाव का संमंध स्थापित कर एक नयी दिशा खोली है। ग्रहो के बुरे प्रभाव को निस्तेज करने के लिए निश्चित धातुओं और रत्नों का चयन और आभूषणों में उनका प्रयोग महत्वपूर्ण खोज है। लक्ष्मण जी इस कथन से शील की पहचान का उदाहरण प्राप्त होता है-

"नाहं जानामि केयूरे नाहं जानामि कुण्डले। नूपुरे त्वभि जानामि नित्यं पादाभिवन्दनात्।।"

(न तो मैं इन बाजूबन्दों को जानता हूँ और न इन कुण्डलों को लेकिन प्रतिदिन भाभी के चरणों मे प्रणाम करने के कारण इन दोनों नूपुरो को अवश्य पहचानता है। आभूषण सौभाग्य का प्रतीक भी होते हैं, जिन्हें देखकर परिणता नारी की पहचान होती है। आभूषणों मे जुड़े लोक विश्वास लोकसंस्कृति के अवयव है)"[1]

"शास्त्रकारों के अनुसार बारह आभूषण प्रमुख हैं, जो कि बारह अंगो को प्रमुख रूप से आभूषित करते है। रीतिकालीन बुन्देली कवियों ने नख-शिख वर्णन में आंगिक सौन्दर्य के साधन होने के कारण इनका वर्णन अपने काव्य ग्रन्थों में किया। इसी तरह इस सम्बंध मे लोक कवियो ने भी आंगिक सौन्दर्य

---

१. बुन्देलखण्ड की लोकसंस्कृति का इतिहास - नर्मदा प्रसाद गुप्त (पृ० संख्या-२३६)

एवं आभूषणों का वर्णन कर अपनी रूचि व्यक्त की। फागकारों,सैरकारों एवं फड़काव्य के कवियों ने आभूषणें पर रचनाएँ की है,ये वर्णनप्रधान या प्रभावात्मक है,उदाहरण-

"वेनी भाल माँग श्रुत नासिका के बलभद्र' कंठ के कनक के सुवरन अपार है।
भुज पुहिचाँने कर पल्लव के कौन गनै, उरन के मंडन जिते हमेर हार है।
कटि मुखान के सुघयन को आँगुरी के, बिद्यया आदि दैके जिनकौ इनकार है।
चीर मन-धातूर सुगंध बार अलंकार,बारह आभरन ये सोलह सिंगार है।"२

बुन्देलखण्ड में पहने जाने वाले प्रमुख आभूषण निम्न हैं -

(क) स्त्रियों के आभूषण-

१ -पैरों की अंगुलियो के आभूषण- बिछिया, अनौठा,गरगज के छला, छैल- चूड़ी, महावर, पैरियाँ, झांझे,चल्ला,पैंजना, पोतें, पावपोस, बतसिया-बिछिया, खारी, बिछिया, जुड़वा, मछली, गुटियाँ, गुच्छी, गेंदें, बिरमिदी, कटीला, बाँके ।

२.पैर के आभूषण- कड़ा, अनोखा, घुँघरिया-घुँघरू, औनूपुर, गूजरी और गुजरियाँ, झाँझे, छेलचूड़ी, छड़ा, चूरा, छागल, जेहर, टोड़र, तोड़ा, चुल्ला, पायजेव, पायल, पैजनियाँ, पैदना, पैरियाँ, बाँके, रूल, सार्के, महाउर एवं पैजना आदि ।

ईसुरी ने पैजना का इस प्रकार किया है-

चकतन परत पैजना छनके,पॉउन गोरी धन के ।
सुनतन रोम-रोम उठ आउत,धीरज रहत न तन के ।
घूटे फिरत गैल-खोरन में,सुर मख्यार मदन के ।
'ईसुरी' कौन कसाइन डारे,जे ककरा कसकन के ।।

३.कमर के आभूषण - करधौनी,विछुआ,पेटी,झालरदार छटा,तावें के कटिसूत्र आदि ।

४. हाँथ की अगुँलियों के आभूषण- मुँदरी, छला, छाप, फिरमा, मानिक, नीलम, पन्ना, पुखराज और लहसुनिया जड़े होने से नौ रत्नी कहलाती है। दस्तबंद, अंगोस्थानी आदि ।

५. कौंचा के आभूषण- कड़ा, गुजें, चुरियाँ, चूरा, गजरा, गजरिया और कटीला, गजरा,कौंचियाँ या

---

२. बुन्देलखण्ड की लोकसंस्कृति का इतिहास - नर्मदा प्रसाद गुप्त (पृ० संख्या-२३७)

पौंचियाँ, छल्ला और छन्नी, टैंतिया, दौरी, दस्तंवद, नौगरई या नौघरई, बंगलियाँ, पटेला, पटेली और पाटला, बताने, बेलचूड़ी, रून झुनियाँ, रत्नचौक, लाखें, हरैयाँ, हथफूल या पानफूल।

६. बाजू के आभूषण- अनंता और अनंतियाँ, खग्गा, टड़िया, बखौरियाँ, बगुआँ, बाकें, बीय, बहुँटा, बोंघ्य, बरा, भुजबंद

ईसुरी की फागों में आभूषणों का उल्लेख निम्न है-

१. पैरे रजउ ने प्रान हरन के, ककना कमल करन के
बइयन पै बाजूबंद बाँदे, बिगरू संग बरन के ।
छापें-छरन बजुल्ला-छल्ला, गजरा कैऊ लरन के
तकत तीर से लगत , 'ईसुरी' जे नग तरन के ।।

७. गले के गहनें - कठला, कंण्ठमाला, करसली, गुलूबंद, खँगोरिया, कटमा, चंदनहार, चन्द्रहार और चंदेरिया, चम्पो, चम्पाकली हार, टकार, टकावर और टकमावर, ठुसी, ढुलनियाँ, तिंदाना, पाटिया, धुकधुकू, जलजकंठुका, गुंज, हार, हमेल, हंसली, मोहनमाला, सुतिया, मंगलसूत्र, विचौली, मालायें आदि।

८. कर्ण आभूषण - कनफूल, कनौती, ऐरन, कुण्डल, टरकी, झुलमुली, झुमकी, ढारे, तरकुला, खूटी, खुटियाँ, खुटीला, लाला, लोलक, बिजली, नगफनियाँ, तरौना, वंदनी, बारी, बाला, फल्ली या बैकुण्ठी, बुंदे, झाला आदि ।

९. नाक के आभूषण - झुलनी, टिप्पो, कील, दुर, नथ-नथुनियाँ, बारी, सिरजा, बुल्लाख, पुगरियाँ, नकमोती, नकवेसर या वेसर,नकफूली ।

१०. माथे के आभूषण - टीका, टिकली, तिलक, बूँदा, दाउनी या दीवानी ।

११. सिर के आभूषण - झूमर, बीज, सीसफूल, माँगफूल, चूड़ामणि, रेखड़ी, कौकरपान या केकखान, सरपेंच आदि ।

१२. बेनी (चोटी) के आभूषण - बेनीपान, झबिया, बेनीफूल, छेल-रिजौनी, चुटिया या चुटीला ।

(ख) पुरूषों के आभूषण -

१. पैर के आभूषण - कड़ा, चूरा, तोड़ा आदि ।

२. हाथ के आभूषण - छल्ला, मुदरी, चूड़ा, कड़ा, फिरमा आदि ।

३. गले के आभूषण – कण्डा, गजरा, गुंज, गोप, जंजीर, टौक, तबिजियाँ, मोतीमाल, बनमाल, हार आदि

४. कान के आभूषण – कुण्डल, लौग, बारी, गुखरू, चौकड़ा, मुरकी, गुरखुरु, तिकड़ी, झेला आदि ।

(ग) बच्चों के आभूषण-

१. पैर के आभूषण – चूरा, तोड़ा, कड़ा एवं पैजनियाँ ।

२. कटि के आभूषण – करधौनी, डोरा एवं छूंटा आदि ।

३. हाथ के आभूषण- कड़ा, चूरा,पौचिया ।

४. गले के आभूषण – तबिजिया,कठुला,कठुली,गजरा (सूरज-चाँद) बघनख, जंजीर आदि ।

५. कान के आभूषण- बारी,लौंग,कुण्डल आदि ।

केशवदास के एक ही छंद में सभी आभूषणों की जगमगाहट से नायिका के शरीर में दीपमालिका की कल्पना की है।

"बिछिया अनौर बाँके घूँघरु जराय जरी,जेहरि छबीली छुद्रघंटिका की जालिका ।
मूँदरी उदार पौंची कंकन बलय चूरी,कण्ठ कण्ठमाल हार पहरे गुणालिका ।
वेणीफूल सीसफूल कर्णफूल मांगफूल,खुटिया तिलक नकमोती सोहै बालिका ।
केशवदास नील बास ज्योति जगमग रही,देह धरे स्याम संगमानो दीपमालिका ।।"[३]

७. गोदना –

बुन्देली लोक जीवन में गोदन कला का महत्व काफी प्रचलित है। यहाँ की महिलायें गोदना गुदवाना बहुत पसंद करती हैं। यह चित्रकारी मानव शरीर के अंगों पर की जाती है। गोदना लगभग सम्पूर्ण भारत में प्रचलित है। बुन्देलखण्ड में यह कला अत्यंत प्राचीन है। गुदना गुदवाने के कुछ लोक विश्वास भी होते हैं –

१. शरीर अलंकरण, शारीरिक सौन्दर्य एवं प्रिय को रिझाने के लिए

२. प्रजनन शक्ति को बढ़ाने के लिए

३. जादू टोने से सुरक्षा के लिए

हमीरपुर जिले में राठ के आस-पास तथा ललितपुर जिले में सहरिया जाति में गुदना गुदवाने की मान्यतायें अभी भी जारी हैं। बुन्देली लोक विश्वास है कि मृत्यु के बाद गोदना आभूषण ही शरीर के साथ

---

३. कविप्रिया – केशवदास

जाता है। पुरुष शौकिया कोई चिन्ह अंकित करा लेते हैं। महिलाओं के शरीर पर चार प्रकार के गोदना अंकित रहते हैं।

१. धार्मिक प्रतीक चिन्ह

२. प्राकृतिक प्रतीक चिन्ह। पशु, पक्षी, फूल आदि।

३. नाम-स्वयं या प्रिय का नाम, इष्टदेव का नाम

४. अन्य गुदने- कुआ, तीर आदि।

यह आदिवासी जातियों (बैंगा, भील, गोंड, कोरकू, देवार, बिंझबार, अगरिया, कमार आदि) एवं गावों की महिलाओं तथा पुरुषों के बदन पर गोदी जाने वाली लोक कला है।। शरीर के विभिन्न अंगों पर धार्मिक चिन्ह प्राकृतिक चिन्ह, ज्यामितीय, रेखांकन अथवा नाम (स्वयं का इष्टदेव अथवा जीवन साथी का अंकन) टोणियों के पत्ते का रस अकौवा का दूध कजली के साथ मिलाकर गोदना लेप तैयार किया जाता है। गोदना चित्रकारी करने वाली स्त्रियों को गुदनारी कहते हैं। गोदना हाथ एवं मशीन से भी गोदे जाते हैं। गोदना ज्यादातर लोकांचल मेलों में गोदे जाते हैं।

वर्तमान भारतीय समाज में 'स्थायी आभूषण' के रुप में प्रचलित यह अलंकरण अब धीरे-धीरे बीते कल की बात बनता जा रहा है। अब इसकी जगह रंग-बिरंगे 'टैटू' लेते जा रहे हैं। यह नारी मन के समझाने व जानने का एक सशक्त माध्यम है। गुदना न सिर्फ भारत में अपितु संसार के विभिन्न मानव कुटुम्बों में प्राचीन काल से आज तक निरंतर प्रतिपादित होता आ रहा है, बस उसका रुप बदलता रहा है।

८. अन्य लोक कलायें -

अन्य लोक कलायें निम्न हैं -

गोबर से गणेश बनाना, कांस व गेहूँ की सींकों से डलिया बनाना, पुरानी धोतियों से दरी एवं आसनी बनाना, सींक व खजूर की पत्तियों से पंखा, झाड़ू, खिलौने, डलिया आदि बनाना,बालों से रस्सियों बनाना आदि बुन्देली लोक कलाओं के अंतर्गत आते है।

२.३ लोक सभ्यता -

सभ्यता की व्याख्या करने से पहले हमें लोक शब्द की विवेचना करना आवश्यक है। इस संबंध में विद्वानों के मत हैं - प्रत्यक्ष दर्शी लोकाना सर्वदर्शी भवेन्नरः महर्षि व्यास अर्थात्- लोक को प्रत्यक्ष देखने वाला ही सर्वदर्शी होता है।

इस कथन से यह स्पष्ट होता है, कि यदि हम लोक को जानना चाहते हैं, तो हमें लोक चेतना, लोकभावना तथा सामान्य जन के आचार व्यवहार को खोजकर सत्यता की परख करनी पड़ेगी। तभी हम लोक शब्द की व्याख्या करने में सफल होंगे।

डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार ''लोक शब्द का अर्थ' 'जनपद' या ग्राम्य नहीं है। बल्कि नगर व गाँवों में फैली हुयी वह समूची जनता है, जिनके व्यवहारिक ज्ञान का आधार पोथियाँ नहीं है।ये लोग नगर के परिष्कृत रूचि सम्पन्न तथा सुसंस्कृत समझे जाने वाले लोंगों की अपेक्षा अधिक सरल तथा अकृत्रिम जीवन के अभ्यस्त होते है और परिष्कृत रूचि वाले लोगों की समूची विलासता और सुकुमार जीवन के लिए जो भी वस्तुएं आवश्यक होती हैं उनको उत्पन्न करते है।''

डा० नर्मदा प्रसाद गुप्त का मत है ''शास्त्रों से बंधे शास्त्रीय अधिक रूढिग्रग्रस्त होते है, जबकि लोकतत्व से संप्रेषित लोक सहज, अधिक स्वच्छन्द, प्रकृत और ताजे रहते हैं।''

महाभारत के आदि पर्व में 'लोक' शब्द का प्रयोग जन-साधारण के संदर्भ में किया है।

सभ्यता पक्ष के अंतर्गत दैनिकचर्या (ब्रह्महूर्त) में जागना, लोकाचार (दादा-दादी के पैर स्पर्श करना), टोना-टोटका, भोजन-व्यंजन, आवास प्रवास, परिवार, पति-पत्नी संबंध, लोकरंजन (लोकक्रीड़ा) तथा उद्यम व्यापार आदि आते है।

बुन्देलखण्ड के लोक चिन्तन में शाश्वत जीवन मूल्यों का संरक्षण भारत की चिरंतन संस्कृति का पोषण एवं रागात्मक बोध है। यहां की लोकधारा वैदिक, स्मृति, पुरा काल से प्रभावित होती हुयी अपनी लोक संजीवनी शक्ति से सम्पन्न के सभी वर्गों में समरसता बनाए हुए थी। वर्ग व्यवस्था पर आधारित समाज व्यवस्था समन्वयवादी, पारस्परिक स्नेह एवं सम्मानवर्द्धक है। ब्राह्मण पुत्री के विवाह में भाई का विशिष्ट स्थान है तथा धोविन से सुहाग मांगा जाता है। सामाजिक एकरूपता में सभी वर्ग अनन्योश्रित हैं

विवाह की लकड़ी काटने हेतु छेई के बुलउआ से अन्त्येष्टि का बुलउआ लगता है। मृत्यु के पश्चात् भी फेरा डालने में सामाजिक तथा आर्थिक सहयोग की भावना महत्वपूर्ण है। वीरता

और जनसेवा यहाँ केवल बखानी ही नहीं जाती बल्कि उसे देवत्व की प्रतिष्ठा दी जाती है। हरदौल तथा कारसदेव आदि वह व्यक्तित्व है जिन्हें मानव होकर भी देवत्व की गरिमा प्राप्त है। उनका चबूतरा लोक की आस्था का केन्द्र बन जाता है।"१

बुन्देलखण्ड के मानव जीवन में शुभकार्य पंडितों से मुहूर्त निकलवा कर किये जाते हैं। व्यक्ति सामाजिक जीवन में पर्वत, नदियों, सरोवरों एवं वृक्षों की पूजा करता है। पीपल, बरगद, तुलसी, नीम, आवंला आदि वनस्पतियों को पूज्य कोटि में रखा जाता है। भोजन की थाली में तुलसी-पत्र डालकर भगवान का भोग लगाया जाता है। तुलसी को नित्य जलदान करना दैनिक कर्तव्य मानाा जाता है। वनस्पतियों का संरक्षण प्राकृतिक वातावरण को शुद्ध करता है। ये नियम शुद्ध वैज्ञानिक दृष्टिकोण पर आधारित है। प्रत्येक बुन्देली परिवार की दैनिकचर्या में ये कर्तव्य समाहित हैं।

प्राचीन बुन्देली सभ्यता के अंतर्गत यहाँ के परिवारों में निम्न आचरण प्रमुख रुप से आवश्यक थे, जिनका प्रयोग प्रत्येक घर में किया जाता था। ये निम्न हैं -

"वैदिककालीन संस्कृति में 'बलिवैश्व' यज्ञ एक नियमित आचरण था। इसके अंतर्गत पाँच देवता- चींटी, पक्षी, श्वान, गाय तथा अग्नि का भोजन प्रथम नैवेद्य समर्पित किया जाता था। आज भी चूल्हे में बने भोजन की प्रथम लोई अग्नि को भेंट करने की परम्परा है। गाय, कुत्ते, पक्षी को कौरा निकालने की प्रथा जीवन संर्बधन की भावना का अंग है । शिशु जन्म के कुछ दिनों बाद उसे घृत चढ़ाने की परम्परा है। यह पदार्थ शोधक विकार नाशक है तथा देह को पुष्ट करते हैं। मुण्डन के पश्चात् बेसन की लोई मस्तिष्क पर फेरने या लेपन करने की परम्परा है। मुण्डन के कारण उत्पन्न घाव आदि से बचाव का यह लोक विज्ञान है। प्रसूता को सोर (सेवर) में अजवाइन का धुंआ देना, नीम या लौंग के जल से स्नान कराना, पीपल का अति प्रयोग करना, चरुआ के जल में वनस्पतियों को डालकर उसका काढ़ा देने का विधान आयुर्वेदिक सम्मत है। चेचक निकलने पर सब्जियों का छौंका लगाना, नाई से बाल कटवाना, धोबी से कपड़े धुलवाना वर्जित है। इस प्रक्रिया से संक्रामक रोग के कीटाणुओं को अन्य स्थान पर फैलने से रोकना लोकहित में है। लोकजीवन का सर्वांग निरुपण करने वाले ग्रन्थों का प्रायः अभाव है। परम्परायें नई पीढ़ी को स्वाभाविक रुप हस्तांतरित होती है।"२

---

१. बुन्देलखण्ड का साहित्यिक ऐतिहासिक वैभव - डा० रमेश चन्द्र श्रीवास्तव (पृ० संख्या-११२)

२. बुन्देलखण्ड का साहित्यिक ऐतिहासिक वैभव - डा० रमेश चन्द्र श्रीवास्तव (पृ० संख्या-११३)

१. परिवार -

विश्व के प्रत्येक मानव समाज में परिवार अनिवार्य रुप से पाये जाते हैं। विभिन्न संस्कृतियों में इसके आकार व प्रकारों में भिन्नता पायी है। परिवार समाज की मूलभूत ईकाई होती है, जिसमें माता-पिता, भाई-बहिन, चाचा-चाची, भतीजे-भतीजी एवं पुत्र-पुत्री आदि होते हैं। रक्त संबंध के कारण ये सभी सदस्य पारस्परिक स्नेह तथा उत्तरदायित्व की भावना से परिपूर्ण होते हैं। बुन्देलखण्ड में इसी प्रकार के परिवार प्रमुख रुप से देखने को मिलते हैं। इन परिवारों को संयुक्त परिवार कहते हैं।

विभिन्न समाजशास्त्रीयों के अनुसार परिवार-

मैकाइवर तथा पेज के अनुसार- " परिवार पर्याप्त निश्चित यौन-संबंधों द्वारा परिभाषित एक ऐसा जनसमूह है। जो बच्चों को पैदा करने (प्रजनन) तथा लालन-पालन(पोषण) करने की व्यवस्था करता है।

ऑगबर्न तथा निमकॉफ के अनुसार- "परिवार स्त्री और पुरुष की बच्चों सहित अथवा केवल बच्चों सहित पुरुष की अथवा बच्चों की एक कम या अधिक स्थायी समिति है।"

किंग्स्लेडेविस के अनुसार- "परिवार ऐसे व्यक्तियों का समूह है, जिनमें सगोत्रता के संबंध होते हैं और जो इस प्रकार एक-दूसरे के संबंधी होते हैं।"

विचारकों के मतानुसार- निम्न परिवार का अर्थ स्पष्ट होता है कि परिवार एक लगभग स्थायी सामाजिक संगठन है। इसकी नींव स्त्री-पुरुष के यौन-संबंधों के नियंत्रण पर होती है। बच्चों का जन्म उनका लालन-पालन, समाजीकरण एवं आर्थिक सहयोग आदि इसके प्रमुख कार्य होते हैं।

बुन्देलखण्ड में दो प्रकार के परिवार देखने को मिलते हैं -

१. संयुक्त परिवार　　　　२. एकाकी परिवार

१. संयुक्त परिवार- इन परिवारों का आकार विस्तृत होता है। संयुक्त परिवारों से अभिप्राय ऐसे परिवारों से है, जिनमें माता-पिता, बाबा-दादी, चाचा-चाची, भाई-भाभी, चचेरे भाई-बहिन तथा अविवाहित भाई-बहिन भी सम्मिलित होते हैं। ये सभी सदस्य एक छत के नीचे निवास करते हैं। एक रसोई का भोजन ग्रहण करते हैं। सामान्य सम्पत्ति रखते हैं। बुन्देलखण्ड के प्रत्येक ग्राम व नगर में अधिकतर इसी प्रकार के परिवार हैं। बयोवद्ध व्यक्ति परिवार का मुखिया होता है। जो परिवार का संचालन करता है। यहाँ का प्रमुख व्यवसाय कृषि है। परिवार के सभी सदस्य मिलकर कृषि कार्य करते हैं। मुखिया परिवार के सदस्यों की कार्यक्षमता के अनुसार उन्हें कार्य सौंपते हैं। परिवार के किसी भी

सदस्य पर सुख दुःख की स्थिति में सभी उसका सहयोग करते हैं।

स्त्रियाँ गृहकार्यों को पूर्ण करने में संलग्न होती हैं। वे कृषि कार्यों में भी सहयोग प्रदान करती हैं। बयोवद्ध महिला घर की सभी स्त्रियों को सुचारु रुप से गृहकार्यों में लगाये रहती है। जिससे परिवार मे शान्ति एवं व्यवस्था बनी रहे। परम्परागत भारतीय संयुक्त परिवार भारतीय संस्कृति का प्रमुख केन्द्र माने जा सकते हैं। वास्तव में भारतीय समाज की ईकाई व्यक्ति न होकर संयुक्त परिवार हैं।

आधुनिक युग में संयुक्त परिवारों में काफी परिवर्तन हो रहे हैं। नगरीकरण, औद्योगीकरण, पश्चिमीकरण, आधुनिक शिक्षा, वैश्वीकरण आदि के कारण इन परिवारों का विघटन तेजी से हो रहा है। संयुक्त परिवारों में विघटन होने के कारण एकाकी परिवारों का निर्माण हुआ है।

२. एकाकी परिवार- ये परिवार छोटे आकार के होते हैं। इन परिवारों को केन्द्रिय परिवार, मूल परिवार या एकाकी परिवार भी कहते हैं। एकाकी परिवार में एक छत के नीचे पति-पत्नी व उनके बच्चे निवास करते हैं। वर्तमान में एकाकी परिवारों की संख्या बुन्देलखण्ड में तेजी से बढ़ रही है। संयुक्त परिवार धीरे-धीरे आधुनिक परिवर्तनों के कारण कम हो रहे हैं। एकाकी परिवर्तनों की संख्या में वृद्धि हो रही है।

टी०बी० बाटोमोर ने १६५१ ई० की जनगणना रिपोर्ट के आधार पर इस बात का उल्लेख किया है कि संयुक्त परिवार में पर्याप्त परिवर्तन आए हैं। संयुक्त परिवार से पृथक घर बसाने की प्रवृत्ति निरन्तर बढ़ती जा रही है।

व्यापार,नौकरी व उद्योग धन्धों के कारण परिवार के सदस्यों को घर छोड़कर बाहर जाना पड़ता है। बच्चों की शिक्षा के प्रति जागरुक होकर लोग नगरों की ओर प्रस्थान कर रहे हैं। पश्चिमी सभ्यता का प्रभाव पड़ने के कारण भी लोग अपने छोटे से परिवार में रहना अधिक पसंद करने लगे हैं। इन परिवारों में परिवार के अन्य सदस्यों का व्यक्ति के निजी-जीवन में कोई हस्तक्षेप नहीं होता है। व्यक्ति आत्मनिर्भर होकर कार्य करता है। एकाकी परिवार होने के कारण वह अपने ढंग से जीवन जीता है। शिक्षित होने के कारण माता-पिता दोनों सम्पत्ति के बराबर हकदार होते हैं।

उपरोक्त इन सभी कारणों से संयुक्त परिवारों का विघटन होकर एकाकी परिवारों का निर्माण हो रहा है।

२. पति-पत्नी संबंध -

बुन्देलखण्ड में प्राचीनकाल से ही पति-पत्नी के आदर्श संबंध देखने को मिलते हैं। वेदों,पुराणों,उपनिषदों एवं अन्य धार्मिक ग्रन्थों में पति को देवता एवं पत्नी को देवी लक्ष्मी स्वरुपा माना गया है। प्राचीन भारतीय नारी का जो आदर्श वेदों में प्राप्त होता है उसके अनुसार **'यत्र नार्यस्तु पूजन्ते तत्र देवता रमन्ते' (मनुस्मृति ३/५७)** अर्थात् जहाँ नारी का पूजन होता है, वहाँ देवता निवास करते हैं। नारी के प्रति इन धार्मिक मान्यताओं को अपनाकर आज यहाँ के पुरुष-स्त्रियों का सम्मान करते हैं। पत्नी भी पति को देवता स्वरुप मानकर उनका पूजन करती है।

हिन्दू स्त्री जीवन में एक बार पति का वरण करती है। वह मन, वचन व कर्म से समर्पित होकर अपने पति का जीवन भर साथ देने को तैयार रहती है। पति की मृत्यु के पश्चात् यहाँ पर पुनर्विवाह की प्रथा उच्च वर्णों में नहीं है। निम्न वर्णों में पुनर्विवाह देखने को मिल जाते हैं। विवाह के पश्चात् स्त्रियाँ अपनी ससुराल जाकर सास-ससुर की आज्ञा का पालन करती है। वह परिवार के सदस्यों के प्रति अपने दायित्वों को पूर्ण करती है। स्त्री ससुर-कुल के प्रति पूर्ण समर्पित होकर आदर्श बहू का स्थान प्राप्त करती है।

बुन्देली स्त्रियाँ परम्परागत भारतीय परिधान को धारण करती हैं, इनको आभूषणों से विशेष लगाव होता है। वे भिन्न-भिन्न तरह के परिधान व आभूषणों को धारण कर अपने सौंदर्य को अलंकृत करती है। यहाँ पर स्त्रियां स्नानादि कर सम्पूर्ण श्रृंगार करके पति की दीर्घायु की कामना करती है। श्रृंगार स्त्रियों के सुहाग का प्रतीक होता है। श्रृंगार के द्वारा स्त्री अपने पति के प्रति प्रेम भावों को व्यक्त करती है।

सास-ससुर अपनी बहू को गृह लक्ष्मी मानते हैं। विवाहोपरान्त बहू सर्वप्रथम जब अपनी ससुराल में प्रवेश करती है तो सासो माँ बहू को लक्ष्मी स्वरुप मानकर उसके चरणों को धोकर चरणामृत सम्पूर्ण घर में छिड़कती है। जिससे लक्ष्मी जी सदा उनके घर में निवास करें। बहू को गृह लक्ष्मी मानकर उसका सभी सम्मान करते हैं।

पति घर के बाहर कार्यों को करता है। पत्नी घर के अंदर कार्यों सम्हालती है। पुरुष वर्ग खेती, व्यवसाय एवं नौकरी आदि कर धन कमाने में जुटे रहते हैं। स्त्रियाँ गृहस्थी की बागडोर सम्हालकर घर को व्यवस्थित करती है।

पति-पत्नी के प्रेम-संबंधों से बच्चों का जन्म होता है तथा बच्चों के जन्म से परिवार का निर्माण होता है। पति-पत्नी दोनों मिलकर अपने बच्चों का पालन-पोषण करते हैं। पति-पत्नी के संबंधों में

किसी कारणवश अगर तनाव की स्थिति आ जाती है, तो स्त्रियाँ धैर्य व बुद्धि से काम लेती हैं। वे कठिन से कठिन स्थिति का सामना करने को तैयार रहती है। वे अपने माता-पिता का आश्रय लेना उचित नहीं समझती है। ससुराल में ही रहकर समस्याओं के समाधान का हल खोजती हैं। यहाँ की स्त्रियों की यह विशेषता होती है कि वे अशिक्षित होकर भी तनाव की स्थिति में पति का साथ नहीं छोड़ती है। पति उन्हें चाहे जितना प्रताड़ित क्यों न करे? नारी हृदय की विशालता के कारण अपने पति के कृत्यों को माफ कर देती है। यहाँ की स्त्रियाँ सुख-दुःख की प्रत्येक स्थिति में बफादारी से जीवन भर पति का साथ देती है। आवश्यकता पड़ने पर अपने पति व उसके परिवार के लिए प्राणों का बलिदान तक करने को तैयार रहती है। गरीबी की स्थिति में स्वयं का पेट काट कर अपने परिवार का पेट भरती है। बुन्देलखण्ड की स्त्रियाँ त्याग व बलिदान की प्रतिमूर्ति है। इस संबंध में बुन्देलखण्ड में जन्मे राष्ट्रकवि मैथलीशरण गुप्त जी की यह पंक्तियां चरितार्थ -

"अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी, आँचल में दूध आँखों में पानी ।।"

बुन्देलखण्ड में अशिक्षा, बेरोजगारी व आर्थिक कमी के होते हुए भी स्त्रियाँ व पुरुषों के (पति-पत्नी) संबंधों में तनाव की स्थिति बहुत ही कम देखने की मिलती है। उपरोक्त समस्याओं के होते हुए भी कन्धे से कन्धा मिलाकर साथ कार्य करने की जागरुकता देखने को मिलती है। दोंनों मिलकर कार्य करते है, तो आर्थिक स्थिति भी सुदृढ़ होती है। आर्थिक कमी के कारण होने वाला मानसिक तनाव भी काफी हद तक कम होता है। जिससे परिवार में सुख-शान्ति व समृद्धि आती है। स्त्रियां घर गृहस्थी के कार्य करने के पश्चात् बाहर के कार्यों को सुचारु रुप से निवर्हन करती है। पुरुषों की अपेक्षा यहाँ की स्त्रियां अधिक कर्मठ होती है। पुरुष वर्ग गपशप, तास खेलने एवं चौपड़ खेलने में ही अपना समय बिता देते हैं। स्त्रियाँ समय की पाबंद होती हैं। सारे दिन काम-काज में व्यस्त रहती हैं। अतः हम कह सकते हैं कि बुन्देलखण्ड में आज भी पति-पत्नी के बीच आदर्श संबंध देखने को मिलते हैं।

३. आवास-प्रवास-

बुन्देलखण्ड के ग्रामीण अंचल में आवास प्रायः कच्चे एवं पक्के दोनों प्रकार के होते हैं। सम्पन्न परिवारों के घर पूरे पक्के होते हैं। इन घरों को चौकिया कहते हैं। सबसे पहले घरों में पौर, फिर बरामदा, फिर आँगन, आँगन के चारों तरफ दालान, दालान में नक्कासीदार खम्बे होते हैं। आंगन के

बीच वाले कमरे को मचकौरिया या मझरिया कहते हैं। एक चौका (रसोई) का घर होता है। कमरे घर का पर्यायवाची शब्द है। यह कच्चा होता है। इसे मिट्टी द्वारा पोता जाता है। एक पूजा का कमरा होता है। इसे पूजा वाला घर कहते हैं। अनाज भरने के कमरे को बन्डा कहते हैं। एक से अधिक मंजिल वाले मकान के ऊपर कमरे को अटरिया कहते हैं। नहाने व पीने का पानी रखने के स्थान को घिनौची व जलघरा कहते हैं। आँगन के बीचों-बीच तुलसी का घरुआ बना रहता है, जिसमें लगा तुलसी का पेड़ सारे परिवार की आस्था का प्रतीक होता है।

गाँवों के निवास वाले घरों में शौचालय नहीं होते हैं। पशु-ग्रह में शौचालय बनाने की परम्परा है। आवासों के साथ-साथ ग्रामीण घरों में पशु-गृह अवश्य होता है। यह घर के सामने, घर के बगल में या कुछ दूरी पर होता है। इसी में शौचालय, पानी की व्यवस्था, जानवरों का भूसा भरने के लिए कच्चे घर, लकड़ी, कंडा रखने के लिए जगह होती है। इसमें जानवरों के लिए खुला आंगन एवं खपरैल घर बने रहते हैं। इसे चौपयारी कहते हैं।

निज निवास के बाहर चौपाल का चबूतरा होता है। रात के समय आस-पास के घरों के बृद्ध व्यक्ति बैठकर भजन कीर्तन या रामचरित मानस की चौपाईयों का व्याख्यान करते हैं। मानस को यहाँ आज भी लोग रामायण कहते हैं। सावन के माह में चौपालों में लोग 'आल्हा' चैत, क्वार की नवरात्रि में अचरी गाते हैं। कभी-कभी विद्वानों व सन्तों द्वारा प्रवचन होते हैं।

इस क्षेत्र में वृद्ध ग्रामीण जन गर्मी के मौसम में बाहर, स्त्रियां छतों पर, बृद्ध महिलायें आंगन में लेटती हैं। यहाँ पर किसी का कमरा निश्चित नहीं होता है। जिसको जहाँ पर जगह मिल जाती है। वहीं पर वह व्यक्ति अपने बिस्तर लगाकर लेट जाता है। बच्चों की पढ़ाई लिखाई के लिए भी कोई कमरा (स्टडी रुम) नहीं होता है। प्रायः संयुक्त परिवार होते हैं। सभी मिलजुल कर साथ रहते हैं। सादा जीवन यापन करते हैं। परिवार के मुखिया के अनुरुप सभी अपनी आकांक्षाओं की पूर्ति कर पाते हैं। व्यक्तिगत तौर पर किसी कार्य को नहीं किया जा सकता है। सभी सदस्य एक दूसरे से बंधे रहते हैं। घर में मुखिया के निर्णय से ही घर का संचालन होता है। आवास आदि मुखिया के निर्णय पर ही बनवाये जाते हैं। घर के सारे सदस्य मुखिया का सहयोग करते हैं।

४. दिनचर्या- बुन्देलखण्ड में सूर्योदय के पूर्व जाकर गृहणियाँ दरवाजे के बाहर उरैन डालती हैं। उरैन डालना सूर्य भगवान के स्वागत का प्रतीक है। उरैन डालने से पूर्व बाहर झाड़ू बुहारकर या रंगोली बनाते हैं। उस पर हल्दी-अक्षत चढ़ाते हैं। यह इस बात का भी द्योतक है कि परिवार आगंतुकों के स्वागत के लिए तैयार है।

घर के स्त्री-पुरुष घर के बाहर शौच क्रिया के लिए जाते हैं तथा लौटकर नीम या बबूल की दातून तोड़कर उसका ब्रुश बनाकर मुँह साफ करते हैं। महिलाएं पानी भरती हैं, उपले बनाती हैं, मठा बनाती हैं। स्वयं एवं भगवान को स्नानादि करवा कर भोजन की व्यवस्था में जुट जाती हैं। पुरुष नित्यक्रिया से निवृत्त होकर गाय-भैंस के चारे-पानी की व्यवस्था करते एवं दूध दुहते हैं इसके बाद खेती के कार्यों में जुट जाते हैं।

यहां के लोग दैनिक चर्या से निवृत्त होकर मंदिर, दिवाले एवं घर में तुलसी के वृक्ष पर जलदान कर हनुमान जी या देवी जी का श्रद्धा पूर्वक स्तवन करते हैं। स्त्रियों द्वारा सांयकाल के समय घर, पूजाघर, मंदिर एवं देवताओं के चबूतरों पर आटा के दीपक जलाना पुण्य कार्य माना जाता है। प्रतिदिन महिलायें भोजन के प्रथम थाल में प्रत्येक भोज्य पदार्थ में तुलसी डालकर ठाकुर जी को भोग लगाती हैं। यह प्रसाद परिवार के सभी सदस्यों को प्रेम पूर्वक बांटा जता है। लोकदेवताओं के चबूतरों पर यहां प्रति दिन दीपदान किया जाता है। महिलायें भजन कीर्तन करती हैं। सोमवती अमावस्या पर पीपल की १०८ परिक्रमा लगाकर महिलायें फल, प्रसाद एवं दक्षिणा देकर ब्राह्मण को भोजन कराती है। कुँवारी लड़कियाँ आटा के शिवलिंग को प्रत्येक संध्या में शंकरजी के मंदिर में रखती हैं।

इस क्षेत्र की महिलायें घर-गृहस्थी में लीन रहती हैं। कृषि कार्य के समय खेतों में अपना शारीरिक योगदान देती हैं। पुरुष खेत-खलिहानों में कार्यरत रहते हैं। कृषि कार्य से फुर्सत होकर यहाँ के वृद्ध सनई, मूंज और डाब की रस्सियों से जेजम एवं सलीता बुनते हैं। दुकानदार दुकान चलाते हैं। शिल्पकार अपने दरवाजे के बाहर शिल्पकारी में दिन व्यतीत करते हैं।

कृषकों की आशा का माह चैत्र होता है। इस माह में फसलों की कटाई का कार्य प्रारम्भ होता है। खेत काटने को चैत काटना भी कहते हैं। फसल काटने वालों को चेतुआ कहते हैं।

बुन्देलखण्ड में पर्दा प्रथा का प्रचलन तो है, लेकिन कुछ समाजों में इसका प्रचलन अधिक है। गुर्जर

जाति की स्त्रियाँ रास्ते में निकलती हैं तो बाहन पर कपड़ा तानकर पर्दे लगाये जाते हैं। यहाँ पर प्रत्येक घर में स्त्रियाँ अपने से बड़ों को पर्दा करती हैं। कुर्मी बाहुल्य गाँवों में अपनी सास को भी पर्दा की जाती है। बहू अपनी सास के सामने अपने पति से वार्तालाप नहीं कर सकती है।

अतिथियों के आगमन पर पानी के साथ गुड़ की ढेली दी जाती है। शर्बत एवं मिर्चवानी भी दी जाती है। मिर्चवानी को बनाने के लिए कालीमिर्च, काला नमक एवं चीनी को पानी में घोलकर तैयार करते हैं। यह गर्मियों में शीतलता प्रदान करता है। सर्दियों में गुनगुने दूध के साथ गुड़ देने की परम्परा है। आधुनिक परिवेश में यहाँ पर चाय पीने का प्रचलन भी काफी मात्रा में बढ़ गया है। यहाँ पर ग्रामीण जन चाय निश्चित मात्रा से अधिक पीते हैं। इस क्षेत्र में जब किसी परिवार में बेटी या बहू की विदा होकर आती है, तो उसके साथ पक्वानों से भरकर डलिया आती है। यह पक्वान नाईन द्वारा रिश्तेदारों एवं पड़ोसियों के यहाँ भिजवाये जाते हैं।

बच्चे स्कूल से आकर अपना समय विभिन्न खेलों में व्यतीत करते हैं तथा माता-पिता के साथ घरेलू कार्यो में भी हाथ बँटाते हैं। यहाँ के प्रचलित खेल गुल्ली-डण्डा, अंटी, कबड्डी, चपेटा, चंदा पउआ एवं तास आदि हैं। कृषक कृषि कार्य से फुर्सत होकर चौपालों में चबूतरों पर बैठकर सांयकाल का समय व्यतीत करते हैं। यहाँ पर गाँव से सम्बन्धित चर्चायें होती हैं। सर्दियों में अलाव पर चाय की हण्डी चढ़ा दी जाती है। वहीं पर चाय बनती है। सभी लोग एक-एक लोटा चाय बड़े चाव से पी जाते हैं। ये चौपालें देर रात तक लगी रहती हैं। इनमें गाँव, आस-पास के गाँव व घर-परिवारों से सम्बन्धि त चर्चायें होती हैं। गाँव का प्रधान ग्रामीण समस्याओं के निदान का उपाय खोजता है। सभी की सलाह लेकर गाँव की उन्नति के लिए कार्य करता है। चौपालों से यह पता चलता है कि गाँवों के लोगों में साम्प्रदायिक एकता व सौहार्द की भावना कूट-कूट कर समाहित रहती है। इन चौपालों में सभी जातियों के लोग आकर बैठते हैं। यही बुन्देलखण्ड ग्रामीण जीवन की दिनचर्या है।

५. भोजन और व्यंजन - भोजन और व्यंजन के संबंध में कहा जाता है कि - **जैसो अनजल खाइये, तैसोइ मन होय। जैसो पानी पीजिये, तैसी बानी होय।।**

यह कहावत शत-प्रतिशत सत्य है। जिस क्षेत्र की जैसी प्रकृति होती है। वहाँ के निवासी भी उसी प्रकृति में ढले रहते हैं। जिस फसल की पैदावार जहाँ होती है। वहाँ के व्यक्ति का वही भोजन होता

है। अतिथि आगमन पर स्वागत में क्षेत्र विशेष की चीज ही खिलाई जाती है। जैसे कि बुन्देलखण्ड में महुआ, बेर और गुलगुच समूचे अंचल में प्राप्त होता है। इस अंचल के बहुत बड़े भाग गुड़ाने (गोंडवाने) को इन तीन चीजों के बहुतायत से जाना जाता है। इस संबंध में यह कहावत चरितार्थ है -

मउआ मेवा बेर कलेवा गुलगुच बड़ी मिठाई। इतनी चीजें चाहो तो गुड़ाने करो सगाई।।

महुआ और बेर इस अंचल के प्रमुख वृक्ष हैं। इसीलिए महुआ को मेवा, बेर को कलेवा (नाश्ता) और गुलगुच को सर्वश्रेष्ठ मिठाई का गौरव प्राप्त है। बुन्देलखण्ड का लोकप्रिय नाश्ता (कलेऊ) सत्तू है। यहाँ के भोले-भाले गाँवों के लोग सत्तू गर्मी के दिनों में बड़े प्रेम से खाते हैं। गरीब एवं श्रमिक वर्ग के लोग इसमें गुड़ या नमक डालकर तथा अमीर घरों में देशी घी या चीनी डालकर खाते हैं, यह कलाकंद की समकक्षता में आता है। ग्रामीण जन जब कहीं बाहर यात्रा पर या लड़की के लिए घर-वर खोजने को जाते हैं तो सत्तू बाँधकर ले जाते हैं। भूख लगने पर पानी पीते एवं सत्तू खाते हैं।

वजीर नामक लोक कवि ने लिखा है - " **सतुआ लगै लुचई सो प्यारो, कलाकंद कौ सारौ।**"

भोजन के सम्बन्ध में कुछ और लोक मान्यतायें बुन्देलखण्ड में प्रचलित हैं।

चैत मीठी चीमरी वैशाख मीठो मठा । जेठ मीठी डोवरी असाढ़ मीठे लटा ।।

सावन मीठी खीर-खाँड़ भादों भुजे चना । क्वाँर मीठी काँकरी ल्याव कोरी टोर के ।।

कातिक मीठी कुदई दही डारो मोर कें । अगहन खान जूनरी भुर्रा नीबू जोर कें ।

पूस मीठी खीचरी गुर डारो फोर कें । माँव मीठे पोंड़ा वेर फागुन होरा वालें।

समै-समै की मीठी चीजें सुगर खवैया खावें।

" लोक में भोजन संबंधी और भी अनुभव मान्यताओं की तरह स्वीकृत हुए हैं, जैसे पुराना धान और नया घी भाग्य से प्राप्त होता है-'**धान पुरानो घी नओ उर कुलवंती नार,** जे तीनों तब पाइये जब प्रसन्न करतार। गकरियां (छोटी-छोटी पनपथू रोटियाँ जो अंगरों पर सेंकी जाती हैं।) गुड़ और घी के साथ खायी जाती हैं -"**खाई गकरियाँ गुर घी से, डुकरा लग गओ हमारो घी सें।**" भोजन के बाद तुरंत पेशाब करने से व्यक्ति बीमार नहीं पड़ता -'**खाकें मूतै सोबै बायें। ताके बैद कबहु ना जायें।**' इसी तरह भोजन के पहले बेर और बाद में गन्ना लाभदायक होता है। '**मूँके बेर अघाने पोंड़ा।**' (अघाने भोजन से तृप्त होने के बाद) भूख लगने पर चना भी चिरौंजी जैसा लगता है। '**भूख**

में चना चिरौंजी।" जो पच जाय वही खाना चाहिए- **'पचै सो खावै रुचै सो बोले।'** कच्चे चावल की कनी भाले की नोक की तरह हानिकारक होती है -**'चाँवर की कनी उर भाला की अनी।'** बहुत सारी बातें हैं, पर प्रमुख तो यह है कि भोजन का असर बहुत अधिक होता है- **'जीकौ खाइवे भतवा, ऊकौ गाइये गितवा।'** जिसका अन्न खाय, उसकी प्रशंसा करे। यहाँ तक कि **'जीकौ खाब, ऊकौ बजाबै।'** अर्थात् भोजन की निभाना पड़ती है। प्रकट है कि व्यक्ति पर इतना प्रभाव इस तथ्य का साक्षी है कि लोक और लोक संस्कृति भी उसके प्रभाव से अछूते नहीं रह सकते हैं।"[१]

जो कच्चा भोजन यहाँ विवाहों में परोसा जाता है प्रमुख त्यौहारों पर भी बनता है उसे समूंदी कहते हैं। इसमें दाल (चना की), कढ़ी, भात, बरी, मगौरा, पापर, कचरिया, गोरस, फुलका (कहीं-कहीं पर माड़े) भी चलते हैं। बूरा शक्कर तथा प्रचुर मात्रा में घी परोसा जाता है। यदि इसके साथ लुचई (पूड़ी) भी परोस दी जाये तो इस भोजन को मिरजापुरी कहते हैं। **"सम्पन्न घरों में बासी लुचई तथा अमियां कौ अथानों (पूड़ी, आम का आचार) प्रिय नाश्ता है। प्रियजनों तथा मेहमानों के लिए 'ताती जलेबी' 'लडुआ' उत्कृष्ट नाश्ता माना जाता है।"[२]**

बुन्देलखण्ड में विशेष पर्व व अमावस, पूनों को अरहर की दाल व एकादशी पर चावल बनाना निषेध है। अमावस पूनो धुली दालें या सिंवई बनाने की परम्परा है। अन्य व्यंजनों में थोपा, पछमार, आंवरिया, हिंगोरा, डुबरी, लटा, मुरका, तेलू, मुसेला, गकरियां, भाजी, लप्सी, फरा, लेवा, माड़े एवं मुर्रा आदि ऐसी चीजें हैं जो आज के समय प्राप्त करना जटिल है।

बुन्देलखण्ड में बनाये जाने वाले प्रमुख बुन्देली भोजन निम्न हैं -

१. कालौनी - यह भोजन के विविध व्यंजनों का मिश्रण है। इसमें चने की दाल, चावल, कचरिया, पापड़, खीचला, मिर्च, बरा, बूरा शक्कर, देशी घी का प्रयोग करते हैं।

२. माड़े- यह मैदा की अत्यन्त पतली झोलदार रोटीनुमा होता है। इसको देशी घी एवं बूरा के साथ 'मलीदा' (मीड़कर) बनाकर खाते हैं।

३. फुलका- सफेद गेहूँ (पिसी) की बड़े आकार की मुलायम पतली फूली रोटी को कहते हैं।

४. बरा - बुन्देली कच्चे भोजन में यह व्यंजन बड़े ही लोकप्रिय है। यह उड़द की दाल को पीस कर

---

१. बुन्देलखण्ड की लोकसंस्कृति का इतिहास - नर्मदा प्रसाद गुप्त (पृ० संख्या-२१८-२१६)

२. बुन्देलखण्ड की लोकसंस्कृति का इतिहास - नर्मदा प्रसाद गुप्त (पृ० संख्या-६५)

बनाये जाते हैं।

५. पछयावर या गोरस- शादी ब्याह में कच्चे खाने (पंगत) में इसका विशेष प्रचलन है। ताजा छना हुआ मट्ठा, दही, गुड़ किराना (गरी, चिरौजी, पिश्ता, मखाना) कपूर की पुट और थोड़ी सी सोंठ से मिलकर बना होता है। इसे चावल या सिमई के साथ प्रयोग करते हैं। पछयावर में गुड़ की जगह चीनी, खोवा तथा रवेदार घी डाल दें तो इसे श्रीखण्ड कहते हैं।

६. फरा- यह कनक (गेहूँ का आटा) से बनते हैं। लम्बे गोल होते हैं।

७. लप्सी- आटे को भूनकर गुड़ के गरम घोल में डाल दिया जाता है। थोड़ा खदकने के पश्चात् उसमें घी डालकर एक थाली में बर्फी की तरह जमा दिया जाता है। गरी, चिरौजी, इलायची आदि डालने पर इसका स्वाद और भी बढ़ जाता है।

८. मठा की भरवां मिर्च- हरी मिर्च मसाले से भरकर मट्ठे में डुबाकर संजोया जाता है। फिर इसे सुखाते हैं। समूंदी व्यंजन परोसने से पूर्व इन मिर्चों को तेल में तल लिया जाता है।

९. थोपा- कड़ाही में गरम तेल में हींग जीरा बेसन प्याज नमक मिर्च मसाला डालकर थाली में वर्फी की तरह जमा देते हैं।

१०. हिंगौरा, लपटा- बेसन और पानी के घोल को कढ़ीनुमा पकाकर उसमें हींग का बघार लगाकर बनाया जाता है।

११. औरिया (आंवरिया)- सूखे आँवलें की कलियों को भिगोकर फूल जाने पर उसको मसलकर एक प्रकार कढ़ी के ढंग से बनायी जाती है।

१२. खीचला- यह साबूदाना या चावल को पीसकर पानी के साथ उबाल कर नमक,मिर्च जीरा आदि मसाले डालकर कपड़े पर गोल-गोल बनाये जाते हैं।

१३. मीड़ा- पानी में हींग घोलकर बेसन को पानी से भिंगोकर रोटी बनाकर फिर घी में भूनकर पानी या मट्ठा में पका लेते हैं नमक सहित धनियां, मिर्च, अदरक डाल देते हैं।

१४. महेरी या महेरा- यह एक लोकप्रिय बुन्देली व्यंजन है। जो एक प्रकार का दलिया होता है। इसे पानी की जगह मट्ठे में पकाया जाता है। महेरी गेहूँ, चावल, कुदई एवं ज्वार के दलिये से बनती है। इसको दूध और गुड़ के साथ खाया जाता है।

१५. बरी – लोक जीवन में यह बहुत उपयोगी साग है। बरियाँ प्रत्येक घर में मूंग दाल, उरद दाल या कुम्हड़ा से तैयार की जाती हैं।

१६. आर्से- इसे सुकपुरी भी कहते हैं। यह गेहूँ के आटे को गुड़ के घोल में गूंथकर घी का मुवा लगाकर एवं उसमें मेवा आदि डालकर पूड़ीनुमा बनाते हैं। इसके ऊपर मेवे से कलाकृतियां भी बना दी जाती हैं। बाजरा की मीठी पूड़ी को पुआ कहते हैं।

१७. गुलगुला- गेहूँ के आटे को गुड़ के घोल में घोलकर लेई जैसा पतला करके उसमें सौंफ, गरी एवं खाने वाला सोडा डालकर बनाये जाते हैं।

१८. तेलू- गाय, भैंस ब्याने (प्रसूता) होने पर उसके तुरंत तेल युक्त दूध को तेलू कहा जाता है। इस दूध में गुड़ डालकर पकाया जाता है।

१९. भाजी- मूंग की दाल में चना की हरी पत्ती (भाजी) को मिश्रित कर पकाया जाता है।

२०. भुर्रा- यह भाजी (चना पत्ती) को सुखाकर उसे पालक मैथी की तरह बनाते हैं।

२१. मुसेला- मूंग के खड़े दाने पानी में भिगोकर फूलने के लिए रख दिये जाते हैं। इसी प्रकार वौहरियां बनती हैं यह गेहूँ के दानों से बनी होती है। इसमें मूंग की दाल की जगह गेहूँ प्रयोग में लिया जाता है।

२२. ढुबरी- यह महुआ को पानी में उबालकर दलियां की तरह पका कर बनाया जाता है। उसमें चिरौजी, गरी, किशमिश भुरक देते हैं। इसे दूध के साथ भी लेते हैं। यह व्यंजन पौष्टिक और स्वास्थ्य के लिए लाभदयक होता है। म.प्र. के बुन्देली क्षेत्रों में यह भोजन बड़ा ही प्रचलित है।

२३. लय और मुरका – भुने महुओं को भुने चनों के साथ कूट लिया जाता है। इस मिश्रण को गुड़ या नमक के साथ खाते हैं। इन व्यंजनों को प्रायः नाश्ते के रुप में प्रयोग किया जाता है।

२४. तिलका- भुनी तिली में गुड़ या चीनी डालकर कूट लिया जाता है। यह एक प्रकार की गजक है।

२५. समूदी रोटी- इसमें चने की दाल, भात, बरा, कढ़ी, पापड़ और गोरम, पिसी शक्कर, देशी घी, रोटी, फुलका, पछयावर आदि आते हैं। यह बुन्देली लोक जीवन का विशिष्ट भोजन है।

२६. ओकंचन- (घेघा) भुने-चने को पीसकर मसाला नमक डालकर सिमई मिलाकर पानी में पका कर यह व्यंजन तैयार होता है।

२७. **बिरचुन-** बेरों को सुखाकर और उन्हें कूट छानकर बिरचुन तैयार होता है।

२८. **पान, फूल, गुना-** सदौरी, पुटरिया, गुझिया, तिखूटा, पिराके (एक प्रकार की कसार भरी काफी बड़ी गुजिया) ये शादी ब्याह के पकवान हैं।

२६. **खाखड़ा, पुआ, पुरी-** ये व्यंजन पकवान के अंतर्गत आते हैं। खाखड़ मैदा की पतली बड़ी पूड़ी होती है।

३०. **लोल लुचई-** यह मैदा की बनाई जाती है। आटे को घी में मीस लेते हैं, फिर इसको दूध में सानकर शक्कर या गुड़ के साथ मेवा डालकर मोटी सी बेलकर गौंठ दी जाती है। रोटी पर चौक या सतियां बनाकर मंदी आंच पर सेंक लेते हैं।

३१. **सन्नाटा-** इसको रायता या मनफेस भी कहते हैं। मट्ठे में राई, हींग का बघार देकर नमक मिर्च डालकर पंगतों में परसा जाता है।

३२. **सुरा और बल्ला-** आटे में मोयन देकर माड़ लिया जाता है और हाथ से छोटे-छोटे गोल पेड़े जैसे बनाकर उनके बीच में उँगुली से दबा दिया जाता है। बल्ला होली का व्यंजन है, सुरा महालक्ष्मी पूजन पर बनाये जाते हैं।

३३. **ज्वार, बाजरा पनपथू-** यह बुन्देली लोक जीवन का प्रिय भोजन है। यह ज्वार, बाजरा या चुनी (मूंग की दाल का झूरन) की हाथ से बनी रोटियां होती हैं।

३४. **पंचामृत-** पंचामृत ताजा दही, तुलसी की पत्ती , शक्कर, शहद, घी, गंगाजल, मेवा डालकर बनाते हैं।

३५. **पंजीरी-** यह कनक को देशी घी में भून कर उसमें शक्कर एवं चिरौजी मिलाकर बनाया जाता है। यह 'सत्यनारायण भगवान' की पूजा में भोग के लिए विशेष बनायी जाती है।

३६. **होली के व्यंजन-** गुजियाँ, झार के लड्डू, पपरिया।

३७. **चीला-** यह मीठे एवं नमकीन दो प्रकार के बनते हैं। मीठे चीले में आटा को चीनी या गुड़ के घोल में मिश्रित कर उसमें सौंफ, गरी, सौंठ, चिरौंजी आदि डालते हैं। नमकीन चीले में हींग, नमक, अजवाइन, मिर्च, हरी धनियां आदि डालकर बनाये जाते हैं।

३८. **बिढ़ई-** यह यहाँ के कच्चे भोजन की कचौड़ी है। इसमें उरद की पिट्ठी भूनकर उसमें गरम मसाला नमक, धनियाँ डालकर उसे आटे की लोई में भरकर बेल दी जाती है और फिर तवे वर सेंक ली जाती है। बिढ़ई हरे चने को पीसकर आटे के साथ मिलाकर भरकर भी बनाई जाती है। यह यहाँ के लोकप्रिय भोजन हैं। जो कि प्रत्येक घर में बनाये जाते हैं।

६. लोकाचार -

प्रत्येक जनपद या क्षेत्र विशेष के अपने आचार एवं लोकरीतियाँ होती हैं। जो कि पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित होती हैं। आचार किसी भी संस्कृति के यथार्थ चित्र होते हैं। किसी भी क्षेत्र के आचार को खोजा जाये तो वह वहाँ के जन आचार में मिलेगा। जिस युग में जो आचार आचरित होकर प्रस्फुटित होते हैं वे उस युग की संस्कृति रचते हैं। कलाकृतियों द्वारा जो चित्र-चित्रित होते हैं- जैसे युद्ध के चित्र, घोड़ो के चित्र, शिकार करना आदि चित्रों द्वारा उस युग के आचार उद्‌घटित होते हैं जबकि ये निष्प्राण होते हैं। ये चित्र उस युग के आचारों से अवगत कराते हैं।

लोकाचार का जन्म विशेष परिस्थितियों में होता है। यह लोकोपयोगी होने पर ही लोकगृहित होकर लोकाचार बनता है। यदि यह एक वर्ग, समाज और राष्ट्र के लिए हितकर है, तो दूसरे के लिए अहितकर भी हो सकता है।

"महाभारत के शांति पर्व में (२५६/१७-१८) में कहा गया है कि ऐसा कोई भी आचार नहीं है, जो सर्वदा सब लोगों के लिए समान हितकर हो। यदि एक आचार को स्वीकार किया जाय, तो दूसरा उससे भी श्रेष्ठ नजर आता है और वह किसी तीसरे आचार का विरोध करता है"१ -

न हि सर्वहितः कश्चिदाचारः सम्प्रवर्तते । तेनैवान्यः प्रभवति सोऽपरं बाधतेपुनः ।।

यह आचार लोकजीवन के आधुनिक समय में आवश्यक है, क्योंकि इनमें अतीत की झांकी और भविष्य के संकेत प्राप्त होते हैं। वास्तविक रुप में देखा जाये तो लोकाचार, लोकसंस्कारों, लोकरीतियों और लोकवर्जनाओं के समुच्चय हैं, इसी कारण वे दीर्घजीवी होते हैं।

इनका लोप नहीं होता, जितनी तेजी से वस्ताभरण एवं भोजन-पेय का होता है। यह लोकाचार आज भी रुढ़ियों के रुप में स्थिर है। शताब्दियों में इनमें थोड़ा बहुत परिवर्तन आता है। युग के बदलने पर लोकाचार बदलता है।

विष्णुधर्मोत्तर पुराण में लिखा है कि सभी लक्षणों से युक्त होने पर भी पुरुष यदि आचाररहित है, तो उसे न तो विद्या की प्राप्ति होती है और न किसी अभीष्ट की (३/२५०/४)

आचारवान को स्वर्ग, कीर्ति, आयु, सम्मान और सभी लौकिक सुख प्राप्त होते हैं (३/२७१/१)

---

१. बुन्देलखण्ड की लोकसंस्कृति का इतिहास - नर्मदा प्रसाद गुप्त (पृ० संख्या-१५६-१६०)

इसीलिए व्यक्ति का सदाचारी होना परमावश्यक है।

बुन्देलखण्ड में समाज की आचारिक पृष्ठभूमि एवं उनकी दैनिक गतिविधियों को बारीकी से देखकर तथा समझकर ही उनके लोकजीवन का अध्ययन किया जा सकता है -

"लोकाचार में लोक विश्वासों की महत्वपूर्ण भूमिका है। लोकमानस में परंपरा से पोषित यह लोकविश्वास शकुन, अपशुकन, टोटका-टोना अथवा मनौतियों के रुप में कदम-कदम पर मिलते हैं। इनका दार्शनिक वैज्ञानिक पक्ष जानने की जिज्ञासा बिना उन्हें मानना पारंपरिक अनिवार्य बन गया है। इन्हें पढ़े लिखे लोग ढकोसला कहते हैं। जबकि आज आवश्यकता है कि इन लोक-विश्वासों का वैज्ञानिक अनुशीलन किया जाये तथा उन्हें शिक्षित जनों में प्रसारित किया जाये।"२

बुन्देलखण्ड में निम्नलिखित लोकाचार प्रचलित हैं -

१. शुभ-सगुन से संबंधित घटनाये -

१. पानी का भरा घड़ा मिलना
२. वेश्या का प्रातःकाल दर्शन करना
३. पथ में मुर्दा मिलना
४. प्रातःकाल बछड़े को दूध पिलाती गाय दिखना
५. प्रातःकाल नीलकंठ के दर्शन प्राप्त होना
६. नेवले के दर्शन प्राप्त होना

२. अपशकुन से संबंधित घटनायें-

१. बिल्ली सर्प द्वारा रास्ता काटना
२. हिरन द्वारा रास्ता काटना
३. खाली घड़ा मिलना
४. सर्प द्वारा फुफकार मारना
५. किसी कार्य के लिए जाते समय छींक होना
६. एक आँख का व्यक्ति मिल जाना

३. टोना-टोटका -

१. मुँह में छाले होने पर इतवार या बुधवार को रास्ते में खड़े होकर मट्ठे का कुल्ला करने से छाले ठीक हो जाते हैं।

२. आँख में गुहेरी होने पर आस-पास किसी के घर में छोटा सा पत्थर फेंक दिया जाता है, उस घर का सदस्य अगर पूछे यह क्या है (पत्थर क्यों फेंका) तो कह दिया जाता है गुहेरी है ऐसी मान्यता है कि यह गुहेरी उस घर के किसी न किसी सदस्य को चली जाती है।

---

२. बुन्देलखण्ड का लोकजीवन - अयोध्या प्रसाद गुप्त (पृ० संख्या-६७)

३. आँख आने पर नीम का झौंका घर में व्यक्ति के हाथ में, या कपड़ो में खुरस दिया जाता है इसके किसी दूसरे व्यक्ति को आँख में संक्रमण नहीं होता है।

४. इस क्षेत्र में किसी के घर लड़का पैदा होने पर कानी लड़की होने की सूचना दी जाती है जिससे लड़के को हाय (नजर) न बैठै। लोग स्वतः ही समझ जाते हैं कि कुल के दीपक का आगमन हुआ है।

५. बच्चों को सूखा रोग होने पर ब्रह्म-मुहूर्त में किसी बर्तन में ताजे जल से स्नान करवाने के पश्चात् उस जल में कोयला या हल्दी डालकर उसे किसी पौधे में डालने से पौधा सूखता जायेगा, बच्चा स्वस्थ्य होता जायेगा।

६. यदि किसी बालक को नजर लग जाये तो राई-नोन, खड़ी लाल मिर्च, चापर उसारकर अपने दोनों पैरों के बीच से निकाल आग में छोड़ने पर नजर उतर जाती है।

७. पीलिया होने पर तीन बुधवार या इतवार ओझा के यहाँ बिना टोके बर्फी लेकर जायें। तीन बार झाड़ने पर पीलिया गायब हो जाता है।

बुन्देलखण्ड में अनेकों टोने-टोटके का रिवाज है। ऐसे ही सिरदर्द, चौमासे के रोग (बरसात के रोग) चुर्रा चढ़ने पर एवं बुखार आदि आने पर अनेकों टोने प्रचलित हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी इनका खूब प्रचलन है। गाँवों में बच्चा पैदा होने पर तुरंत तंत्र-मंत्र द्वारा रोगों को दूर करने का प्रयास किया जाता है।

४. भोजन से संबंधित लोकाचार- भोजन से संबंधित रीतियों में प्रमुख है विवाह पंगत या ज्यौनार के समय गारी गाना। महिलायें वर के पिता, मामा, फूफा-बहनोई, बहन आदि पर हास्य व्यंग्यों की चोट करती है। गारियां गाने पर बुलौआ लगाया जाता है। बुलौआ के पश्चात् बताशे बाँटे जाते हैं। वर पक्ष के समधी बताशा समधिन तक ज्यौना प्रारम्भ होने से पूर्व पहुँचा देते हैं। इन्हें गारियों के बताशा कहकर भेजा जाता है। बताशा पहुँचाना गारी सुनने की स्वीकृति होते हैं। गारी की गायिकाओं के लिए व्यंग्य-वचनों का (बताशा) मधुर प्रतीक है।

१. स्त्रियाँ पहली रोटी गाय के लिए निकाल देती हैं।

२. गर्म तवा पर पानी नहीं डाला जाता, क्योंकि प्राचीन मान्यता है कि तवा पर छींटे डालने से भाई का खून छनकता है।

३. घर में किसी सदस्य की मृत्यु होने पर शुद्धता के दिन बिना पकौड़ी वाली कढ़ी (खाडयी कढ़ी) बनाई जाती है।

४. तबे को चूल्हे से खाली (रोटी के बिना) नहीं उतारा जाता है।

५. भोजन बनने के पश्चात् चूल्हे को ठण्डा होने पर प्रतिदिन मिट्टी से पोता जाता है।

६. सर्वप्रथम भगवान का भोग लगाकर घर के बड़े लोग भोजन करते हैं, इसके पश्चात् और सभी सदस्य। महिलायें सबसे आखिरी में भोजन ग्रहण करती हैं।

७. भगवान का भोग लगाने से पूर्व भोजन में तुलसी की पत्ती डाल दी जाती है।

५. विवाह से संबंधित लोकाचार-

१. सुतकरा जाने के पश्चात् परिवार के सदस्यों का किसी के यहाँ अंत्येष्टि आदि कार्यक्रमों में जाना वर्जित होता है।

२. लगुन होने के पश्चात् वर-वधु को नदी, तालाब आदि स्थानों पर नहीं जाने दिया जाता है।

३. छेई माटी में छेई पूजन उस माटी का पूजन है जिसके चूल्हे और परोथनी बनते हैं।

४. बुन्देलखण्ड में पूजन को होम दैवो कहते हैं।

५. करइया सिराबे में पाँच सुहागले की जाती हैं।

६. तेल चढ़ावे की रीति तिलरियाँ पहले गणेशजी को तेल चढ़ाती हैं फिर वर को तेल चढ़ाती हैं।

६. अन्य लोकाचार-

१. मध्य नक्षत्र में माता द्वारा अपने पुत्र को खीर खिलाना शुभ माना जाता हैं

२. झाडू को उल्टी रखना अशुभ होता हैं

३. कुंवारे बालक एवं बालिकाओं के पैर के नाखून नहीं काटे जाते हैं।

४. सुहागिन स्त्रियाँ पैरों की उंगलियों में बिछिया पहनती हैं, विधवा होने के पश्चात् बिछिया उतार दिये जाते हैं।

५. दक्षिण दिशा में पैर करके नहीं सोया जाता हैं

६. मलमूत्र त्याग करते समय पुरुष कान पर जनेऊ चढ़ाया करते हैं।

७. सोते हुए या लेटे हुए व्यक्ति के चरण स्पर्श नहीं किये जाते हैं।

८. व्यक्ति के घर से बाहर जाने के पश्चात् घर की सफाई (झाडू, धुलाई, नहाना) आदि कार्य नहीं किये जाते हैं।

९. ऋतुकाल में महिलाओं को चार दिन घर-गृहस्थी, भोजन पकाने आदि कार्यों से दूर रखा जाता है। ऋतुमती स्त्रियों के लिए सिर धोने के लिए रविवार तथा मंगलवार के दिन निषिद्ध होते हैं।

१०. घर में हमेशा आग बाढ़ी (दबी) रहनी चाहिए। दिन में आग, मिट्टी की बरोसी में मिट्टी के ढक्कन से ढक देनी चाहिए।

११. लड़की के जन्म के पश्चात् जब किसी बालक का जन्म होता है, तो लड़की की पीठ पूजी जाती है।

१२. विधवा स्त्री के लिए श्रृंगार वर्जित है, वह सफेद धोती, तुलसी की माला एवं चंदन का टीका माथे पर लगाती है।

१३. विवाह के समय वर के सिर पर मौर, कमर में कटार, हाथ में कंकन बाँधा जाता है। बारात की साज-सज्जा बढ़ाने के लिए निसार, पताका, बारुद, फूलों की सजावट आदि की जाती है।

१४. प्रातःकाल घर की सफाई बाहर के बाद अंदर की जाती है। रात्रि में झाडू नहीं लगाई जाती है।

१५. घर एवं घर की वस्तुओं को शुद्ध करने के लिए गंगाजल का प्रयोग किया जाता है।

१६. बुन्देली लोककथाओं (व्रतकथाओं) में धर्म के आड़ में लोकाचार की शिक्षा दी जाती हैं।

१७. नई बहू या छोटे बच्चे को यात्रा में साथ लेकर जाय तो मार्ग में नदी मिलने पर तांबे या अन्य धातु के सिक्का बहू या बच्चे पर उसार कर नदी में फेंकते हैं।

७. लोकरंजन -

प्रत्येक व्यक्ति दैनिक जीवन की भागदौड़, परेशानियों से थकित अपने तन-मन को चुश्त-दुरुश्त बनाने के लिए मनोरंजन का सहारा लेता है। मनोरंजन का वास्तविक अर्थ होता है 'मन का रँगना' जिस बस्तु या कार्य में व्यक्ति का मन रँग जाय और व्यक्ति के मन को तृप्ति प्राप्त हो जाए, वही मनोरंजन है। इनके विभिन्न प्रकार होते हैं। यह व्यक्ति की रुचि पर निर्भर होता है । मनोरंजन करने एवं समय व्यतीत (टाइम-पास) करने में काफी अन्तर होता है। मनोरंजन द्वारा भावात्मक आनंद प्राप्त होता है, जबकि समय व्यतीत (टाइम-पास) करने में अभावात्मक (संतोषजनक) आनंद की प्राप्ति होती है।

लोकमन अपनी रुचिअनुसार किसी भी मनोरंजन को चुन लेता है, तो वह लोकरंजन कहलाता है। यह वर्ग विशेष का न होकर लोक का होता है। युग परिवर्तन के साथ-साथ इसमें बदलाव आता रहता है। प्रत्येक युग की सांस्कृतिक चेतना उस युग के लोकरंजन का चयन करती है। उस युग के

अनुसार ही बच्चे, युवा एवं बृद्ध मनोरंजन का प्रयोग करते हैं।

"सामान्यतः लोकरंजन के साधनों को तीन वर्ग में विभाजित किया जा सकता है- शारीरिक, मानसिक और आत्मिक- १. शारीरिक मे शिकार, खेल,पैदल चलने की प्रतियोगिता, कुश्ती, जल क्रीड़ा, गेंदक्रीड़ा, दौड़,वन विहार,पशु युद्ध हस्ति युद्ध दोला-केलि आदि २.मानसिक में नृत्य,गीत,कथा-वाचन और श्रवण,नाटक,रास,शतरंज, जुआ,चित्रकला,कवि-समाज आदि तथा ३.आत्मिक में यज्ञ-हवन,पूजा-पाठ,तीर्थ-यात्रा आदि परिगणित होते है।

भारतीय लोकरंजन की प्रमुख विशेषता है-भेदभाव-विहीन समता की भावना। लोकरंजन किसी विशिष्ट जाति और धर्म का न होकर पूरे लोक का होता है।उसकी अपनी जनतंत्रात्मक संस्कृति है, जिसमें किसी भी प्राणी के प्रति न तो घृणा और पक्षपात है और न ही निर्दिष्टता और निष्ठुरता सर्वत्र स्वच्छंदता और लोकहित की भावना अपनी सत्ता बनाये रखती है, जिसमें कुत्सित मनोवृत्तियों की साजिशें नहीं चल पाती है।"[1]

लोकजीवन में लोकरंजन को निम्न कोटियों में रखा जाता है।-

१. लोकमंच के द्वारा मनोरंजन

२. लोक क्रीड़ाओं द्वारा मनोरंजन

३. लोक बाजियों द्वारा मनोरंजन

४. अन्य खेलों द्वारा मनोरंजन

१. लोकमंच द्वारा मनोरंजन- इसमें फड़ एवं लोकनाट्य आते हैं।

क. फड़- ग्रामों में लोक मानस का जबाबी खुला मंच है। फड़ पर गायक एकत्रित होकर जबाबी कवितायें पढ़ते हैं, उन्हें फड़ साहित्य कहते हैं। फड़ साहित्य के विद्वान डा० गणेशीलाल बुधैलिया का निम्न मत उल्लेखनीय है -

" बुन्देली लोक साहित्य में फड़ शब्द अभाव, होड़ या प्रतिद्वन्दिता के अर्थ में प्रयुक्त होता है इस प्रकार फड़ साहित्य एक प्रकार का प्रतिद्वन्द्वी लोक साहित्य है, जिसमें शिष्ट अथवा समृद्ध साहित्य का भी मिश्रण है। बुन्देली फड़ साहित्य के अंतर्गत सैरे-सेरा, मंजे-तड़का, फागें-लेंदे ख्याल-लावनी, दिवाली

---

१. बुन्देलखण्ड की लोकसंस्कृति का इतिहास - नर्मदा प्रसादं गुप्त (पृ०संख्या - १६३)

के गीत, कवित्त-सवैया तथा कीर्तन आदि है।"२

विश्व साहित्य के दृष्टिकोण से यदि फड़ साहित्य पर विचार करें तो बैलेड्स (Ballads) और लोक लिरिक उसकी तुलना में आ सकते हैं। यूरोप में इस प्रकार के कथा काव्य लिखने की अत्यन्त प्राचीन और उदान्त परम्परा रही है।

फड़ साहित्य में लोक वाद्यों के रुप में चंग, ढाप, ढप, ढोलक, नगड़िया, कसावरी, मृदंग, रमतूला, झांझ, मंजीरा और लकड़ी के डंडों का भी प्रयोग होता है। लोकगीतों के साथ लोकनृत्य, ताडंव विद्या के रुप में और होली गीतों में नृत्य की लास्य विद्या का प्रयोग होता है। फड़ साहित्य में शिष्ट साहित्य के अंतर्गत कवित्त सवैया तथा धनाक्षरी शैली का प्रयोग होता है। इस शैली की साहित्यिक प्रयोगिता (फड़बन्दी) दर्शनीय होती है। प्रश्नोत्तर के रुप में रात-रात भर यह प्रतियोगिता चलती रहती है।

ख- लोकनाट्य- बुन्देलखण्ड अंचल में जनता के मनोरंजन में प्रमुख रुप से पारंपरिक लोकमंच आते हैं। ग्रामों में बड़े-बड़े चबूतरों,चौपालों या मंदिर के सामने बड़े मंच तैयार किये जाते हैं। इन मंचों पर रामलीला, रासलीला तथा नौटंकी आदि सार्वजनिक लोकनाट्य प्रस्तुत किये जाते हैं। ये ग्रामीण जन-जीवन के मनोरंजन के प्रमुख साधन है। ग्रामीण जन उत्साह पूर्वक बढ़-चढ़कर इनमें भाग लेते हैं।

बुन्देलखण्ड अंचल में जनमानस की दृष्टि में सर्वाधिक लोकप्रिय है। लोकनाट्य 'नौटंकी' है। इस क्षेत्र में जब नाट्य कला का अधिक विकास नहीं हुआ था। तब नौटंकी को लोग अधिक पसंद करते थे। आज के समय में नौटंकी और नाटक सिनेमा के सामने फीके पड़ने लगी है।

"हिन्दी जगत के प्रसिद्ध उपन्यासकार तथा नाटकाकर बाबू वृन्दावन लाल वर्मा बुन्देलखण्ड के हृदय झांसी की ही अलौलिक विभूति है। जिन्होंने बुन्देलखण्ड की नाट्य कला के विकास में अपना महत्वपूर्ण सहयोग प्रदान किया है। सन् १६०६ में उन्होंने सेनापति ऊदाल नामक नाटक लिखा था। बुन्देलखण्ड की सभ्यता एवं संस्कृति की पृष्ठभूमि में बुन्देलखण्ड की सामाजिक समस्याओं का समावेश इनके नाटकों में हुआ है, राखी की लाज, झांसी की रानी लक्ष्मीबाई, लो भाई पंचों लो, काश्मीर का कांटा आदि। नाटक एवं एकांकी नाटकों का जन्म लेकर तथा उन्हें अपने सफल दिग्दर्शन का कुशल प्रदर्शन किया है। हिन्दी रंगमंच की आधुनिक शैली का प्रयोग कर आपने हिन्दी नाट्य कला को अधिक चेतना

---

२. बुन्देलखण्ड का लोकजीवन - नर्मदा प्रसाद गुप्त (पृ०संख्या - १०१)

प्रदान की है।"३

इस अंचल में कई नाट्य समितियों ने नाट्य कला के विकास में अपना सहयोग दिया है। चरखारी रायल ड्रमेटिक सोसाइटी, झांसी में बाधव नाट्य समिति द्वारा दुर्गाबाड़ी में दुर्गा पूजा तथा अन्य अवसरों पर बंगाली तथा हिन्दी नाट्कों का आयोजन किया जाता है। बुन्देलखण्ड में मराठी रंगमंच का विशेष योगदान है। झांसी के महाराज गंगाधर राव ने नाट्य कला का बीज यहाँ पर बोया जो आज विस्तृत रुप में दिखाई देता है। गणेश मन्दिर में गणेशों एवं अन्य अवसरों पर मराठी तथा हिन्दी नाटक अधिक सफलता पूर्वक प्रदर्शित किये जाते हैं।

२- लोकक्रीड़ाओं द्वारा मनोरंजन- लोक क्रीड़ाओं द्वारा मनोरंजन के विभिन्न प्रकार है,जिसमे मानव जीवन को शारीरिक पुष्टि तो मिलती ही है साथ-साथ मानसिक ऊर्जा भी प्राप्त होती है। शारीरिक एवं मानसिक शक्ति मानव जीवन के लिए मनोरंजन परम आवश्यक है। लोक क्रीड़ाओं द्वारा मनोरंजन के निम्न प्रकार है-

क-चपेटा या गुट्टा- यह खेल स्त्रियों से संबंधित होते हैं। चपेटा लाख,पत्थर,लड़की या लोहे के घनाकार बने होते है। इस खेल में लड़कियां व स्त्रियॉं घुटने टेक कर बैठती है।

ख-उपासनात्मक खेल- बुन्देलखण्ड अंचल में लड़कियाँ एवं अकती के खेल समूह बनाकर खेलती है। लड़के भी टेसू आदि उपासक खेलते समय इन खेलों में लोकगीत गाये जाते है।यह लोक प्रचलित लोकरंजन है।

ग-चौपर,गोट-पड़ा, जूज तथा चन्दा पौआ- ग्रामीण क्षेत्रो में खाली समय में स्त्रियाँ द्वारा घर के भीतर या दरवाजों के बाहर चौपर,गोट-पड़ा,जूज तथा चन्दा पौआ खेले जाते है। गोटपड़ा,जूज तथा चंदापौआ आम खेल है ये प्रायः प्रत्येक घर में खेले जाते है।

१-चौपर- यह राष्ट्रीय स्तर के खेलों में गिना जाता चौपर की विसात ज्यादातर कपड़े पर या हाथी दांत आदि पर कलात्मक ढंग से बनाई जाती है। यह सामंती खेल माना जाता है।

२-गोटपड़ा-यह बहुत प्राचीन खेल है। इस खेल से शंतरज का विकास हुआ है। ऐसा प्रतीत होता है।कि जिस तरह शंतरज में बादशाह को केद किया जाता है, ठीक उसी प्रकार गोट-पड़ा में पड़ा को छेंका जाता है।

---

३. बुन्देलखण्ड दर्शन - मोतीलाल त्रिपाठी 'अशान्त' (पृ०संख्या - २८६)

३-जूज- इस खेल को दो व्यक्ति खेलते है। प्रत्येक खिलाड़ी के पास बीस गोटें होती हैं। दोनों खिलाड़ी एक-दूसरे की गोटें खाने का प्रयास करते हैं। जिस खिलाड़ी की सब गोटें खब जाती है, वह हार जाता है।

४- चंदा पौआ- यह ग्रामीण अंचल में खेला जाने वाला लोकप्रिय खेल है। इस खेल को चार खिलाड़ी तक खेल सकते हैं।

घ- मैदान में खेले जाने वाले खेल- लोकजीवन के लिए महत्वपूर्ण खेल जिनसे शारीरिक स्वास्थ्य के साथ मस्तिष्क भी स्वस्थ्य रहता है। यह खेल जीवन के लिए विशेष उपयोगी होते है। लोकजीवन में इन खेलों का विशेष महत्व है। ये निम्न है -

१. खो-खो २. कुश्ती ३. हूल गदा गद ४. ओद बोद ५. छुवा छुबौअल ६. कंचा ७. अत्ती-पत्ती ८. मगरतान ९. गुल्लीडंडा १०. डंडामार सलोर ११. कबड्डी

३. लोकबाजियों द्वारा मनोरंजन- स्वयं बोलने के बजाय सामने हो रहे खेल को देखकर आनन्दित होना भी मनोरंजन का साधन है। जिस वस्तु के खेल को देखकर व्यक्ति आनन्दित होता है। उसे उसकी बाजी का नाम दिया जाता है। जैस- तीतर के खेल के लिए तीतरबाजी, बटेर के खेल के लिए बटेरबाजी, पतंग के लिए पतंगबाजी, अग्नि खिलौनों के लिए आतिशबाजी। इन सबमें बुन्देलखण्ड में सर्वाधिक प्रचलित तीतरबाजी है।

१. आतिशबाजी - इस अंचल में आतिशबाजी का बहुत प्रचलन है। आतिशबाजी को बुन्देलखण्ड में 'बारुद' कहते हैं। विशेष पर्वो एवं अवसरों जैसे- दीवाली, दशहरा या देवउठान एकादशी, विवाह, जन्मोत्सव पर यह अधिक होती है।

२. तीतरबाजी- "बुन्देलखण्ड के लोक जीवन में लोक रंजन का सशक्त माध्यम है तीतरबाजी। तीतर पालकर उन्हें लड़ाना, उन पर बाजियां लगाना तीतर बाजों का शौक होता हैं तीतरबाजी किसी जाति या धर्म के नहीं होते है। हिन्दू मुस्लिम किसी अन्य जाति सम्प्रदाय के होने के बाद भी उनकी एक ही जाति होती है तीतरबाज। तीतर एक जंगली हिंसक जानवर है, इसलिए इसे पिंजड़े में रखा जाता हैं। पिजड़ा एक कक्षीय या जुडवाँ दो कक्षीय होता है। इसे कलात्मक भी बनाया जाता हैं रंगीन पर्दो से सजाया जाता हैं।"४

---

४. बुन्देलखण्ड का लोकजीवन - अयोध्या प्रसाद गुप्त (पृ०संख्या - १०३-१०४)

तीतर दंगल का स्थान-

उरई-१ तारीख, अमरा (झांसी)-४ तारीख, राठ (हमीरपुर)-६ तारीख,भेंड़ (जालौन)-१० तारीख, समथर-११ तारीख, बबीना-१५ तारीख

३- पतंगबाजी- यह खेल अत्यन्त प्राचीन है। इस खेल का विकास मुगलकाल से प्रारंभ हो गया था। मुगलकाल के राजा महाराजा एवं नबाब पतंगबाजी के खेल में भाग लिया करते थे। शिकार के साथ-साथ पतंग बाजी वसा भी मनोरंजन का प्रमुख साणन था। बुन्देलखण्ड में धीरे-धीरे यह खेल चरम सीमा तक पहुँच गया।

"बुन्देलखण्ड के प्रसिद्ध पतंगबाज बल्देवप्रसाद उर्फ बल्लू माते तथा हकीम मुहम्मद आबिद हंसन भेपाली उर्फ हकीम जी थे। प्रायः पतंगबाजी की प्रतियोगिता इन्हीं दोनों में होती थी।

इस अंचल में पतंग में पतंगबाजी के खेल में प्रगति करने वाले निम्न पतंगबाजों के नाम प्रसिद्ध है-उस्ताद खुदा बख्श,झाँसी,सेठ कथूले उर्फ कत्थू,पपैया जी,उस्ताद धूमे खाँ एवं हबीब आदि। अंत के ये तीनों खिलाड़ी ग्वालियर के हैं।"५

<u>४. अन्य खेलों द्वारा मनोरंजन-</u> बुन्देलखण्ड में वर्तमान में खेलों की प्रवृत्ति में अत्यधिक विकास होने के साथ निम्न खेल भी अधिक मात्रा में खेले जाते है-

१-टैनिस २-वास्केटबाल ३-बॉलीबाल

४-बैडमिंटन ५-क्रिकेट ६-हाकी

बुन्देलखण्ड झाँसी के मेजर ध्यानचन्द ने हाकी के खेल में आलौकिक चमत्कार दिखा कर सम्पूर्ण बुन्देलखण्ड के गौरव को बड़ा कर यश प्राप्ति की। हाकी जादूगर ध्यानचन्द एवं उनके भाई रूपसिंह इस अंचल की वसुंधरा के ऐसे कला-कुशल खिलाड़ी थे जिन्होंने अपने अनेंको चमत्कारों द्वारा केवल बुन्देलखण्ड ही नहीं वरन् सम्पूर्ण भारत देश का नाम रोशन किया।

---

५. बुन्देलखण्ड दर्शन - मोतीलाल त्रिपाठी 'अशान्त' (पृ०संख्या - ५२४)

अध्याय - ३

हिन्दी का आंचलिक उपन्यास साहित्य और बुन्देलखण्ड

हैं तो निश्चय ही ऐसा चित्रण आंचलिक माना जायेगा ।"१

"हिन्दी उपन्यास साहित्य में आंचलिक उपन्यास एक नया क्रांतिकारी मोड़ है। आंचलिक उपन्यास भौतिकवादी कृत्रिम नागरी सभ्यता से दूर, प्रकृति की मनोहारी गोद में स्वाभाविक जीवन जीने वाले सरल, सहृदय, भोले और गुण दोष युक्त मानव-समूह की समस्त जिंदगी के, उसकी सांस्कृतिक, राजनीतिक एवं आर्थिक चेतना के समय सापेक्ष संदर्भ में व्यक्तित्व तथा अभिव्यक्ति प्रदान करता है। इस प्रकार के जीवन से ग्रामीण और पिछड़े क्षेत्र विशेष संबंद्ध आंचलिक उपन्यासों का मूल स्वर ग्रामीण ही होता है। हिन्दी उपन्यास साहित्य पश्चिमी उपन्यासों का ऋणी और उनसे प्रभावित जरूर हैं, परन्तु हिन्दी के आंचलिक उपन्यास पश्चिम के क्षेत्रीय उपन्यास (रीजनल नॉवेल) तथा स्थानीय रंग वाले उपन्यास (लोकल कलर नावेल) से सर्वथा भिन्न है तथा उसका उद्गम स्रोत पूर्णतः इसी देश की मिट्टी से ही संबंधित है। सामाजिक उपन्यास तथा उसमें नागरी सभ्यता और संस्कार के उबाऊ चित्रण के फलस्वरूप आंचलिक उपन्यास सामने आया। इन उपन्यासों में ग्रामीण लोक जीवन का आर्कषण, मनोहारी तथा अत्यंत सजीव चित्रण किया जाता है। लोक संस्कृति, सभ्यता की सभी सूक्ष्मातिसूक्ष्म बातों का चित्रण इनमें उपस्थित रहता है। आंचलिक उपन्यासों के संबंध में विचार करते हुए डॉ० हरदयाल, डॉ० धनंजय वर्मा, डॉ० देवराज उपाध्याय, आचार्य नंददुलारे बाजपेयी, डॉ० रामदरश मिश्र, डॉ० आदर्श सक्सेना आदि ने आंचलिक उपन्यास को परिभाषित करने का प्रयत्न किया है।

आंचलिक उपन्यास की परिभाषा विद्वजनों द्वारा किसी भी शैली में की गई हो लेकिन घुमा-फिराकर सभी का मूल स्वर एक ही होता है। यह उपन्यास नागरीय जीवन से अपरिचित विशिष्ट अंचल के समस्त वैविध्यपूर्ण जीवन से संबंधित होता है। इसके अंतर्गत उस विशेष अंचल की संस्कृति, भाषा, रीति-रिवाज, आचार-विचार, रहन-सहन, लोकगीतों, परम्परायें एवं सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक जागरण का सजीव चित्रण होता है।

"आंचलिक उपन्यासों ने अनुभवहीन सामान्य या विराट के पीछे न दौड़कर अनुभव की सीमा में अपने वाले अंचल विशेष को उपन्यास का क्षेत्र बनाया ।"२

---

१. उपन्यास का आंचलिक वातायन - डा० रामपत यादव (चित्रा प्रकाशन) पृ० संख्या- ३८-३६

२. नये उपन्यासों में नये प्रयोग - डा० दंगल झाल्टे (प्रभात प्रकाशन, दिल्ली) पृ० संख्या- २८-२६

"स्वातंत्र्योत्तर तथा साठोत्तर हिन्दी उपन्यासों में इतने अधिकाधिक नये-नये प्रयोग किए गये हैं कि इस कलाविधि को हिन्दी- उपन्यासों का प्रयोगकाल' कहा जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होनी चाहिए। सन् ७० के बाद के उपन्यासों में तो यह प्रयोगशील प्रवृत्ति अधिकाधिक उभरती हुई दिखाई देती है। इसी प्रयोगशीलता के बीच विशिष्ट ध्येय, विचारादि को लेकर ऐसे अनेक उपन्यास लिखे गए जिनसे अलग-अलग धाराओं का बोध स्पष्ट हो गया तथा वे विशिष्ट प्रयोगात्मक औपन्यासिक धाराएँ प्रबल हो गई। ऐसी धाराओं में आंचलिक उपन्यास की धारा अपने आप में सशक्त होकर विशिष्ट स्थान पाती है। हिन्दी उपन्यास क्षेत्र में आंचलिक उपन्यासों का प्रवर्तन एक महत्वपूर्ण घटना हैं।

सन् पचास से साठ दशक में हिन्दी उपन्यास का एक नवीन रूप हम सभी के सम्मुख आया जिसे 'आंचलिक उपन्यास' कहा गया । उपन्यास को आंचलिक कहने तथा उसकी महत्ता की तरफ अलोचकों का ध्यान आकृष्ट करने का श्रेय प्रसिद्ध उपन्यासकार 'पुणीश्वरनाथ रेणु' का है। इन्होने ने अपने प्रसिद्ध उपन्यास १६५४ में प्रकाशित 'मैला आंचल' को आंचलिक उपन्यास की संज्ञा दी। 'मैला आंचल' की भूमिका में इन्होने लिखा है- **"यह है 'मैला आंचल', एक आंचलिक उपन्यास । कथानक है पूर्णिमा । मैंने इसके एक हिस्से के एक गाँव को पिछड़े गाँव का प्रतीक मानकर इस उपन्यास का कथा क्षेत्र बनाया है।"३**

ऐसे उपन्यासों को अंग्रेजी में 'Wessex Novels' कहा गया था । जिन्होंने क्षेत्रीय रंगों अर्थात् 'Regional tough' इन उपन्यासों में लेखक का मन उस स्थान विशेष की संस्कृति, लोकजीवन, रहन-सहन, भाषा-शैली, रीति-रिवाज एवं धार्मिक विश्वास आदि के चित्रण में अधिक लगता हैं। इसी प्रकार आंचलिक उपन्यासों में लेखक की दृष्टि आंचलिकता पर प्रमुख रूप से केन्द्रित रहती हैं। आंचलिकता में क्षेत्र विशेष की संस्कृति का चित्रण होता है। उस क्षेत्र की लोकसंस्कृति, लोकजीवन, भाषा बोली, रहन-सहन, वेशभूषा, अंधविश्वास, त्योहार, उत्सव, पर्व, मेले एवं राजनैतिक, सामाजिक एवं आर्थिक जीवन का चित्रण प्रमुख रुप से निहित होता है। रेणु ने अपने उपन्यास में पिछड़े गाँव उसके खेत खलिहानों, जलवायु, लोकगीतों, भाषाशैली के विशिष्ट रुप में लोकोक्तियों मुहावरों, लोकसंस्कृति एवं प्रकृति के मनोरम दृश्यों को आंचलिकता को स्थायी पहचान के रुप में स्वीकारा है।

"डा० आदर्श सक्सेना ने एक जैसी बोली, व्यवहार, रहन-सहन, लोककथाओं,

---

३. नये उपन्यासों में नये प्रयोग - डा० दंगल झाल्टे (प्रभात प्रकाशन, दिल्ली) पृ० संख्या- २७

लोकगीतों एवं समस्याओं से ग्रस्त, एक सी जीवन-व्यवस्था से बधे, पर्वत-श्रृंखला के सहारे, नदी कूल पर स्थित, सागर तट पर फैले ग्रामों को अंचल की संज्ञा की है।"४

डा० रामदशरथ मिश्र के अनुसार -"आंचलिक उपन्यास अंचल के समग्र जीवन का उपन्यास है। जैसे नयी कविता ने तीव्रता से भोगे हुए अनुभव की मिट्टी में तपे हुए पलों को व्यंजित करने में ही कविता की सुन्दरता देखी, वैसी ही उपन्यास के क्षेत्र में आंचलिक उपन्यासों ने अनुभवहीन सामान्य या विराट के पीछे न दौड़कर अनुभव की सीमा में आने वाले अंचल विशेष को उपन्यास का क्षेत्र बनाया। आंचलिक उपन्यासकार अंचल विशेष में जिया होता है या कम से कम समीपी द्रष्टा होता है। वह विश्वास के साथ वहाँ के पात्रों, वहाँ की समस्याओं, वहाँ के संबंधों वहाँ के प्राकृतिक और सामाजिक परिवेश के समग्र रुपों, परम्पराओं और प्रगतियों को अंकित कर सकता है। आंचलिक उपन्यास लिखना मानों हृदय के किसी भू-भाग की कसमसाती हुई जीवनाभूति को वाणी देने का अनिवार्य प्रयास है।"५

"आक्सफोर्ड शब्दकोश के अनुसार अंचल से तात्पर्य उस भूमिखंड, देश अथवा किसी सीमा तक परिभाषित भाग से है, जो कुछ प्राकृतिक आकारों, जलवायु संबंधी दशाओं, विशेष जीव या वनस्पति आदि के कारण विभिन्नता रखता है। इसी तरह डिक्शनरी ऑफ वर्ल्ड लिटररी टर्म्स के अनुसार - "किसी अंचल विशेष के निवासियों के जीवन एवं प्रगति को सविस्तार चित्रित करने वाली लेखकों की प्रवृत्ति आंचलिकता कहलाती है।"६

अंचल का शाब्दिक अर्थ है- जनपद या क्षेत्र। आंचलिक उपन्यास उसे कहते हैं, जिन उपन्यासों में किसी विशिष्ट प्रदेश के जनजीवन का समग्र विम्बात्मक चित्रण होता है। इन उपन्यासों का प्रमुख उद्देश्य किसी विशेष अंचल के समग्र जीवन का चित्रण करना होता है। अतः अपने जनपद की लोकसंस्कृति एवं लोकसभ्यता निहित होती है।

हिन्दी के आंचलिक उपन्यास साहित्य में निम्न प्रमुख उपन्यासकारों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है-

---

४. नये उपन्यासों में नये प्रयोग - डा० दंगल झाल्टे (प्रभात प्रकाशन, दिल्ली) पृ० संख्या- २८
५. मैला आचंल की रचना प्रक्रिया - देवेश ठाकुर (पृ० संख्या - १२)
६. नये उपन्यासों में नये प्रयोग - डा० दंगल झाल्टे (प्रभात प्रकाशन, दिल्ली) पृ० संख्या- २८

१. **फणीश्वरनाथ रेणु** - मैला, आंचल, परती, परिकथा

२. **नागार्जुन** - बल चनमा, वरूण के बेटे, रतिनाथ की चाची, नई पौधे, दुखमोचन

३. **रांगेय राघव** - कब तक पुकारूं, काका

४. **देवेन्द्र सत्यार्थी** - रथ के पहिए

५. **उदय शंकर भट्ट्ट** - शेष - अशेष, सागर लहरें और मनुष्य, लोक-परलोक

६. **शिव प्रसाद मिश्र 'रन्द्र'** - बहती गंगा ।

७. **रामदशरथ मिश्र** - पानी के प्राचीर ।

८. **शैलेश मटियानी** - होल्दार ।

९. **अमृतलाल नागर** - सेठ बांकेमल ।

१०. **बलभद्र ठाकुर** - आदित्यनाथ ।

११. **वृन्दावन लाल वर्मा** - अचल मेरा कोई, लगन, कुण्डलीचक्र, उदय-किरण, संगम, प्रेम की भेंट, प्रत्यागत, कभी न कभी, अमरबेल, सोना आदि।

१२. **श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य'** - प्रेमतपस्वी, निमिया, मनोवेदना ।

१३. **मैत्रयी पुष्पा** - झूला नट, अल्मा कबूतरी, इदन्नमम्, वेतवा वहती रही ।

आंचलिक उपन्यास केवल ग्रामीण अंचल को ही केन्द्र बनाकर नहीं लिखे जाते, अपितु नगर जीवन से संबंधित भी लिखे जा सकते है। शिवप्रसाद मिश्र 'रूद्र' का 'बहती गंगा' 'काशी' नगरी के जीवन बम्बई के 'बरसोवा' क्षेत्र के मछुआरों की कथा है।

''मैला आंचल' को हिन्दी का प्रथम आंचलिक उपन्यास माना गया है। वहाँ कुछ विद्वान अब रेणु पूर्व प्रेमचन्द्र, बृन्दावन वर्मा और शिवपूजन सहाय आदि की कृतियों में भी आंचलिकता परिलक्षित करने लगे। यद्यपि सही अर्थों में रेणु से पूर्व नागार्जुन ने 'रतिनाथ की चाची (१९४८) तथा 'बलचनमा' (१९५२) के द्वारा आंचलिकता उपन्यासों की सुदृढ़ नींव रख दी थी ।''७

''आंचलिक' विशेषण के अंतर्गत आने वाले अनेक उपान्यास 'मैला आंचल' के पूर्व प्रकाशित हो चुके थे, किन्तु उन्हें किसी भी रचनाकार या विवेचक ने आंचलिक उपन्यास

---

७. मैला आचंल की रचना प्रक्रिया - देवेश ठाकुर (पृ० संख्या - ९-१०)

के नाम से अभिहित नहीं किया था। मैला आंचल सन् १९५४ में प्रकाशित हुआ, जबकि निम्नलिखित उदाहरणार्थ कुछ उपन्यास उसके पूर्व आंचलिक स्वरुप में प्राप्त होते हैं -

रतिनाथ का चाची - सन् १९४८, बिल्लेसुर बकरिहा - सन् १९५१

बलचनमा- सन् १९५२, नई पौध- सन् १९५३, बाबा बटेरनाथ - सन् १९५४

सन् १९५७ में फणीश्वरनाथ रेणु का दूसरा आंचलिक उपन्यास 'परतीः परिकथा' प्रकाशित हुआ, किन्तु उसे आंचलिक विशेषण से उद्घोषित नहीं किया गया। पहले उपन्यास के पश्चात् अनेक उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों को 'आंचलिक' नामकरण से अभिहित करके इस शब्द के विकास में सहायता पहुँचाई है। उदाहरणार्थ 'सूरज किरन की छाँव' (१९५९), 'हौलदार' (१९६१), 'जंगल के फूल' (१९६०) आदि को ले सकते हैं। जंगल के फूल के आमुख में स्वयं रचनाकार ने लिखा है- "बस्तर के जनजीवन पर यह आंचलिक उपन्यास है।"८

'आंचलिक' शब्द के विकास में स्वतंत्र रुप से लिखी गई पुस्तकों तथा फुटकर लेखों का भी महत्वपूर्ण हाथ है, क्योंकि गत दशक की दर्जनों श्रेष्ठ समीक्षात्मक कृतियों में इस शब्द का उपयोग हुआ, जिससे यह नामकरण विकसित, प्रतिष्ठित एवं रुढ़िगत हुआ है।'

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् अलग-अलग अंचलों में निवास करने वाले लेखकों व विचारकों का ध्यान आंचलिक जीवन की ओर आकृष्ट हुआ। अतः उनकी कृतियों में आंचलिकता के तत्व सहज ही आ गये। ऐसे दो वर्ग है - पहले वर्ग में उन कृतियों को लिया गया है जिनमें आंचलिक संस्पर्श अथवा स्थानीय रंगत की विशिष्टता तो अवश्य है पर उनकी आत्मा आंचलिक नहीं है। इन कृतियों में कथा और पात्र उभर कर आते हैं लेकिन अंचल नहीं। इन उपन्यासों को हम आंचलिक संस्पर्श से युक्त कृतियाँ कह सकते हैं।

द्वितीय वर्ग में वे कृतियाँ आती हैं, जिनमें आंचलिक तत्व प्रभूत मात्रा में प्राप्त होते हैं और कथा अथवा पात्र के स्थान पर अंचल विशेष की संस्कृति, परिवेश, आचार-विचार विशेष रुप से उभर कर स्पष्ट होता है।

"प्रथम वर्ग के अंतर्गत नई पौध (नागार्जुन,१९५३), काका (रागेय राघव,१९५३) रथ के पहिये

---

८. उपन्यास का आंचलिक वातायन - डा० रामपत यादव (चित्रा प्रकाशन) पृ० संख्या - ४०-४१

(देवेन्द्र सत्यार्थी, १९५३) मुक्तावली (बलभद्र ठाकुर, १९५५), सेठ बाँकेमल (अमृतलाल नागर, १९५६), फाल्गुन के दिन चार (पाण्डेय बेचन शर्मा उग्र, १९५५), बूँद और समुद्र (अमृतलाल नागर, १९५६), ब्रह्मपुत्र (देवेन्द्र सत्यार्थी,१९५६), दुःख मोचन (नागार्जुन, १९५६), लोहे के पंख (हिमांशु श्रीवास्तव, १९५७), आदित्यनाथ (बलभद्र ठाकुर, १९५६), सती मैया का चौरा (भैरवप्रसाद गुप्त, १९५६), बोरीवली से बोरीवन्दर (शैलेश मटियानी, १९५६), शेष-अशेष (उदशंकर भट्ट १९६०), नदी फिर बह चली (हिमांशु श्रीवास्तव, १९६१), हिरना सांवरी (मनहर चौहान, १९६२), वन के मन में (योगेन्द्र नाथ सिन्हा १९६२), लोक लाज खोई (सुरेन्द्र पाल, १९६३), मोर झाल (श्याम परमार, १९६३), दीर्घ तपा (फणीश्वर रेणु, १९६३), आधा गांव (राही मासूम रजा, १९६६), गगास के तट पर (जगदीश चन्द्र पाण्डेय, १९६८), तथा राग दरबारी (श्रीलाल शुक्ल, १९६८) आदि उपन्यासों को सम्मिलित कर सकते हैं।"९

दूसरे वर्ग के उपन्यासों को हम आंचलिक उपन्यास की संज्ञा दे सकते हैं। इन आंचलिक रचनाओं द्वारा देश के अनेक अंचलों की संस्कृति, संस्कारों और समस्याओं की अभिव्यक्ति प्राप्त होती है। नागरीय जीवन यापन करने वाले पाठकों को प्रथम बार दूरस्थ देशवासियों की जीवन-यापन के विषय में जानने का अवसर प्राप्त होता है। इन रचनाओं में प्रमुख कृति है- (मैला आंचल) के अतिरिक्त (नागार्जुन की १९४८) रतिनाथ की चाची, बलचनमा (वही, १९५४), सागर, लहरें और मनुष्य (उदय शंकर भट्ट, १९५५), परती परिकथा (फणीश्वर नाथ रेणु, १९५७), कब तक पुकारूँ (रांगेय राघव, १९६६), चिट्ठी रसैन (शैलेश मटियानी, १९६१), पानी के प्राचीर (रामदशरथ मिश्र, १९६१), चौथी मुट्ठी (शैलेश मटियानी, १९६२), कोहरे में खोए चाँदी के पहाड़ (जयप्रकाश भारती, १९६८), तथा आठवीं भावर (आनंद प्रकाश जैन, १९६६), विशेष रूप उल्लेखनीय कृतियां हैं। इन कृतियों में विभिन्न अंचलों के जनजीवन और परिपेक्ष की विस्तृत ढलक वाणी से प्राप्त होती है। आंचलिक भाषा शक्ति के दर्शन प्रापत होते है एवं रचनात्मक विद्या को अभिव्यक्ति की नयी भूमिका प्राप्त हुयी है।

आंचलिक उपन्यासों की विशेषताएं कुछ निम्नवत् है-

१. "आंचलिक उपन्यास में एक उपेक्षित और अविकसित अंचल के जन-जीवन की कथा होती है।

२. यह कथा उस अंचल की संस्कृति, संस्कार, भाषा और व्यवहार की व्यंजना के साथ-साथ आर्थिक, नैतिक, धर्मिक तथा सामाजिक स्थिति का उद्घाटन कुछ इस प्रकार करती है जिससे वह अंचल अपनी

---

९. मैला आचंल की रचना प्रक्रिया - देवेश ठाकुर (पृ० संख्या - २१)

समग्रता में व्यक्त हो सके।

३. आंचलिक उपन्यासों में अभिव्यक्ति का प्रकार स्थानीय रंगत लिए होता हैं इस स्थानीय रंग को अंचल की प्रकृति, भाषा, मान्यताओं-परम्पराओं तथा लोक-विश्वासों के माध्यम से प्रतिष्ठा मिलती है।

४. आंचलिक उपन्यासों में पात्रों के चरित्र-चित्रण तथा कथ्य की अपेक्षा अंल की समग्रता की अभिवव्यक्ति को महत्व मिलता है। दूसरे शब्दों में आंचलिक उपन्यासों का नायक 'अंचल' होता है, व्यक्ति नहीं।

५. आंचलिक उपन्यासों का लक्ष्य एक अंचल विशेष के विषय में निश्चित दृष्टिकोण प्रदान करना होता है और इस दृष्टिकोण की निर्मित आवश्यक रूप से तीखे यथार्थ की भूमिका पर ही होती है।

इन विशेषताओं के आधार पर कहा जा सकता है कि आंचलिक उपन्यास वे उपन्यास हैं जिनमें किसी अंचल विशेष के लोक-जीवन की समग्रता को स्थानीय रंगत के द्वारा इस प्रकार अभिव्यक्ति दी जाती है कि जिससे अंचल का सम्पूर्ण व्यक्तित्व उभरकर प्रतिष्ठित हो सके। आंचलिक उपन्यास चरित्र या कथ्य प्रधान न होकर अंचल या परिवेश प्रधान होते हैं।"१०

"आंचलिक उपन्यास हिन्दी उपन्यास साहित्य में एक सर्वथा नई चेतना के रुप में उभरे हैं और स्वातंत्र्योत्तर काल के बाद उपन्यास क्षेत्र पनपी नवीनतम धाराओं में एक सशक्त कड़ी बनाकर खड़े हैं। यह बात दूसरी है कि इस बीसवीं सदी के नौवें दशक तक आते-आते यह कड़ी कमजोर अवश्य पड़ गई है। आंचलिक की होड़ में बिखराव आ गया है या यों कहिए कि आंचलिक उपन्यास लिखने का फैशन आऊट ऑफ डेट हो गया है। फिर भी स्वातंत्र्योत्तर काल में इस धारा के जो भी मील के पत्थर गढ़े हैं वे अत्यन्त सशक्त होने के साथ-साथ ठोस आधार भूमि पर खड़े हैं।"११

३.२ बुन्देलण्ड अंचल के उपन्यास साहित्य -

प्राचीनकाल में 'चेदि', 'जेजाक भुक्ति', 'दशार्ण' आदि नामों से विख्यात भारत भूमि का हृदय स्थल बुन्देलखण्ड एक अद्वितीय भू-भाग है। यहाँ की जीवनयापन पद्धति श्रमसाध्य है। यह भू-भाग वैदिककाल से प्रसिद्ध रहा है। यहाँ की अपनी निजी जीवन यापन शैली है, जो यहां के सांस्कृतिक वैभव में स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। यहां पर्व, उत्सव, व्रत, त्यौहार, रीति-रिवाज, संस्कार, लोकगीत, नृत्य तथा वाद्ययन्त्र,

---

१०. मैला आचंल की रचना प्रक्रिया - देवेश ठाकुर (पृ० संख्या - १६)

११. नये उपन्यासों में नये प्रयोग - डा० दंगल झाल्टे (प्रभात प्रकाशन, दिल्ली)

लोक देवता, मेले, लोक साहित्य, जातीय एवं साम्प्रदायिक सौहार्द, परिवार, पतिपत्नी संबंध, दिनचर्या, वेश-भूषा, आवास-प्रवास, भोजन व्यंजन, लोकाचार एवं लोरंजन द्वारा अपनी अलग पहचान बनाये हुए है। बुन्देखण्ड अपनी लोक संस्कृति एवं लोक सभ्यता को संजोये हुए एक विस्तृत भू-भाग है।

बुन्देलखण्ड आर्थिक क्षेत्र से बहुत पिछड़ा है, लेकिन साहित्य के क्षेत्र में यहाँ की भूमि उर्वरा है। भवभूति, व्यास हिन्दी वीरगाथाकाल से अब तक अनेक राष्ट्रीय स्तर के साहित्याकारों ने इस भूमि को धन्य किया है। बाल्मीकि, भवभूति, व्यास, जगनिक, तुलसी, केशव, बिहारी, पद्माकर, मैथलीशरण गुप्त, डॉ. वृन्दावनलाल वर्मा, डॉ. रामकुमार वर्मा, केदारनाथ अग्रवाल, श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' एवं मैत्रेयी पुष्पा आदि प्रसिद्ध साहित्यकार साहित्य जिज्ञासुओं से अपरचित नहीं है।

उपन्यासों में आंचलिकता का विशेष महत्व है। प्रत्येक लेखक अपने जन्मस्थान से जुड़े हुए क्षेत्र के प्रति विशेष लगाव रखता है, उस क्षेत्र की प्रकृति, रीति-रिवाज, व्रत-पर्व, उत्सव, वेश-भूषा, अलंकरण आदि उसके मन-मस्तिष्क में रचे वसे रहते है। सत्य ही है **'जननी,जन्म भूमि स्वर्गदापि गरीयसी'**

उपन्यासकार जब अपने उपन्यासों में स्थानीय कथाओं को अपनाता है तो सभी स्थानीय विशेषताओं को वह रोचक रूप में उपन्यास में प्रस्तुत कर देता है। साहित्य में इस प्रकार के उपन्यासों को आंचलिक उपन्यासों का नाम दिया गया हैं। इन उपन्यासों में उपन्यासकार अपनी लोकभाषा की मिठास से सभी कथा प्रेमियों को अवगत कराता है। आंचलिक उपन्यासकारों के क्षेत्र में 'फणीश्वर नाथ रेणु' ने सशक्त पहचान बनायी। उनके उपन्यासों ने पाठकों को आंचलिक उपन्यासों के प्रति आकर्षित किया है।

'मैला आंचल' की भूमिका में इन्होने लिखा है- "यह है मैला आंचल' एक आंचलिक उपन्यास। कथानक है पूर्णिमा। मैंने इसके एक हिस्से के एक गाँव को पिछड़े गाँव का प्रतीक मानकर इस उपन्यास का कथा क्षेत्र बनाया है।"[१]

"इन उपन्यासों मे लेखन का मन उस स्थान विशेष की संस्कृति, लोकजीवन, रहन-सहन भाषा शैली, रीति-रिवाज एवं धार्मिक विश्वास आदि के चित्र में अधिक लगता है। इसी प्रकार आंचलिक उपन्यासों में लेखक की दृष्टि आंचलिकता पर प्रमुख रूप से केन्द्रित रहती है। अंचल में क्षेत्र विशेष की संस्कृति का चित्रण प्रकृति के मनोरम दृश्यों को आंचलिकता की स्थायी पहचान के रूप में स्वीकारा।"[२]

---

१. नये उपन्यासों में नये प्रयोग - डा० दंगल झाल्टे (पृ० संख्या- २७)
२. वही - (पृ० संख्या- २८)

'बुन्देलखण्ड का आंचलिक उपन्यास साहित्य' भी समृद्ध है। ये अपने अंतस में पर्याप्त बुन्देली सम्पदा संजोये हुये है। हिन्दी उपन्यास के क्षेत्र में बुन्देलखण्ड के 'श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य', डा० वृन्दावन लाल वर्मा, मैत्रेयी पुष्पा ने महत्वपूर्ण योगदान किया है। यद्यपि इनके उपन्यास साहित्य का पटल देश का विस्तृत भू-भाग है परन्तु फिर भी इनके बहुत से उपन्यासों में इनका बुन्देलखण्ड के प्रति विशेष लगाव परिलक्षित होता है। इनके उपन्यासों को आंचलिक उपन्यासों की श्रेणी में लिया जाय तो अनुचित न होगा। इन उपन्यास-कारों ने अपने जीवन का अधिकांश समय बुन्देलखण्ड की साहित्य उर्वरा भूमि पर व्यतीत किया है अतः इस भू-भाग की विस्तृत छवि इनके मन मस्तिष्क से लेखनी में स्थानांतरित होकर सामाजिक एवं ऐतिहासिक उपन्यासों के रूप में प्रकट हुई है जो निम्न है-

१. **दिव्य जी के उपन्यास-** निमियाँ, मनोवेदना, बेलकली, प्रेमतपस्वी, खजुराहों की अतिरूपा, सती का पत्थर, फजल मकबरा आदि।

२. **डा० वृन्दावन लाला वर्मा जी के उपन्यास-** लगन, प्रत्यागत, कुण्डली चक्र अचल मेरा कोई, उदय-किरण, संगम, प्रेम की भेंट, कभी न कभी, अमर बेल, सोना, मृगनयनी आदि।

३. **मैत्रेयी जी के उपन्यास-** झूलानट, इदून्नमम, अल्मा कबूतरी, बेतवा वहती रही आदि। उपन्यासकारों के उपर्युक्त उपन्यास 'बुन्देलखण्ड क्षेत्र' को आधार बनाकर लिखे गये है। जिनमें बुन्देलखण्ड के ग्राम व नगरों के स्थानीय नामों के साथ-साथ यहाँ का 'लोक जीवन', 'लोक संस्कृति' एवं 'लोक सभ्यता' को उपन्यासों के माध्यम से भली भांति उकेरा गया है।

बुन्देलखण्ड के अन्य प्रमुख आंचलिक उपन्यासकारों में-

४. **"ज्ञान चतुर्वेदी"** का जन्म मऊरानीपुर में हुआ। वर्तमान में वी.एच.ई. एल हास्पिटल भोपाल में डाक्टर है। ये देश के विख्यात व्यंगकार एवं आंचलिक उपन्यास लेखक है, इनके आंचलिक उपन्यास निम्न है- १. बारहमासी २. मरीचिका
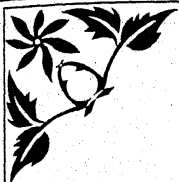
५. **वल्लभ 'सिद्धार्थ'** - इनका जन्म मऊरानीपुर में सन् १६३७ में हुआ । इनका आंचलिक उपन्यास- 'कठघरे'है।

६. **सुरेन्द्र वर्मा-** इनका जन्म स्थान झाँसी नगर है। इनका आंचलिक उपन्यास -

'मैं अपनी झाँसी नही दूंगा' है। यह आंचलिक उपन्यास १८५७ की क्रांति के संदर्भ में है।

७. **वद्रीनाथ श्रीवास्तव-** इनका जन्म १६३२ में टीकमगढ़ में हुआ है। इनके आंचलिक उपन्यास -

'विंदा और उसका बेटा है' जो कि जतारा ओरछा, टीकमगढ़ की आंचलिक और ऐतिहासिक **पृष्ठ भूमि पर लिखा है।**

अध्याय- ४

उपन्यासकारों का जीवन परिचय

४.१ श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य'

४.२ डा० वृन्दावन लाल वर्मा

४.३ मैत्रेयी पुष्पा

बुन्देलखण्ड के आंचलिक उपन्यासकार

४.१ - श्री अम्बिका प्रसाद मिश्र

हिन्दी के गौरव श्री दिव्य जी हिन्दी साहित्य एवं बुन्देली संस्कृति के प्रति समर्पित मानवीय चेतना के प्रति सजक साहित्यकार के रुप में प्रतिष्ठित रहे हैं। उस समय की परम्परा के आधुनिक स्तम्भों में वे प्रमुख साहित्यकार थे। आज दिव्य प्रतिभा के धनी, बहुभाषाविद् एवं आदर्श शिक्षक के रुप में प्रख्यात हैं।

दिव्यजी मैथलीशरण गुप्त की परम्परा के कवि प्रसाद परंपरा के नाटककार एवं वृन्दावनलाल वर्मा की परंपरा के उपन्यासकार के रुप में चर्चित हैं। आप साहित्यकारों के बीच 'बुन्देलखण्ड के गौरव' नाम से पुकारे जाते हैं। इनका जन्म १६ मार्च १६०७ को मध्यप्रदेश के पन्ना जिले के समीप अजयगढ़ नामक ग्राम में हुआ था। प्रकृति से आपको विशेष लगाव रहा क्योंकि आप प्रकृति के मनोरम वातावरण में पलकर बड़े हुए। पिताश्री गुलजारी लाल वर्मा एवं माताश्री का भरपूर स्नेह मिला। कायस्थ परिवार में जन्मे दिव्यजी बचपन से ही कला एवं साहित्य के प्रति समर्पित थे। आपकी प्रतिभा किशोरावस्था में ही पन्ना (अजयगढ़) के हीरे के रुप में दमकने लगी। इन्होंने एम.ए. (हिन्दी) और साहित्य रत्न की उपाधि ा प्राप्त की। बचपन के २० वर्ष गुजरने के पश्चात् स्वयं को साहित्य साधना के प्रति समर्पित कर दिया।

दिव्यजी स्वभाव से अत्यन्त सहज, निराभिमानी, ईमानदार, विनोदी, मानवीयता की प्रतिमूर्ति एवं कर्मठ व्यक्ति थे। वे प्रातः ६ बजे से एक बजे तक लेखन व पठन-पाठन का कार्य करते, फिर दोपहर ढाई बजे से पठन-पाठन पांच बजे तक। पांच बजे से छः बजे तक फिर लेखन कार्य चलता था। छः बजे से आठ बजे तक घूमना-फिरना इनकी नियमित दिनचर्या में निहित था। समय का उन्होंने सदा सदुपयोग किया। अध्यापन कर्म को उन्होंने जीविकोपार्जन का साधन बनाया। अजयगढ़ में उन्होंने प्राचार्य पद ग्रहण कर उसे गौरवान्वित किया। सन् १६६०में आदर्श शिक्षण एवं प्राचार्य के लिए 'राष्ट्रीय शिक्षक पुरस्कार' तत्कालीन राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद द्वारा प्राप्त हुआ।

दिव्यजी साहित्यकार के पूर्व श्रेष्ठ कलाकार थे। कला के माध्यम से साहित्य के क्षेत्र में आगे बढ़े। उन्होंने स्वयं कहा है कि **"मैं मूलतः चित्रकार हूँ किन्तु आगे चलकर मेरी कला यात्रा साहित्य में बदल गई। यह क्यों और कैसे हुआ? इसकी भी एक रोचक कहानी है चित्रकला के प्रति**

मेरा बचपन से ही खास लगाव रहा । अजयगढ़ और टीकमगढ़ के तत्कालीन महाराज रणजीत सिंह और वीरसिंह जूदेव ने मेरी चित्रकला को प्रेरित एवं प्रोत्साहित किया है टीकमगढ़ में ही मुझे पं० बनारसी दास चतुर्वेदी, यशपाल जैन,कृष्णानंद गुप्त एवं जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी आदि साहित्यकारों का साथ मिला। साहित्य के प्रति मेरी रुचि जागी तथा मैंने भी साहित्य सृजन आरंभ कर दिया। उन दिनों सुधा माधुरी एवं सरस्वती आदि पत्रिकाओं में प्रायः चित्रों के लिये दोहों की आवश्यकता हुई और मैंने दोहा लिखना प्रारंभ कर दिया। इस प्रकार दिव्य दोहावली की रचना हो गई और यह मोड़ मेरी कला-यात्रा के लिए एक निर्णयक बिन्दु सिद्ध हुआ।"[१]

दिव्यजी की साहित्य साधना दिव्यदोहावली से प्रारम्भ हुई। यह ब्रज भाषा में है। इसके प्रकाशन से पाठकों में हलचल पैदा हो गई। इसके संबंध में कहा जाता है कि मिश्रबन्धु जैसे आलोचकों ने इनकी अनुभूति, भाषा प्रौढ़ता, विचार चातुर्य, श्लेष, अभिव्यंजना और बाहुल्य शक्ति का लोहा माना है। इस प्रथम रचना के द्वारा आप श्रेष्ठ और प्रतिष्ठित रचनाकारों में गिने जाने लगे।

दिव्यजी के साहित्य सृजन का कार्य चलता रहा। लेखन आपके जीवन का लक्ष्य बन गया। कुछ सार्थक एवं मूल्यवान लिखने की तमन्ना से आगे बढ़ते गये। दिव्यजी ने साहित्य सृजन की ओर अपनी लेखनी हुए कुल ६० मौलिक कृतियां लिखी उनमें से अधिकांश रचनायें अप्रकाशित हैं। कई लेख पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित है। इन्होंने गद्य एवं पद्य दोनों को अपने साहित्य सृजन का माध्यम बनाया।

१. काव्य में- महाकाव्यः खण्डकाव्यः गीतिकाल आदि।

२. गद्य में- उपन्यास, कहानी, नाटक, निबंध एवं आलोचना आदि।

एक काव्यग्रन्थ निकला तो कई निकलते चले गये। विद्वजनों ने 'अनन्यमानस' की प्रशंसा भूरि-भूरि की। अंतर्जगत ने जयशंकर प्रसाद की कामायनी से टक्कर ली। इस महाकाव्य में गाँधी के जीवन का चित्रण है। यह महाकाव्य ६४७ पृष्ठों का है। इसमें पदों की संख्या १६०,००० है। मानस की तरह इसमें सात काण्ड हैं - सृजनकाण्ड, गृहकाण्ड, तूफानकाण्ड, अफ्रीका काण्ड, स्वदेश ग्रह, मुक्तिकाण्ड। यह

---

१. अखिल भारतीय 'अम्बिका प्रसाद दिव्य' स्मृति पुरस्कार वितरण समिति की मुख्य पत्रिका दिव्यालोक (आदित्य ओम की दिव्यजी से भेंटवार्ता) - प्रधान सम्पादक - जगदीश किंजल्क (प्रकाशक साहित्य सदन सागर, म०प्र०) (पृ० संख्या- १५)

काव्य ग्रन्थ, दोहा, चौपाई, छन्द एवं सोरठा में बंधा हुआ है। भक्तगण जिसप्रकार भगवान राम को मानस द्वारा श्रवण करते हैं, उसी प्रकार गांधी प्रेमी गांधी परायण का यशोगान करेंगे।

गाँधी परायण के अंत का दोहा-

'गोली ही सी लग रही, है दुख कार्यो साज, बापू पूरी हो गयी, कथा तुम्हारी आज।

अग जग का मंगल करे, अभिनव दे यह ज्ञान जिससे मानव बन सके, तुम सा दिव्य महान।'

दिव्यजी को कवि के रुप में भी विशेष ख्याति प्राप्त हुई। उन्होंने खण्डकाव्य, महाकाव्य के साथ-साथ गीत कविताएं छंद एवं गद्यगीत भी काफी मात्रा में लिखे। गाँधी परायण महाकाव्य का आकाशवाणी भोपाल और इंदौर केन्द्र से लगातार ५ माह तक प्रसारण हुआ।

दिव्य जी साहित्य सृजन में निरन्तर आगे बढ़ते रहे, उन्होंने अपनी लेखनी को कभी भी विराम नहीं दिया। उनकी लेखनी काव्य क्षेत्र से हटी तो उपन्यासों की ओर बढ़ गई। उन्होंने अनेकों बहुचर्चित ऐतिहासिक व सामाजिक उपन्यासों का सृजन कर हिन्दी साहित्य को समर्पित कर दिये। उपन्यासों से मन हटा तो कहानी, नाटक, निबंध एवं आलोचना की ओर चल दिये।

दिव्यजी प्रायः कहते थे कि **"इतिहास उन्हें स्मरण करता है जो अपनी राह स्वयं तलाशते हैं। जीवन पर्यन्त दिव्यजी अपनी ही तलाशी राह (साहित्य का अध्ययन, अध्यापन) निष्काम भाव से चलते रहे। साहित्य साधना में रत रहे, एक सजक, संवदेनशील, रचनाधर्मी की तरह। सत्यं, शिवम्, और सुन्दरम् की प्रतिष्ठा ही उनके जीवन और साहित्य का महन्त उद्देश्य रहा। समाज और जीवन में व्याप्त विष का पान करते हुए उनके साहित्य के चरित्र सत्य, शिव और सुन्दर की ही भावना प्रशस्त करते रहे हैं। इतिहास पुराण के सैकड़ों अनमोल चरित्र दिव्यजी की लेखनी का संस्पर्श पाकर जीवंत हो उठे हैं।"[२]**

आपने अपने उपन्यासों में बुन्देलखण्ड अंचल के सामाजिक जीवन उसकी सभ्यता, संस्कृति, संघर्ष आदि को उकेरा है। आपने अपने पात्रों को पौराणिक अंधविश्वासों से हटाकर वास्तविकता का नया धरातल दिया है। दिव्यजी प्रमुख रुप से एक एतिहासिक कथाकार के रुप में प्रसिद्ध हैं। बुन्देलखण्ड का

---

२. अखिल भारतीय 'अम्बिका प्रसाद दिव्य' स्मृति पुरस्कार वितरण समिति की मुख्य पत्रिका दिव्यालोक (डा० आनन्द प्रकाश त्रिपाठी का लेख, साहित्य साधक अम्बिका प्रसाद दिव्य) - प्रधान सम्पादक - जगदीश किंजल्क (प्रकाशक साहित्य सदन सागर, म०प्र०) (पृ० संख्या- ११)

भू-भाग उनकी कला-कृतियों का केन्द्र रहा है। आपने कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, निबंध एवं अनुवाद प्रत्येक विद्या पर अपनी छाप छोड़ी है। ऐसे बहुयामी व्यक्तित्व का निर्माण करने में वे समर्थ रहे हैं। इस संबंध में दिव्य जी के विचार- **"प्रत्येक विद्या के मूल में कला तो एक ही रहती है और विद्यागत परिवर्तन साहित्यकार के मानसिक स्वास्थ्य एवं कला की प्रौढ़ता के लिए अपेक्षित ही नहीं, आवश्यक भी है। क्योंकि एक ही विद्या को अपनाने से वह विद्या कृछ कृतियां तो अच्छी देगी किन्तु आगे चलकर निर्जीवता अथवा एकरसता का खतरा पैदा हो जायेगा। मैं समझता हूँ अपनी कला- रुचि को जीवित रखने के लिए उसकी अधिक से अधिक विद्याओं की जो संभव हो सके अपनाया जाना चाहिए। मैंने भी कुछ ऐसा प्रयास किया है और विद्या में मेरी कुछ कृतियां उल्लेखनीय बन गयी हैं।"३**

उच्चकोटि के साहित्यकार के साथ-साथ आप एक सफल चित्रकार के रुप में भी जाने जाते हैं। आपने बुन्देलखण्ड के इतिहास से संबंधित अनेकों वीर राजा-महाराजाओं, उनकी वंशावलियों सहित अनेकों प्रमुख चित्र बनाये हैं। आपके द्वारा चित्रित चित्र 'बुन्देलखण्ड चित्रावली' में बुन्देलखण्ड के महत्वपूर्ण ऐतिहासिक व्यक्तियों का आकर्षक एलबम है। दिव्यजी ने ७४ वर्ष की अवस्था में अपनी उंगलियों द्वारा चित्र उतारे हैं उन्हें देखकर चोटी के विद्वान दाँतों तले उंगलियां दबा लेते हैं।

पं० गौरीशंकर द्विवेदी के साथ आपने अजंता एलोरा का भ्रमण किया। आपने सन् १६४६ में ३०० रेखाचित्र टीकमगढ़ नरेश के आदेश पर खजुराहो के वियावान जंगल में रुककर बनाये।

साहित्यप्रेमी होने के कारण दिव्यजी की तूलिका कभी रुकी नहीं, वह निरंतर कार्यरत रही। वह काव्य दिशा से हटी तो उपन्यास की ओर चल पड़ी। आपने निमियां, बेलकली, मनोवेदना, खजुराहो की अतिरुपा, जयदुर्ग का रंगमहल, पीताद्रि वर्ग की राजकुमारी, काला भौंरा, प्रेम तपस्वी और सती का पत्थर आदि उपन्यास लिखे। निमियां सामाजिक उपन्यास के साथ-साथ बुन्देलखण्ड की आंचलिकता पर आधारित है। इसमें एक अभिशप्त लड़की के जीवन की कहानी है। खजुराहो की अतिरुपा अद्वितीय, कथ्य, शिल्प और अपने ढंग का निराला ही कथानक लिए हुए है।

---

३. अखिल भारतीय 'अम्बिका प्रसाद दिव्य' स्मृति पुरस्कार वितरण समिति की मुख्य पत्रिका दिव्यालोक (आदित्य ओम की दिव्यजी से भेंटवार्ता) - प्रधान सम्पादक - जगदीश किंजल्क (प्रकाशक साहित्य सदन सागर, म०प्र०) (पृ० संख्या- १५)

दिव्यजी उपन्यास लिखने के पश्चात् नाटक लिखने में रम गये। आपने लंकेश्वर, भोजननन्दन कंस, तीन पग, निर्वाण पथ, रुपक सरिता, रुपक मंजरी, झाँसी का रानी, फूटी आँखें और प्रलय का बीज आदि नाटक लिखकर नाट्य साहित्य में प्रसिद्ध हुए। आपने अंग्रेजी के 'दि वीमेन आफ खजुराहो' जैसी चर्चित कृति को देखकर अनुवाद साहित्य की ओर चल दिये। मिल्टन का 'सेक्शन ऐगोनिट्स' शेक्सपियर का 'एज यू लाइक इट' 'किंग लियर' तथा हेलमेट आदि का हिन्दी में पद्यमय अनुवाद किया। कथाओं में आपने हास्य व्यंग्य तथा शिक्षाप्रद लगभग २०० कहानियाँ लिखीं । निबंध साहित्य में दीपक सरिता, हमारी चित्रकला (पुरस्कृत) लोकोक्ति सागर आदि लिखा। ५ सितम्बर सन् १९८६ को दिव्यजी ने इस भौतिक संसार से विदा ली। सदियों तक बुन्देलखण्ड में ही नहीं वरन् देश के सम्पूर्ण हिन्दी साहित्य के इतिहास के पन्नों में उनके साहित्यिक अवदान को स्मरण किया जाता रहेगा। डा० रमेशचन्द्र खरे ने शिक्षक दिवस के दिन भव्य समारोह में उनकी मृत्यु पर संवेदना व्यक्त करते हुए निम्नलिखित पंक्तियां कहीं-

"ऐसी मौत को फरिश्ते तरसते हैं, तरसते फूल ही उस लाश पर बरसते हैं।"[४]

साहित्य की सभी विधाओं में दिव्यजी ने साठ महत्वपूर्ण ग्रन्थों की रचना की।

उपन्यास- निमियाँ, मनोवेदना (सामाजिक)

प्रेमतपस्वी- (लोककवि ईसुरी के जनजीवन पर आधारित होने के कारण इसको हमने सामाजिक उपन्यासों की कोटि में रक्खा।) बेलकली, खजुराहो की अतिरुपा, जयदुर्ग का रंगमहल, पीताद्रि की राजकुमारी, काला भौंरा, जोगी राजा, सती का पत्थर, फजल का मकबरा, जूठी पातर, असीम की सीमा। (ऐतिहासिक)

काव्य- गाँधी परायण, अन्तर्जगत, खजुराहो की नारी, दिव्यदोहावली, पावस पिपासा, स्त्रोतस्विनी, पश्यन्ती, चेतयन्ती, अनन्यमानसा, केत्सिमाम, विचिन्तयन्ति, भाक्तगीत आदि।

नाटक- लंकेश्वर, भोजनंदन कंस, निर्वाण पथ, तीन पग, कामधेनु, सूत्रपात, चरणचिन्ह, प्रलय का बीच, रुपक सरिता, रुपक मंजरी, भारत माता, फूटी आँखें।

निबंध- दीपक सरिता, निबंध विविधा, हमारी चित्रकला, लोकोक्ति सागर।

---

४. 'दिव्य' जी का उपन्यास साहित्य - कथ्य एवं शिल्प- शोधार्थी रामप्रकाश अग्रवाल (पृ० संख्या- ४६)

इतिहास- बुन्देलखण्ड चित्रावली, खजुराहो चित्रावली।

अंग्रेजी ग्रन्थ- 1- The Picturesqw Khajuraho, Histioy of Erotic-Sculptures

2- The women of Khajuraho

हिन्दी साहित्य जगत में विभिन्न सम्मान-

दिव्यजी सफल चित्रकार, अन्वेषी और शिक्षाविद् होने के साथ-साथ लोकप्रिय समाजसेवी तथा क्रान्तिकारी भी थे। आपको अनेक पुरुस्कारों, सम्मानों से गौरावान्वित किया गया है।

१. "हमारी चित्रकला' नामक ग्रन्थ पर म०प्र० शासन का- 'छत्रसाल पुरुस्कार'

२. आदर्श प्राचार्य के रुप में- 'राष्ट्रपति पुरुस्कार'

३. म०प्र० हिन्दी साहित्य सम्मेलन द्वारा इन्दौर और रायपुर में सम्मान।

४. पन्ना जिले में शासकीय सम्मान।

५. शिक्षाविद् के रुप में उत्कृष्ट कार्य के लिए राज्यपाल द्वारा भोपाल में अभिनन्दन।

६. म०प्र० राष्ट्रभाषा प्रचार समिति भोपाल द्वारा दिव्य जी की स्मृति में २५०० रुपये का अखिल भारतीय पुरस्कार।

७. 'भारत भाषा भूषण' पद से सम्मानित।

८. मरणोपरान्त पुरस्कार उनके पुत्र श्री जगदीश किंजल्क ने १५ जून १९८६ को बंगलौर में एक भव्य समारोह में प्राप्त किया।"५

---

५. 'दिव्य' जी का उपन्यास साहित्य - कथ्य एवं शिल्प- शोधार्थी रामप्रकाश अग्रवाल (पृ० संख्या- ४७-४८)

४.२ - वृन्दावन लाल वर्मा

हिन्दी के सुप्रसिद्ध उपन्यासकार वर्मा जी का जन्म मऊरानीपुर (झाँसी) में जनवरी सन् १८८६ में हुआ था। पिताश्री अयोध्याप्रसाद एवं माता श्रीमती सवरानी एक सामान्य कायस्थ परिवार के थे। अयोध्याप्रसाद जी झाँसी तहसीलदार के दफ्तर में रजिस्ट्रार कानूनगो थे। माता वैष्णवी थीं। वर्मा जी को माता की गोद में अपूर्व प्यार व स्नेह मिला। परदादी का भी उन्होंने बहुत प्यार दुलार पाया। परदादी बचपन में वर्माजी को किस्से कहानियाँ सुनाया करती थीं। उनमें से अधिकांश कहानियां सत्य घटना पर आधारित होती थीं। वर्माजी को उन्होंने झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई की वीरता के अनेक किस्से सुनाये। जिनका उनके जीवन पर विशेष प्रभाव पड़ा। इनके परिवार में इनके एक चाचा साहित्य सृजन के प्रेमी थे। वे नित्य नवीन पुस्तकों को एकत्रित करने के शौकीन थे। वर्मा जी चाचा जी के पास जाकर नित्य नई-नई पुस्तकों का अध्ययन करते थे। पढ़ने लिखने का शौक आपको बचपन से ही था। आपके चाचा ललितपुर में ज्वाइन्ट मजिस्ट्रेट के अहलमद थे।

इनकी माता की धर्मपरायणता एवं वैष्णव भावना रामायण, महाभारत भागवत आदि के पठन-पाठन से प्राप्त होती है। इन सब का वर्मा जी पर गहरा प्रभाव पड़ा। पं० विद्याधर दीक्षित से चार वर्ष की आयु में अक्षराम्भ किया। सात वर्ष की अवस्था तक उन्होंने पढ़ना-लिखना सीख लिया। वर्मा जी को पुस्तकों में लिखी झूठी बातों से नफरत थी। उन्होंने अपने चाचा जी के पास बंगला से अनुदित 'अश्रुमती' नाटक पढ़ा, उसमें लिखा था कि अकबर द्वारा राणा प्रताप से लड़ने सलीम मेवाड़ गया। तो वहाँ पर उनकी बेटी से आशक्त हो गया। यह घटना वर्मा जी ने चाचा को बताई तो उन्होंने इनकी शंका का निवारण करते हुए बताया कि उस समय सलीम पैदा ही नहीं हुए होंगे, अगर पैदा भी हो गये होंगे तो बालक होंगे। इसी प्रकार एक और झूठी छपी बात इन्हें 'मार्सडन' की हिस्ट्री आफ इण्डिया में मिली। इसमें लिखा था कि हिन्दुस्तान गर्म मुल्क है, इस देश में जो भी आक्रमणकारी आये उनसे यह हारा है एवं पद दलित हुआ है । ठंडे प्रदेशों के गोरे लोग ये किसी से नहीं हारते हैं। इस बात को पढ़कर वर्मा जी मन में विचार करने लगे शायद ही हिन्दुस्तान गुलामी की जंजीरों से आजाद हो लेकिन प्राचीन युगों के इतिहास को स्मरण करते हुए भगवान राम और कृष्ण को याद किया तो ये भी तो भारत में (गर्म मुल्क)

में जन्मे। इनकी वीरता सम्पूर्ण संसार जानता है। पुस्तकों में लिखी झूठी बातों ने वर्मा के मन को बहुत ठेस पहुँचाई। वर्मा जी ने अपने चाचा जी से कहा कि मैं सच्ची बात लिखूंगा। चाचा ने प्रोत्साहित कर कहा इसके लिए तुम्हें खूब पढ़ना होगा। उसी समय से वर्माजी दृढ़ निश्चय कर लगन के साथ पढ़ने में जुट गये।

वर्माजी ने अपने चाचा के पास रात में लालटेन की मध्यम रोशनी में अनेकों पुस्तकों का अध्ययन किया। बचपन में ही उन्होंने 'चन्द्रकान्ता-सन्तति' पढ़ ली। 'गुलीवर्स ट्रेवल', 'बेबिन्सन क्रूसो' नामक दो पुस्तकें इन्हें उपहार में मिली। कक्षा आठ में इन्हें जार्ज विलियम रेनाल्ड कृत सोल्जर्स वाइफ पुस्तक पढ़ने को मिली जो इन्हें बहुत पसंद आयी। नवे दर्ज में अनेकों लाइब्रेरी की सुविधा प्राप्त हुयी। वहाँ पर उन्होंने शेक्सपीयर की मरचेन्ट आफ बेनिस, टम्पेक्ट, मेकबेथ, हेमलेट, माथलों आदि रचनाओं का जमकर अध यन किया। अंग्रेजी कथा साहित्य पढ़ने में आपको बहुत रुचि थी। मैट्रिक के बाद इन्होंने एक दफ्तर में कार्य किया। एक बार इनकी दृष्टि वकील को देखकर केन्द्रित हुयी, इन्होंने मन में वकील बनने की ठान ली। माता ने अपने आभूषण बेचकर इन्हें पढ़ने का आस्वासन दिया। ग्वालियर के विक्टोरिया कॉलेज (संप्रति- महारानी लक्ष्मीबाई आर्ट एण्ड कामर्स कालेज में प्रवेश लेकर इन्होंने फ़ेबियन सोसाइटी के पेपर्स का अध्ययन किया। प्रो० आर०के० कुलकर्णी के आदेश पर इसी कालेज में इन्होंने सेवा-भावना और डायरी लिखना प्रारम्भ किया। यही पर डर्विन, मार्क्स, रोम, इग्लैण्ड एवं भारत के इतिहास से संबंधित अनेक पुस्तकों का अध्ययन किया। वर्माजी पर वकिल की इग्लैण्ड की सभ्यता का इतिहास का विशेष प्रभाव पड़ा।

एल०एल०बी० करने के लिए १६१३ में इन्होंने आगरा कालेज में प्रवेश लिया। वहाँ पर कुछ छात्रों के साथ मिलकर किराये पर मकान लिया। अर्थाभाव के कारण ट्यूशन एवं नौकरी भी कुछ समय के लिए की। मनोविज्ञान, मनोविश्लेषण शास्त्र, विज्ञान और दर्शनशास्त्र पर आधुनिक विद्वजनों के सिद्धान्तों का अनुशीलन किया। इसके साथ-साथ भारतीय संस्कृति के आधारभूत सिद्धान्तों का भी अध्ययन करते रहे।

एल०एल०बी० की परीक्षा में एक बार अनुत्तीर्ण होने पर माँ ने धीरज बधाया- **"एक ही बार**

तो फेल हुए हो, कोई बात नहीं। हिम्मत न हारो, राम को मन में रखो, कोई विघ्न बाध तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सकेगी।"[1] इसके पश्चात् कड़ी मेहनत करके उन्होंने एल०एल०बी० परीक्षा उत्तीर्ण की। सन् १६१६ में उन्होंने वकालत की शुरुआत की। प्रारम्भ का कुछ समय वकालत के लिए अच्छा न रहा। यह धीमी गति से चलती रही। मार्च १६१७ से जमकर वकालत की शुरुआत हुई। वकालत से जो खाली समय निकालते वह वे वेल्जियम के कवि और नाटककार करलिंक, अनातोले, फ्रांस, मौलियर, मोपासाँ, टालस्टाय और पुश्किन आदि की कृतियों को पढ़ने में लगाते थे। मन सबसे अधिक नृतत्व व विज्ञान पढ़ने में रमता था।

वर्माजी सजीव व्यक्तित्व वाले व्यक्ति थे। संगीत प्रेम एवं शिल्पकला से उन्हें बेहद प्रेम था। हठयोग, व्यायाम, घुड़सवारी एवं आखेट के शौकीन थे। शरीर से कर्मठ थे। वकालत का कार्य झाँसी में ,तो खेती श्यामसी में करते थे। वे बुन्देलखण्ड के जटिल प्राकृतिक वातावरण में पलकर बड़े हुए। वर्षा, शीतलता और यहाँ की प्रचंड धूप में उन्होंने मेहनत के साथ कृषि कार्य किया। इसी कारण उनका रंग गेहुआ से श्यामल हो गया था। घुमक्कड़ता उनके शौक में निहित थी। इसी कारण वे बुन्देलखण्ड का कोना-कोना घूम चुके थे। खेलों में भी उनकी विशेष अभिरुचि थी। कालेज के समय वे क्रिकेट के कप्तान थे। हाकी व फुटबॉल की टीम के सदस्य रहे। प्रातःकाल व्यायाम के साथ कुश्ती करने झाँसी की व्यायामशाला में जाया करते थे।

वर्मा जी का मन सामाजिक, सांस्कृतिक व साहित्यिक गतिविधियों में भी लगता था। झाँसी में इन्फ्लूएंजा की घातक महामारी फैली इन्होंने अपने मित्रों सहित पीड़ितों की सेवा का कार्य किया। इन्होंने लिबरल पार्टी-नरमदल के नेता सी०बाई० चिन्तामणि के सम्पर्क में उनके विधान सभा चुनाव में लगन से कार्य करके राजनीतिज्ञ व सामाजिक जीवन प्रारम्भ किया। बुन्देलखण्ड से वर्मा जी को बहुत लगाव था। उनके मन को एक बार बहुत ठेस पहुँची जब वे एक विवाह समारोह में गये थे।

"वर्मा जी शब्दों में - पंजाबी मित्र के यहाँ ब्याह था। इनके पिता और कुछ नातेदार दस पन्द्रह

---

१. वृन्दावन लाल वर्मा : व्यक्तित्व एवं कृतित्व - डा० पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश' (पृ० संख्या-१७)

बरस पहले व्यवसाय के सिलसिले में झाँसी आ बसे थे। बुन्देलखण्ड और बुन्देलखण्डी उनके मेहमानों की चर्चा के विषय थे। मैं वहाँ जरा पीछे बैठा था।

बड़ा कमबख्त इलाका है जी यह। एक बोला।

दूसरे ने जोड़ा- आदमी बड़े मरियल-सड़ियल-हाँ औरतें मजबूत हैं।

जंगल पहाड़, झील और नदियों के सिवाय और है क्या यहाँ? जानवर हैं, जानवर। आदमी से ज्यादा अच्छे।

मेहमान हंस पड़े ।

मेरे कलेजे में छुरियां सी छिद गयीं। जिस भूमि ने मेरे माता-पिता को जन्म दिया, जहाँ लक्ष्मीबाई का पराक्रम प्रकट हुआ, जिस भूखण्ड में चंदेले और उनके बाद छत्रसाल हुए वह कमबख्त। जहाँ के आदमियों का आल्हा सब जगह गाया जाता है, जिन्होंने औरंगजेब के और फिर अंग्रेजों के दाँत खट्टे किए वे मरियल-सड़ियल। और जानवरों से गए बीते। दिन-रात पसीना बहाकर जो अकालों से लड़ते रहते हैं वे इनके मजाक की चीज। जी में ऐसी आग लगी जो कभी नहीं बुझी। उस दिन से बुन्देलखण्ड की एक-एक कंकड़ी, एक-एक बूँद पत्ती और कली मन में रमने लगी। परंतु मैं शुरु से ही अपने को संकुचित बनने से बचाये रहा। हरिश्चन्द्र का नीलदेवी नाटक, भारत दुर्दशा नाटक, रामायण और महाभारत मेरे सिम्बल बने रहे।"२ केवल क्षेत्र के विकल्प की समस्या थी तो उन्होंने बुन्देलखण्ड को लेकर स्वयं हल की। वर्मा जी ने बुन्देलखण्ड के वीर इतिहास को लेकर अनेक ऐतिहासिक कृतियों का सृजन किया। आपके ऐतिहासिक ग्रन्थ इस बात के साक्षात् प्रमाण हैं कि बुन्देलखण्ड की पावन धरा पर अनेक वीरों ने अपने प्राणों की आहूति देकर अपने अद्म्य साहस व वीरता का परिचय दिया। इन वीर विभूतियों ने इतिहास के पन्नों पर स्वर्ण अक्षरों में सदैव के लिए अपना नाम अंकित कर दिया।

वर्मा जी इतिहास व प्रकृति प्रेमी साहित्यकार थे। सन् १६२७ में उन्होंने जीवन के अनेकों अनुभवों को संजोकर ऐतिहासिक उपन्यास 'गढ़कुण्डार' की रचना की। 'गढ़कुण्डार' जैसा महाकाव्य उपन्यास

---

२. उपन्यासकार वृन्दावन लाल वर्मा : डा० शशिभूषण सिंघल (पृ० संख्या-२४-२५)

उन्होंने कठिन मेहनत कर साठ दिनों में ही पूर्ण कर लिया। इसके पश्चात् तुरंत ही उन्होंने अपना पहला सामाजिक उपन्यास 'लगन' लिखना प्रारम्भ कर दिया। सन् १६२८ के प्रारम्भ में उन्होंने दूसरा सामाजिक उपन्यास 'कुण्डली चक्र' व तीसरा 'प्रेम की भेंट' लिख डाला। इसके पश्चात् उन्होंने दूसरा ऐतिहासिक उपन्यास विराठा की पधिनी लिखा। 'विराठा की पधिनी' के पश्चात् इनका लेखन कार्य कुछ समय के लिए रुक गया।

जीवन-यापन और परिवार के भरण -पोषण के लिए वर्मा जी अर्थ एकत्रित करने के प्रबंध में जुट गये। झाँसी के समीप बंजर भूमि को उपजाऊ बनाकर उसमें बागवानी लगवायी। पपीते के १००० पेड़ व आम के १४०० पेड़ लगाये। विज्ञान न जानते हुए भी उन्होंने 'पपेन' नामक रासायनिक द्रव बनाया। विदेशों में तक इस पदार्थ की प्रशंसा हुई। पानी के अभाव में यह बगीचा सूख गया। वर्मा जी इस कार्य में असफल हो गये। इनके सिर पर बहुत सारा कर्ज चढ़ गया। घोर परिश्रम कर प्रकाशन व लेखन का कार्य किया। आपका बहुत समय कर्ज में व्यतीत हो गया। जिससे हिन्दी साहित्य जगत को बहुत क्षति हुयी। सत्यदेव जी ने उस फार्म को ३० हजार रुपये में बेचकर मयूर प्रकाश शुरु किया। वर्माजी को ऋण मुक्त कर साहित्य सृजन के लिए निश्चिंत कर दिया।

सन् १६४० में टीकमगढ़ नरेश ने वर्मा जी को कुण्डार गढ़ के निकट कुछ भूमि दे दी थी। वह भूमि फार्म के लिए थी। उस जगह वर्मा जी ने श्यामसी नामक गाँव बसाया। उन्होंने प्रतिदिन एकान्त में कठिन परिश्रम कर दर्जनों उपन्यास नाटकों एवं सैकड़ों कहानियां लिखीं। यह परिश्रम पन्द्रह वर्ष तक निरंतर चलता रहा।

वर्मा जी की रचनायें- सन् १६४२-४३ में वर्माजी के काल-क्रमानुसार रचनाओं की सूची निम्न प्रकार-

१. मुसाहिब जू (ऐतिहासिक उपन्यास)

२. कलाकार का दण्ड (कहानी संग्रह)

३. झाँसी की रानी (ऐतिहासिक उपन्यास)

४. कचनार (ऐतिहासिक उपन्यास)

५. अचल मेरा कोई (सामाजिक उपन्यास)

६. झाँसी की रानी (ऐतिहासिक नाटक)

७. राखी का लाज (सामाजिक नाटक)

८. काश्मीर का काँटा (ऐतिहासिक नाटक)

६. माधव जी सिंधिया (ऐतिहासिक उपन्यास)

१०. टूटे काँटे (ऐतिहासिक उपन्यास)

११. मृगनयनी (ऐतिहासिक उपन्यास)

१२. सोना (सामाजिक उपन्यास)

१३. हंस मयूर (ऐतिहासिक उपन्यास)

१४. बाँस की फांस (सामाजिक उपन्यास)

१५. पीले हाथ (सामाजिक उपन्यास)

१६. लो भाई पंचो लो (एकांकी)

१७. तोषी (कहानी संग्रह)

१८. पूर्व की ओर (ऐतिहासिक नाटक)

१६. केवट (सामाजिक नाटक)

२०. नीलकण्ठ (सामाजिक नाटक)

२१. फूलों की बोली (ऐतिहासिक नाटक)

२२. कनेर (एकांकी संग्रह)

२३. सगुन (सामाजिक नाटक)

२४. जहाँदार शाँह (ऐतिहासिक नाटक)

२५. अमरबेल (सामाजिक नाटक)

२६. मंगलसूत्र (सामाजिक नाटक)

२७. खिलौने की खोज (सामाजिक नाटक)

२८. बीरबल (ऐतिहासिक नाटक)

२६. ललित विक्रम (ऐतिहासिक नाटक)

३०. भुवन विक्रम (ऐतिहासिक नाटक)

३१. अहिल्याबाई (ऐतिहासिक नाटक)

३२. शरणागत (कहानी संग्रह)

३३. निस्ता (सामाजिक नाटक)

३४. देखादेखी (सामाजिक नाटक)

३५. दबे पाँव (आपबीती शिकारी कहानियाँ)

३६. अँगूठी का दाम (कहानी संग्रह)

३७. अकबर के अमर वीर (ऐतिहासिक कहानियाँ)

३८. ऐतिहासिक कहानियाँ (कहानी संग्रह)

३६. मेंढकी का ब्याह (व्यंगात्मक कहानियाँ)

४०. बुन्देलखण्ड के लोकगीत

वर्माजी की अप्रकाशित कृतियां निम्न हैं - 'शबनम, आहत, और लाल कमल।

हिन्दी साहित्य जगत में विभिन्न सम्मान-

१. १६५४ में झाँसी की रानी ऐतिहासिक उपन्यास पर भारत द्वारा पुरुस्कार।

२. १६५८ में उन्हें आगरा विश्वविद्यालय द्वारा डी०लिट् की समानार्थ उपाधि से अलंकृत किया गया।

३. १६६५ में उन्हें राष्ट्रपति ने 'पद्य-भूषण' से विभूषित किया।

४. १६६८ में १४ नबम्बर को उन्हें 'नेहरु पुरुस्कार' द्वारा सम्मानित किया गया।

५. वर्मा जी को देश अनेक स्थानों पर साहित्यिक समारोहों में डालमियां, साहित्यकार संसद, नागरी प्रचारणी, हिन्दुस्तानी ऐकेडमी, उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश एवं भारत सरकार के पुरुस्कार मिले।

८० वर्ष की अवस्था में (२३ फरवरी सन् १६६६को) आपने अपनी नश्वर देह त्यागकर संसार से विदा ली। वर्मा जी जीवन भर साहित्य-सृजन की कठोर साधना में लगे रहे। जीवनकाल में साहित्य व देश से यथोचित सम्मान प्राप्त किया। वर्मा जी श्रेष्ठ व बहुसंख्यक कृतियों के द्वारा इस जगत में सदैव स्मरणीय रहेंगे।

४.३ - मैत्रयी पुष्पा

हिन्दी साहित्य जगत में ''स्त्री स्वतन्त्रता'' के लिये संघर्षरत मैत्रेयी जी ने अपने धारदार लेखन द्वारा महत्वपूर्ण रचनायें साहित्य को समर्पित की। बुन्देलखण्ड की सशक्त महिला उपन्यासकारों में पुष्पा जी का नाम प्रमुख रूप से लिया जाता है। ऐसे वहुत ही कम साहित्य प्रेमी होगें , जो आपके स्नेहरंजित व्यक्तित्व से अनभिज्ञ हों। मैत्रेयी जी एक कुशल गृहणी, सफल माँ एवं वहुचर्चित और प्रतिभावान साहित्यकार है।

हिन्दी साहित्य की गद्य एवं पद्य दोनों विद्याओं को आपने अपनी लेखनी का माध्यम बनाया। परन्तु आपका मन प्रमुखतः उपन्यासो में अधिक लगा। प्रारंभ मे आपने कुछ काव्य रचना की , परन्तु आपका मन अधिक नही रमा। आपके अनुसार **''कविता के माध्यम से प्रेम ,विरह की बात तो करते रहो , एक दूसरे से गिला शिकवा तो करते रहो ,लेकिन कविता विचारों की अभिव्यक्ति के लिए अपूर्ण हैं।''**[१] मैत्रेयी जी ने कविता द्वारा अपने विचारो को व्यक्त करने में अपने को असमर्थ पाया। अभिव्यक्ति का उचित माध्यम कथा साहित्य को बनाया। कहानियों एवं उपन्यासों के माध्यम से आपने अपने विचारों को पूर्ण प्रदर्शित किया। आज आप एक सुप्रसिद्ध उपन्यासकार के रूप में सम्पूर्ण हिन्दी साहित्य जगत में प्रख्यात है।

पुष्पा जी का जन्म ३० नवम्बर सन् १६४४ में अलीगढ़ जिले के 'सुकुर्रा' नामक ग्राम मे हुआ था पिता श्री हीरालाल एवं माता का नाम कस्तूरी था। परिवार मे केवल पुष्पा व उनकी माँ थी। पिता की मृत्यु के पश्चात् माँ ने ही पालन पोषण किया। प्रारम्भिक जीवन खिल्ली गाँव में ही व्यतीत हुआ आपकी माता ग्राम सेविका के रूप में झाँसी जिले के मोंठ तहसील के खिल्ली गांव में नियुक्त थी।

अपने नाम के विषय में पुष्पा जी कहती हैं - **"मेरे जन्म का नाम मैत्रेयी है जो पण्डित रखता है न ,दस दिन के बच्चे का नाम।मेरा नाम मैत्रेयी है। गाँव में किसी से कहना नही आया तो घर में पुष्पा- पुष्पा कहने लगे। तो मैने सोचा अब ये दोनों नाम मिला**

---

१. मैत्रेयी पुष्पा के कथ्य का आलोचनात्मक अध्ययन (इदन्नमम्, चाक के विशिष्ट संदर्भ में) - लघुशोध - कु० सीमा सौनकिया (पृ० संख्या -१)

दियें जाएं । तो मैत्रेयी पुष्पा हुआ ।"२

'मैत्रेयीजी ' ने डी० वी० कॉलेज झाँसी (वर्तमान नाम कृष्ण चन्द्र पंगोरिया इण्टर कॉलेज) से इण्टरमीडिएट की परीक्षा पास की ।इसके पश्चात् आपने स्नातक और 'हिन्दी साहित्य' से परास्नातक की परीक्षाओ को बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झाँसी से उत्तीर्ण किया विवाह होने के पश्चात् कुछ परिस्थितियो वश चाहते हुये भी आप पी०एच०डी० नहीं कर सकीं ।

पुष्पाजी का विवाह इनकी माँ की इच्छानुसार बिना दहेज की माग पर डाक्टर रमेशचन्द्र शर्मा के साथ हुआ । वैवाहिक कर्यक्रम आपकी जन्मस्थली सिकुर्रा से दिसम्बर सन् १९६३ मे पूर्ण हुआ। पुष्पाजी ने अपने जीवन में अनेकों चुनोतियो का सामना किया । पुष्पाजी अपने दुर्भाग्य के विषय में स्वयं कहती हैं **"ऐसी जन्मी कि पिता मर गये । एक मेरा भाई भी था । वो भी मर गया था और यहाँ आयी तो तीन लड़की पैदा कर दी ।मतलब अभगिन हो । तब मै मन ही मन सोचती कि मरी बच्चियों से तो ऐसा मत कहो । मैं तुम्हें इनको बना के दिखाऊँगी ।"३** आपकी बेटियों के नाम क्रमशः नम्रता,मोहिता एवं सुजाता हैं । आपने जो कहा वास्तव में इस दुनिया को करके दिखलाया । आज आपकी तीनों बेटियां आपकी भाँति सुयोग्य एवं कीर्तिवान हैं । दो बेटियां 'ऑल इण्डिया इन्स्टीट्यूट' में डाक्टर हैं और एक पुत्री वर्तमान समय में प्राइवेट प्रैक्टिस कर रही है । आपकी तरह आपकी पुत्रियाँ भी लेखन में रूचि रखती है । यह बड़े सौभाग्य की बात है । पुष्पा जी को साहित्य लेखन के प्रति आकर्षित कर ,साहित्य सृजन की प्रेरणा इनकी पुत्रियों ने ही दी । मैत्रेयी जी इस विषय में अपने साक्षात्कार में कहती है। **"कि- मेरे यहाँ उल्टा हुआ है,बच्चों को डाक्टर मैने बनाया और मुझे लेखिका बच्चियों ने बनाया ।"४**

बच्चियों की प्रेरणा से प्रथम बार मैत्रेयी जी की एक छोटी सी कहानी साप्ताहिक हिन्दुस्तान में ८ अप्रेल सन् ९० को छप गई । वह बुन्देली भाषा में छपी थी इसके पश्चात् आठ-दस कहानियाँ भी छप गई । इससे पहले एक उपन्यास भी लिखा। फिर 'चिन्हार ' कहानी संग्रह आया । 'चिन्हार'बुन्देली

---

२. सृजन समीक्षा (साहित्य एवं संस्कृति का त्रैमासिक अक्टूबर-नबम्बर-दिसम्बर २००४) - सम्पादक- सत्यवान शुक्ल (पृ० संख्या -१२)

३. वही - (पृ० संख्या- ११)

४. वही - (पृ० संख्या- १२)

भाषा का ही शब्द है । जिसका अर्थ है पहिचान । यह मैत्रेयी जी की पहिचान बनाने में सफल रहा । इसके पश्चात् 'वेतवा बहती रही' उपन्यास लिखा । 'इदन्नमम ' आपका दूसरा उपन्यास है, जिसने आपको बहुचर्चित कर आपकी पहचान बनायी । आपको लोग इद्न्नमम् के नाम से पूरे देश में जानने लगे ।

"चाक के विषय में मैत्रेयी जी कहती हैं कि ये तो जीवन की कहानी है अपनी जिन्दगी पर जो सस्कार हावी है , जो उसको तोड़ते ,काटते, छीजते है ,उनको बदलने का प्रयास चाक हैं और मै यही कहती हूँ । आप शायद मुझसे पूछें चाक ही मुझे सबसे ज्यादा पसन्द है । मैने सब उपन्यासों में चर्चा पाई है , तारीफें पाई है, कोई न कोई पुरूस्कार मिले है, चाक को कोई पुरुस्कार नही मिला । वह साहित्य अकादमी में कई साल रहा लेकिन कटता ही रहा। फिर भी चाक ही मुझे अधिक प्रिय है क्योंकि स्त्री का दृष्टिकोण देखना है तो सब तरह से है।"५

आपका 'कही ईसुरी फाग' उपन्यास बुन्देलखण्ड में बहुत चर्चित हुआ। यह बुन्देलखण्ड के लोककवि 'ईसुरी' के जीवन चरित्र पर आधारित है। इदन्नमम् और अल्मा कबूतरी से इसकी भाषा अपेक्षाकृत परिष्कृत है और इसमें बुन्देली की छौंक भी ठीक-ठाक है। कई बार तो ऐसा लगता है कि यह उपन्यास किसी दूसरे लेखक का है और वह दूसरे लेखक का ? आपने एक लघु उपन्यास झूला नट लिखा है उसको पढ़कर प्रत्येक पाठक को हँसी आती है। किसी ने कहा है कि वह तो २००० गज के प्लाट पर २०० गज का मकान है। 'अगिन पाँखी' उपन्यास के विषय में मैत्रेयी कहती है कि **"स्मृति दंश जो मैंने लिखा था उससे मैं संतुष्ट नहीं थी। दरअसल मेरी एक बहन है। पूँछ में ब्याही है। खिल्ली की है। उनकी पागल से शादी हो गयी, उसकी कहानी है वह। स्मृतिदंश से मैं संतुष्ट नहीं थी। मैंने ग्यारह साल बाद फिर उठाया उसको। वह छपी नब्बे में और यह दो हजार एक में आयी मैंने उसको नया रुप दिया।"६**

---

५. सृजन समीक्षा (साहित्य एवं संस्कृति का त्रैमासिक जनवरी-जून २००५) - सम्पादक- सत्यवान शुक्ल (पृ० संख्या -२४)

६. वही - (पृ० संख्या- २८)

मैत्रेयी जी को कार्य करने के प्रति अपार लगन है। वे किसी भी कार्य को करती हैं तो पूरा करके ही छोड़ती हैं। उन्होंने अपने विषय में स्वंय कहा है कि **"मैं जब पढ़ी तो पढ़ी, जब शादी की तो अच्छी तरह निभाया, आपस में नोंक-झोंक भी हुयी, पर साथियों की तरह रह पाये या उन्होंने बनना भी चाहा मेरा ईश्वर तो बनने नहीं दिया और फिर जब बच्चों को पाला तो अपनी ड्यूटी पूरी की और अब लेखन किया तो लेखन है। मैं कहा करती हूँ जब मैंने स्वेटर बुने तो पूरे मन से बुने, जब मैंने डोसे बनाये तो पूरे मन से बनाये, जब मैंने उपन्यास लिखे तो पूरे मन से लिखे।"७**

मैत्रेयी को साहित्य के प्रति बचपन से ही रुचि है। इन्होंने अपने पंसदीदा अनेकों साहित्यकारों को पढ़ा। जिनमें तस्लीमा नसरीन, महाश्वेता देवी, शरद, विमल मित्र को साप्ताहिक हिन्दुस्तान में, टाल्सटॉय, दोस्तोवस्की चाक लिखते समय इन्होंने अन्ना करेनिना के दोनों भाग पढ़े। रेणु जी को बहुत अच्छी तरह से पढ़ा।

मैत्रेयी जी को बचपन में ही अपने मित्र के पत्र द्वारा लेखन की प्रेरणा जागृत हुई। तभी से इन्होंने लिखना प्रारम्भ कर दिया था। इन्होंने फिर कॉलेज मैगजीन में लिखा। आपको भगवानदास माहौर जैसे टीचर प्राप्त हुए। माहौर साहब ने आपको लिखने के लिए हमेशा प्रेरित किया एवं आपका हौसला भी बढ़ाया। माहौर साहब ने ही आपको कॉलेज मैगजीन में आर्टिकल लिखने के लिए प्रोत्साहित किया। उन्हीं दिनों आपकी शादी की चर्चा चलने लगी। माहौर साहब ने शादी के लिए मना किया और पी०एच०डी० करने की सलाह दी। उस समय मैत्रेयी जी ने बी०ए० किया था। एम०ए० प्रथम वर्ष में आई थीं। तभी आपकी शादी की बात चलने लगी थी। पुष्पा जी के जीवन में ऐसी परिस्थितियां बनी कि उनका जीवन संघर्ष मय बन गया। इतना संघर्ष कि उनका जीवन शादी की तरफ मुड़ गया। साहित्य में रुचि होने के कारण आप अपने शादी के बक्से में भी कामायनी व उद्धव-शतक रख कर गयी।

मैत्रेयी जी में विद्यार्थी जीवन से ही साहित्य सृजन प्रस्फुटित होकर प्रौढ़ता को प्राप्त हुआ। आप बचपन से ही आस-पास के साहित्यिक वातावरण से प्रभावित रही है। जब आप झांसी में एम०ए० की

---

७. सृजन समीक्षा (साहित्य एवं संस्कृति का त्रैमासिक जनवरी-जून २००५) - सम्पादक- सत्यवान शुक्ल (पृ० संख्या -३२)

शिक्षा प्राप्त कर रही थीं, उस समय चिरगांव में राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त और झांसी में डा० वृन्दावन लाल वर्मा की लेखनी का यश सभी जगह व्याप्त था। ऐसे महान लेखकों के साहित्य को पढ़कर मैत्रेयी जी के हृदय में भी साहित्य सृजन के प्रति चेतना जाग्रत हुई।

मैत्रेयी जी कहती हैं कि **"जब मेरे सहपाठी रचनायें लिखा करते थे तो उन्हें पढ़कर मुझे भी लगता था कि मैं भी कुछ कर सकती हूँ मैं भी इनके जैसा लिख सकती हूँ।"**८ यही प्रतिस्पर्धा पुष्पा जी के जीवन का प्रेरणास्रोत सिद्ध हुई है। आपके गुरु श्रीकृष्ण बिहारी भौंडेले (अंग्रेजी) एवं सुलतान सिंह चौहान (हिन्दी) से भी आपको साहित्य सृजन की प्रेरणा मिली । आपके गाँव में त्रिपथगा ओर नवनीत पत्रिकायें उस समय प्रकाशित होकर आती थी । उनमें प्रकाशित मनोरम कवितायें भी आपके मनोबल को बढ़ाती थी । इन सभी को आधार बनाकर आपने छोटी -छोटी रचनाये विश्वविद्यालय झाँसी की पत्रिका में प्रकाशित करवायी ।

वैवाहिक जीवन के पश्चात जिम्मेदारियों से लेखन कार्य मे शिथिलता आ गयी । इसके पश्चात् पुत्रियों के प्रोत्साहन ने पुनः साहित्य सृजन के लिये प्रेरित किया। आज सम्पूर्ण भारत के पाठक जन आपकी रचनाओं को पसंद करते हैं।

मैत्रेयी जी की रचनायें-

१. उपन्यास -

१. वेतवा बहती रही २. इदन्नमम ३. चाक ४. झूला नट ५. अल्मा कबूतरी

६. विजन ७. अगन पाखी ८. कही ईसुरी फाग ९. त्रिया हठ

२. कहानी - १. गोमा हसती है २. ललमनियाँ ३. चिन्हार

३. आत्मकथा- कस्तूरी कुण्डल बसै

४. स्त्री स्पर्श- खुली खिड़कियाँ, सुनो मालिक सुनो

५. नाटक - मंदाक्रान्ता

६. १. फैसला कहानी पर टेलीफिल्म 'बसुमती की चिट्ठी'

---

८. मैत्रेयी पुष्पा के कथ्य का आलोचनात्मक अध्ययन (इदन्नमम्, चाक के विशिष्ट संदर्भ में) - लघुशोध - कु० सीमा सौनकिया (पृ० संख्या -२)

२. इदन्नमम उपन्यास पर आधारित साँग साँग एण्ड ड्रामा डिवीजन द्वारा निर्मित छायाचित्र 'मदाक्रान्ता'

हिन्दी साहित्य जगत में विभिन्न सम्मान-

साहित्यिक उपलब्धियों द्वारा मैत्रेयी जी के श्रेष्ठ लेखन को आसानी से आंका जा सकता है।

१. हिन्दी अकादमी द्वारा साहित्य कृति सम्मान

२. फैसला कहानी पर - कथा पुरुस्कार

३. वेतवा बहती रही - प्रेमचन्द्र सम्मान (उ०प्र० साहित्य संस्थान १९९५)

४. इदन्नमम- नंजनागुड तिरुमालवा पुरुस्कार (शाश्वती संस्था बंगलौर १९९६)

५. इदन्नमम- वीरसिंह देव पुरुस्कार (म०प्र० साहित्य परिषद)

६. इद्न्नमम्- प्रेमचन्द्र सम्मान (उ०प्र० साहित्य संस्थान)

७. कथाक्रम सम्मान- २०००

८. अलमा कबूतरी - सार्क लिटरेरी अवार्ड (२००१)

९. (सरोजनी नायडू अवार्ड २००३)

अध्याय- ५

बुन्देलखण्ड अंचल के प्रमुख उपन्यासों का कथ्य

५.१ श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' जी के उपन्यास

५.२ डा० वृन्दावन लाल वर्मा जी के उपन्यास

५.३ मैत्रेयी पुष्पा जी के उपन्यास

श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' के उपन्यासों के कथ्य

(क)- मनोवेदना

दिव्य जी ने इस उपन्यास में अपने मनोभावों को बड़ी ही महानता से प्रकट किया है। इनके इस उपन्यास में यह दर्शाया गया है कि शिक्षित व्यक्तियों से अशिक्षित व्यक्ति अपनी बात मनवाने में अधिक श्रेष्ठ होते है। अशिक्षित व्यक्तियों की वाक चतुरता के समक्ष शिक्षित व्यक्तियों को घुटने टेकने पड़ते हैं प्राचीन रूढ़ियों व प्रथाओं के समक्ष आधुनिक विचारों को प्रकट करना हेय समझा जाता है। इस उपन्यास में कुमुद का शिक्षित होना ही उसके जीवन का अभिशाप बन जाता है। अंत में 'रामा' के प्राचीन व 'कुमुद' के आधुनिक विचारों में टक्कर होती हैं, जिसमें कुमुद को परास्त होकर अपने प्राणों का परित्याग करनापड़ता है।

शरद एम.ए. की परीक्षा देकर आगरा से लौटता है। ट्रेन में उसकी मुलाकात विनोद से होती है, उसके साथ उसकी बहिन कुमुद भी रहती है। वह कुमुद के सौन्दर्य को देखकर आकर्षित होता है। ट्रेन में उपस्थित सभी व्यक्तियों की निगाहें कुमुद पर ही केन्द्रित रहती है। कुमुद अपनी नजरों को झुकाकर बैठी रहती है। शरद चुपके से उसका फोटो निकाल लेता है। वह समझती है कि उसने हिरण का फोटो लिया है। विनोद व शरद की आपस में बातचीत होती रहती है। वे दोनों एक-दूसरे के विचारों से प्रभावित होते है। कुमुद बी.ए. की परीक्षा देकर घर पहुँचती है।

कुमुद की माँ 'रामा' पुराने विचारों को मानने वाली अशिक्षित, स्त्री शिक्षा की कट्टर विरोधी महिला है। शिक्षित महिलाओं के विषय में कहती है कि **"पढ़-लिख कर वे सीखतीं ही क्या है? बात-बात में पति की बराबरी करना, पति के साथ लगी फिरना, मुंह खोलकर जाने अनजाने से बात करना, क्लबों में जाकर नाचना और मौज करना। पढ़ी-लिखी स्त्रियों का यह भयंकर चित्र अपने हृदय पर अंकित किये वह अपने को अशिक्षित होने में भाग्यशाली समझाती है।"१**

कुमुद के पिता दिनेश 'रामा' को फूहड़ और असभ्य समझते है 'दिनेश' पश्चिमी सभ्यता को व 'रामा' प्राचीन भारतीय सभ्यता को पसंद करती है। 'रामा' अपनी पुत्री 'कुमुद' की शिक्षा का हमेशा विरोध करती है। पिता व भाई विनोद स्त्री शिक्षा के पक्षधर रहते है। इसलिए 'कुमुद' की पढ़ाई में विशेष

१. मनोवेदना उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या- ४)

वाधा नहीं आती है।

कुमुद की सहेली विमला 'इलस्ट्रेट वीकली' का अंक लेकर आती है। कुमुद उसमें अपनी फोटो देखकर भौंचक्की सी रह जाती है। कुमुद उसमें मुस्कराती सामने बैठी है, उसके पीछे हिरणी एक टीले पर खड़ी है। कुमुद पर विमला हास्य-व्यंग कसती है। विनोद कुमुद को कुछ दरख्वास्तों को देकर चला जाता है। 'कुमुद' उन दरख्वास्तों के मुताबिक सौ रू० का ऑफर देकर क्लर्क पद के लिए उपर्युक्त व्यक्ति को ऑफर भेजती है।

शरद की पढ़ाई के लिए उसके पिता अपनी सारी घर ग्रहस्थी कुर्बान कर देते है। इस विषय में शरद को कुछ भी पता नहीं रहता है। वह मौजमस्ती के साथ पढ़ाई करता है। शरद को जब यह पता चलता है कि उसके दादू ने सब कुछ बेच कर उसकी पढ़ाई में लगा दिया है। तो वह बहुत दुःखी होता है व अपने मन में सोचता हैं कि **"इतना रूपया मेरी पढ़ाई में न लगाकर किसी व्यापार में लगाया जाता तो क्या आज हम मालामाल न होते? एम.ए. करके मैं क्या कमा लूंगा? पिता जी को एम. ए., बी.ए. की कैफियत का पता नहीं कि एम.ए., बी.ए. आज कल कुलियों से भी अधिक सस्ते हैं। जहाँ दरख्वास्त भेजता हूँ वहीं 'नो वेकेन्सी' लिखा आता हैं।"२**

शरद के दादू को जब एम. ए., बी.ए. वालों को रोजगार न मिलने के संबंध में पता चलता है, तो वह बहुत दुःखी होते है। सब सम्पत्ति पढ़ाई में लगा देने पर गांव वाले उसकी बुद्धिमत्ता का मजाक उड़ाते है। उसी समय डाकिया दादू को एक लिफाफा देकर चला जाता है। दादू हर्ष के साथ शरद को लिफाफा खोलने को कहता है। नासिक में पेट्रोल की एजेन्सी में सौ रू० मासिक पर क्लर्क पद की नौकरी का ऑफर पाकर वह बहुत प्रसन्न होता है। दादू भी प्रसन्न होकर ईश्वर को धन्यवाद देते हैं।

'कुमुद' द्वारा भेजे ऑफर के मुताबिक विनोद शरद को घर ले आता है। शरद के घर आ जाने से 'रामा' कुमुद के विवाह के लिए और भी चिंतित रहने लगती है। वह विनोद के मनपसंद विवाह करने के कारण कुमुद से सर्तक रहती है। विनोद शिक्षित होने के साथ-साथ स्वतंत्र विचारों वाला युवक है। वह अपने पसंद की शिक्षित लड़की वासुकी से विवाह करता है। 'रामा' वासुकी से मन ही मन चिढ़ती है।

---

२. मनोवेदना उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या- ८)

विनोद और वासुकी 'कुमुद' को बहुत स्नेह करते हैं व कुमुद का विवाह उसकी पसंद के अनुसार कराना चाहते है। 'कुमुद' व 'शरद' एक दूसरे से प्रेम करते हैं। विनोद उन दोनों की भावनाओं को समझकर उनके पक्ष में रहता हैं। दिनेश भी 'कुमुद' का विवाह उसके समकक्ष लड़के के साथ करना उचित समझता है।

'रामा' कुमुद के विवाह की चर्चा कमलाकान्त के पुत्र बाबू से चलाती है। बाबू की योग्यता हाईस्कूल तक है। 'रामा' अपने पति दिनेश से बाबू की अमीरी के बारे में बताती हैं। दिनेश कमलाकान्त के घर जाकर कुमुद का विवाह बाबू के साथ तय कर देते हैं। दिनेश के ससुर राममोहन कमलाकान्त की अमीरी की प्रसंशा करते है। राममोहन का पुत्र रमेश व बाबू एक-दूसरे के मित्र हैं। दोनों का एक दूसरे के घर आना जाना रहता है।

दिनेश नासिक से अपने घर आकर कुमुद का विवाह तय करने की बात 'रामा' को बताता है, उसके हर्ष का ठिकाना नहीं रहता हैं। कुमुद यह बात सुनकर बहुत दुःखी होती है। विनोद इस विवाह का विरोध करता हैं। वह शरद के साथ कुमुद का विवाह करना चाहता है न कि अपनढ़ लड़के के साथ। विनोद अपने माता-पिता को कुमुद व शरद के प्रेम के विषय में बतलाता है। रामा शरद के साथ विवाह का विरोध कर विनोद से कहती है कि कुमुद की शादी शरद से **"हरगिज न होगी। हो जो बरबादी होना हो। तुमने है उसे बहका रखा। रूपया न खर्च करना पड़े। मैं सब चाल समझती हूँ एक निठल्ले को जिसकी न जाति का पता है न घर का उसके लिए बुला रक्खा है। आँख देखते मक्खी नहीं निगली जाती । उसके एम.ए. को क्या कुमुद देख-देख कर जियेगी। जब घर में चूहे लौटते होंगे तभी न बाहर नौकरी करता फिरता है। तुम अपनी मालकिन की शिक्षा में लगे हो। बिटिया को बरबाद करना चाहते हो। मेरे जीते जी तुम्हारी न चलेगी।"[३]** विनोद माँ की कटु बातों से दुःखी होता है। कुमुद के कारण विनोद को काफी नुकसान सहना पड़ता है। नेकी करने पर उसे बदी मिलती है। विनोद माँ से हुए वार्तालाप के विषय में वासुकी को बतला देता है। 'रामा' के कठोर शब्दों को सुनकर बासुकी का हृदय परिवर्तित हो जाता है। वह सभी के प्रति सहानुभूति रखती थी।

---

३. मनोवेदना उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या- २६)

विनोद से हुए वार्तालाप से पश्चाताप कर 'रामा' दहेज के लिए चिंतित होती है। वह वासुकी और विनोद के समक्ष हाथ फैलाना नहीं चाहती है। 'रामा' 'कुमुद' से शरद के ऑफिस की दूसरी चावियां लेकर अलमारी से १०,००० रू० निकाल लेती है। कुमुद 'रामा' द्वारा की गई चोरी को देख लेती है। वह इसका विरोध करती है। 'रामा' उसे कुए में गिर कर मर जाने की धमकी देती है। कुमुद विवश सी रह जाती है।

शरद अपने ऑफिस की अलमारी में रूपये न पाकर परेशान हो जाता है। वह जैसा ऑफिस छोड़कर जाता है, तैसा ही मिलता है।ताला भी नहीं टूटता है, लेकिन रूपये गायब हो जाते है। वह किसी से चोरी होने की बात भी नहीं कह सकता है, क्योंकि कोई उस पर विश्वास ही नहीं करेगा? वह वेश-बदलकर भाग जाना उचित समझता है। ऑफिस की दराज से वह एक हजार का ड्राफ्ट लेकर साधू बनकर हरिद्वार में रहने लगता है।

कुमुद की शादी बाबू के साथ हो जाती है। वह अपनी ससुराल आती है। बाबू का छोटा भाई रमेश द्वारा सिखाई पोइट्री कुमुद के सामने कहता है। **"बीबी बी.ए. मियां मूसर टुथ आई टेल इक्सक्यूजमी सर"**४ बाबू को कुमुद के सामने अपनी बेइज्जती असहनीय हो जाती है। उसमें कुमुद के समक्ष जाने का साहस ही नहीं रहता है। वह पहली रात्रि को ही वह घर छोड़कर बम्बई पहुँच जाता है। वहां पर कीमती जेवरों को बेचकर डिग्री खरीदने जर्मनी चला जाता है। वहां पर उसे डिग्री न मिल पाने के कारण पह निराश हो जाता है। कॉलेज में पढ़-लिख कर आठ-दस साल निकाल देना वह बेकार समझता है। वह अपने मन में विचार कर कुमुद को मात देने के लिये इंग्लिश लेडी से विवाह करने की योजना बनाता है। वह इंग्लैण्ड जाकर मिस्टर ग्रे की बेटी जाबरा से विवाह कर भारत लौटता है। बाबू के साथ नयी मेम को देखकर सभी आश्चर्य चकित रह जाते हैं। रमेश के मन में उसकी मेम को देखकर ईर्ष्या होती हैं। बाबू के घर को छोड़कर चले जाने पर कुमुद की हालत बड़ी दयनीय हो जाती है। वह अपने सिर पर विधवा होने के कलंक को लेकर परेशान रहती है। सभी के ताने सुन-सुन कर घुट-घुट कर एक-एक पल जीती है। बाबू के घर आने की सूचना को पाकर उसे इतनी खुशी मिलती है, जितना दुःख सौतन को साथ लाने में नहीं होता हैं ।

---

४. मनोवेदना उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या- २६)

कुमुद उत्सुक होकर बाबू के पास जाती है। बाबू उसकी हालत देखकर अपने को दोषी समझ कर रह जाता है, उसे अपने किए पर दुःख होता है। वह कुमुद की शिक्षा की बराबरी इंग्लिश लेडी के लाने से करता है। जाबरा बाबू से कुमुद के विषय में जानने की कोशिश करती है। कुमुद स्वयं को उसकी सेविका बता कर वहाँ से चली जाती है। बाबू कुमुद की बात को सुनकर रह जाता है।

वह **"अपनी स्वजातीय अपनी परणीता अबला की यह दशा उसे असहनीय हो गई। कुमुद से उसे घृणाा नहीं थी, घृणा थी उसकी डिग्री से। जैसे- निरीह गाय को मार कर पश्चताप करे, बाबू उसी तरह पश्चताप करने लगा। कुमुद के मूल्य को वह उसी उत्तर से समझा सका। उसकी आंखों से आंसू आ गाये, तब भी उन्हें दबाकर रह गया।"५**

कुमुद यह समझाती है कि इंग्लिश लेडी दाम्पत्य जीवन में किसी की साझेदारी सहन नहीं करती है। ससुराल में अब उसका अपना कहने वाला कोई नहीं रह जाता हैं। वह ससुराल छोड़कर अपने मायके आ जाती हैं

कुमुद की हालत देखकर उसके माता-पिता रह जाते है। वासुकी,कुमुद की हालत का जिम्मेदार उसकी मां को ठहराता है। कुमुद बाबू के दूसरे विवाह के संबंध में सभी को बतलाती है। वासुकी शरद को बेड़ियों में जकड़ा हुआ कुमुद को दिखलाती है। शरद सी.आई.डी. द्वारा पकड़ा जाता है। शरद की हालत देखकर वह अपनी माँ 'रामा' को समझाती हैं। 'रामा' अपना चोरी करने का जुल्म छुपाने के लिये पुनः कुमुद को कुए में गिरने की धमकी देती है। कुमुद की मां उस पर आरोप लगाती है कि तुम शरद के प्रेम के कारण ही ससुराल छोड़कर आयी है, और तू शरद के साथ विवाह करना चाहती है। कुमुद मां द्वारा बार-बार लगाये आरोप को सहन नहीं कर पाती है। वह कुए में गिर कर अपने प्राणों का बलिदान कर मां के आरोप को झुठला देती है। विनोद शरद पर दया कर उसे निर्दोष साबित कर छुड़वा देता है। वासुकी और रामा में कुमुद के मरने के पर झगड़ा होता है। विनोद उन्हें शान्त करता है। कुमुद की अंतिम क्रिया की जाती है। शरद कुमुद की मृत्यु की खबर सुनकर दुःखी होता है। सजीव कुमुद की सुन्दर छवि उसके हृदय में अंकित रहती है।

अपनढ़ मां शिक्षित पुत्री की मनोवेदना को अंत तक नहीं समझती है, जिसके कारण अंततः कुमुद को अपने प्राणों की आहूति देनी पड़ती है।

---

५. मनोवेदना उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या- ७१)

(ख)- निमियाँ

यह दिव्यजी का दूसरा सामाजिक उपन्यास है। 'निमियाँ' का प्रकाशन सन् १६४८ में हुआ। यह ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर आधारित एक सामाजिक उपन्यास है। दिव्यजी ने अपने इस सामाजिक उपन्यास में तत्कालीन सन् १६४० की विन्ध्यप्रदेश की प्रमुख रियासतों (विजावर, टीकमगढ़, अजयगढ़ तथा छतरपुर आदि) के घटना क्रम का सफल चित्रण प्रस्तुत किया है। 'निमियाँ' उपन्यास की कथावस्तु इन्हीं रियासतों की शासन व्यवस्था पर केन्द्रित है।

श्यामलाल राज्य के सिलहखाने में पन्द्रह रुपये वेतन पर कार्यरत रहते हैं। परिवार में बूड़ी माँ, दो भाई (मझले-सझले), बहिन कृष्णा, पत्नी (बहूरानी) एवं चार पुत्रियाँ हैं। कुल मिलाकर संयुक्त परिवार है। बहूरानी पुनः पाँचवी पुत्री को जन्म देती है। दादी माँ पोते का बेसब्री से इंतजार करती है। पाँचवी पोती होने पर दादी के हृदय पर बज्र सा टूट पड़ता है। वे करुण कृन्दन करती हुयी विलाप करती है **"चूल्हे में रख दो। चार तो थी ही पाँचवी और आ गयी। न जाने बाप ने कितना कर्ज काढ़ा था पूर्वजन्म की दाबागीर है। भगवान का बुरा हो............एक-एक शादी में हजार-हजार से कम नहीं लगता।"**[१]

माँ का कृन्दन सुनकर कृष्णा उन्हें समझाते हुए कहती है **"अम्मा क्यों दुःख करती हो? लड़का-लड़की सब अपना अपना भाग्य लेकर आते हैं। संसार में दो ही तो होते हैं -लड़का हो या लड़की।"**[२] बहूरानी भी निमियाँ को घृणित नजरों से देखती है। निमियाँ के जन्म वर श्यामलाल को भी कष्ट होता है। श्याम की विधवा बहिन कृष्णा निमियाँ का लालन-पालन करती है।

संयुक्त परिवार व अधिक पुत्रियों के कारण श्यामलाल को आर्थिक समस्याओं से जूझना पड़ता है। बड़ी दो पुत्रियाँ विवाह योग्य हो जाती हैं। महाराज से ऋण प्राप्ति की कोई आशा नहीं रहती है। पिता का कर्ज ही उनके ऊपर चढ़ा रहता है। इन सभी समस्याओं को लेकर श्यामलाल दिन-रात चिंता में डूबे रहते थे। एक दिन लटोरा उनके घर आता है। वह श्यामलाल से मिलकर शेर के शिकार की भूमिका बनाता है। महाराज को दोनों जंगल में शिकार के लिए ले जाते हैं। शेर को गुफा से निकालने

---

१. निमियाँ उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या- ७)

२. निमियाँ उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या- ८)

में श्यामलाल आगे बढ़कर अदम्य साहस का परिचय देता है। शेर को सामने से आते देख महाराज बन्दूक के प्रहार से उसे धराशायी कर देते हैं। महाराज श्यामलाल से प्रसन्न होकर उसे पूर्वजों की पेशकारी लौटा देते हैं। निमियाँ के जन्म के तुरंत बाद ही पेशकारी मिलने पर सभी उसके भाग्य को सराहते हैं। श्यामलाल की सभी समस्याओं का हल निकल आता है।

महाराज के दो रानियाँ है। पहली को बड़ी सरकार व दूसरी को छोटी सरकार कहकर पुकारा जाता है। बड़ी रानी विवाहित होत हुए भी तिरस्कृत है, जबकि छोटी रानी रखैल होते हुए भी राजा को प्रिय है। बड़ी सरकार सरल स्वभाव, ईश्वर में आस्था रखने वाली साध्वी महिला है जबकिछोटी सरकार षणयन्त्रों का जाल फैलाने वाली कुटिल महिला है। महाराज दिन-रात छोटी सरकार के रूप सौन्दर्य पर निछावर रहते है। शिकार से लौट्कर महाराज छोटी सरकार के शयन कक्ष में पहुँचते हैं। छोटी सरकार राजा को प्रसन्नचित देखकर समय का लाभ उठाती हुई उनसे वचन मांगती हैं कि अपने पुत्र नरेन्द्र को युवराज बनाया जाए। युवराज पद का अधिकारी बड़ी सरकार का पुत्र युवराज रहता है। महाराज के शान्त रहने पर छोटी सरकार प्रतिदिन गृहकलह करती थी। महाराज उसे नरेन्द्र को युवराज बनाने का आस्वासन दे देते है।

एक दिन राज्य में पारितोषिक वितरण समारोह होता हैं उस समारोह में युवराज उपस्थित होते है। युवराज को शिक्षण कार्य के कारण अधिकांश समय राज्य के बाहर ही रहना पड़ता था। समारोह में नरेन्द्र आकर युवराज से कहता है अब तुम युवराज नहीं, हो मैं युवराज हूँ। युवराज को छोटे से बालक नरेन्द्र की बातों में सच्चाई नजर आती है। उन्हें अपने युवराज पदों को लेकर खतरा महसूस होता है दोनों में वाद-विवाद होने लगता है, जिससे बात और भी स्पष्ट हो जाी है।

दीवान साहब समय की नजाकत का लाभ उठाते हुए छोटी सरकार, महाराज व युवराज तीनों पक्षों से हाथ बनाने की भूमिका बनाते रहते है छोटी सरकार दीवान साहब को पहले से ही अपने पक्ष में कर लेती है। दीवान साहब के बिना राज्य में कोई सम्भव नहीं था। महाराज युवराज के दुर्व्यवहार के कारण नरेन्द्र को ही युवराज बनाने का विचार करते है। इस संबंध में दीवान साहब से विचार विमर्श करते हैं। दीवान साहब भी महाराज से नरेन्द्र को ही युवराज बनानेका अपना मन्तव्य करते है।

श्याम लाल को पेशकारी मिलने के पश्चात् उनके दिन ही बदल जाते है। नया घर बन जाता है।

दो लड़कियों का विवाह तय हो जाता है। वे सभी तरह से सम्पन्न हो जाते है। मझले-सझले भाईयों को भी रोजगार दिलवाकर उनका विवाह कर देता है। श्यामलाल अपनी पुत्रियों के विवाह में महाराज को आमंत्रित करते हैं। महाराज युवराज को अपना प्रतिनिधि बनाकर उनके घर भेजते हैं। नरेन्द्र भी अपने को युवराज मानकर उत्सव में पहुँच जाता है। वह युवराज को युवराज के आसन से धक्का देकर उठाना चाहता है। पर वे नहीं उठते हैं। वहाँ पर नरेन्द्र अपने को युवराज बतलाता है। युवराज को क्रोध आ जाता है और दोनों में विवाद हो जाता है। युवराज नरेन्द्र को धक्का देकर गिरा देते हैं, जिससे उसके सिर में चोट आ जाती है। वह छोटी सरकार के पास पहुँच कर युवराज की शिकायत अपनी चोट दिखाकर करता है। छोटी सरकार नरेन्द्र की चोट को देखकर क्रोधाग्नि में जलने लगती है और महाराज के शिकार से लौटने की प्रतीक्षा करने लगती है तथा डाक्टर व दीवान को भी अपने पक्ष में कर लेती है।

युवराज छोटी सरकार के षणयन्त्रों को भाप कर एक चाल उनके खिलाफ भी चलते हैं। वे हलका और घपला को एक-एक हजार रुपये देकर अपने ऊपर गोली चलाने की भूमिका बनाते हैं। एक दिन युवराज व दीवान में वार्तालाप चलती है उसी समय बन्दूक से बार होता है। दीवान साहब प्राणों को बचाकर छिप जाते हैं। दोनों अपराधी पकड़े जाते हैं। वे योजनानुसार युवराज को छोटी सरकार द्वारा मारने की भूमिका व्यक्त करते हैं।

महाराज के वापस आने पर दीवान साहब दोनों पक्षों को उनके समक्ष रखते हैं। छोटी सरकार इसे अपने खिलाफ युवराज का षणयन्त्र बतलाती है। महाराज युवराज के शातिर दिमाग को समझ जाते हैं और वे दीवान साहब से नरेन्द्र को युवराज बनाने की योजना बनाते हैं।

श्यामलाल की दो बड़ी बेटियों का विवाह सम्पन्न हो जाता है। वे अपने-अपने घर चली जाती हैं। दादी भी परलोक सिधार जाती है। हैजा की बीमारी में दो पुत्रियाँ मर जाती हैं। धीरे-धीरे निमियां विवाह योग्य हो जाती है। समयानुसार उसमें शारीरिक बदलाव व सौन्दर्य में निखार आने लगता है। निमियाँ रुप की धनी होने के साथ गुणों में परिपक्व हो जाती है। माता-पिता को निमियाँ के योग्य सुन्दर पढ़े-लिखे वर को खोजने की चिंता होती है। वे निमियां का विवाह एक अच्छे खानदान में करना चाहते हैं। निमियाँ के विवाह के लिए उसके मामा एक वर की जानकारी भेजते हैं। वह बाबू बद्रीप्रसाद का पुत्र

रमेश रहता है। रमेश् आगरा में एल.एल.बी. की शिक्षा ग्रहण कर रहा था। एक हजार रुपये दहेज में विवाह तय हो जाता है। श्यामलाल को लड़का पसंद आ जाता है। बद्रीप्रसाद व उनकी पत्नी रजनी देवी भी निमियाँ की तारीफ सुनकर प्रफुल्लित हो जाती है।

महाराज युवराज के होते हुए नरेन्द्र को युवराज बनाने में असमर्थ रहते हैं। वे गवर्नमेंट की अनुमति लेने के लिए दीवान साहब को इंग्लैण्ड भेजने का प्रबंध करते हैं। दीवान साहब नरेन्द्र को युवराज बनाने के लिए इंग्लैण्ड जाने को तैयार हो जाते हैं। महाराज दीवान साहब को सात लाख रुपये देने का वादा करते हैं। दीवान साहब महाराज को दो अर्जियों की जानकारी देते हैं। पहली अर्जी में युवराज को कम्पनी में कार्य सीखने के लिए महाराज से अनुमति लेना। दूसरी अर्जी श्यामलाल की रहती है, जिसमें वह पुत्री के विवाह के लिए एक हजार रुपये की मांग करता है।

महाराज युवराज को राज्य में ही कार्य सीखने की अनुमति देते हैं तथा श्यामलाल की अर्जी नामंजूर कर देते हैं। दीवान साहब की सात लाख की अर्जी महाराज की पेशकश के लिए पेशकार श्यामलाल तक पहुँचती है। श्यामलाल अपनी नामंजूर अर्जी को देखकर दुखी होता है। महाराज दीवान साहब की सात लाख की अर्जी पर हस्ताक्षर कर देते हैं। श्यामलाल राज्य में महाराज के अन्यायपूर्ण निर्णय को देखकर दंग रह जाता है।

राज्य के कार्य को समाप्त कर श्यामलाल अपने घर पहुँचता है। वहाँ पर उनकी मुलाकात युवराज से होती है। युवराज श्यामलाल की सरकारी अर्जियों को पढ़ लेते हैं। उन्हीं अर्जियों में युवराज को अपनी अर्जी भी मिलती है। जिसमें उन्हें राज्य में ही कार्य करने का आदेश दिया जाता है।श्यामलाल महाराज की सारी बातें युवराज को बतला देते हैं। लटोरा छिप कर युवराज व श्यामलाल की बातें सुन लेता हैं। युवराज के जाने के पश्चात् वह बाहर निकल आता है। श्यामलाल लटोरा को देखकर चकित रह जाता है। युवराज द्वारा दिये तीन सौ रुपये में से श्यामलाल सौ रुपये लटोरा का मुँह बन्द करने के लिए देता है। लटोरा सीधा छोटी सरकार के पास पहुँचकर सारी बातें बतला देता है।

दीवान साहब सात लाख की अर्जी मिलने का इंतजार करते हैं। श्यामलाल उनके पास अर्जी लेकर पहुँचते हैं। दीवान साहब अर्जी देखकर क्रोधित होने लगते हैं, क्योंकि श्यामलाल महाराज से अपनी एक हजार वाली अर्जी पर गलती से दस्तखत करवा लेते हैं। श्यामलाल पुनः अर्जी लिख महाराज के पास

पहुँचते हैं। जब तक महाराज कुछ दिनों के लिए राज्य से बाहर चले जाते हैं। दीवान साहब को महराज के आने का इंतजार करना पड़ता है।

युवराज महाराज के मन्तव्य व दीवान साहब की इंग्लैण्ड यात्रा के उद्देश्य को भी जान जाते हैं। श्यामलाल व युवराज में खूब पटने लगती है। श्यामलाल युवराज से अपनी बेटी के विवाह के लिए मदद लेने के लिए सोचते हैं, लेकिन संकोचवश रह जाते हैं।

महाराज के राज्य में वापिस लौटने पर छोटी सरकार लटोरा व श्यामलाल की सारी बातें बतलाती हैं। दीवान साहब भी अपने इंग्लैण्ड न जाने का कारण श्यामलाल को बतलाते हैं। युवराज राज्य में कार्य सीखने से इंकार कर देते हैं।

श्यामलाल निमियाँ के विवाह के लिए राज्य के सरकारी रुपयों में से दो हजार रुपये निकाल लेते हैं। रुपये घर लाकर बहूरानी को सौंप देते हैं। बहूरानी व कृष्णा में आये दिन द्वन्द्व होता रहता था। उन दोनों की बिल्कुल भी नहीं पटती थी। कृष्णा मन ही मन बहूरानी से जलती थी। निमियां उन रुपयों के विषय में कृष्णा को बतला देती है। कृष्णा सझले-मझले भाईयों को श्यामलाल के खिलाफ भड़काकर अपने पक्ष में कर लेती है। वह उन रुपयों को चोरी करने की योजना बनाती । इसमें वह सफल हो जाती है। सभी बराबर-बराबर रुपयों को आपस में बाँट लेते हैं।

महाराज श्यामलाल के खिलाफ बातों को सुनकर क्रोधित होते हैं। वे उसे पेशकारी के पद से हटा देते हैं। महाराज श्यामलाल के घर लटोरा को पेशकार बनाकर बकाया दो हजार रुपये लेने को भेजते हैं। श्यामलाल बहूरानी से पैसा लाने के लिए कहते हैं। बहूरानी निश्चित स्थान पर पैसे खोजने लगती है। पैसा न मिलने पर वह दुःखी होती है। कृष्णा पर उसका शक जाता है। लेकिन वह निराश होकर रह जाती है। श्यामलाल को पैसा न लौटाने के कारण कैद हो जाती है। कृष्णा, सझले व मझले अपना परिवार लेकर घर छोड़कर चले जाते हैं। कृष्णा निमियां से भी अपने साथ जाने का आग्रह करती है। निमियाँ उसके झूठे स्नेह को ठुकरा कर अपनी माँ के साथ रहना पसंद करती है। भरे-पूरे घर में निमियाँ व उसकी माँ अकेली रह जाती हैं। बुरे समय में सभी साथ छोड़कर चले जाते हैं।

महाराज लटोरा को पेशकार बनाकर दीवान साहब की अर्जी पर दस्तखत करते हैं। दीवान साहब इंग्लैण्ड के लिए रुपये लेकर चले जाते हैं। युवराज को राज्य में कार्य सीखने के आदेश को न मानने

पर महाराज उन्हें राज्य छोड़ने का हुक्म देते हैं। युवराज राज्य छोड़कर चल देते हैं। जंगल में उनकी मुलाकात सझले से होती है, जो कि घायल अवस्था में मिलता है। युवराज उन्हें अपने घोड़े पर बिठाकर जंगल को पार करने लगते हैं। अपने कपड़े व हैट भी सझले को सौंप देते हैं। सझले गर्व से घोड़े पर बैठकर आगे बढ़ने लगता है व युवराज पीछे रह जाते हैं। थोड़ी देर बाद गोली की आवाज युवराज को सुनाई पड़ती है। युवराज छिपकर लटोरा व कढ़ोरा को देखकर उनकी योजना को समझ जाते हैं। युवराज के धोखे में सझले की मृत्यु हो जाती है। राज्य में युवराज की मृत्यु की खबर फैल जाती है और महाराज नरेन्द्र को युवराज बनाने के लिए निश्चिंत हो जाते हैं।

रमेश आगरा कालेज में पढ़ने वाली श्यामा को प्रेम करने लगता है। 'श्यामा' भी 'रमेश' को प्रेम करने लगती है। दोनों विवाह के बन्धन में बंध जाते है। उन दोनों के विवाह की तस्वीर बद्रीप्रसाद 'इलेक्ट्रेड वीकली' में देखते है। वे रमेश के विवाह की तस्वीर देखकर भौंचक्के से रह जाते है। बद्रीप्रसाद जी आधुनिकता को उपनाते हुए बी.ए. पास सुन्दर बहू को घर ले आते है। रमेश की मां को अंतर्जातीय विवाह मजबूर होकर स्वीकार करना पड़ा। वे न श्यामा का छुआ भोजन ग्रहण करती हैं और न ही श्यामा को रसोई घर में प्रवेश होने देती हैं। श्यामा को उनका छुआ-छूत अन्धविश्वास सहन न हुआ। सास-बहू में आपस में तनाव बढ़ने लगा। रमेश ने घर छोड़ने का निर्णय ले लिया। इसी बीच उनके राज्य में महाराज के विज्ञापन पर रमेश की नियुक्ति मजिस्ट्रेट के पद पर हो जाती है। रमेश के मन में श्यामलाल व उनकी पुत्री को देखने की प्रबल इच्छा होती है। लटोरा श्यामलाल का सारा हाल रमेश को बतला देता है। श्यामा के सौन्दर्य को देखकर लटोरा की नियत खराब होती है। रमेश की अदालत के समक्ष श्यामलाल की कार्यवाही शुरू होती है। पूर्व रिस्ते की सहानुभूति को प्रदर्शित करते हुए महाराज के न चाहते हुए रमेश श्यामलाल को सम्मान सहित बरी कर देता है।

जब तक श्यामलाल जेल में रहता है तब-तब उसके घर की स्थिति बहुत ही खराब हो जाती है। पर्दा-प्रथा के कारण रानी बहू घर के अन्दर का कार्य सम्भालती है व 'निमियाँ' बाहर का। वह गाँव के बाहर से पानी भरने जाती थी। एक दिन नरेन्द्र उसके सौन्दर्य को देखकर प्रभावित होता है तथा वह उसका रास्ता रोक लेता है। वह उसको चकमा देकर भाग जाती है। वह निमियाँ को खोजने का बहुत प्रयास करता है, लेकिन वह उसे नहीं मिलती है।

श्यामलाल जेल से छूटकर सीधे घर आता है। बहूरानी उन्हें देखकर आश्चर्यचकित रह जाती है। बहूरानी को श्यामलाल का पुनः बन्दी हाने का भय रहता है। वे घर छोड़कर भागने का प्रस्ताव रखती है। श्यामलाल अपने परिवार सहित इलाहाबाद पहुंच जाते है। वे अपने राज्य के पण्डा घर शरण लेते है। श्यामलाल वहीं अपनी दुकान खोल लेते है।

श्यामलाल के छूटने पर लटोरा महाराज की चारित्रिकता का लाभ उठाता है। वह महाराज के अत्यंत कामी स्वभाव को जानता है। वह महाराज के समक्ष 'श्यामा' के सौन्दर्य का विस्तार पूर्वक वर्णन करता है। महाराज श्यामा से मिलने को उत्सुक हो जाते है। लटोरा रमेश को गिरफ्तार करवा कर कैद खाने में डलवा देता है। श्यामा अपरिचित जगह में अकेली रह जाती है। वह रमेश की गिरफ्तारी पर अत्यंत दुःखी होती है। लटोरा उसे अपने जाल में फंसाने के लिये नये-नये तरीकों से जाल विछाता रहता है। वह रमेश की रिहाई के लिये 'श्यामा' को महाराज से मिलने का प्रस्ताव रखता हैं। 'श्यामा' 'रमेश' को छुडाने के लिए महाराज से मिलने को तैयार हो जाती है। वह अपनी सुरक्षा के लिये पिस्तौल छिपाकर अपने साथ ले जाती है। महाराज 'कढ़ोरा' को नया मजिस्ट्रेट बना देते है।

श्यामा पति की मुक्ति के लिये महाराज के समक्ष उपस्थित होती है। महाराज उसके सौन्दर्य को देखकर लालायत होते है। 'श्यामा' महल के अश्लील वातावरण को देखकर महाराज की नियत भाप जाती है। महाराज उसे अपनी हवश का शिकार बनाने की कोशिश करते है। श्यामा अपने पति का जीवन बचाने के उद्देश्य से महाराज पर गोली चलाने का विचार बदल देती है। वह स्वयं पर गोली चलाकर अपने जीवन का बलिदान कर अपने सद्चरित्र की रक्षा करती है। महाराज उसे उसके घर पहुंचा देते है। रमेश को अंतिम संस्कार का अवसर दिया जाता है।

इलाहाबाद में कुछ समय पश्चात् युवराज की मुलाकात श्यामलाल से होती है। श्यामलाल युवराज को जीवित देखकर आश्चर्यचकित रह जाता है। युवराज सारी घटना के विषय में श्यामलाल को बतलाते हैं। सझले की मृत्यु की जानकारी भी उन्हें देते हैं। युवराज पण्डा के घर नरेन्द्र के युवराज बनाने का निमंत्रण पत्र देखते हैं। श्यामलाल भी युवराज को नरेन्द्र के युवराज बनने के कार्यक्रम की सूचना देते हैं। युवराज श्यामलाल की मदद से महाराज की हत्या की योजना बनाते हैं। निमियाँ सहित सभी लोग वेष बदल कर राज्य में प्रवेश करते हैं। योजनानुसार निमियाँ मुजरा पेश करती है। महाराज उसके

रुप-सौन्दर्य एवं नृत्यकला को देखकर मुग्ध हो जाते हैं। निमियां को वैश्या समझकर महाराज अपनी काम-पिपासा की तृप्ति के लिए उसे एकान्त में मिलने का आदेश देते हैं। महाराज और लटोरा की मिलीभगत के बीच नरेन्द्र आ जाते हैं। वे निमियाँ को पहचान जाते हैं। नरेन्द्र निमियाँ को आलिंगन में लेकर मन की अशान्ति मिटाने का प्रयास करते हैं। जैसे ही नरेन्द्र निमियाँ को छूने का प्रयास करते हैं, निमियां योजनानुसार नरेन्द्र पर पिस्तौल से बार कर देती है। वह धराशयी होकर गिर पड़ता है। युवराज सभी साथियों सहित राज्य से भागने में सफल होते हैं।

महाराज, नरेन्द्र की मृत्यु पर बहुत दुःखी होते हैं। वे राज्य के युवराज पद को लेकर वे दिन-रात चिंता में डूबने लगे। एक दिन युवराज का पत्र उन्हें प्राप्त होता है। युवराज के जीवित होने की सूचना पाकर उनके आनंद की सीमा न रही। महाराज ने युवराज को सहर्ष राज्य में प्रवेश की अनुमति दे दी। युवराज के जीवित होने व नरेन्द्र की मृत्यु में छोटी सरकार महाराज का ही हाथ समझने लगी। युवराज को युवराज का पद मिलने पर उनका शक यकीन में बदल गया। महाराज को छोटी सरकार अपने महल में बुलवाती है। वे महाराज की हत्या कर स्वयं भी आत्मदाह कर लेती है।

गवर्नमेंट की अनुमति मिलने पर युवराज राज्यगद्दी पर आसीन होते हैं। गद्दी पर बैठते ही वे घपला और हलका को कैद मुक्त कर देते हैं। युवराज के लिए ये दोनों अपने जीवन का त्याग कर अपने को युवराज के प्रति समर्पित कर देते हैं। सझले की हत्या के आरोप में लटोरा व कढ़ोरा को बंदीगृह में डाल देते हैं। रमेश को सम्मान सहित मुक्ति प्रदान कर देते हैं। रमेश व निमियाँ की इच्छानुसार दोनों का विवाह धूम-धाम से सम्पन्न होता है। युवराज महाराज बन जाते हैं। अंततः इस श्यामलाल की पांचवी पुत्री निमियाँ का विवाह सम्पन्न होता है।

(ग)- प्रेमतपस्वी

प्रेम तपस्वी 'दिव्यजी' का अंतिम उपन्यास है। इस उपन्यास की कहानी सामाजिक है। यह उपन्यास बुन्देली के महान लोककवि 'ईसुरी' के जीवन चरित्र पर केन्द्रित है। बुन्देलखण्ड में 'ईसुरी' नाम के फागकार हुए हैं। जिनका नाम आज भी यहाँ के निवासियों के मन में बसा हुआ है। इस उपन्यास को ऐतिहासिक नहीं कहा जा सकता है, क्योंकि इतिहास से संबंधित किसी राजा महाराजाओं की जीवन

गाथा इसमें नहीं है। इस उपन्यास में समाज से जुड़े साधाराण परिवारों के जीवन की कहानी है। 'ईसुरी' व 'रजउ' के प्रेम को इस उन्यास में चित्रित किया गया है। इसलिए प्रेम तपस्वी को सामाजिक उपन्यास कहा जा सकता है।

"ईसुरी ने अपने जीवनकाल में अविश्वसनीय उतार-चढ़ाव देखे। ईसुरी के जीवन में इतनी रोमांचक घटनायें घटी जिसकी कल्पना कोई कथाकार भी नहीं कर सकता हैं। उसका पूरा जीवन एक ऐसे उपन्यास का कथानक रहा है, जिसे पढ़कर लोग स्तम्भित रह जाते हैं। विश्वसाहित्य में शायद ही ऐसा जीवनवृत किसी लोककवि का मिलता है।"१ प्रमुख रूप से इस उपन्यास में समाज सुधार के रूप में विधवा पुर्नविवाह किया जाता है। विधवा विवाह द्वारा, समाज में सुधार करके सती प्रथा पर अंकुश लगाया गया है।

कहानी का प्रारम्भ मेढ़की नामक ग्राम से होता है। पटवारी मनसुख लाल की पुत्री का नाम 'रजउ' हैं। पं० भेलाराम का पुत्र 'ईसुरी' है। बचपन में दोनों एक साथ खेलते है। 'ईसरी' घोड़ा बनता है 'रजउ' उसकी पीठ पर बैठकर गाना गाने लगती है-

"चल मेरे घोड़े सरपट चल-मेरे साथ न करना छल

नहीं बीच में मुझे गिराना-मंजिल तक मुझको पहुंचाना।" २

'रजउ' निर्वस्त्र ही 'ईसुरी' के घर खेलने पहुँच जाती हैं। रानी बहु उसके पीछे घघरियाँ-फरियाँ लेकर भागती है। ईसुरी की माँ बड़ी बहू 'रजउ' को निर्वस्त्र उनके घर आने से टोकती है। वह ईसुरी को वहाँ से खीचकर अपने घर खेलने के लिए ले जाती है। अब 'रजउ' घोड़ा बनती है 'ईसुरी' उसकी पीठ पर बैठकर गाता है-

चल मेरे घोड़े चल, बीच गेल में नहीं मचल।

मचला तो मारूंगा कोड़ा, भाग नहीं चल थोड़ा-थोड़ा।" ३

'ईसुरी' व 'रजउ' को देखकर बड़ी बहू और रानी बहू एक दूसरे से विचार विमर्श करती है कि

---

१. प्रेमतपस्वी की भूमिका से - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य'

२. प्रेमतपस्वी की भूमिका से - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या- १२)

३. प्रेमतपस्वी की भूमिका से - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या- १५)

जाति का बंधन न होता तो दोनों का विवाह कर देते। ईसुरी की मां रानी बहू को ईसुरी की विवाहिता के लिए बनवाया सोने का हार दिखाती है। 'रजउ' धीरे-धीरे बड़ी होने लगती है। घर से बाहर निकलना उसका कम हो जाता है। 'ईसुरी' 'रजउ' के बिना व्याकुल होने लगता है। वह रजउ के घर उससे मिलने जाता है। दलपति नामक व्यक्ति 'रजउ' के घर उसी समय बनारसी साड़ी देने के लिये पहुँचता है, ताकि पटवारी उसका रुका हुआ कागजी काम कर दे। काम न हाने की उम्मीद के कारण पटवारी साड़ी लेने से इंकार कर देता है। 'दलपति' को 'रजउ' दली नाम से संम्बोधित करती है। वह उससे साड़ी ले लेती है। 'ईसुरी' पटवारी से 'रजउ' की शिकायत कर देता है। रजउ, ईसुरी को अपने घर से भगाा देती है। 'ईसुरी' 'रजउ' से न मिल पाने के कारण व्याकुल होने लगता है। 'रजउ' के घर जाने से वह डरता है।

दलपति को 'रजउ' द्वारा दली पुकारने पर पूरा गाँव उसे दली नाम से संबोधित करने लगता है। गाँव के बच्चे दलदल कहकर चिढ़ाने लगते हैं। दली के लिए दिनप्रति दिन बच्चों का चिढ़ाना असहनीय होने लगता है। कुछ बच्चे दली के द्वार से दल-दल कहते हुए निकलते हैं, जिनमें 'ईसुरी' भी रहता है। दली उन्हें कुल्हाड़ी फेंक कर मारता है। कुल्हाड़ी 'ईसुरी' के पैर में लग जाती है। वह घायल हो जाता हैं। दली ईसुरी की मदद करता है। वह अपने किये पर शर्मिन्दा होता है। दोनों गहरे मित्र बन जाते है। दोनों साथ-साथ मिलकर बैठते, नगड़िया बजाकर, गाना गाकर अपना मनोरंजन करते हैं। पं० भोलाराम को 'ईसुरी' का दली के घर आना-जाना अच्छा नहीं लगता है। वे दली से नफरत करते हैं।

'बगौरा' में बसंत पंचमी पर मेला लगता है। पटवारी मनसुखलाल व उसकी पत्नी और 'रजउ' मेला देखने जाते है। मेले में मनसुखलाल की मुलाकात कानूनगों के परिवार से होती है। कानूनगो को 'रजउ' व पटवारी को उनका लड़का 'बब्बू' पसंद आ जाता है। दोनों का रिश्ता पक्का हो जाता है। 'बगौरा' में 'रामनाथ' की पुत्री 'लक्ष्मी' के साथ 'ईसुरी' का रिश्ता तय हो जाता है। मेले से लौटकर 'रजउ' 'ईसुरी' से मिलती है तथा 'बब्बू' के साथ अपने रिश्ते के विषय में उसे बताती है। ईसुरी भी अपने रिश्ते के विषय में उसे बताता है। दोनों नाबालिग रहते हैं। दोनों का विवाह तय जाता है।

'रजउ' का विवाह बब्बू के साथ होता है। टीका, चढ़ावा, भाँवर होने के पश्चात् विदायी के पूर्व फागें गाने का कार्यक्रम शुरु होता है। फागकार गंगाधर अपनी फागें प्रारम्भ करते हैं। उसी समय दली

ईसुरी को फागें गाने के लिये वहां पर प्रस्तुत करता है। गंगाधर जी उसे गाने का अवसर देते हैं। ईसुरी 'रजउ' के सौन्दर्य का वर्णन कर अपनी फागें प्रस्तुत करता है-

"नग नग कैसों बनों बदबारों - रजउ कौ डील ढुआरौ
अड़िया जबर मसीली जागें - कबजन कोद निहारौ,
ओले तिहरी परें पेट में - माफिक को तुदबारौ
गोरो बदन लाल धुतिया में - लगै लिपटतन व्यारौ,
ईसुरी नचत मांयं से आगई - गज घूमत मतवारों।" ४

गंगाधर जी की प्रशंसा पर ईसुरी ने दूसरी उठायी-

हम खों रजऊ की विछुरन व्यापी - कड़त नहीं जी पापी,
भर भरात जे प्रान फिरत है - थर-थर दिहिया कॉपी,
को जाने लयें रहत प्राण कौ - सिर पै मौत अलापी,
उनके ऐंगर रयें ईसुरी - बे मानस परतापी।" ५

गंगाधर ईसुरी की श्रंगार भरी फागों को सुनकर आश्चर्य चकित होकर कहते है- **"क्यों बेटे ये फागें तुम्हारी बनायी है? इनमें बड़ा श्रंगार भरा है। बड़े मार्मिक उद्गार है। विरह वेदना बोल रही है।" ६** कानूनगो को 'रजउ' पर गायी गयी 'ईसुरी' की फागें अच्छी न लगी। उनको लगा 'ईसुरी' 'रजउ' का प्रेमी है। वे मनसुख लाल से क्रोधित होकर बोले कि मुझे धोखा दिया गया है। मनसुखलाल कानूनगो को समझाते हुए कहते हैं कि मैंने दली का कुछ कागजी कार्य नहीं किया इस कारण उसने अपना बदला लेने के लिए यह शरारत की होगी। मनसुखलाल की बात कानूनगो मान लेते है, लेकिन दली पर कड़ी कार्यवाही करने के लिए कहते हैं।

मनसुखलाल 'रजउ' को अपनी हैसियत से अधिक दान-दहेज देकर विदा कर देते है। ससुराल में 'रजउ' के सौन्दर्य की खूब प्रसंशा होती है। 'रजउ' के पति बब्बू को ईसुरी की फागों के विषय में पता

---

४. प्रेमतपस्वी की भूमिका से - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या- ४७)

५. वही

६. वही

चलता है। वह 'ईसुरी की बनायी फागें लाकर 'रजउ' को सुनाकर परेशान करता हैं। 'रजऊ' और बब्बू के बीच तनाव पैदा होने लगता है। वह 'रजउ' को दिन प्रतिदिन नयी फागें सुनाकर परेशान करता है तथा अपनी पत्नी पर फागें बनाने का विरोध करता है।

फागें बनाने व सुनाने का अपराध ईसुरी करता है, लेकिन आरोप दली पर लगता है। ईसुरी नाबालिक है, इसी कारण कोई यह मानने को तैयार नहीं होता है, कि मर्म पर चोट करने वाली फागें ईसुरी बनाता है। सभी का यह मानना रहता है कि दली फागें बनाकर ईसुरी से गबवाता है। पटवारी व पं० भोलाराम ईसुरी को फागें गाने व प्रोत्साहित करने के लिये दली को आरोपी घोषित करते हैं। ईसुरी द्वारा बनायी प्रत्येक फाग बब्बू के पास पहुँचती है।

बब्बू 'ईसुरी' की फागों को सुनकर 'रजउ' को परेशान करता है। दोनों के संबंधों में दरार आ जाती हैं। कानूनगों व देवकी भी 'रजउ' व बब्बू को लेकर परेशान रहते हैं। कानूनगो कुछ समय के लिए 'रजउ' को मेढ़की छोड़ आते हैं। दली 'रजउ' को देखकर उसके पास सोने का हार कुछ रूपयों में रखने के लिये कहता हैं। 'रजउ' हार लेकर अंदर चली जाती है। फिर बाहर नहीं आती है। 'अकती' के दिन 'ईसुरी' से रजउ' की मुलाकात होती है। 'ईसुरी' 'रजउ' को देखकर प्रसन्न होता है। दलपति के मुकदमे की कार्यवाही शुरू होती है। कानूनगों, पटवारी, पं० भोलाराम दली के खिलाफ गवाही देते हैं। पं० भोलाराम ३०० रु०, सोने के हार व कल्लू की भैंस चोरी होने का इल्जाम दली के ऊपर लगाते हैं। कानूनगो व पटवारी अश्लील फागों के बनाने का इल्जाम लगाते हैं पैसे न होने के कारण दली के पक्ष में कोई वकील पैरवी नहीं करता है। दली के ऊपर पाँच सौ रु० जुर्माना व छः माह की सजा सुना दी जाती है। पाँच सौ रु० न देने के कारण छः माह की जगह एक वर्ष की सजा होती है।

दली को सजा होने के पश्चात कानूनगो 'मेढ़की' रजउ की विदा के लिए जाते है। पं० गोपाल भी उनके साथ जाते है। 'पं० गोपाल' 'ईसुरी' से मिलकर फागों की सहारना करते है। और बगौरा आने के लिए आमंत्रित करते है।

'रजउ' के बगौरा जाने के पश्चात् ईसुरी व्याकुल हो जाता है। पं० गोपाल का निमंत्रण उसे स्मरण होता है। वह उनसे मिलने बगौरा पहुँचता है। पं० गोपाल उसे ठाकुर जगजीत सिंह का कारिन्दा बनवा देते है। ठाकुर साहब उसकी फागों से बहुत प्रभावित होते हैं।

पं० गोपाल कानूनगो के घर ठाकुर पहाड़ सिंह को बैठा देखकर ठाकुर जगजीत को भरमाते है। दोनों ठाकुरों में जायजाद को लेकर आपसी वैमनुष्यता रहती है। ठाकुरों के बीच विवाद का प्रमुख कारण कानूनगो व गोपाल पण्डित रहते है। कानूनगो अपनी कानूनी दाव-पेंच द्वारा दोनों ठाकुरों को घुमाते रहते है। गोपाल पण्डित यहाँ की बाते वहाँ फैलाते वहाँ की यहाँ। इस कारण स्थिति बहुत नाजुक हो जाती है। ठाकुर जगजीत सिंह के कारिन्दे ईसुरी पर बब्बू प्रहार कर उसे घायल कर देता है जगजीत सिंह कानूनगो के परिवार पर बौखला जाते हैं। कानूनगो चातुर्य से काम लेकर ठाकुर जगजीत सिंह को अपने पक्ष में कर लेते है। कानूनगो ठाकुर पहाड़ सिंह के खिलाफ जायजाद पर कबजा करने का जगजीत सिहं को सुझाव देते हैं। कागजी कार्यवाही अपने जिम्मे लेते है। कानूनगो की सलाह पर दोनों ठाकुर एक दूसरे का जमीन पर टीले को मिटाकर कब्जा कर ले ते है। 'कानूनगो' 'ईसुरी' को ठाकुर जगजीत के घर से निकलवा देते है। बब्बू को 'ईसुरी' के जगह रखवा देते है। 'ईसुरी' स्वस्थ होकर वहां से निकल जाता है। वह पहाड़ सिंह के यहाँ नौकरी की तलाश में दली के साथ जाता है। वहाँ गोपाल पं० की भागवत का कार्यक्रम समापन पर रहता है। 'लक्ष्मी' 'भोलाराम' व 'बड़ी बहू' के साथ ईसुरी से मिलकर मेढ़की आ जाती है। यहाँ पर गृह कलह में बड़ी बहू उस पर जलती लकड़ी से प्रहार करती है। अधिक जलने के कारण उसकी मृत्यु हो जाती है। 'ईसुरी' को 'लक्ष्मी' के साथ हुए अन्याय पर गहरा दुःख पहुँचता है। वह पहाड़ सिंह के यहाँ काम पर रख लिया जाता है। दली वहाँ से गाँव वापिस आकर तीर्थयात्रा पर निकल जाता है।

कानूनगो पं० गोपाल के प्रति ठाकुर जगजीत सिंह को भड़का देते है। ठाकुर पं० जी के खिलाफ हो जाते हैं। एक दिन ठाकुर जगजीत सिंह थकान दूर करने के लिए बिना देखे समीप खड़े नौकर से पैर दबाने के लिए कहते है। वह पैर दबाने से इंकार कर देता है। ठाकुर साहब क्रोधित होते है। वह डर कर भागने लगता हैं। ठाकुर अपने नौकरों से उसे पकड़ने का हुक्म देते हैं। वह भाग जाता है। अंधेरा अधिक होने के कारण वह कुंए में गिर जाता है। सभी लोग उसे कुए से बाहर निकालते हैं, लेकिन उसकी मृत्यु हो जाती है। बब्बू की लाश को देखकर ठाकुर साहब के होश उड़ जाते है। वे लाश को तुरन्त गायब करने की योजना बनाते हैं। रात के अंधेरे में शव को बड़े गाँव के कुंए में डलवा देते हैं। ताकि पहाड़ सिंह पर शक किया जाए।

गाँव वाले शव की सूचना पहाड़ सिंह को देते हैं। कानूनगो के लड़के के शव को देखकर वे जगजीत सिंह की चाल को समझ जाते हैं। पहाड़ सिहं स्वयं के बचाव के लिये बब्बू से अपसी बैर के कारण हत्या का आरोपी ईसुरी को बतलाते हैं। निर्दोष होते हुए भी ईसुरी को पुलिस पकड़ ले जाती है।

'ठाकुर जगजीत सिंह' पं० गोपाल को हत्या का आरोपी सिद्ध करते हैं। दोनों ठाकुर सजा से बच जाते है। निर्दोष ईसुरी व पं. गोपाल पर मुकद्मा चलता है। दोनों को सात साल के कठोर कारावास की सजा सुनायी जाती है।

जेल में भी ईसुरी फागें गाने में मस्त रहता है। पं० गोपाल अपने परिवार को लेकर बहुत चिन्तित रहते है। दलपति ईसुरी से जेल में मिलने पहुँचते हैं। वहाँ पर उन्होंने दरोगा से राजा साहब पर बनायी गई ईसुरी की फागों की प्रशंसा सुनते हैं। 'दली' राजा साहब पर बनायी गई फागों को लेकर गंगाधर जी के पास पहुँचते है। गंगाधर जी दली का सहयोग करते हैं। राजा साहब के पास पहुँच कर गंगाधर जी ईसुरी की फागों को सुनते हैं। राजा साहब बहुत प्रसन्न होते हैं।

राजासाहब पुनः ईसुरी द्वारा फागों को सुनकर उसकी सजा समाप्त कर देते हैं। उसी समय एक काला सर्प आकर ईसुरी के ऊपर चढ़ता है। ईसुरी दृढ़ खड़े रहते हैं। सर्प के शरीर पर चढ़ने पर वह कोई प्रतिक्रिया नहीं करता है। नाग ईसुरी के गले में हार की तरह लटक कर चला जाता है। राजा साहब कहते हैं कि ईसुरी के गले में भगवान शंकर ने सर्प की माला पहनायी है। वह साधारण व्यक्ति नहीं है। वे ईसुरी की सजा समाप्त कर सोने का हार उपहार में पहना देते हैं। गंगाधर जी को रजउ के साथ ईसुरी का विवाह करने का आदेश देते हुए कहते हैं -

"जाति-पांति के बन्धन झूठे ही तो हैं। मनुष्य मात्र एक है। स्त्री-पुरुष का जोड़ा ही प्रकृति चाहती है, और वह भी प्रेम के आधार पर जन्मकुण्डलियों के आधार पर नहीं।"७

रजउ के ससुर कानूनगों गंगाधर जी को राजा की आज्ञा पर पुर्नविवाह का आज्ञा दे देते हैं। भोलाराम व मनसुखलाल भी रजउ व ईसुरी के पुनर्विवाह से सहमत हो जाते हैं।

सभी की अनुमति से रजउ व ईसुरी का विवाह सम्पन्न होता है। कानूनगो दोनों ठाकुरों में सांमजस्य की भावना पैदा कर देते हैं।

---

७. प्रेमतपस्वी की भूमिका से - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या- २०४)

ईसुरी का गाँव में स्वागत किया जाता है। सभी ग्रामीण रजउ की मुँह दिखायी कर नेग देते हैं। रजउ व ईसुरी का सुखी मिलन होता है। रजउ बड़ी बहू को दली द्वारा लिया हार लौटा देती है। बड़ी बहू वह हार रजउ के गले में पहना देती है।

रजउ ईसुरी से फाग गाने का प्रस्ताव रखती है। ईसुरी खुश होकर फाग गा उठता है -

“ नइया रजउ काउ के घर में विरथाँ कोऊ भर में,
सबमें में है और सबमें न्यारी सब ठौरन में भर में,
को कयें अलख खलक की बातें लखी न जाय नजर में,
ईसुर गिरधर रय राधा में राधा रय गिरधर में।”[८]

इसके पश्चात् ईसुरी रजउ के प्रेमानंद में डूब जाते हैं। इस प्रकार ये उपन्यास बुन्देलखण्ड के प्रसिद्ध लोककवि ‘ईसुरी’ के जीवन वृत को चित्रित करने में पूर्ण सफल हुआ है। ‘ईसुरी’ और ‘रजउ’ के प्रेम के माध्यम से उपन्यासकार ने प्रेम के आदर्श स्वरुप को व्यक्त करने का प्रयास किया है।

---

८. प्रेमतपस्वी की भूमिका से - श्री अम्बिका प्रसाद ‘दिव्य’ (पृ० संख्या- २२३)

डा० वृन्दावन लाल वर्मा के उपन्यासों के कथ्य

(क)- लगन

यह वर्मा जी का पहला सामाजिक आंचलिक लघु उपन्यास है। इस उपन्यास का कथानक प्रमुख रुप से 'दहेज' पर केन्द्रित है। विवाहोपरांत नवदम्पत्ति को एक-दूसरे को परस्पर प्राप्त करने की 'लगन' इस उपन्यास की कथा है।

वेतवा नदी के तट के एक किनारे पर 'बजटा' गाँव के शिवू माते और दूसरे तट के किनारे पर 'बरौल' के बादल चौधरी समकक्षता के धनाड्य कृषक हैं। दोनों के बच्चे विवाह योग्य हैं।

'शिवू' के इकलौते पुत्र 'देवसिंह' का विवाह 'बादल चौधरी' की इकलौती पुत्री 'रामा' के साथ दहेज में सौ भैसों के लेन-देन पर तय होता है। उस समय दहेज की यह प्रथा नवीन थी। यह उपन्यास उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भिक युग की घटना पर आधारित है।

वर एवं वधु दोनों पक्षों में धूम-धाम के साथ विवाह की तैयारियाँ होने लगती हैं। 'विवाह' के दिन बेतवा नदी को पार करती हुयी बारात 'बरौल' पहुँचती है। विवाह के रीति-रिवाज धीरे-धीरे सम्पन्न होने को होते हैं, तभी 'शिवू' कन्या-पक्ष से दहेज में 'सौ भैसों' को लेने का प्रस्ताव रखता है। बादल उसके प्रस्ताव से मुकर जाता है। दोनों पक्षों में तनाव की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। तनाव अधिक होने के कारण दुल्हन को विदा किए बिना बारात 'बजटा' लौट जाती है।

कुछ महीनों पश्चात् बादल 'शिवू' को सूचना भेजता है कि 'रामा' का विवाह दूसरी जगह कर रहा है। इस सूचना को सुनकर शिवू को प्रसन्नता होती है, लेकिन देवसिंह के हृदय में पीड़ा होती है। शिवू देवसिंह को समझाता है कि वह शीघ्र ही तुम्हारे योग्य सुन्दर लड़की देखकर तुम्हारा विवाह कर देगा। देवसिंह मन ही मन 'रामा' को ही अपनी पत्नी रुप में स्वीकार करता है। वह अपने मन में दृढ़ संकल्प करता है कि अपने जीते जी 'रामा' का विवाह किसी गैर पुरुष के साथ नहीं होने देगा। देवसिंह अनेक कठिनाइयों का सामना कर विशाल वेतवा के बहाव को पार कर 'बरौल' पहुँचता है। नदी तट पर उसकी मुलाकात पन्नालाल से होती है। पन्नालाल चालाक व्यक्ति है। उसी समय नदी तट पर देवसिंह की मुलाकात 'रामा' व उसकी सहेली 'सुभद्रा' से होती है। 'सुभद्रा' व 'रामा' के वार्तालाप और 'रामा' के हाव-भाव को देखकर वह समझ जाता है कि 'रामा' दूसरे विवाह के इच्छुक नहीं है। उसका

विवाह उसकी मर्जी के खिलाफ पन्नालाल से तय किया जा रहा है। सुभद्रा 'रामा' से कहती है कि **"तुम्हारे जी में पहाड़ी (गाँव) के वर के लिए कोई चाह नहीं है। रामा कहती है घर के लोग जो तय कर देंगे सिर के बल मानना पड़ेगा।"१**

बेताली 'रामा' का विवाह पन्नालाल के साथ करना चाहता है। पन्नालाल की आयु चौबीस-पच्चीस वर्ष है। पन्नालाल दो पत्नियों के मर जाने पर विवाह के इच्छुक ही नहीं आतुर भी है। वेतवा नदी को पार कर देवसिंह कई बार छिप-छिप कर 'बरौल' जाकर 'रामा' से मिलता है।

पन्नालाल अतिथि के रुप में 'बादल' के यहाँ निमंत्रण में जाता है। रात्रि के समय उसको विश्राम के लिए बैठक में ठहरा दिया जाता है। रात्रि में जब सब सो जाते हैं, पन्नालाल धीरे से छुप कर रामा की अटारी में वासना पूर्ति की इच्छा से जाता है। वहाँ पर वह अंधेरे में 'रामा' को खोजता है। 'रामा' उसे नहीं मिलती है। उस रात रामा दूसरी अटारी में सोने को चली जाती है। इधर देवसिंह अमावस्या की रात्रि में अटारी के निकट से रामा को आवाज देता है। पन्नालाल देवसिंह को अटारी में आने देता है। वह जैसे ही अंदर प्रवेश करता है पन्नालाल उस पर वार कर देता है। वह देवसिंह को रंगे हाथों पकड़कर बदनाम करना चाहता है। वह यह नहीं जानता था कि जिस व्यक्ति पर उसने वार किया है, वह रामा का पति देवसिंह है। पन्नालाल देवसिंह को पकड़कर शोर करने लगता है। शोर को सुनकर घर के सभी लोग तुरंत अटारी के पास एकत्रित हो जाते हैं। रामा यह सब देखकर भयभीत हो जाती है। वह लोक-लाज के भय से वेतवा नदी की शरण लेती है। उफनती नदी को पार करती हुई वह अपनी ससुराल 'बजटा' पहुँच जाती है। वहाँ पर देवसिंह के न मिलने पर शिवू परेशान रहता है। 'रामा' शिवू को सारा हाल सुनाती है। वह अपनी बहू को आदर पूर्वक घर में प्रवेश के लिए आज्ञा देता है। 'बरौल' में देवसिंह सीढ़ियों से गिरकर घायल हो जाता है। 'रामा' का भाई बेताली उसके उपचार का प्रबंध कर 'रामा' को खोजने नदी किनारे जाता है। वेतवा नदी अपने पूरे प्रवाह पर होती है। अंधेरा अधिक होने के कारण वेताली उसे खोजने में विवश रह जाता है। बेताली जब तक अपने घर वापिस लौटता है, वहाँ पर वह 'शिवू' को अपने साथियों सहित पाता है। शिवू द्वारा उसे 'रामा' के विषय में जाानकारी प्राप्त होती है।

---

१. लगन उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या- २०)

दोनों समधी निष्कपट होकर प्रेम से एक-दूसरे को गले लगाते हैं। शिवू 'देवसिंह' को लेकर वापस 'बजटा' अपने गाँव चला जाता है। बादल चौधरी तीसरे दिन शिवू के घर दहेज में दी जाने वाली सौ भैसें पहुँचा देता है। पन्नालाल को उसकी कामुकता का उचित पुरस्कार वेताली देता है।

पन्नालाल की कुटिलता 'देवसिंह' व 'रामा' मिलन रहस्य को उद्घाटित करने में सहायक सिद्ध होती है। पन्नालाल का चरित्र कहानी को उलझाने के पश्चात् परिणाम तक पहुँचाने में सहायक सिद्ध होता है। लगन उपन्यास की कथा एक अंचल के सामाजिक जीवन को उद्घाटित करती है।

(ख) - प्रत्यागत

यह उपन्यास धार्मिक अन्धविश्वासों एवं उनके विरुद्ध जनता में जागृति घटनाओं से संबंधित है। इसमें वर्णित घटना सन् १९२७ के अंत या १९२८ के प्रारंभ की है। इसमें धर्म परिवर्तन की घटना सारे हिन्दू समाज के लिए समस्या बन जाती है। ग्राम में सभाओं व गोष्ठियों का आयोजन होता है। समस्या का निदान जटिल हो जाता है।

इस उपन्यास की कथा का केन्द्र बाँदा है। वहाँ पर रहने वाले पं० टीकाराम धर्मभीरू, वैष्णव भक्त, कर्मकाण्डी व शान्त स्वभाव के ब्राह्मण हैं। पत्नी फूलरानी है। पुत्र मंगल व पुत्रवधू सोमवती है। यही लघु परिवार है। मंगल आधुनिक युग के अनुकूल चंचल स्वाभिमानी स्पष्टवादी एवं खिलाफत आन्दोलन में कार्यरत है।

पं० नवल बिहारी शर्मा प्रतिष्ठित ब्राह्मण हैं। इनका गाँव में बड़ा सम्मान होता है। रामनवमी पर रामायण-पाठ का विशेष आयोजन किया जाता है। पं० टीकाराम रामायण-पाठ के प्रति विशेष श्रद्धा रखते है। सपरिवार पं० नवल बिहारी शर्मा के मंदिर रामकथा सुनने पहुँचते हैं। गायन के पूर्व फूलों की मालाओं द्वारा पं० नवल बिहारी का स्वागत किया जाता है। हारमोनियम के साथ पण्डित जी गायन प्रारम्भ करते है। अपनी आवाज को सभी तक पहुँचने के लिये गला फाड़-फाड़ कर चिल्लाते है। उनकी बेसुरी आवाज को सुनते ही मंगल के मन में हल-चल उठती है। वह बाबूराम को बुलाकर कहता है कि 'कैसा भैंसे की तरह रेंकता है'। दोनों चाहते हुए भी अपनी हंसी को रोक नहीं पाते है। पं० नबल बिहारी खुद पर किये गये व्यंग को जानने की कोशिश करते है। रामायण का गान बंद हो जाता है। वहाँ

पर उपस्थित सभी लोग बाबूराम से मंगल द्वारा कही गयी बात को जान लेते हैं। नबल बिहारी अपने घोर अपमान का सामना करता है। वह मन ही मन मंगल से चिढ़ जाता है। आगे चल कर अपने अपमान का बदला लेता है।

पं० टीकाराम घर आकर मंगल को डाटते है। मंगल बेरोजगार है। पिता पर आश्रित है। सोमवती भी चाहती है कि मंगल कुछ काम किया करे जिससे आर्थिक लाभ हो। मंगल घर आकर भी अपनी हंसी को नही रोक पाता है। बार-बार वह नबल बिहारी के गायन का मजाक उड़ाता है। वह बहुत बातूना भी है। पं० टीकाराम को यह सब बर्दाशत नहीं होता है। वह मंगल से कहता है कि **"जाता है यहां से या जूते लगाकर निकालूँ? रामायण द्रोही का इस घर में कोई काम नहीं। जा काला मुँहकर यहाँ से। न कोई काम न धाम। सिवाय चबड़-चबड़ के और कुछ करना नहीं जानता। मुफ्त का भोजन कर करके मोटा पड़ रहा है। एक आड़ी सींक भी सीधी नहीं कर सकता।"** १

पिता से हुए वार्तालाप के पश्चात् मंगल घर छोड़ने के लिए विवश हो जाता है। वह रोजगार की तलाश में घर से निकल पड़ता है। किसी से कुछ कहे बिना रेलवे स्टेशन पहुँच जाता है। वहाँ पर हरिराम उसे रोकने पहुँचता है, लेकिन वह उसकी एक नहीं सुनता है। वह उससे महोबा जाने को कहता है। बहुत समझाने पर भी मंगल नहीं मानता है, तब हरिराम चलती गाड़ी में उसे चिट्ठी व एक पोटली देता है। जिसमें कुछ रु० होते हैं। मंगल बम्बई का टिकिट लेता है और सीधा बम्बई पहुँचता है। वहाँ पर उसका मन नहीं लगता है, फिर वह पूना जाने का निश्चय करता है। पूना में भी उसका मन नहीं लगता, न ही उपयुक्त रोजगार प्राप्त होता है। उसकी मुलाकात मालावार जाने वाले एक युवक से होती है। जिसका नाम रहमतुल्ला है। मंगल को उसने वहाँ के खिलाफत आंदोलन के प्रति आकर्षित किया। रोजगार के साधन भी बतलायें।

मंगल खिलाफत आंदोलन और जीविकोपार्जन की समस्या के हल के कारण उसके साथ मालावार पहुँच जाता है। वहाँ पर हिन्दू मुस्लिम आपसी बैमनस्यता के कारण एक-दूसरे को मार कर खून की होली खेल रहे थे। रहमतुल्ला मंगल को अपने साथ मस्जिद ले जाता है। वहाँ पर वह उससे कहता है

---

१. प्रत्यागत उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या- १३)

जैसे मैं कहता जाऊँ वैसा करता जा। मंगल उसके कहे अनुसार वैसा ही करता है। पेइशमान मंगल से मुसलमान बनने के लिए कहता है। मंगल वहाँ का माहौल समझकर रहमतुल्ला से कहता कि **"मैं हिन्दू मुसलमान सबको एक सा समझता हूँ सब धर्म एक से हैं। सबका एक ही ईश्वर है। तब तुम मुसलमान हो जाओ रहमतुल्ला ने पुचकार कर कहा।"२** इस प्रकार मंगल को मुसलमान बना दिया जाता है।

मंगल रहमतुल्ला की चालाकी जानकर भी मस्जिद में कुछ नहीं कह सकता था। उसे मजबूर होकर मुसलमान बनना पड़ा। नेक इंसान होने के कारण मंगल ने रहमतुल्ला के परिवार को उनके गाँव नेचलगद्‌दी पहुँचा दिया। धर्म परिवर्तन की घटना मंगल के लिए असहनीय थी। उसके मन में रहमतुल्ला के खिलाफ विद्रोह हो गया। वह खुद मरने व उसे मारने के लिए तत्पर रहता है। पर वह अपनी इस इच्छा को पूरी नहीं कर पाता है। वह जीवन की एक-एक सांस घुट-घुट कर ले रहा था। वह न ही अपने को हिन्दू बताता, न ही मुसलमान। मंगल की स्थिति अजीब हो जाती है। रहमतुल्ला की बेगम कई बार मुसलमानों के विद्रोह से उसको बचाती है, पर वह मरने के लिए तत्पर रहता है।।

मालावार के विद्रोह की खबर बाँदा तक पहुँच जाती है। मुसलमानों द्वारा धर्मपरिवर्तन करवाने की चर्चा अखवारों द्वारा जोरों के साथ फैल रही थी। गाँव में इस चर्चा को बड़े ही गम्भीर रुप में लिया जा रहा था। वहाँ पर उपस्थित पीताराम कहते हैं कि **"जिन हिन्दुओं को मुसलमान बना दिया गया है वे पुनः क्या हिन्दु धर्म में नहीं जा सकते हैं। इसका उत्तर देते हुए पं० टीकाराम कहते हैं-"विधर्मी को धर्म में वापिस नहीं लिया जा सकता है। स्वधर्म निधनम्‌ श्रेयः परधर्मीः भयावहः।"३** संसार की गति विचित्र है।

मालावार का दंगा शान्त होते ही वहाँ की पुलिस मंगल को बाँदा पहुँचा देती है। पुलिस द्वारा मंगल के घर सूचना मिलते ही हरिराम व बाबूराम उससे मिलने कोतवाली जाते हैं। मंगल को देखकर वे चकित रह जाते हैं। वह शरीर से निर्बल, बीमार व उदास बैठा मिलता है। घर जाने के लिए मना करता है। वह हृदय की दुर्बलता के कारण मुसलमान हो जाने वाली बात को सभी के सम्मुख प्रकट कर देता

---

२. प्रत्यागत उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या- ३०)

३. वही - (पृ० संख्या- ३६)

है।

टीकाराम ज्योतिषी मंगल को लेने के लिए कोतवाली आते हैं। पिता होने के नाते पुत्र के प्रति उनका विशेष अनुराग होता है। मंगल उनसे भी घर जाने को मना करता है, उसे समझाकर टीकाराम कहते हैं **"जो हुआ उसको भूल जाओ। तुम्हारा यहाँ से चले जाने का कारण मेरा कड़वा व्यवहार था। अब कोई तुमसे कुछ न कहेगा। चलो भीतर। तुम्हारी माँ देखने को लला रही है।"**४ फिर भी मंगल जाने को तैयार नहीं होता। वह मुसलमान होने की बात को बतलाता है। उसे विश्वास नहीं होता। टीकाराम बच्चों की तरह सिसक-सिसक कर रोने लगता है। वह कहता है **"लल्ला यह असम्भव है। कह दो कि यह बात झूठ है।"**५ वह मुसलमान होने की बात को छुपाना नहीं चाहता था, क्योंकि उसके पिता कर्मकाण्डी ब्राह्मण व धर्म को मानने वाले आदर्श व्यक्ति थे।

टीकाराम को पिता होने के कारण धर्म से संबंधित पूर्वाग्रहों का त्याग करना पड़ता है। मंगल को पुनः हिन्दू धर्म में लाने के लिए प्रायश्चित विधि का उपाय खोजते हैं। तब तक मंगल का अपने घर पर आना निषेध रहता है। उसे दूसरे मकान में ठहरा दिया जाता है। हरिराम उसकी सेवा में तत्पर रहता है।

मंगल की माँ (फूलरानी) अपने मातृत्व को नहीं रोक पाती हैं। पुत्र मोह धर्म के बंधन को तोड़ देता है। वह उसे गले लगाकर खूब रोती है। सोमवती (पत्नी) प्रायश्चित पूरा होने तक उससे दूर रहती है। हरिराम टीकाराम के परिवार के लिए जाति बंधन तोड़ देता है। वह अपना जीवन इस परिवार की सेवा के लिए अर्पित कर देता है। मंगल को वह पुत्र की भांति प्रेम करता है।

टीकाराम अपनी समस्या के समाधान के लिए ग्राम के प्रतिष्ठित लोगों को एकत्रित करते हैं। पं० नवल बिहारी उनमें ब्राह्मण होने के नाते श्रेष्ठतम थे। पं० रामसहाय वैध उनके समर्थक थे। पीताराम अहीर, ठाकुर हेतसिंह, लखपत आदि लोग टीकाराम की बैठक में उपस्थित हुये। हरिराम व बाबूराम भी वहाँ पर उनके स्वागत के लिए रहते हैं।

मंगल को सभी के सम्मुख बुलाकर पूछा जाता है कि वह मुसलमान कैसे बना? स्वेच्छा से या

---

४. प्रत्यागत उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या- ७७)

५. वही - (पृ० संख्या- ७८)

जबरन। मंगल चुप रह जाता है। वह मुसलमान हो जाने की बात को स्वीकार कर मालावार की सारी घटना उन सभी के सम्मुख प्रकट कर देता है।

पं० नवल बिहारी प्रायश्चित विधि की अनुमति देते हैं। वहाँ पर उपस्थित सभी लोग मंगल का हिन्दू धर्म में आना स्वीकार कर लेते हैं। पं० नवल बिहारी प्रायश्चित के लिए टीकाराम के सम्पूर्ण परिवार के लिए कहते हैं। टीकाराम सहर्ष स्वीकार कर लेते हैं।

पं० नवलबिहारी प्रायश्चित के लिए उपवास, गोदान, हवन, गंगास्नान, सत्यनारायण कथा, ब्राह्मण भोज, जाति भोज, पंचगव्य आदि करने से कलंक मुक्त होने का सुझाव देते हैं। मंगल पंचगव्य करने से मना कर देता है। इस पर पं० नवलबिहारी कहते हैं कि **"बिना पंचगव्य के प्रायश्चित सूना और अधूरा रह जायेगा।"**६ और वे वहाँ से रुष्ठ होकर चले जाते हैं।

गाँव दो दलों में विभक्त हो जाता है। एक दल पं० नवलबिहारी का दूसरा दल टीकाराम का। नवलबिहारी के दल में बहुत से लोग रहते हैं, जबकि टीकाराम के साथ पीताराम अहीर, ठाकुर हेतसिंह व बाबूराम। पीताराम हेतसिंह के विरोध में अलग रामलीला का आयोजन करता है। पीताराम की लीला में बाबूराम लक्ष्मण की भूमिका अदा करता है।

टीकाराम की प्रायश्चित विधि शुरु होती है। इधर पं० नवलबिहारी इनके परिवार को वहिष्कृत करने के लिए एक सभा का आयोजन करते हैं, जिसमें प्रमुख अतिथि पं० रामसहाय वैध को बनाते हैं। सभी ग्रामीण जन टीकाराम को बहिष्कृत करने व भोज में न जाने के लिए तैयार हो जाते हैं। पं० नवलबिहारी अपनी योजना में सफल होते नजर आते हैं। टीकाराम सब जानते हुए भी अपनी प्रायश्चित विधि को पूर्ण करते हैं। आखरी दिन भोज का निमंत्रण सभी गाँव वालों को भेजा जाता है। टीकाराम के परिवार को जाति धर्म से अलग करने के कारण कोई उनके भोज में सम्मिलित होने को तैयार नहीं होता है। पीताराम जो कि टीकाराम का समर्थक है, भोज के लिये जाति बंधन में बंध जाता है। बाबूराम इस बात को सुनकर पीताराम की लीला में लक्ष्मण की भूमिका अदा करने से मना करता देता है। वह तब तक राजी नहीं होता जब तक पीताराम, टीकाराम के यहां भोजन नहीं कर लेता है। मंगल उसे अपने हाथों से भोजन परोसकर खिलाता है। गॉव का कोई व्यक्ति भोजन के लिये नहीं आता टीकाराम

---

६. प्रत्यागत उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या- ६६)

बड़ा दुःखी होता है। उसका सारा भोजन ज्यों का त्यों रखा रहता है। अचानक गाँव के स्कूल के सारे बालक आकर कहते है कि हमें मंगल के हाथों का परोसा भोजन दो। बाबूराम उन सभी को स्नेह पूर्वक मंगल के द्वारा परोसा भोजन गृहण करवाते। इन बच्चों के द्वारा टीकाराम की प्रायश्चित विधि पूर्ण होती है। ये बालक उन्हीं घरों से थे जिनके घर वालों ने जाति बंधन के कारण भोज से इंकार कर दिया था। बाबूराम, ठाकुर हेतसिंह तथा पीताराम अहीर के सहयोग से भोज में प्रायः सभी जातियों के बालक भाग लेते हैं। इस कारण 'बॉक ऑउट' वाली पद्धति से पं० नबल विहारी को हटाना पड़ता है। मंगल नवल बिहारी के मंदिर में देव-दर्शन और चरणामृत लेना चाहता है। पं० नवल बिहारी इंकार कर देता है। वह मंगल की मॉं की अवहेलना करता है। यह मंगल के लिये असहनीय हो जाता है।

पं० रामसहाय वैध से पीताराम, हेतसिह, बाबूराम व सभी शिक्षा ग्रहण करने वाले विद्यार्थी , नवलबिहारी शर्मा के मंदिर में मंगल व उसके घरवालों को देवदर्शन व चरणामृत के लिए अनुमति प्राप्त कर लेते हैं। सारा गाँव भी इस कार्य लिए एकजुट हो जाता है।

पं० नवलबिहारी अपने मंदिर को अपवित्र होने के डर से पुलिस का सहारा लेते हैं। पुलिस के होते हुए भी मंगल को देव-दर्शन व चरणामृत लेने से कोई नहीं रोक पाता है। मंगल के साथ सम्पूर्ण जन-समूह हो जाता है। नवलबिहारी मंगल आदि के विरूद्ध दावा दायर करता है। वह पूरे गाँव में प्रचार करता है कि अपवित्र मंगल के मंदिर में प्रवेश करने से भगवान रूष्ट हो गये हैं। कोप के कारण वे सुबह पट खोलने पर उल्टे मिले हैं। उसने जो स्वप्न देखा था वह भी बतलाता है। उसकी मनगणन्त कहानी पर किसी ने विश्वास नहीं किया। सभी लोगों का मत उसके विरूद्ध था। देवमूर्ति के अपराधी को प्रायश्चित करने के लिए पंचायत हुयी। पंचायत में भी पर्ची उठाये जाने पर वह 'दोषी' निकलता है। झगड़ा समाप्त हो जाता है। पं. रामसहाय 'दोषी' नवल बिहारी की सहायता नहीं करते है। पं. नवल बिहारी के घोर अपराध के प्रायश्चित की व्यवस्था की जाती है।

(ग) - उदय-किरण

जिस प्रकार सूर्य की प्रथम किरण के उदय होने पर अंधकार मिट जाता है। धीरे-धीरे सभी जगह प्रकाश फैल जाता है। उदय-किरण इस उपन्यास के प्रमुख पात्र है। ये दोनों धीरे-धीरे सभी के सम्मुख आते है। इस उपन्यास में ये दोनों पात्र अशिक्षित ग्रामीण जनता को श्रम और शंका के अंधेरे को दूर

करने के लिए शिक्षा रूपी किरण का उदय कर ज्ञान के प्रकाश से सभी को आलोकित करते है।

देश के स्वतंत्र होने के पश्चात् कुंवरपुरा के कुछ निवासी जमीदारों से तंग आकर गाँव छोड़ कर चले जाते हैं। इन लोगों के लगभग दस परिवार रहते हैं। जो कि भिन्न-भिन्न जातियों के होते हैं। ये लोग कुंवरपुरा से एक मील दूर जंगल के निकट अपना नया गाँव डाबर बसाते हैं। तीस पैंतीस वर्ष पश्चात् इस गाँव के निवासियों के परिवारों की संख्या पच्चीस-तीस के लगभग हो जाती है। गाँव के लोग गरीबी में जीवन यापन कर रहे होते हैं।

डाबर का निवासी परमोले चमार अपनी छोटी सी खेती के सहारे अपनी पत्नी, एक पुत्र नन्दे का पालन-पोषण करता है। खेती के लिए पर्याप्त साधनों की सुविधा न होने के कारण परेशान रहता है। उसके पास केवल एक गाय एवं एक बैल रहता है। एक बैल होने के कारण वह कृषि कार्य करने में असमर्थ रहता है। इसी बीच बनरखा उसको सरकारी जंगल में जानवरों के चरने पर उसे ताना देने आता है। परमोले बनरखा से कहता है कि उसके जानवर सरकारी जंगल में नहीं जाते हैं। वह अपने जानवरों को चराने स्वयं या अपनी पत्नी एवं नन्दे के साथ भेजता है। बनरखा परमोले से कुछ आग लेकर चला जाता है। मनरखा मगन महते के घर जाकर अपनी बातों से प्रभावित कर वहाँ पर भोजन करने के पश्चात् रात्रि विश्राम कर सुबह दो रुपये लेकर जाता है।

मगन महते 'डाबर' ग्राम में और सभी की अपेक्षाकृत सम्पन्न है। उनके परिवार में उनकी पत्नी एवं पुत्री किन्नी (किरण) है। किन्नी सोलह वर्ष की सुन्दर लड़की है। किरण गाँव की लड़कियों एवं महिलाओं शिक्षित है, जबकि पुरुषों में मगन महते ही शिक्षित है।

मगन के घर आकर कुछ गड़रिये मगन से अपने विचार प्रकट करते हैं। उसी बीच परमोले आकर मगन से खेती के लिए एक बैल की मांग करता है। वह कहता है कि **"एक बैल मिल जाय तो इन दिनों खेती जोत डालूँ। फिर मिट्टी कड़ी पड़ जायेगी, खेत रह जायेगा। अबकी बार उसमें फसल पर धान करने का विचार है।"**[१] मगन भी अपने कृषि कार्यों के होने के कारण बैल देने के लिए विवश रहता है।

इस समय मगन के घर पटवारी सहकारी समिति के दो बाबुओं के साथ आता है। परमोले उन

---

१. उदय-किरण उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या- १६)

बाबू को एक-एक करके अपनी व गाँव वालों की समस्याओं से अवगत करता है। समिति के बाबू उसकी जायदाद का आंकलन कर उसकी समस्या के आस्वासन देते हैं।

परमोले को दोनों बाबू सहकारी समिति में भूमि लगाने की सलाह देते है। मगन भी परवारी व बाबुओं की बात को सुनता है। बाबुओं के चले जाने पर दोंनों अपने कार्यों में व्यस्त हो जाते है।

मगन डाकुओं की सूचना के अनुसार छोटे महते से उनके निश्चित स्थान पर उन्हें भोजन पहुँचाता हैं। किरण डाकुओं के प्रति विद्रोह की भावना से कहती है कि **"मेरे पास बन्दूक हो और बस चले तो सब उच्चकों बदमाशों को मार दूँ।"**२ मगन को डाकुओं के डाबर के जंगलों के समीप आने पर हमेशा भोजन का प्रबंध करना पड़ता है। इस कारण किरण तंग आ जाती है। वह डाकुओं के लिये पूड़ी देशी घी में बनने देती है। वह डालडा घी का प्रयोग करती है।

परमोले रात के समय अपने खेतों की रखवाली के लिये खेत में ही ठहरता है। कुंवरपुरा गॉव के रामदयाल का छोटा भाई अपने दो साथियों सहित उसके खेत को नुकसान पहुँचाता है। परमोले का उन लोगों का बाद-विवाद होता है, इसके पश्चात आपस में मार-पीट होती है जिसमें परमोले घायल हो जाता है। उसकी आवाज सुनकर 'डाबर' गॉव के निवासी घटना स्थल पर पहुंचकर उन युवकों को मार-मार कर अधमरा कर देते है। रामदयाल के छोटे भाई के हाथ का पंजा टूट जाता है। इस झगड़े का अंजाम मुकद्दमें तक पहुंचता है।

कुंवरपुरा का नवयुवक उद्दे उर्फ उदय सिंह मगन से मिलने डाबर उसके घर आता है। उदय से आने का कारण पूछता है। उदय उसे सहकारी कृषि से सम्बन्धित जानकारी देता है। वह मगन से अपनी व गॉव वालों की भूमि सहकारी कृषि समिति में लगाने का प्रयास करता हैं। मगन उदय को विरोधी गांव का होने के कारण उससे कहता है कि हम पढ़े लिखे होकर खेती में रुचि रखते हो? तुम्हें तो नौकरी करनी चाहिये। **"हम भी सुनते रहते है, देखते भी है कभी-कभी सरकारी नौकरी कर लेते तो अच्छी तनखा पाते, मजे में दिन काटते।"**३ उदय गॉव की कहावत को व्यस्त कर कहता है कि **"उत्तम खेती, मध्यम बान, अधम चाकरी भीख निदान।"**४ उदय स्वयं की खेती में उन्नति

---

२. उदय-किरण उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या- १४)

३. वही - (पृ० संख्या- ३०)

४. वही - (पृ० संख्या- ३३)

करना, अपने ग्राम वासियों की सेवा करना, आगे बढ़ाना दूसरों की नौकरी से कई गुना अच्छा है। उदय मगन महते को पुराने पूर्वजों के वैर-भाव को भूलकर दोंनों गांवों के लिये आग्रह करता है।

डाबर गांव में एक भी हथियार न होने के कारण जंगली जानवरों व डाकुओं का खतरा दिन-प्रतिदिन बढ़ रहा था। मगन सोच विचार कर छोटे महते से सलाह कर सरमन को लेकर परमोले के घर जाते है। वहॉं पर ये लोग गॉंव की जटिल समस्याओं के निवारण हेतु परमोले से रामदयाल के छोटे भाई से मुकद्दमें के लिये समझौते की बात समझाने के लिये तैयार हो जाता है। नव शिक्षित उदय के कारण दोनों गांवों में संगठन हो जाता है। दोनो गांव मिलकर सहकारी कृषि समिति में उदय के साथ अपनी भूमि लगा देते है। डाबर के लगभग सभी कृषक इस समिति में जुड़ते है, जबकि कुंवरपुरा के रामदयाल एवं जमींदार डूगर सिंह अपने खराब खेतों को सहकारी कृषि में लगाते है। अच्छे खेतों को निजी खेती के लिये रखते है।

कुंवरपुरा में समिति के बार्षिक अधिवेशन में कलेक्टर राजेश्वर सहकारी कृषि के में हाने वाले लाभ व अच्छी खेती के लिये अनेकों सुझाव देते है। कृषकों को अच्छे बीज खाद, कृषि बाहनों का प्रबंध, सिंचाई के लिये नहरों की सुविधायें एवं डाकंओं से सुरक्षा के लिये 'ग्राम रक्षक दल' का प्रबन्ध का आश्वासन देते है।

समिति के अधिवेशन का प्रारंभ बच्चों द्वारा ईश वन्दना के रूप में मंगलचरण होता है। उदय द्वारा निर्मित नाटक रंगमंच पर पेश किया जाता है। इस अधिवेशन से सभी ग्रामीण जन प्रभावित होते है। नाटक का प्रभाव किरण पर विशेष तौर पर सड़ता है। डाबर जाकर किरण भी अपना नया नाटक प्रस्तुत करती है। किरण व उदय दोंनों एक दूसरे से प्रभावित होते है। किरण की मॉं किरण की भावनाओं को समझकर मगन से उसके विवाह के विषय में चर्चा करती है। मगन भी उदय से प्रभावित होता है। इस नाटक के बारे में सुनकर उदय बहुत प्रभावित होता हैं।

कलेक्टर राजेश्वर द्वारा दिये आस्वासन पर ग्रामीण जनता की समस्याओं का निदान होने लगा। दोनों गांवों के लोंगों को जंगली जानवरों एवं डाकुओं से सुरक्षा के लिये कृषकों को बन्दूकों का लाइसेन्स दिया गया। बन्दूकों का प्रबंध होने से ग्राम में डाकुओं व जानवरों का भय कम हुआ। जनता आत्मनिर्भर हो गयी।

डाबर में डाकुओं के हमले से सावधान होकर ग्रामवासियों ने निडर होकर हिम्मत से उनका

डटकर सामना किया। किरण ने अपनी बन्दूक से निशाना लगाकर डाकुओं को मार कर धराशायी कर दिया। किरण के साहस व शौर्य की प्रशंसा सभी जगह होने लगी।

उदय के प्रयास से सहकारी समिति में भूमि लगाने से ग्रामीण कृषकों को अधिक लाभ हुआ। फसलों की पैदावारी अच्छी रही। समिति द्वारा समय पर कृषकों की आवश्यकताओं को पूरा किया गया। किरण गांव में अशिक्षितों को शिक्षित बनाने का कार्यभार लेती है। नहर के निर्माण के समय दोनों गावों के स्त्री पुरुष श्रमदान का समिति का सहयोग करते हैं।

ग्रामीणों के इन सराहनीय कार्यों की सरकार द्वारा फिल्मतैयार की जाती है। इस फिल्म में किरण व उदय के कार्यों की सराहना कर पर्दे पर उनसे कार्यों के बारे में पूछताछ कर उन्हें प्रस्तुत करते हैं। गाँव वालों के आग्रह पर किरण द्वारा नहर का उद्घाटन किया जाता है। उदय और किरण का विवाह होता है। मगन विवाह में सभी को निमंत्रण भेजता है। कलेक्टर राजेश्वर भी आते हैं।

सभी ग्रामवासियों को शुद्ध देशी घी का भोजन करवाया जाता है। उदय और किरण फिल्म प्रदर्शन होने के समय अपने वैवाहिक कार्यक्रम में व्यस्त रहते हैं इस कारण उस समय फिल्म देखने में विवश रह जाते हैं। विवाह होने के पश्चात् दोनों नवदम्पत्ति फिल्म को देखकर मन ही मन प्रसन्न होते हैं। उदय-किरण की ओर देखकर कहता है कि इस फिल्म का नाम 'चले-चलो न होकर' 'उदय-किरण' हो तो कैसा। इस शीर्षक के साथ इस कथानक का अंत होता है।

(घ) - अचल मेरा कोई

यह उपन्यास बीसवीं सदी के स्वतंत्रता संग्राम एवं नारी को स्वतंत्रता के प्रति जनआस्था को लेकर प्रस्तुत हुआ है। इस उपन्यास के पात्र नारी की स्वतंत्रता एवं शिक्षा के पक्ष-धर है।वर्मा जी के इस उपनयास में पुरूष पात्रों द्वारा नारी को पुरूषों के समकक्ष स्वतंत्रता दी जाती है। ये पात्र नारी को शिक्षा से लेकर स्वतंत्रता संग्राम आंदोलन में भी पुरूषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर साथ चलने के लिये प्रोत्साहित करते है। समाज में स्त्री की दयनीय दशा न हो इस कारण समाज सुधार के लिये विधवा विवाह भी किया जाता है।

उपन्यास की कथा का प्रारम्भ जेल से होता है। अचल व्यवहारिक, स्पष्टवादी, समाज सुधारवादी

व सुन्दर युवक है। वह संगीत की (गायन, वादन, नृत्य) समस्त कलाओं में निपुण है। वह एम.ए. की परीक्षा की तैयारी में अध्ययनरत है। अचल एवं सुधाकर दोनों बहुत अच्छे मित्र हैं। सुधाकर नारी के प्रति संवेदनशील, शरीर से हृष्टपुष्ट एवं सुन्दर सुवक है। पढ़ाई से उसको विशेष लगाव नहीं है। सत्याग्रह आंदोलन छिड़ जाने के कारण वह बी.ए. की परीक्षा नहीं दे पाता है। इस आंदोलन के कारण दोनों को जेल जाना पड़ता है। वहाँ पर उनका परिचय पंचम और गिरधारी से होता है। अचल अपने गायन व नृत्य द्वारा सभी का मनोरंजन करता है । भैरवी गाकर वह सभी को बहुत प्रभावित करता है। उसके गायन व नृत्य की बहुत चर्चा होती है। पंचम, गिरधारी अचल के समक्ष जेल से छूट जाने के उपरांत उसके घर भैरवी सुनने और नृत्य देखने की इच्छा को प्रकट करते हैं। अचल, सुधाकर के साथ पंचम, गिरधारी को भी जेल से मुक्ति मिलती है। थोवन माते द्वारा ये दोनों चोरी के इल्जाम में जेल भिजवा दिये जाते हैं।

अचल व सुधाकर के जेल से बाहर निकलते ही भारी जन समूह में लोग उनके स्वांगत के लिए एकत्रित होते हैं। सभी लोग, पंचम-गिरधारी को भी स्वतंत्रता सेनानियों की दृष्टि से देखते हैं। वे दोनों बड़े प्रसन्न होते हैं। निशा व कुंती, अचल और सुधाकर को माल्यार्पण करती है। अचल कुंती को देखकर प्रभावित होता है।

पंचम और गिरधारी अपने गांव जाने से पूर्व कांग्रेस सेवादल में सम्मिलित होने के लिए अचल से प्रार्थना पत्र लिखवाकर ले जाते हैं। इस पत्र के द्वारा उन्हें सेवादल में सम्लित कर लिया जाता है। पंचम के गाँव वाले अंग्रेजी सरकार व थोवन माते के अत्याचारों द्वारा भयभीत रहते हैं। पंचम और गिरधारी को कांग्रेस सेवादल द्वारा बन्दूक के लाइसेंस व अनेकों हथियारों की सुविधा प्राप्त होती है। थोवन माते पंचम और गिरधारी को घर में डाका डालने एवं आग लगाने के इल्जाम में पुनः जेल पहुँचा देता है। अचल उन लोगों को वकील से परामर्श कर छुड़वा लेता है। सुधाकर भी इस कार्य में अचल का सहयोग करता है।

जियाराम निशा के पिता है। निशा छः भाइयों में अकेली बहिन है। वह धनवान व्यक्ति हैं। सत्याग्रह आंदोलन में निशा की रूचि को देखते हुए, वे निशा के लिए इसी प्रकार के वर की खोज करने का प्रयास करते हैं। जियाराम जी वर की तलाश के उद्देश्य से अपने घर पर सत्याग्रह आंदोलन में भाग लेने वाले

स्त्री-पुरुषों को आमंत्रित करते हैं। निशा भोजन के साथ मनोरंजन के लिए गायन, वादन एवं नृत्य का कार्यक्रम भी रखती है। इस कार्यक्रम में बच्चों द्वारा ईश्वर वन्दना के साथ नृत्य प्रस्तुत किया जाता है। इसके पश्चात् निशा का गायन एवं कुंती द्वारा नृत्य प्रस्तुत किया जाता है। इस निमंत्रण में आये हुए व्यक्तियों में जियाराम की दृष्टि विशेषकर अचल एवं सुधाकर पर रहती है। इन दोनों को कुंती का नृत्य प्रभावित करता है।

'जियाराम' अचल व सुधाकर दोनों से निशा के विवाह की चर्चा करते हैं। अचल दो वर्ष विवाह न करने का अपना निश्चय उनको बतलाता है। निशा कुंती से भी अधिक सुन्दर है, लेकिन संगीत में कुंती अधिक निपुण है। कुंती, अचल से बी.ए. की परीक्षा में पास होने के उद्देश्य से संगीत सीखने की इच्छा प्रकट करती है। अचल उसे संगीत सिखाने के लिए तैयार हो जाता है। कुंती के नृत्य से वह बहुत प्रभावित होता है। वह कुंती को संगीत की बारीकियों से अवगत कराकर, उसे संगीत में निपुण बनाने का निश्चय करता है। कुंती गायन, वादन की तैयारी के लिए प्रतिदिन अचल के घर जाने लगती है। गायन, वादन के साथ-साथ अचल उसे नृत्य की भी शिक्षा देने लगता है। कुंती द्वारा निशा के घर किया हुआ नृत्य उसके नेत्रों के समक्ष बार-बार घूमता है। वे दोनों एक दूसरे के प्रति आकर्षित होते हुए भी अपने मन की बात प्रकट करने में असक्षम रहते हैं।

सुधाकर अपने ठेकेदारी वाले काम में व्यस्त हो जाता है। माता-पिता न होने के कारण, उसका पालन-पोषण उसकी बुआजी करती हैं। सुधाकर के घर में नौकर-चाकर, वाहन आदि की सारी सुख-सुविधायें उपलब्ध रहती हैं। उसकी बुआ उसके विवाह के लिए चितिंत रहती हैं। अचल सुधाकर से निशा के साथ विवाह करने का आग्रह करता है, लेकिन वह राजी नहीं होता है। वह अचल से स्वयं निशा के साथ विवाह करने का प्रश्न रखता है। अचल दो वर्ष विवाह न करने के उद्देश्य को उसके समक्ष प्रकट करता है। इन दोनों में से जब कोई भी निशा के साथ विवाह करने के लिए तैयार नहीं होता है, तो उसके पिता उसका विवाह अन्यत्र करने का विचार करते हैं। कुछ समय बाद निशा का विवाह लखनऊ में रहने वाले 'लवकुमार' के साथ हो जाता है।

कुंती के नृत्य करते समय, गाँव से पंचम, गिरधारी व तिजुआ अचल के घर आ जाते हैं। कुंती अपने नृत्य को रोककर पैरों के घुंघरुओं पर साड़ी डालकर बैठ जाती है। पंचम व गिरधारी कुंती के भाव समझ जाते हैं, फिर कुंती भी उन्हें अपने नृत्य के विषय में बतला देती है। वे दोनों तिजुआ का

नृत्य देखने के लिए अचल, कुंती व निशा से आग्रह करते हैं। अचल उसके नृत्य को बहुत टालने की कोशिश करता है, लेकिन निशा, कुंती उसके नृत्य को देखने को तैयार हो जाती है। पंचम व गिरधारी अचल से भैरवी व सुनने व नृत्य करने का आग्रह करते हैं। भैरवी सुनकर वे लोग मुकद्दमे के कार्य को पूर्ण कर गाँव लौट जाते हैं।

सुधाकर की बुआ सुधाकर को समझा-बुझाकर विवाह के लिए राजी कर लेती हैं। सुधाकर बुआ के समक्ष ऐसी लड़की से विवाह करने का प्रस्ताव रखता है, जो गायन,वादन,नृत्य में निपुण हो। शिक्षित होने के साथ-साथ स्वतंत्र विचारों वाली हो। बुआ ऐसी लड़की के साथ सुधाकर का रिश्ता करने को तैयार हो जाती है। ये समस्त गुण वे कुंती में पाती हैं। बुआ कुंती के माता-पिता से मिलकर सुधाकर का रिश्ता तय कर देती है। कुंती भी रिश्ते के लिए तैयार हो जाती है।

कुंती अचल को चाहते हुए भी इस रिश्ते के लिए मना नहीं कर पाती क्योंकि अचल की ओर से उसे प्रेम व शादी करने का कोई प्रस्ताव नहीं मिलता है। सुधाकर के साथ विवाह करने की चर्चा कुंती अचल से करती है, तो अचल यह सब सहन नहीं कर पाता है। वह अचेत होकर गिर पड़ता है। कुंती बड़ी चिंतित हो जाती है। अचल अपने आप को संभालता है व कुंती को सुधाकर से विवाह करने के लिए समझाता है। कुंती अचल की भावनाओं की कद्र कर सुधाकर के साथ विवाह करने के लिए तैयार हो जाती है। सुधाकर कुंती के माता-पिता द्वारा तय किये विवाह सम्बन्ध को तोड़ना नहीं चाहता है। वह कुंती से कहता है कि **" यदि तुम्हारे माता-पिता की मर्जी के खिलाफ मेरे साथ विवाह हुआ तो वे लोग कहेंगे अचल हमारी लड़की को उड़ा ले गया। जिसके साथ तुम्हारी सगायी हुई है, वह मेरा मित्र है। वह सोचेगा अचल डाकू है। समाज कहेगा अचल उठाईगीरा है। तुम्हारे मन में ग्लानि होगी।"**[१] अचल अपने भावों द्वारा कुंती को संतुष्ट कर देता है।

कुंती व सुधाकर वैवाहिक बंधन में बधकर सुखपूर्वक जीवन बिताने लगते हैं। सुधाकर अपना काम छोड़कर घर पर ही रहने लगता है। वह कुंती के मधुर गायन सुनने एवं सुन्दर नृत्य देखने के लिए दिन भर तत्पर रहता है। कुंती उसे कार्य के प्रति सचेत करती है। धीरे-धीरे वह ठेकेदारी वाले काम पर जाने लगता है। वहाँ से लौटकर वह कुंती से प्रतिदिन नृत्य करवाता है। गायन व नृत्य कुंती की

---

१. अचल मेरा कोई - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या- १४५)

दिनचर्या में सम्मिलित हो जाता है। रात्रि के समय दोनों फिल्म देखने जाते हैं। धीरे-धीरे दोनों का प्रेम फीका पड़ने लगता है। सुधाकर अपने कार्यों में व्यस्थ हो जाता है। परीक्षा में पास होने के उद्देश्य से कुंती अचल के घर पुनः संगीत सीखने जाने लगती है। सुधाकर उसके विचारों के प्रति सहमत रहता है। बुआ कुंती के नृत्य पर प्रतिबंध लगाती है। बुआ और कुंती में दिन प्रतिदिन तनाव बढ़ने लगता है। सुधाकर कुंती को समझाकर बुआ से दूर रहने का आग्रह करता है। सुधाकर के कहने पर कुंती उसके क्लब में जुड़कर 'एकांकी' आदि में अपनी भूमिका निभाती है। सुधाकर की बुआ घर से बाहर कुंती के गायन, वादन नृत्य एवं एकांकी सभी पर प्रतिबंध लगाती है। सुधाकर कुंती से कुछ नहीं कहता है। कुंती स्वयं सोच-विचार कर अपने मन का कार्य करती है। फूला नौकरानी कुंती के विषय में सम्पूर्ण सूचनायें बुआ को देती है। बुआ सुधाकर के समक्ष कुंती की बुराईयों का बखान करती है। सुधाकर उन पर ध्यान नहीं देता है।

थोवन माते द्वारा पंचम व गिरधारी के ऊपर उसके घर में आग लगाने व डाका डालने का मुकद्मा चलता है। थोवन अपने षणयन्त्र द्वारा पुलिस से गाँव के गरीब स्त्री-पुरुषों पर अत्याचार करवाता है। पुलिस वाले उन्हें बन्दी बनाकर उनकी मार-पीट करते हैं। गिरधारी व पंचम के आग्रह पर अचल, कुंती व उदयसिंह गाँव पहुँचते हैं। थानेदार इन तीनों को देखकर चकित होता है। उदयसिंह गरीब जनता पर हुए अत्याचार को अपने कैमरे में कैद कर लेता है। कुंती अपने अदम्य साहस का परिचय देकर बंदी युवतियों को बंधन मुक्त कर देती है। वह स्त्रियों पर किये अत्याचार को देखकर बहुत दुःखी होती है और वह थानेदार से कहती है कि **"पकड़ना है तो मुझको पकड़िये। आप इन गरीब स्त्रियों का और अधिक अपमान नहीं कर सकेंगे।"**२ अचल कुंती के इस अदम्य साहस को देखकर और भी अधिक प्रभावित होता है। कुंती और अचल में केवल मित्रता का रिश्ता रहता है। थानेदार अचल, कुंती व उदयसिंह से प्रभावित होकर सारी घटना का जिम्मेदार थोवन को ठहराकर चला जाता है। अचल गाँव वालों को हथियारों का उपयोग न करने एवं उन्हें सुरक्षित रखने की सलाह देता है। फिर तीनों वापस शहर लौट जाते हैं।

सुधाकर के काम से लौटने पर प्रतिदिन कुंती का अनुपस्थित रहना उसे खटकने लगता है। बुआ व नौकरानी कुंती के प्रति अनेकों प्रकार की अनुचित बातें करती हैं। सुधाकर के मन में कुंती का अचल

२. अचल मेरा कोई - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या- २१७)

के घर जाने पर शंका होती है। साम्प्रदायिक दंगों के कारण वह कुंती को घर से बाहर जाने से रोकता है। इन्हीं दंगों में निशा के पति की मौत हो जाती है। यह सुनकर कुंती बहुत दुःखी होती है। कुंती नारी को किसी से कम नहीं समझती है, उसके विचारों में स्त्री-पुरुष बराबर हैं। वह सुधाकर की बात न मान कर दंगों के समय में भी घर से बाहर जाती है। यह सब सुधाकर को अच्छा नहीं लगता है। उसका शक बढ़ता जाता है। वह कुंती को खोजने के लिए फूला को भेजता है। फूला उसे अचल के घर देखकर आती है। सुधाकर यह सुनकर रह जाता है।

कुंती 'निशा' का पुर्नविवाह अचल के साथ करवा देती है। अचल समाज सुधारक होने के कारण विधवा स्त्री से विवाह करने के लिए तैयार हो जाता है। दोनों अपने वैवाहिक जीवन से संतुष्ट रहते हैं। इसी बीच कुंती अचल से संगीत शिक्षा प्राप्त करती है। अचल एम.ए. की परीक्षा में प्रथम स्थान प्राप्त करता है। निशा की तृतीय श्रेणी आती है। कुंती फेल हो जाती है। फेल होने के बाद भी वह अगली वर्ष परीक्षा देने की तैयारी करती है।

संगीत सीखकर कुंती घर आती है सुधाकर क्रोध में रहता है। वह भोजन आदि का त्याग कर देता है। कुंती की स्वतंत्रता पर प्रतिबंध लगाने का प्रण करके कुंती से कहता है कि **"तुम्हारी प्रकृति उग्र है। वैसे तुम सुधारने की नहीं। जब तक मुझको विश्वास नहीं हुआ कि तुम सुधार मार्ग के लिए दृढ़ हो गई मैं प्रण पर अटल रहूँगा"**३ सुधाकर के इस प्रण को सुनकर कुंती बहुत दुःखी होती है। सुधाकर द्वारा उसके चरित्र पर शक करने पर उसके मन को गहरी ठेस पहुँचती है। वह निर्दोष होने के कारण यह सब सहन नहीं कर पाती है। नारी स्वतंत्रता पर पाबंदी उसके विरुद्ध होती है। इस कारण जीवन को कलंक से बचाने के लिए, वह जीवन को त्याग देना उचित समझती है। वह अपने सिर में बन्दूक की गोली को उतार देती है। वहाँ पर एक पत्र मिलता है, जिसमें लिखा होता है अचल मेरा कोई..................हाथ के कंपित होने से केवल एक बिगड़ी हुई लकीर ही बन पाती है। सुधाकर यह सब देखकर चकित रह जाता है।

कुंती व सुधाकर दोनों ही प्रारंभ से नारी स्वतंत्रता के दावेदार रहते हैं। कुंती जैसे ही अपने को परतंत्रता की जंजीरों में जकड़ा पाती है, वह अपने प्राणों का त्याग करना ही उचित समझती है।

---

३. अचल मेरा कोई - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या- २५६)

(ङ) - कुण्डली चक्र

कुण्डली चक्र, वर्मा जी का पाँचवा सामाजिक उपन्यास है। इसकी कहानी आदर्श प्रेम से हटकर वर्ग संघर्ष को लेकर चलती है। इस उपन्यास की कहानी उच्च,मध्य एंव निम्न तीनों वर्गो से संबंधित है। उपन्यास की घटनायें मऊ सहानिया.सिगरावन और बडागॉव छावनी इन तीनों गांवों से संबंधित है।

कहानी का प्रारंभ नयागॉव छावनी के सम्पन्न युवक 'ललितसेन' के परिवार से होता है। ललित को इतिहास एंव दर्शनशास्त्र से विशेष लगाव रहता है। माता-पिता की मृत्यु के पश्चात् परिवार में केवल उसकी छोटी बहिन रत्नकुमारी है। 'ललित' प्यार से उसे 'रतन' कहकर पुकारता है। ललित ही रतन का पालन-पोषण करता है। शिक्षा के प्रति उसका विशेष लगाव रहता है। वह रतन को भी शिक्षित बनाने का प्रयास करता है। 'रतन' अपने भाई के विचारों से सहमत रहती है। घर का खर्च मकानों व दुकानों के किराये की आय से अच्छा चलता है। वह निर्बल व निःसहाय लोगों को संसार में जीवित रहने का अधिकारी नहीं मानता है।

एक दिन ललित के पास ललितपुर के बी.ए. पास अजित कुमार आते है। वह अध्यापक के रिक्त स्थान के लिये नौकरी का प्रस्ताव रखते है। रिक्त स्थान भर जाने के कारण ललित उन्हे ट्यूशन पढ़ाने का सुझाव देते है। 'अजित' ट्यूशन के लिये तैयार हो जाते है। 'ललित' अपनी छोटी बहिन 'रतन' को 'अंग्रेजी' व 'संगीत' पढ़ाने का प्रस्ताव रखते है। अजित कुमार नयागांव छावनी के पास 'बिलहरी' से प्रतिदिन रतन को ट्यूशन पढ़ाने आने लगता है।

अजित के ट्यूशन पढ़ाते समय एक दिन ललित के घर शिवलाल व भुजबल के पास सहायतार्थ आते है। वे दोनों 'रतन' का गायन सुनकर मुग्ध हो जाते है। 'भुजबल' 'ललित' को 'शिवलाल' का परिचय देता है। वह शिवलाल के विषय में बताता है कि ये मऊरानीपुर के जमींदार है। मैं इनका कारिन्दा हूँ। मैं मऊरानीपुर के समीप गॉव 'लहचूरा' का निवासी हूँ। वह जमींदार के लिये ब्याज पर दस हजार रू० की मांग करता है। किसानों द्वारा भूमि का लगान न मिलने के कारण उसे रूपये की मांग करनी पड़ती है। शिवलाल साहूकारों का कर्जदार रहता है। साहूकार भूमि नीलाम कर पैसों की मांग करते है। भूमि को नीलामी से बचाने के लिये वे दोनों ललित से सहायता मांगते हैं। ललित सेन उनकी सहायता करने से इंकार कर देता है।

अजित 'रतन' को प्रतिदिन दो घंटे पढ़ाने आता है। 'रतन' लगन से अपनी पढ़ाई करती है। अवकाश के दिन भुजबल व अजित दोनों साथ-साथ मऊ सहानियाँ भ्रमण के लिये प्रस्थान करते है। वहाँ के प्राकृतिक दृश्यों को देखकर अजित प्रभावित होता है। भुजबल 'अजित' को मऊ में अपनी ससुराल ले जाता है। वहाँ पर दोनों रात्रि में विश्राम करते हैं। भुजबल की ससुराल में केवल उसकी सास, साली रहती है। 'अजित' भोजन के पूर्व गायन-वादन करने लगता है। भुजबल की साली 'पूना' अजित को 'रासधारी' की उपाधि से विभूषित करती हैं। भुजबल की पत्नी विवाह के कुछ समय पश्चात् समाप्त हो जाती हैं।

प्रातः भुजबल अपनी सास से विदा माँगता है। सासों मां 'पूना' के विवाह के संबंधित अपनी चिंता उससे व्यक्त करती है। वह अपनी सासो मां को 'पूना' के लिये अच्छा वर खोजने का आस्वासन देता है। वही पर भुजबल पूना के लिये अपनी सास से अजित की ओर इशारा करता है। इस विषय में पूना की मां कहती है कि **"पत्री मेल खा जाए तो अच्छा है, नहीं तो कुछ और फिकर करो इस वर्ष में भांवर डालने का निश्चय कर लिया है। अपनी बहिन के घर में रह जाती, तो अच्छा होता परन्तु क्या करें, ग्रहों पर बस नहीं चलता है।"**[१]

'भुजबल' व 'अजित' दोनों वापस नयागाँव लौट आते हैं। अजित 'रतन' को पुनः पढ़ाने लगता हैं। वह फोटोग्राफी भी जानता है। वह 'रतन' व 'ललित' दोनों की फोटो खीचता है। दोनों खुशी-खुशी तस्वीर निकलवाते है। एक दिन 'भुजबल' 'ललित' से उसकी जन्मपत्री की मांग करता हैं। 'ललित' विवाह से इंकार करते हुए जन्मपत्री दे देता है। वह आजीवन विवाह न करने का अपना निर्णय भुजबल को बतला देता है। 'अजित' 'भुजबल' से 'रतन' कि लिये उसकी जन्मपत्री की मांग करता है। भुजबल यह सुनकर आश्चर्य चकित होता है। वह तुरंत गाँव जाकर अपनी जन्मपत्री लाकर ललित को दे देता है। दोनों की जन्मपत्री मिल जाती है। 'रतन' के साथ भुजबल का विवाह तय हो जाता है। कुछ समय पश्चात् दोनों का विवाह हो जाता है।

अजित 'रतन' के घर 'ललित' को अपनी खीची तस्वीरें देने आता है। तो उसे पता चलता है, कि 'रतन' का विवाह तय हो गया है। यह सुनकर वह हतप्रभ रह जाता है, क्यों कि मन ही मन वह

---

१. कुण्डली चक्र उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या- ३७)

'रतन' को पसंद करता है। 'रतन' से पुनः तस्वीरें निकलवाने का आग्रह करता है। ललित वहां पर अचानक आ जाता है। 'ललित' 'अजित' को संदेहात्मक दृष्टि से देखकर अपमानित कर घर से निकाल देता है। भुजबल 'पैलू' व बुद्धा' नामक किसानों को लगान बसूली के लिये प्रायः परेशान करता है, लेकिन विवश किसान ऋण देने में असमर्थ रहते हैं। भुजबल उन पर अत्याचार करता है। दोनों गाँव छोड़ने का निश्चय कर लेते है। और अपनी रिश्तेदारी सिंगरावन चले जाते है।

पूना व उसकी माँ भी अपने भाई की लड़की की शादी में सिंगरावन पहुंचती है। पूना का मामा 'भुजबल' व 'ललित' को भी अपने घर विवाह में आमंत्रित करता है। लालसिंह 'शिवलाल' व ललित सेन' का खूब स्वागत करता है। वे दोनों पूना के सोन्दर्य कों देखकर आकर्षित होते हैं। भुजबल से वे दोनों अपने-अपने विवाह के संबंध में विचार प्रकट करते है। भुजबल दोनों को आस्वासन देकर पूना की मां से बात करता है।

पूना की मां भुजबल के दोनों प्रस्तावों को ठुकरा देती है। जमींदार की अधिक व पहली पत्नी होने के कारण, व ललित सेन से धार्मिक विचार के कारण विवाह करने से इंकार कर देती है। वह भुजबल से 'अजित' के विषय में चर्चा करती है। 'अजित' का प्रश्न आने पर भुजबल इंकार कर देता है। वह पूना का हाथ थामने की बात रखता है। पूना की मां इस विषय में कुछ नहीं कहती है।

'ललित' दस हजार रू० 'भुजबल' को देने के लिये तैयार हो जाता है।'शिवलाल' व 'भुजबल' प्रसन्न होते है। 'शिवलाल' 'भुजबल' से पूना का विवाह अपने साथ करवाने का बार-बार प्रस्ताव रखता हैं। भुजबल सोच-समझकर उससे दो गांव पूना के नाम करने के लिये कहता है। वह विवाह करने कि लिये दो गांव पूना के नाम कर देता है। दसहजार रू० भुजबल को देने के पश्चात् दो गांव 'रतन' के नाम, तीन गांव ललित के नाम व एक गांव अपने हाथ में करना चाहता है। दो गांव रतन के एक अपने नाम का, दो गांव पूना से पुर्नविवाह कर प्राप्त करना चाहता है।

भुजबल शिवलाल को पूना के साथ विवाह करने को आश्वासन दे देता है। वह साहूकारों की डिग्रियों का रूपया दाखिल नहीं करता है। ललित के पैसों से वह दो घोड़ों की फिटन खरीद लेता है। बाकी पैसा 'पूना' के लिये जेबर बनवाने के लिए खर्च कर देता है भुजबल शिवलाल से कहता है कि **"कानून की इसी शर्त पर अदालत की अनुमति बैनाम करने को मिली थी। यदि साहूकारों**

की डिग्रियों का रूपया दाखिल न किया गया तो सब **बैनामे कानून के विरूद्ध मानकर स्वतः नष्ट हो जायेंगें। और जायजाद के मालिक क्या साले साहूकार बन जायेंगें? सो तो नहीं, परन्तु जायजाद नीलाम हो जायेगी बाबू ललित सेन का दस हजार रूपया मारा जायेगा।"**२

'ललित सेन' शिवलाल पर दसहजार रूपये सरकारी बकाया जमा न करने का दावा करता है। वह पकड़ा जाता है। भुजबल सिंगरावन पूना के साथ स्वयं विवाह करने के लिये पहुंच जाता है। 'अजित' 'पूना' की चिट्ठी प्राप्त कर सिंगरावन के लिये चल देता है। रास्ते में उसकी मुलाकात ललित से होती हैं। 'ललित' अपने किए पर शर्मिन्दा होकर 'अजित' से माफी मांगता है। 'ललित' 'भुजबल' के विषय में 'अजित' से जानकारी मांगता है। अजित पहले बताने से इंकार कर देता है लेकिन शिवलाल पूना के साथ विवाह करने की बात उसे बताता है। 'भुजबल' 'शिवलाल' की बारात आने से पूर्व ही पूना के साथ विवाह करने का निश्चय करता है, ताकि उसके नाम की भूमि भी उसे मिल जाये। पूना भुजबल से विवाह के लिये तैयार नहीं होती हैं। अजित 'पूना' की सहायता के लिये सिंगरावन चला जाता है। ललित के आग्रह करने पर भी वह उसे अपने साथ ले जाने से मना कर देता है।

'अजित' 'पैलू' के साथ सिंगरावन पहुंच जाता है। वहां पर देवी मंदिर में पूना से मिलाता है। 'भुजबल' दूल्हे के वेश में 'पूना' का मंदिर से देवी पूजन कर लौटने का इंतजार करता है। विवाह की सारी तैयारियां हो जाती हे। 'अजित' 'पुना' को भुजबल के विवाह करने से बचाता है। वह उसे इच्छानुसार स्थान पर जाने के लिये कहता है। पूना अजित से उसके हृदय के अलावा जलसरोवर में प्राण त्याग देने की इच्छा प्रगट करती है। अजित पूना को अपनाने में स्वयं को कमजोर समझता हैं। पूना अजित से कहती है **"मुझे यह सब और जानने की और आवश्यकता नहीं हैं यदि तुम मेरी रक्षा नहीं कर सकते हो, तो यह जलराशि तो मुझसे मुंह मोड़ेगी नहीं।"**३ अजित पूना को हृदय से लगा लेता है। वह जीवन भर साथ निभाने का बादा करता हैं।

विवाह के समय पूना के घर लौटने पर लालसिंह उसकी खोज में निकलता है। वह सभी जगह पूना को खोजता है, लेकिन उसका पता नहीं चलता है।वह चिन्तित होकर उसके आत्मदाह के विषय

---

२. कुण्डली चक्र उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या- १३२)

३. वही - (पृ० संख्या- २००)

में सोचता हैं। अनेक प्रकार की आशंकाओं से चिंतित होकर वह दुःखी होता है। भुजबल पूना के गायब होने में अजित का हाथ बतलाता है।

ललित भी सिंगरावन आ जाता है। वह लालसिंह के घर पहुंचता है। वहां पर भुजबल उसे देखकर भौचक्का रह जाता है। गांव वालों में भी इस वेमेल विवाह को लेकर विवाद की भावना उत्पन्न हो जाती है। लालसिंह सारी स्थिति को देखकर समझ जाता है कि भुजबल ने उसके साथ छल किया है। वह पूना की इच्छा के विरूद्ध जबरदस्ती विवाह रचा रहा है। उसी समय ललित भुजबल से व्यंग पूर्वक कहता है-

''वाह' क्या बात हैं,दूल्हा महाराज, जमींदारी रूपया ब्याह सब एक साथ ही हथकण्डे में।''४

भुजबल ललित की बातों को सुनकर इतना भयभीत हो जाता है, कि वह अचेत होकर भूमि पर गिर जाता है। 'पैलू' व 'ललित' 'पूना' व 'अजित' की खोज में निकल जाते है। चकरई पहाड़ी पर वे दोनों मिलते है। ललित उन दोनों को घर ले आता है। वह पूना व अजित की मनोभावों को समझकर दोनों का विवाह करवा देता है। 'ललित' अपनी बहन 'रतन' का जीवन बर्बाद होने से बचा लेता है। वह पूना की शादी अजित से करवा कर नेक कार्य करता है।

'ललित' 'भुजबल' को छावनी ले आता है। वह 'रतन' को 'सिंगरावन' में घटित घटना को विस्तार पूर्वक बतलाता है। 'अजित' मिले हुए खजानों को सरकार को सौंप देता हैं। सरकार उसे आधा खजाना उपहार स्वरूप दे देती है। 'शिवलाल' को धोखाधड़ी के अपराध में कई वर्ष की सजा होती है। भुजबल अपने कारनामों से बच जाता है। ललित के घर का पुनः आना जाना रहता है। अजित पूना के सामने रतन का छाया चित्र अपने हृदय से हमेशा के लिए हटाकर उसे रतन को सौंप देता है। वह अपने हृदय में पूना को नया स्थान देता है।

वर्मा जी ने 'कुण्डली चक्र उपन्यास' में असफल प्रेम और मात्र कुण्डली मिलाकर विवाह करवाए जाने के दुष्परिणामों का चित्र प्रस्तुत किया है। पूना की कुण्डली ललित से मिल जाती है लेकिन पूर्व में वह विवाह करने से मना कर देता है। अजित से भी पूना की कुण्डली मिल जाती है, लेकिन पूर्व में

---

४. कुण्डली चक्र उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या- २०६)

उसकी माँ राजी नहीं होती है। पूना की माँ अंतिम समय अजित से ही पूना के साथ विवाह करने के लिए अजित का नाम लेती है।

बुन्देलखण्ड में यह प्रथा लोक प्रचलित है कि वर-कन्या की जन्मकुण्डली मिलने पर ही विवाह सम्भव होता है। उच्च वर्गों में कुण्डली को अधिक महत्व दिया जाता है। निम्न वर्गों में ऐसा नहीं है।

इस उपन्यास में **"समाज को चुनकर उठाये गये ये पात्र भारतीय शौर्य, साहस, लज्जा, त्याग, परोपकार, परसेवा, प्रेम की अनन्य आस्था ईश्वरभक्ति एवं अपरिग्रह आदि उदार गुणों का प्रतिनिधित्व करते हैं।"५**

इस उपन्यास की घटनायें कुछ सत्यता पर आधारित है। उपन्यास के परिचय में पैलू व बुद्धा से संबंध रखने वाली प्रेत बाधा की घटना सत्य है। अजित कुमार जिस पात्र का प्रतिबिम्ब है, वह अभी जीवित है। रतन अब नहीं है। ललित सदृश चरित्र समाज में मिल सकते हैं। वह कल्पित है। यही बात शिवलाल के लिए कही जा सकती है। भुजबल अभी संसार में है परन्तु यह नहीं मालूम कि उसने दूसरा विवाह किया या नहीं । भुजबल से संबंध रखने वाली एक आध घटना सत्य है। अधिकांश कल्पित हैं।

---

५. वृन्दावन लाल वर्मा के उपन्यासों का सांस्कृतिक अध्ययन - डा० ऊषा भटनागर (पृ० संख्या- ११४)

मैत्रेयी पुष्पा जी के उपन्यासों के कथ्य

(क)इदन्नमम्

मैत्रेयी जी का यह उपन्यास 'नायिका' प्रधान है। इस उपन्यास में 'पुष्पा जी' ने 'बुन्देलखण्ड अंचल' के ग्रामीणों के जन-जीवन की जटिलताओं को बड़े ही सहज ढंग से उकेरा है, जिसमें 'नारी' पात्रों का अनुपम स्थान है। प्रमुख नारी पात्र 'मन्दाकिनी', 'बऊ', 'कुसुमा', 'सगुना', 'कक्को' व गोपाल पुरा की 'ठकुराईन' है। इस उपन्यास में बुन्देलखण्ड अंचल के निम्न गाँवों नरसिंह, खमा, डिकौली, गोपालपुरा, भलौटा, झबरा, झखनवारा, डुड़ी, कुड़री, सोनपुरा व श्यामली तथा कस्बों में उरई, कोंच, एट आदि का वर्णन होता है।

"मन्दाकिनी" जीवन की अनेक कठिनाइयों को झेलती हुई इपने गाँव सोनपुर के लिए पूर्णरुपेण समर्पित हो जाती है। वह ग्राम सुधार के लिए अनेकों संघर्षों को झेलती हुई आगे बढ़ती है जिसमें उसको कई दुराचारी व्यक्तियों से टक्कर लेनी पड़ती है। 'मन्दाकिनी' गाँव के कई असहाय दीनहीन निरीह व्यक्तियों की सहायता कर उन्हें रोजगार के लिए प्रेरित करती है। उपन्यास में 'अनेकों कहानियाँ व घटनायें' बीच-बीच में घटित होती है, जिनका 'मन्दा' के जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ता है, यह तीन पीड़ियों की सहज कहानी है। मन्दाकिनी तीनों पीढ़ियों को 'कसौठी' पर रख उनके पक्ष में भी रहती है और उनके विचारों से असहमत भी रहती है। बऊ (दादी), प्रेम (माँ) व मन्दा (मन्दाकिनी) तीन पीढ़ियों के जीवन से जुड़ा हुआ है, यह उपन्यास ।

'सोनपुरा' में खेलकूद कर बड़ी होने वाली 'मन्दा' अपना गाँव छोड़कर 'गनपत काका' व 'बऊ' के साथ 'श्यामली' 'पंचम सिंह' के घर पहुँचती है। वहाँ पर तीनों सदस्यों के ठहरने का प्रबन्ध किया जाता है। पंचम सिंह की पत्नी 'कक्को (देकाढवाली),'बऊ' व 'मन्दा' की देखभाल करती है। समय पर भोजन आदि की व्यवस्था करती है। पंचम सिंह गाँव में 'दादा' के नाम से चर्चित है। इनके छोटे भाई 'गोविन्द सिंह' (कक्का) व 'अमर सिंह' (दाऊ जू) है। उनका संयुक्त परिवार है। परिवार में अनेकों बच्चे व स्त्रियां है। 'गोविन्द सिंह' को बऊ का श्यामली का आना अच्छा नहीं लगता है तथा वे 'दादा' का भरपूर विरोध करते हैं। 'दादा' 'बऊ' का पूर्ण सहयोग करते हैं, वे 'गोविन्द सिंह' की बात को नकार देते हैं।

'पंचम सिंह' 'बऊ' की व्यथा को सुनते हैं। बऊ की बहू 'प्रेम' अपने पति 'महेन्द्र सिंह' की मृत्यु के पश्चात् परपुरुष के साथ भाग जाती है। प्रेम उपनी बेटी मन्दाकिनी व अपने हक की मांग के लिए बऊ के पास सूचना भेजती है। बऊ (अपने पुत्र महेन्द्र की निशानी) मन्दा को छिन जाने के डर से 'श्यामली' पंचम सिंह की आश्रय में चली जाती है। पंचम सिंह बऊ का पूरा सहयोग करते हैं तथा मन्दा के एकान्त स्थान की व्यवस्था करते है जहाँ पर कोई उसे देख न सके। कोर्ट कचहरी मुकद्मे का काम गोविन्द सिंह देखते है बऊ अपनी बहू के विषय में दुःखित होकर सोचती है- कि **"मेरे महेन्द्र की दुल्हन रतन यादव के संग.....कि इस गांव के जमींदार सुभाग सिंह की पुत्रवधु भाग गई उस नाच के संग।"**[१] 'पंचम सिंह' 'गोविन्द सिंह' को घर के खजाने की चाबी सौंपे रहते हैं। फसल की सारी जिम्मेदारी उन्हीं की रहती है। अमर सिंह (दाऊ जी) तपेदिक रोग से बीमार रहते हैं तथा बरेदिये का काम करते हैं।

दादा के पुत्र 'विक्रमसिंह' इलाहाबाद में दरोगा पद पर नियुक्त रहते है। उनका पुत्र है मकरन्द जो श्यामली में अपने दादा-दादी के साथ रहता है। मकरन्द व मन्दा की दोस्ती हो जाती है। धीरे-धीरे बचपन के दोनों मित्र एक-दूसरे को बहुत चाहने लगते है। मकरन्द के चचेरे भाई उसे चिढ़ाने लगते है। 'मन्दा' पांचवी कक्षा तक पड़ी होती है। 'मकरन्द' 'मन्दा' के लिए आठवीं कक्षा तक की पुस्तकें खरीद कर देता है। मन्दा उन्हें घर पर रहकर पढ़ती रहती है।

दादा 'बऊ' व 'मन्दाकिनी' की सुरक्षा के लिए उन्हें अलग-अलग स्थानों जैसे 'जंगल गढ़ी' व अन्य गाँवों में भेजते रहते है। जिससे रतन यादव उन्हें हानि न पहुंचा सकें। मन्दा के गढ़ी चले जाने पर मकरन्द बहुत व्याकुल हो जाता है तथा मन्दा खोयी-खोयी रहती है । कुछ दिन पश्चात् मन्दा के पास 'कुसुमा' 'भावी' व 'दाऊ भइया' आते है।

'मन्दा' कुसुमा से मकरन्द के विषय में जाने की कोशिश करती है। कुसुमा उसे मकरन्द का दिया हुआ पत्र देती है । पत्र पढ़ कर वह मकरन्द के भावों को गहनता से समझती है। गढ़ी में रहकर मन्दा' कुसुमा व दाऊ के संबंधों को समझ जाती है। 'कुसुमा' गोविन्द सिंह के पुत्र 'यशपाल' की पत्नी है 'यशपाल' उसे अपनाता नहीं है। 'गोविन्द' के भाई 'दाऊ जी' अविवाहित रहते है।'कुसुमा' व 'दाऊ' जी

---

१. इदन्नमम् उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- ३३)

में प्रेम संबंध स्थापित हो जाते है। इनके एक पुत्र भी होता है। पुत्र जन्म के पूर्व दाऊ जी की मृत्यु हो जाती है। 'दाऊजी' मृत्यु के पूर्व 'दादा' से अपना हक कुसुमा को देने के लिए कहते है। घर के सभी सदस्य दादा के खिलाफ हो जाते है कुसुमा का पति यशपाल कुसुमा को मारने की धमकी व चरित्रहीनता का आरोप लगाता है । वह कुसुमा की संतान को नाजायज ठहरा कर हक देने से इंकार कर देता है।

बऊ अडिग विश्वास के साथ केस लड़ने के लिए तैयार रहती है वे चीफसाहब से कहती है **"यह सोचे कि डर के कारण उस बेडिनी को सौप दूंगी अपनी बिटिया। अपने महेन्द्र की निशानी। अपने कुल की बंसबेल, बऊ ने नाक पर चश्मे को साधा और दृढ़ता से देखने लगी।"**२ बऊ एक जमींदारिन होते हुए निडर व हिम्मतवर महिला है तथा जीवन की अनेकों लड़ाइयों से गुजरी है। एक विधवा स्त्री का समाज में रहना कितना कठिन होता है, उन सभी संघर्षों को जीवन में झेला है। बऊ प्रत्येक पल अपनी बहू(प्रेम) को पराजित करने की होड़ में लगी रहती है। 'मन्दा' को अपने माता-पिता के विषय में सारी बातें बऊ के द्वारा पता चल जाती है। मन्दा ममता की छाया को भूल नही पाती है।

बऊ सोनपुरा में अस्पताल के उद्घाटन के समय अकारण हुयी पुत्र (महेन्द्र सिंह) मृत्यु को नहीं भूल पाती है। उस समय हुए अचानक हुए दंगे उनकी आँखों के समक्ष खटकते ही रहते हैं। महेन्द्र सिंह गाँव के पूर्व प्रधान थे। वे गाँव के विकास के लिये पूर्ण रूप से समर्पित थे। उन्होंने ही कोशिश करके गाँव में अस्पताल का निर्माण करवाया था। महेन्द्र सिंह गाँव के विकास के लिये प्रत्येक पल उत्सुक रहते थे। उनके मन में ऐसी अनेकों योजनायें थी, जिसमें गाँवों के दंगें का बचाव करते समय कोई उन पर पीछे से प्रहार कर देता है, और उनकी घटना स्थल पर ही मृत्यु हो जाती है।

जंगल की गढ़ी के पश्चात् दादा की सूचना के अनुसार 'गनपत कक्का' (बऊ के गाड़ीवान) डबल बब्बा (लखना डाकू) बऊ मन्दा व कुसुमा को बिरगुबाँ पहुँचा देते हैं। दाऊ जी श्यामली चले जाते हैं। कुसुमा उदास हो जाती है। मन्दा 'कुसुमा' भाभी के भावों को समझ जाती है। उन दोनों में हास-परिहास के चित्र भी उपन्यास में अंकित होते हैं। बिरगुबाँ में कुसुमा व मन्दा अकेली रह जाती है। बऊ केश के चक्कर में झाँसी चली जाती है। यहाँ पर मन्दा की तबियत खराब हो जाती है। बिरगुबाँ यशपाल की

---

२. इदन्नमम् उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- ८८)

दूसरी ससुराल है। यहाँ पर मन्दा के जीवन में एक और आपत्तिजनक घटना घटित होती है। जिससे उसके जीवन में और भी बदलाव आता है। कैलास मास्टर (रिश्ते में मामा है।) उसका कौमार्य भंग कर देती है। कुसुमा उसके पैर तोड़ देती है। असहाय मन्दा को सम्हाल कर वह श्यामली वापस लौट जाती है। मन्दा का दोष न होने के कारण कुसुमा उसे समझाती है कि वह निर्दोष है।

श्यामली में मन्दा से मिलने मकरन्द आता है। वह उससे मिलने की हिम्मत नहीं जुटा पाती है। निर्दोष होने के कारण कुसुमा उसका संभल बनाती है। मकरन्द और मन्दा दोनों का वार्तालाप प्रारम्भ होता है। मकरन्द डाक्टर बनने का प्रस्ताव रखता है।

गोविन्द सिंह बऊ की जमीन को लेना चाहते हैं। इस कारण वे अपने घर के लड़कों में से किसी एक के साथ मन्दा का विवाह करने का प्रस्ताव दादा के समक्ष रखते हैं। दादा गोविन्द सिंह के मनोभावों को भांप जाते हैं। दादा गोविन्द सिंह से कहते हैं **"कल के दिन गाँव वाले यह कहेंगे कि मुसीबत की मारी बऊ को तब सहारा दिया जब जमीन हड़प ली। खेती कब्जे में कर ली। इस बात पर "झल्ला उठे काका जू, लो खेती की बात कहाँ से ले आए तुम?" दादा कहते हैं "तब क्या मोड़ी को परमारथ में ब्याह रहे हो तुम?"३**

दादा न्याय प्रिय इंसान है। बऊ कुसुमा द्वारा दादा व गोविन्द सिंह के विचारों को समझ कर मन्दा का विवाह करने का निश्चय करती है। वे दादा के पास रिश्ते के लिए जाती है। दादा बऊ से कहते हैं **"संबंध होगा तो आपकी इच्छा से होगा। जहाँ चाहोगी वहाँ होगा। जिसे पसंद करोगी उससे होगा। कन्या पक्ष का यह हक कोई नहीं छीन सकता।"४**

बऊ मन्दा के लिए मकरन्द का चुनाव करती है। दोनों की सगाई हो जाती है।मकरन्द के माता-पिता रिश्ते की बात सुनकर श्यामली आते हैं। वे दोनों इस रिश्ते के लिए तैयार नहीं होते हैं तथा वे मकरन्द को इलाहाबाद ले जाना चाहते हैं। मकरन्द दादा की आज्ञानुसार विवश होकर इलाहाबाद चला जाता है। मन्दा मकरन्द को विदा करने बस स्टॉप पर पहुँचती है। वहाँ पर मकरन्द 'मन्दा' से कहता है- **"हौसले से रहना। मैं पढ़ने जा रहा हूँ। मेहनत करुँगा। डाक्टर बनूँगा। तुम्हारे गाँव**

---

३. इदन्नमम् उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- ११५)

४. इदन्नमम् उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- ११६)

आऊँगा मन्दा। तुम्हारे अस्पताल में। रोना नहीं, तुम्हें हमारा कौल।"५

मकरन्द के जाने के पश्चात् मन्दा अपनी दादी के साथ सोनपुरा लौट जाती है। वहाँ पहुँचकर उसे पता चलता है कि गोविन्द सिंह द्वारा उसके खेत बेच दिये जाते हैं। मकान की हालत भी जर्जर हो जाती है। उसके खेतों पर गाँव का अभिलाख क्रेशर द्वारा पहाड़ों को कटवा कर गिट्टी बनवाता है। 'बऊ' व मन्दा को गोविन्द सिंह द्वारा दिये गये धोखे से बहुत आहत पहुँचती है। गनपत कक्का दोनों का सहयोग करते हैं।

मन्दा की सहेली 'सगुना' की भी उपन्यास में अहम भूमिका है। सगुना जगेसर की पुत्री है। जगेसर दुराचारी व्यक्ति है। वह अभिलाख का मित्र है। अभिलाख मन्दा का दुश्मन है। वह हमेशा मन्दा को क्षति पहुँचाने की योजनायें बनाता है। मन्दा गाँव-गाँव रामायण का पाठ व भजन-कीर्तन कर अपना जीवन यापन करने लगती है। सगुना बऊ के काम-काज में हाथ बटाती है। जगेसर सगुना को अनेकों बार मन्दा के घर जाने से रोकता है, लेकिन वह नहीं मानती है।

गाँव के प्रतिष्ठित व्यक्तियों में एक है- प्रधान कक्का व द्वारिका कक्का। ये दोनों मन्दा की सहायता करते हैं। ग्राम में बेरोजगारी व मजदूरों की दयनीय दशा मन्दा के लिए दिन-प्रतिदिन असहनीय होती है। कायले वाले महाराज के पास मन्दा जाती है। वह गाँव वालों की समस्याओं को उनके समक्ष रखती है। महाराज उसे टीकमसिंह के पराक्रम की कहानी सुनाते हैं। वह उस कहानी से प्रभावित होती है। गाँव में सभा आयोजित कर सभी से मदद लेकर ट्रेक्टर-ट्राली की खरीद करती है। जिसमें प्रधान कक्का का पूरा सहयोग रहता है। यह ट्रेक्टर-ट्राली भइयाजी के क्रेशर पर लगाती है। भइया जी उसे उचित मुनाफा देते हैं। मन्दा भाड़े के पैसों को सभी में वितरित कर देती है, जिससे बेरोजगारी व बधुवा मजदूरी से कृषकों को कुछ हद तक निदान प्राप्त होता है। कृषक खेती करने से बंचित हो जाते हैं, क्योंकि पहाड़ों के कटान के कारण भूमि पथरीली हो जाती है। क्रेशरों के कारण गाँव में सभी जगहों पर धूल ही धूल छायी रहती है। जिससे दमे, खाँसी, टी०बी० आदि के मरीजों की संख्या बढ़ जाती है। गाँव में अस्पताल न होने के कारण रोगी घुट-घुट कर जिन्दगी की साँसे गिनते हैं।

ट्रेक्टर खरीदने के लिए गाँव की स्त्रियां मन्दा को अपने-अपने गहने दे देती हैं तथा जिस व्यक्ति

---

५. इदन्नमम् उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- १५८)

से जो बनता है, वह मन्दा को दे देता है, जिससे ट्रेक्टर से उन्हें भी मुनाफा मिल सके। गाँव में सभी की सहमति से ट्रेक्टर मन्दा के नाम पर उठाया जाता है। पिरभू नाई ट्रैक्टर को चलाना जानता है। अतः वह ड्राईवर का कार्य करता है। पप्पू व सगुना मन्दा की मदद करते हैं। हिसाब का कार्य मन्दा संभालती है। मन्दा की माँ उससे मिलने सोनपुरा आती है। मन्दा उससे घर चलने का आग्रह करती है। दादी के कठोर व्यवहार के कारण मन्दा अपनी माँ को घर ले जाने में असमर्थ हो जाती है। माँ अपने किये पर शर्मिन्दा रहती है। रतन यादव उसे अपने ममेरे भाई के साथ बिठलवा देता हैं। वह अपनी करुण व्यथा मन्दा को बतलाती है वह पश्चाताप में डूब जाती है। मन्दा अपनी माँ को धैर्य देती है। तथा एक - दूसरे से मिलकर अपनी -२ व्यथा व्यक्त करती है। मन्दा की माँ मन्दा को गॉव के प्रति नेक काम करने के लिए पचास हजार रुपये देते हुए कहती है कि यह तुम्हारे पिता महेन्द्र सिंह की अमानत है। मन्दाकिनी गाँव के लिए इन पैसों से दूसरा ट्रेक्टर खरीद लेती है। यह बात सुनकर अभिलाख जल जाता है। अभिलाख अपने मजदूरों से बधुवा बेगारी करवाता है, उन्हें अनेकों प्रकार की यातनायें देता है। उन्हें 'रोटी' के बदले 'शराब' देता है, जिससे मजदूरों को थकान का अहसास न हो व दिन -रात काम करते रहें। अभिलाख के सारे मजदूर सोनपुरा के न होकर ललितपुर जिले से आये राहत,सहारिया जाति के हैं। ये मजदूर सागर, गुना,टीकमगढ, छतरपुर ,आदि जिलों के वन प्रान्तों के बाशिन्दा है। ये लोग अभिलाख के यहाँ पहाड़ पर सोलिंग (मोटा पत्थर) तोड़ने का कार्य करते हैं। इन्हें इनके काम का एक भी पैसा दिया नहीं दिया जाता है। मालिक से जब ये पैसा मांगने की बात करते हैं, तो पैसे के बदले में इन्हें पीटा जाता है। मन्दा के लिये मजदूरों की यह दशा असहनीय हो जाती है।

'मन्दा' राउतों के कष्टों से दुःखी होकर उन्हें अपने घर भागवत भोज में बुलाकर एकात्रित करती है। सभी राउतों को समझाकर उचित दाम पर कार्य करने के लिए प्रेरित करती है। यह सुनकर अभिलाख 'मन्दा' को धमकी देता है। राउतों की स्त्रियों को अभिलाख द्वारा बेचे जाने पर राउतों का क्रोध भयानक ज्वाला के रुप में प्रज्ज्वलित होता है। सभी राउत मजदूर 'अभिलाख' व 'लीला' को घेर लेते है। 'लीला' व 'अभिलाख के नाजायज सम्बंध रहते हैं। सभी मजदूर अभिलाख को मार -मार कर घायल कर देते हैं।'लीला' 'अभिलाख को लेकर जंगलों में भाग जाती है। 'अभिलाख' का केशर बंद हो जाता है।

'अभिलाख' अपने मित्र जगेसर के यहाँ छिप-छिप कर आया करता है। सगुना पप्पू द्वारा यह सूचना मन्दाकिनी के घर पहुँचा देती है। जगेसर सगुना का विवाह अभिलाख के पुत्र से तय कर देता है। इस रिश्ते के लिए सगुना की माँ अभिलाख की असद प्रवृत्तियों के कारण मना कर देती है। अभिलाख सगुना का कौमार्य भंग कर देता है। सगुना चाकुओं से अभिलाख पर अनेकों प्रहार करती है, जिससे उसकी मौत हो जाती है। स्वयं को अग्नि की ज्वाला में होम कर देती है।

इस घटना के समय मन्दा गोपालपुरा (मोतीझला फैला जाने के कारण) चली जाती है। पप्पू गोपालपुरा जाकर मन्दा को इस दर्दनाक घटना की सूचना देता है। सगुना की माँ व द्वारिका कक्का को पुलिस अभिलाख की हत्या के आरोप में जेल में बंद कर देती है।

कुसुमा भाभी के पुत्र कुंवर सिंह के नाम दादा अपनी जमीन की बसीयत कर देते हैं। दरोगा-दरोगिन अपने पुत्र मकरन्द के विवाह न करने पर परेशान रहते हैं। मकरन्द एम.डी. की पढ़ाई पूरी कर लेता है। सोनपुरा में अक्सर मन्दा के पास मकरन्द के पत्रों का सिलसिला जारी रहता है। मन्दा को अपने गाँव समाज के कार्यों के कारण विवाह के लिए समय ही नहीं मिलता है, जिससे दादी परेशान रहती है। गाँव के अस्पताल के विषय में राजासाहब से मन्दा की बार्ता होने पर 'डा० इन्द्रनील' व कम्पाउण्डर 'राम बिहारी' का आगमन होता है। ग्रामीण जनता दिन-रात उनकी देख-रेख में लगी रहती है। डा० की सुविधा का पूरा-पूरा ध्यान रखा जाता है ताकि गाँव छोड़कर न चले जाये। अंत में ऐसा ही होता है। डा० इन्द्रनील राजा साहब की आज्ञानुसार चुनाव के अल्प समय में रहने के लिए भेजे जाते है। 'मन्दा' को जब यह बात पता चलती है, तो वह दुःखी हो जाती है। सोनपुरा गाँव चुनाव का बहिष्कार कर देता है।

'मैत्रेयी जी' के इस उपन्यास में 'बऊ' नामक पात्र अपनी पोती मन्दा की गृहस्थी के सपने ही संजोती रहती है, लेकिन अंत में निराश हो जाती है। 'मन्दा' के विवाह को लेकर वे बड़ी चिंतित रहती है। 'मन्दा' 'मकरन्द' के अलावा किसी और से विवाह करने के लिए तैयार नहीं होती है।

'सगुना' जल जाने के कारण झांसी के अस्पताल में भर्ती रहती है। 'मन्दा' दिन-रात एक कर उसकी दवाईयों को एकत्रित करती है ताकि किसी भी तरह 'सगुना' बच जाये। इसी बीच एक सिस्टर आकर 'मकरन्द' के विषय में बता कर उसका पता 'मन्दा' को दे जाती है, और 'मकरन्द' के विषय

में कहती है कि कल सुबह आपसे मिलने आयेंगे। 'मन्दा' 'मकरन्द' से मिलने के लिए उत्तेजित रहती है। इसी बीच 'सगुना' दम तोड़ देती है। 'मन्दा' 'मकरन्द' से बिना मिले ही सोनपुरा लौट जाती हैं। रास्ते भर उसकी आँखों के समक्ष 'मकरन्द' का चेहरा घूमता रहता है 'मन्दा' को रास्ते भर यह आभासित होता है जैसे मकरन्द उसके साथ ही हो।

'मैत्रेयी पुष्पा जी' के उपन्यास इदन्नमम् में-

मकरन्द व मन्दा के प्रेम की अधूरी कहानी है क्योंकि अंत में दोनों एक दूसरे से मिल नहीं पाते है। 'मन्दा' अपने कर्तव्यों के प्रति इतनी सजक रहती है कि अपने बचपन के प्रेम को त्याग कर गांव की ओर बढ़ जाती है।

'मन्दाकिनी' का सम्पूर्ण जीवन ग्रामवासियों के हक के लिए समर्पित रहता है। वह अपने जीवन के प्रति कुछ नहीं सोचती है। 'मन्दा' 'द्वारिका' व 'सगुना' की माँ को मुक्त कराने के लिए श्यामली चली जाती है। वह अपने सुःखद जीवन की परवाह न कर दुःखी लोगों के दुःख को कम करने का प्रयास करती है। 'मन्दा' को अपना प्यार 'मकरन्द' भी प्राप्त नहीं हो पाता है उसका सारा जीवन त्याग के प्रति समर्पित हो जाता है। उपन्यास का यह दुःखद अंत पाठक के हृदय को द्रवित कर देता है।

(ख) झूला नट

मैत्रेयी जी का यह लघु उपन्यास ग्रामीण जीवन पर आधारित है। गाँव का साधारण सा लड़का 'बालकिशन' के जीवन में एक ऐसी घटना घटती है, जिससे उसका पूरा जीवन परिवर्तित हो जाता है वह माँ और भाभी के लिए हमेशा त्यागने के लिए तत्पर रहता है। बालकिशन स्वंय को दोषी मानकर भाई द्वारा त्यागी पत्नी का हाथ थामता है। भाभी और माँ के कष्ट उसके लिए असहनीय हो जाते है। वह उन दोनों के दुःखों को दूर करने की कोशिश में लगा रहता है। गाँव की अनपढ़ 'शीलो' असुन्दर व छठी अंगुली होने के कारण पति के द्वारा त्याग देने पर हिम्मत नहीं हारती हैं। वह जीवन व समाज दोनों का सामना करके जीती है। पति के द्वारा त्यागे जाने पर वह न मृत्यु की गोद में सोती है, और न समाज से डरती है। वह अपने जीवन की नयी शुरुआत पूर्ण हिम्मत के साथ करती है। भाई द्वारा त्यागी पत्नी को बालकिशन एक नया जीवन देता है।

बालकिशन सीधा-सादा व साधारण सा लड़का है। बड़ा भाई 'सुमेर' थानेदार है। घर की जिम्मेदारी अम्मा के हाथ में होती है। पिता के गुजरने पर मां सुमेर को पढ़ा-लिखा कर बड़ा करती है। सुमेर का विवाह अम्मा बचपन में पिता द्वारा तय किये घर में कर देती है। नव-वधु विदा होकर अपनी ससुराल आती है। हँसी खुशी के साथ गाना-बजाना होता है। मुँह दिखाई के बुलऊवे में सारे गाँव की स्त्रियाँ एकत्रित होती है। विमला जिज्जी बालकिशन को भाभी की गोद में बैठने की रस्म अदा करने के लिये पुकारती है। बालकिशन सत्ते द्वारा चिढ़ाने पर छिप जाता है। बालकिशन के न मिलने पर भाभी की गोद में सत्ते को बिठाने के लिए कहा जाता है, तो वह तुरंत सामने आकर भाभी की गोद में बैठ जाता है। भाभी उसका नेग देने के लिए अपना बटुआ खोलती है। बटुआ खोलते समय उसे एक अजीब चीज दिखती है, जिसे देखकर वह गोद से उछल कर खड़ा हो जाता है। वह सभी के सम्मुख जोर-जोर से चिल्लाने लगता है। **"अम्मा देखो छः छः अंगुली। छः छः छः। देखो वह अंगूठे से जुड़ी छठी अंगुली।"**[१]

बालकिशन की बात को सुनकर गाँव की सभी स्त्रियाँ गाना-बजाना बन्द कर छठी अंगुली की ओर देखने लगती हैं। नव-वधू से अनेकों प्रकार के प्रश्न करती हैं- **"आटा माढ़ लेती है री? गोबर पाथ लेगी? कटाई करते बखत......?"**[२]

बालकिशन की माँ सभी को समझा कर गमशुदा माहौल को बदल देती है। गाना-बजाना पुनः प्रारम्भ हो जाता है। बालकिशुन के मन में इस घटना को लेकर खेद उत्पन्न होता है। स्वंय को अपराधी मानकर वह अपने मन में सोचता है **"भाभी का मखौल उड़ाया है मैने, मां को चोट पहुंचाई? सगुनसात आई बहू के आगमन पर अठैन (असगुन)! अम्मा का मन मुर्झा गया. .... बालकिशन अपराध-बोध के अथाह सागर में इतना उतरता......."**[३] । सुमेर शीलो को छोड़कर अपनी नौकरी पर चला जाता है। वह उसे पत्नी बनाने से इंकार कर देता है। घर का माहौल ही परिवर्तित हो जाता है। अम्मा शीलो को बहलाती रहती है। वह कहती है कि एक दिन सभी के अच्छे दिन आते हैं। शीलो अच्छे समय के इंतजार में घर के काम-काज में व्यस्त रहने लगती है। बालकिशन

---

१. झूला नट उपन्यास- मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- २३)

२. वही

३. वही (पृ० संख्या- २५)

अपनी भाभी का पूरा ध्यान रखता है। उसकी इच्छानुसार फिल्मी गानों की पुस्तकें लाता है। वह वियोग भरे गीतों को गाकर अपने पति के इतंजार में समय काटती है। सुमेर शहर से लौटकर घर आता है वह अपनी अम्मा से अनाज, दालें, चावल, घी इत्यादि बाँधने के लिए कहता हैं। अम्मा उसके गाँव आने के उद्देश्य को समझ जाती है। अम्मा सुमेर से बहू को अपने साथ ले जाने के लिए कहती है। वह उसे अपने साथ ले जाने से इंकार कर देता हैं। सुमेर अपनी दूसरी पत्नि के विषय में बतलाता हैं। अम्मा यह सुनकर आश्चर्य चकित रह जाती है। अम्मा बालकिशन को उसके बड़े भाई के संबंध में सारी बातें बतला देती है। बालकिशन ये सभी बातें सुनकर उसे बहुत कोसता है। शीलो भाभी का करूण रुदन सुनना उसके लिए कठिन हो जाता है। अम्मा शीलो को उसके मायके भेजने के लिए बालकिशन से कहती है।शीलो जाने से इंकार कर देती है। वह अपना जीवन ससुराल में ही काटने का निश्चय करती है। वह अपने पति के पुर्नविवाह को लेकर दुःखी रहती हैं। अम्मा बेटे द्वारा परित्याग शीलो को अपनी बेटी के समान प्यार देती है। शीलो अपनी बरबादी का कारण छठी अंगुली को मानती है, वह भाग्य बदलने के लिए इसे अपने अंगूठे से अलग कर देती है।

अम्मा विधवा होने के कारण भलि-भांति पति वियोग समझती है। शीलो का दुःख उनसे देखा नहीं जाता है। शीलो का जीवन बर्बाद न हो, इस कारण वे अपने पुत्र बालकिशन का हाथ, उम्र में पाँच वर्ष बड़ी भाभी के हाथ में सौंप देती है। अम्मा बालकिशन और शीलो को पति-पत्नि के रिश्ते में जुड़ने का अधिकार दे देती है। बालकिशन शीलो में केवल ममतामयी भाभी मां की मूरत देखता है। बाले के मन में शीलो के प्रति कभी कोई कालिमा नहीं रहती है। वह शीलो में माँ की मूरत उसी प्रकार देखता है, जिस प्रकार लक्ष्मण सीता में एवं हरदौल अपनी भाभी में देखता हैं। बालकिशन के मन में भाभी के प्रति सदैव आदर भाव रहते है। वह उनके दुःख में दुखी व सुख में सुखी रहता है। वह शीलो को पत्नी रूप में स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हो पाता है। शीलो उसका हाथ थाम लेती है। भाभी के जीवन को सुखी बनाने के लिए बालकिशन पति बन जाता है। उन दोनों में पति-पत्नी के संबंध स्थापित हो जाते है।

बुन्देलखण्ड में एक प्राचीन परम्परा है कि स्त्री का पुनर्विवाह होने पर बछिया करनी पड़ती है। सारे नाते-रिश्तेदारों को एकत्रित कर भोजन आदि खिलाया जाता है। समाज की अनुमति प्रदान होने

पर ही स्त्री दूसरे पुरूष के साथ रिश्ता जोड़ सकती है। ऐसा न करने पर समाज द्वारा जाति से बहिस्कृत कर दिया जाता है। अम्मा बालकिशन को बछियां करने का प्रबंध करने को कहती है। शीलो बछिया करने से इंकार कर देती है। बछिया के लिए मना करने पर अम्मा नाराज हो जाती है। शीलो अम्मा को समझाती है **"तन-मन का ब्याह। तीसरा कौन होता है हमारे बीच?"**४ गांव समाज की औरते बछिया न होने पर बालकिशन व शीलो के रिश्ते को देखकर कहती हैं कि ये दोनों पति-पत्नि कैसे हुए **"आय-हाय, पूरी न पपरियांः अछिया न बछिया।"**५

शीलो समाज के बेमतलव रिवाज को नहीं अपनाना चाहती है। समाज उन लोगों को बछियां न करने पर जाति से बेदखल कर देता है। शीलो सुख पूर्वक बालकिशन के साथ दाम्पत्य जीवन का आनंद लेती है। बालकिशन लगन-मेहनत से कृषि कार्य करता है। शीलो नवीन तकनीकि से खेती करने का सुझाव देती है। फसल अच्छी होती है। वह बैंक में सारा पैसा जमा करती है। अम्मा को पैसा न मिलने पर वह शीलो व बालकिशन से खपा हो जाती हैं। बालकिशन अम्मा को देवी माँ के स्वरूप मानता है। वह अम्मा को हमेशा खुश रखना चाहता है, लेकिन शीलो के आगे वह निराश होकर रह जाता है आस-पड़ोस की औरतें सत्ते की अम्मा, सुमिरिन की माँ व विमला जिज्जी आदि भी जले पर नमक छिड़कने जैसी बातें करती हैं। धीरे-धीरे घर के माहौल में परिवर्तन होता जाता है।

शहर से सुमेर घर आता है। शीलो जेठ जैसा कायदा करती है। वह भोजन-व्यंजन बनाती है। सुमेर शीलो से अपने हक की मांग करता है। शीलो और सुमेर की वार्तालाप बालकिशन छिपकर सुनता है। धीरे-धीरे उसका संदेह दूर होता है। सुमेर शीलो से अपने हिस्से की जमीन मांगने की बात रखता है। शीलो जमीन देने से इंकार कर देती है। वह सुमेर से समाज की नजर में उसकी धर्मपत्नी होने का दावा करती है। वह अपने पति की भूमि की हकदार होती है।आधी जमीन वह बालकिशन की बतलाती है। सुमेर अम्मा से नाराज होता है। हक न मिलने पर वह माँ से कहता है कि **"सारी गलती तुम्हारी हैं। बछिया क्यों नहीं कराई बालकिशन के संग बछिया करा देती तो यह सींग पैना करके खड़ी हो पाती? छोटा सा पशु ही बेदखल कर देता सारे हक से। पूरा गवाह होता..।"**६

---

४. झूला नट उपन्यास- मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- ७५)

५. वही - (पृ० संख्या- ८०)

६. वही - (पृ० संख्या- ११३)

पहली पत्नी के होते हुए दूसरा विवाह कानूनी जुर्म होता है। नौकरी जाने के डर से वह बिना कुछ लिए वापिस शहर चला जाता है। शीलो दोनों भाइयों (सुमेर व बालकिशन) की भूमि की हकदार हो जाती है। अम्मा शीलो द्वारा बछिया न करने की भूमिका समझ जाती है।

शीलो बालकिशन को भेजकर अपनी छोटी बहन 'कान्ता' को बुलवाती है। कांता चैत्र के माह में घर का सारा काम-काज करती है। शीलो खेती का काम सम्हांलती है। शीलो के मन में बालकिशन को लेकर संदेह पैदा होता है। वह कांता को चंपादास वैद के साथ कुछ कपड़ा आदि देकर व अपमानित कर वापिसउसके घर भिजवा देती है। उपन्यास में प्रत्येक किरदार एक दूसरे पर चरित्र-हीनता का आरोप लगाता है। अनपढ़ होने के कारण ग्रामीण समाज की यह अजीब समस्या है। यहाँ तक कि शीलो बालकिशन की माँ तक को नहीं छोडती है। अम्मा शीलो को अनेकों प्रकार की चरित्रहीनता की गालियाँ देकर पुकारती है।

दाम्पत्य जीवन के चलते शीलो अपने पति से अगियां मगवाती है। वह चिरगांव के बाजार से लाता है। अम्मा लाल अगियां को देखकर उसे जला देती हे। अम्मा ने अगियां नहीं मानो शीलो का सारा सुख ही जला दिया हो, वह क्रोधाग्नि में जलने लगती है। अम्मा और शीलो में बहुत झगड़ा होता है। बालकिशन दोनों पाटों के बीच में पिसता है। वह घर संसार त्याग कर संन्यासी जीवन अपनाता है, लेकिन संन्यासीयों का जीवन भी उसे पसंद नहीं आता है, क्योंकि वे कर्तव्यों से भाग कर जीवन जीते हैं । इसके पश्चात उसे संन्यासीयों की चरित्र हीनता के प्रमाण मिलते है, जिससे उसका मन और खिन्न हो जाता है। वह वहाँ से भागकर राजाराम जी के मंदिर ओरछा में शरण लेता है। वह ओरछा के राजमंदिर में आरती के समय सम्मिलित होता है। मंदिर में भगवान के दर्शन करता है। वह राम,लक्ष्मण, सीता एवं हनुमान आदि को हृदय में धारण करता है। वह पवित्र मूर्तियों को देखने लगता है। माँ सीता जी की मूर्ति में लीन होकर शीलो की छवि देखने लगता है। वह शीलो की छवि की याद में माँ सीता की मूर्ति को स्पर्श करने का साहस कर बैठता हैं। आरती में उपस्थित भक्त-गण आरती बंद कर उस पर चांटे-घूसों का प्रहार करने लगते हैं। तीर्थ की पवित्रता को ध्यान में रखते हुए उसे जान से नहीं मारा जाता है। वह लंगड़ाता हुआ मंदिर के बाहर आगे बढ़ा चला जाता है।

उपन्यास की नायिका शीलो साहसी हिम्मतवर महिला है। वह अपने पति सुमेर को ईंट का जबाब

पत्थर से देती है। वह उसे सिखला देती है, कि स्त्री-पुरूषों से किसी भी तरह कमजोर नहीं है। जिस प्रकार सुमेर दूसरी पत्नी रखता है, उसी प्रकार शीलो भी बालकिशन को रख लेती है। समाज की नजर में शीलो सुमेर की पत्नी होती है, और वह अपना हक ले लेती है। सुमेर उसकी हिम्मत के आगे नतमस्तक होकर चला जाता है।

(ग) वेतवा बहती रही

यह मैत्रेयी जी का सामाजिक एवं ग्रामीण अंचल से सम्बन्धित एक लघु उपन्यास है। इस उपन्यास में बुन्देलखण्ड की स्त्रियों की दशा 'उर्वशी' नामक चरित्र द्वारा उभर कर सामने आई है। उर्वशी इस उपन्यास की नायिका है और अत्यंत सुन्दर है। उर्वशी का जीवन जन्म से ही संघर्षो से जूझता रहा हैं। बचपन में गरीबी उसका साथ नहीं छोड़ती है। जवान होने पर उसका भाग्य साथ नहीं देता है। जीवन उसे अजीब दोराहे पर लाकर खड़ा कर देता है। मौत चाहकर भी उसे नही मिलती है। विवश होकर उसे अपने भाई अजीत द्वारा तय किये गये रिश्ते पर चलना पड़ता है। इस उपन्यास की कहानी बड़ी ही करूणामय है।

यह वेतवा नदी के किनारे बसे तीन अलग-अलग गाँव राजगिरि, सिरसा और चन्दनपुर से जुड़ी उर्वशी के जीवन की कहानी है। उर्वशी माता-पिता की अत्यंत गरीबी में पल कर बढ़ी हुयी। माता-पिता खेती जोताकर सारा पैसा अजीत की शिक्षा पर व्यय करते हैं। अजीत की पढ़ाई में पैसे कम पढ़ते हैं। वह अपनी माँ के गहनें भी ले जाता है। माँ ने वे गहनें अपनी पुत्री उर्वशी के विवाह के लिए संजोकर रखे थे।

पुत्र की उन्नति के लिए माता-पिता अपने जीवन की सारी पूंजी लगा देते है, उन्हें विश्वास रहता है कि अजीत अपने पैरों पर खड़ा होकर उर्वशी का विवाह अच्छी जगह कर देगा।

'मीरा' व 'उर्वशी' बचपन की अच्छी सहेली हैं। वे दोनों एक-दूसरे को बहुत प्यार करती हैं। बचपन में एक साथ खेल कूद कर बड़ी होती है। राजगिरि मीरा की ननिहाल है। मीरा ननिहाल में ही रहती है। बचपन में माँ का देहावसान होने के कारण, उसके पिता नानी-नाना के पास उसको छोड़ जाते हैं। चन्दनपुर में उसकी बूढ़ी दादी 'विजय' व उदय दोनों भाईयों का लालन-पालन करती है। मीरा को नाना-नानी का भरपूर प्यार-दुलार मिलता है। मामी-मामा (सूरज) उसके खाने-पीने का व्यवस्था करते

हैं। वह उर्वशी के साथ मिलकर वेतवा नदी के किनारे बैठकर बातें करती हैं। उर्वशी व मीरा दोनों अपने जीवन से बहुत खुश रहती हैं। उर्वशी मीरा के नाना-नानी का बहुत आदर करती है। मीरा के नाना-नानी उर्वशी को भी बहुत स्नेह करते हैं। मीरा अपनी पढ़ाई के लिए झाँसी चली जाती है।

मीरा के नाना विसम्भर सिंह और उर्वशी के पिता मोहन सिंह पड़ोसी होने के कारण भ्रात-भाव का रिश्ता रखते हैं व एक-दूसरे के सुख-दुःख को आपस में मिल बाँट लेते हैं। अजीत द्वारा उर्वशी का रिश्ता उसके उपर्युक्त वर से न करने पर, मोहन सिंह अपनी व्यथा विसम्भर सिंह को बतलाते है। विसम्भर अजीत को समझाने का प्रयत्न करते है, लेकिन अजीत उर्वशी के विवाह में दहेज देने से मुकर जाता है। इस बात को लेकर मोहन सिंह व उनकी पत्नी को बहुत दुःख पहुँचता है। उर्वशी के माता-पिता पुत्र के समक्ष विवश रह जाते हैं। वे दोनों निर्धन निःसहाय क्या करते? अजीत की नौकरी वन-विभाग में लग जाती है। वह इतना कंजूस हो जाता है, कि बहिन के विवाह में बारातियों को दो वक्त का भोजन भी देने को तैयार नहीं होता है। पहली बार में ही उर्वशी का रिश्ता बूढ़े वर से करने को तैयार हो जाता है। इस रिश्ते को विसम्भर सिंह के मना करने पर दूसरी बार डाकुओं के घर रिश्ता तय करने का प्रस्ताव रखता है। इन दोनों रिश्तों को मोहन सिंह व विसम्भर सिंह नकार देते है, तो वह बहिन के शादी ब्याह वाले मामले से दूर हट जाता है। विसम्भर सिंह स्वंय उर्वशी का रिश्ता सिरसा के 'शत्रुजीत' के यहां कर देते है। घर आकर मोहन सिंह से कहते है कि **"सिरसा वारे सुरजीत है न। अरे वे पचैरिया के नातेदार.....। उन्ही के छोटो भाई हैं 'सरवदमन'। उरवशी जैसो ही खूबसूरत, लम्बौ तगड़ौ। लरका कानून पढ़ रहौ। वकील ही बन जै हे कचेरी में।"१**

मोहन सिंह इतने बड़े घर में अपनी पुत्री का रिस्ता तय होने पर उर्वशी के भाग्य की सराहना करते है। उर्वशी के रुपसौन्दर्य को देखकर एक वैरागी उसे पाने की इच्छा से उसी के द्वार पर अड़िग होकर बैठ जाता हैं। विसम्भर सिंह उसे समझाकर गाँव के बाहर की मड़िया में भेज देते है। बैरागी अपनी नव-विवाहिता पत्नी 'गजरा' को कुरुप होने के कारण त्याग कर वैराग्य धारण कर लेता है। बैरागी के माता-पिता उसका पता लगाकर उसे मड़िया से घर ले आते हैं। माता-पिता की आज्ञावश वह घर में ही कर्मकाण्ड करता है। 'गजरा' से वह बहुत दूर रहता है। गजरा दिन-रात अपने सास-ससुर की सेवा में लीन रहती है।

---

१. वेतवा बहती रही उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- २६)

उर्वशी का विवाह सर्वदमन के साथ हो जाता है। सिरसा से बारात में सर्वदमन का मित्र बैरागी भी आता है। मीरा, सर्वदमन व बैरागी के बीच आपस में हास्यमय-व्यंग होते है। उर्वशी अपनी ससुराल पहुचती है। 'सर्वदमन' 'उर्वशी' को अपने भईया-भाभी के विषय में बतलाते हैं वे उसके लिए माता-पिता तुल्य है। माता-पिता के गुजरने के पश्चात् वे ही उसका लालन-पालन करते है। शत्रुजीत (दाऊ) के दो पुत्र योगेन्द्र व नरेन्द्र है। वैवाहिक रीतियों के चलते 'बरार बऊ' उर्वशी से कहती हैं कि **"तेरी सास की जगह है दुल्हन। जई अस्थान है बेटा उनको। उन्हीं की तरह रहियो। अपनी जिठानी कौ कहौ करियो, सास की आतमा तिरपित हो जाय। पूज दै बेटा थान और भरदै वचन।"२** उर्वशी अपने माता-पिता समान जेठ-जिठानी का आदर कर घर का सारा काम करती हैं उनके बच्चों की देखभाल करती है। घर खुशियों से भर जाता है। मीरा से मिलने उर्वशी, सर्वदमन व उसका मित्र बैरागी झाँसी जाते हैं। सभी को एक दूसरे से मिलकर हर्षानुभव होता है। झाँसी के आस-पास पारीक्षा, ओरछा आदि स्थानों पर घूम कर सभी लोग झाँसी वापिस लौट आते हैं। उर्वशी व बैरागी मीरा को मौसी बनने की खुशखबरी देती है। झाँसी से सर्वदमन, उर्वशी व बैरागी अपने घर वापिस लौट आते हैं। मीरा अपनी पढ़ाई में व्यस्त हो जाती है। सर्वदमन के पुत्र देवेश के जन्मोत्सव पर मीरा सिरसा जाती है। वहाँ से लौटकर पुनः पढ़ाई में जुट जाती है।

कुछ समय पश्चात् मीरा को एक टेलीग्राम मिलता है। वह आशंकित होकर उसे खोलती है जिसमें सर्वदमन की मुत्यु की सूचना रहती है। वह उसे पढ़कर स्तब्ध रह जाती हैं। मीरा इस विषय में विजय से जाकर पूछती है। विजय कहता है **"हाँ राजगिरि के रास्ते में। जहाँ क्रेशर लगा है। रोड़ी के लिए ट्रेक्टर आ रहा था। सामने से मोटर साइकिल पर सर्वदमन थे और पीछे बैठे थे वैरागी।"३** बैरागी जीवन मुत्यु से जूझकर बच जाता है। सर्वदमन की मौत हो जाती है। 'मीरा' उर्वशी व देवेश के विषय में सोचकर बहुत चिंतित रहती है।

'मीरा' उर्वशी से मिलने सिरसा जाती है। उर्वशी को सफेद कपड़ो में देखकर उसका हृदय छलनी-छलनी हो जाता है। वहाँ पर उपस्थित सभी के लिए सर्वदमन की कमी असहनीय हो जाती है। मीरा देवेश के जन्मोत्सव के विषय में सोचती है, तो सर्वदमन की तस्वीर उसकी आँखों के समक्ष

---

२. वेतवा बहती रही उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- ४८)

३. वेतवा बहती रही उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- ६३)

घूम-फिर कर पुनः लौट आती है। इस दर्दनाक हादसे से उसके हृदय को बहुत ही आघात पहुँचता है। उर्वशी के शरीर की स्थिति बहुत ही दयनीय हो जाती है। उर्वशी के पिता 'विसम्भर सिंह' करुण स्वर में 'काका जू' से कहते है **"कुऊँर जू भाग की खोटी निकरी उरवसी।"**४ उर्वशी का दुःख उनके लिए असहनीय हो जाता है। कुछ समय पश्चात् उनकी मृत्यु हो जाती है। मीरा की नानी भी इस दुनिया से विदा ले लेती है। उर्वशी का तो सब कुछ उजड़ जाता है। पत्नी की सेवा द्वारा 'बैरागी' की हालत में धीरे-धीरे सुधार आने लगता हैं तथा पूर्णतया स्वस्थ हो जाता है। बैरागी को अपनी कुरुप पत्नी में बहुत से गुणों का समावेश दिखने लगता है। वह पुनः नये जीवन को जीने के लिए क्षणिक सौन्दर्य का त्याग कर गुणों की पूजा करने लगता है। बैरागी त्यागी हुई पत्नी 'गजरा' को अपना लेता है। उसके माता-पिता का घर खुशियों से भर जाता है।

सर्वदमन की मृत्यु के पश्चात् 'अजीत' का सिरसा आना जाना बढ़ जाता है। वह दाऊ का अपमान कर उर्वशी को अपने साथ ले जाने के लिए हठ करता है। अजीत, पिता समान दाऊ पर चरित्रहीनता का आरोप लगाता है। यह सब उर्वशी के लिये असहनीय हो जाता है। वह राजगिरि जाने कि लिए तैयार हो जाती है। वह पुत्र 'देवेश' को अपनी जिज्जी को सौंप देती है।

राजगिरि आने पर वह अपने माता-पिता से 'अजीत' की सारी बातें बतलाती है। मजबूर माता-पिता पुत्र द्वारा किये गये कृत्य को मन ही मन कोशते है। अजीत रिश्वत लेने के कारण नौकरी से संसपेन्ट हो जाता है। मीरा के पिता बरजोर सिंह से उसकी गहरी मित्रता हो जाती है। बरजोर सिंह अपने पुत्र विजय के विवाह में अजीत से उर्वशी को लाने के लिए भी आमंत्रित करते है। उर्वशी विजय की शादी में लगन के साथ घर के कार्य करती है। बरजोर सिंह की कुदृष्टि उर्वशी पर पड़ती है। मीरा के आग्रह पर उदय उर्वशी को उसके घर वापस भेज आता है।

अजीत उर्वशी से पुनर्विवाह के लिए आग्रह करता है। वह वेतवा नदी में कूद कर आत्मदाह करने का प्रयत्न करती है, लेकिन मछुवारे उसे नदी से निकालकर बचा लेते हैं। उर्वशी की भाभी अजीत को उर्वशी की इच्छा के विरूद्ध विदा करने का विरोध करती है। अंजीत अपनी पत्नी से कहता हैं कि **"पतौ है तुम्हें कछु? कहां से खा रही? भूखन मरौगी तब......बच्चा तड़प है- कुर्की, नीलामी..**

---

४. वेतवा बहती रही उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- ६५)

..। घर बार सब खतम..... उर्वशी की भाभी।"५ इन सब कारणों को बताकर अजीत उर्वशी की विदा होना आवश्यक बताता है, क्योंकि वह बरजोर सिंह से दस बीघा खेती उर्वशी के बदले में लिखवा लेता हैं। उर्वशी भईया भाभी के एकान्त वार्तालाप को चुपचाप सुन लेती है। भईया भाभी की दयनीय दशा के विषय में सोचकर वह मन ही मन विचार करती है कि- **"सिरसा की देहरी उजरी रहे। परिवार की आन बची रहे-कोई यह न कह सके कि इस घर के जेठ- इस घर की बहू. .....। और राजगिरि का खान-दान सुखी रहे। वह कहीं भी रहे किसी तरह रहे क्या अंतर पडता है। इससे अधिक तो उसके प्रानों का मोल नहीं। उस अकेली की जिन्दगी और इतने जनों का सुख।"६** भाई द्वारा विवश करने पर वह माता-पिता को बिना बताये विदा (पुनर्विवाह) के लिए चली जाती है। 'उर्वशी' के जाने की सूचना सुनकर माता-पिता दुखी होते हैं। राक्षस समान पुत्र को बद्दुआ दे-दे कर उनका गला रुंध जाता है। वह 'बरजोर' के संग लाल कपड़ों व गहनों में विदा होकर चन्दनपुर आ जाती है। मीरा अपने पिता के संग उर्वशी को देखकर चकित होती है। वह अपनी प्रिय सहेली उर्वशी को अपने पिता की पत्नी के रुप में देखकर हतप्रभ रह जाती है। बरजोर सिंह कुमार्ग गामी पुरुष है। वह प्रत्येक समय नशे में धुत रहता है। दादी की उससे बिल्कुल भी नहीं पटती है। मीरा के उम्र की उर्वशी को जब दादी अपनी पुत्रवधू के रुप में देखती हैं, तो उनके हृदय में अपने पुत्र के प्रति घृणा भर जाती है।

दादी अपने हृदय की व्यथा आजी से व्यक्त करना चाहती है। लेकिन दुष्ट पुत्र के विद्रोह के कारण विवश रह जाती है। बरजोर सिंह अपने चचेरे भाईयों में शत्रुता रखता है। ग्रामीण जनता बरजोर सिंह के प्रधान पद से परेशान हो जाती है। गाँव की सारी जनता उसके कार्यों का विद्रोह करती है। बरजोर सिंह के बीमार पड़ जाने पर गाँव का कार्यभार उदय सम्भालता है। उदय के डर के कारण अजीत का चन्दनपुर आना बंद हो जाता है। बरजोर से सहायता मिलना भी बंद हो जाती है। विजय के बीमार पड़ने पर उदय ग्वालियर से पढ़ाई छोड़कर घर आ जाता है। वह झाँसी में विजय का इलाज करवाता है, लेकिन टिटनिस के कारण विजय की मौत हो जाती है। विजय की नव-विवाहिता विधवा हो जाती है। उर्वशी उसके जीवन को लेकर चिंतित हो जाती है। उसके मन में यही प्रश्न उठता है, उसी की तरह

---

५. वेतवा बहती रही उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- ११८)

६. वही

उसका जीवन भी नर्क न बन जाये।

बरजोर सिंह अपने पुत्र उदय का विवाह काफी दहेज के लेन-देन पर तय कर लेते हैं। उदय इस विवाह के लिए मना कर देता है। वह उर्वशी को विजय की पत्नी के साथ पुर्नविवाह करने का वचन दे देता है। मीरा का विवाह भी उर्वशी हर्षोल्लास के साथ करती है। विवाह की सारी जिम्मेदारी उर्वशी के कन्धों पर होती है, क्योंकि अब वो सहेली का नहीं, माँ का दायित्व निर्वाह करती है। उर्वशी अनेकों दुःखों को सहती हुई अपने कर्तव्यों से विमुख नहीं होती है। वह बरजोर सिंह की पत्नी के रुप में मीरा व उदय के विवाह की पूर्ण जिम्मेदारी बहन करती है।

मीरा का विवाह राघवेन्द्र (सर्वदमन मित्र) के साथ हो जाता है। उर्वशी उदय का विवाह विजय की विधवा के साथ करवा देती है। ताकि उसे भी दर-दर की ठोकरें खाने के लिए मजबूर न होना पड़े। उर्वशी आजी के परिवार को अपने परिवार से जोड़ लेती है। दोनों परिवारों में एकजुट गठबन्धन हो जाता है। बरजोर सिंह का विरोध करने पर भी उसकी कोई नहीं सुनता है। दादी और आजी दोनों मिलकर खुश रहने लगती है। अजीत डाकुओं में मिल जाता है। उसका परिवार दर-दर की ठोकरें खाता है। उर्वशी के पिता की मृत्यु हो जाती है। माँ बीमार रहती है।

उपन्यास का अंत बहुत दुखद एवं हृदयस्पर्शी होता है। उर्वशी बीमार पड़ जाती है। उदय उसे दिखाने झाँसी ले जाता है। डाक्टरी चेकअप होने से पता चलता है कि उसकी दोनों किडनी फेल हो जाती है। उर्वशी की अंत समय केवल एक ही इच्छा रहती है, अपने पुत्र देवेश को देखने की। दाऊ आकर उदय से आग्रह कर सिरसा ले जाने के लिए कहते हैं। सिरसा जाते समय रास्ते में ही उसके प्राण पखेरु अपना नीण छोड़कर उड़ जाते हैं। देवेश माँ का इंतजार करता है, लेकिन उसके कंधों पर दाह-संस्कार का बोझ आ जाता है। सिरसा में ही अंतिम क्रिया की जाती है। वही पर यह सर्वदमन के साथ ब्याह कर आती है।

देवेश अपनी माँ की लाल साड़ी के ऊपर सफेद कपड़ा डाल देता है। **"महाप्रयाण की ओर चली जा रही थी सर्वदमन की विधवा............उर्वशी।"७**

उर्वशी नारी होने का अभिशाप जीवन पर्यन्त झेलती है। अनेकों अत्याचारों व अनैतिकताओं से

---

७. वेतवा बहती रही उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- १५०)

विवश अपने ममत्व का गला घोंटती रही। जीवन के अंतिम क्षणों में उसकी मातृत्व की भावना प्रबल हो जाती है। उसकी आखें अपने पुत्र को देखने के लिए लालायत रहती हैं, लेकिन स्वयं पर हुए अत्याचारों को वह अपने पुत्र के समक्ष नहीं दर्शाना चाहती है। साहसी होने के कारण स्वयं अकेले ही अपने दर्दों को पी जाती है।

इस उपन्यास में मैत्रेयी जी ने स्त्री के अधिकारों का हनन होते दिखलाया है। बुन्देलखण्ड के पिछड़े इलाकों में स्त्रियों के साथ इस प्रकार की घटनायें होना आम है।

(घ) अल्मा कबूतरी

'मैत्रेयी जी' ने अपने इस उपन्यास 'अल्मा कबूतरी' में उच्चवर्गीय समाज द्वारा प्रताड़ित 'दलित-जन-जीवन' के चित्र को बड़ी सहजता के साथ उकेरा है। उपन्यास में उच्चवर्गीय समाज द्वारा कबूतरा जाति को अपराधी करार घोषित कर उन्हें अनेकों प्रकार से शोषित किये जाने का उल्लेख है। समाज में कोई भी अपराध (चोरी,डकैती,हत्या आदि) होता है, तो गाँव के बाहर बसे कबूतरों को उखाड़ कर फेंक दिया जाता है। उनके डेरों में आग लगा दी जाती हैं। स्त्रियों को सरेआम नंगा कर दिया जाता है। वे तन ढकने के लिए एक-एक चिथड़े की मोहताज हो जाती है। वेवश स्त्रियाँ अंधेरी झोपड़ियों में सिमटकर रह जाती हैं। पुरुष वर्ग पुलिस के डर से डेरे छोड़ कर भाग जाते हैं। पुलिस महिलाओं पर कहर बरसाती है। कज्जा समाज के लोग मौके का फायदा उठाकर उन्हें अपनी हवश का शिकार बनाते हैं।

उपन्यास में 'कबूतरा जाति' की स्त्रियां एक दूसरे को आदर्श मानकर कठिनाइयों का सामना करती हैं। कदमबाई की आदर्श 'भूरी' रहती है, अल्मा की आदर्श 'कदमबाई' रहती है। इनका उद्देश्य कठिनाईयों का सामना कर अपनी मंजिल को प्राप्त करना है। ये स्त्रियाँ कबूतरा जाति के उसूलों से हटकर नया जीवन जीने की तलाश में रहती है। जिस प्रकार कज्जा लोग इज्जत व सुकून के साथ अपनी जिंदगी व्यतीत करते हैं। स्वतंत्र जीवन जीने का अधिकार प्राप्त करने के लिए, इन्हें काँटों भरे रास्तों से गुजरना पड़ता है। कबूतराओं के दुःख दर्द की दास्तान है 'अल्मा कबूतरी'।

उपन्यास का प्रारम्भ 'मंसाराम' नामक पात्र से होता है। वे 'मरोड़ा खुर्द' के निवासी है। उनका व्यवसाय कृषि है। इनके खेतों के आस-पास कबूतरों के डेरे बसे हुए है। मंसाराम की डेढ़ बीघा भूमि

इन्हीं के डेरे तले दबी हुयी है। मंसाराम की आँखों में डेढ़ बीघा भूमि बहुत खटकती है।

मंसाराम की दो बहिनें रहती हैं बड़ी बहिन का विवाह 'अमरा' हो जाता है। उसके एक पुत्र होता है। पुत्र का नाम धीरज रखा जाता है। मंसाराम, पिता की मृत्यु के पश्चात् अपनी मां तथा बहिन के साथ रहते है। कुछ समय पश्चात् वे श्यामा का विवाह भी कर देते हैं। मंसाराम का भी विवाह होता है। उसके दो पुत्र 'जोधा' व 'करन' होते हैं। मंसाराम का कबूतरों की बस्तियों में आना-जाना बचपन से ही रहता है। उनकी स्त्रियाँ शराब ढालने का धंधा करती हैं।

कबूतरों में 'जंगलियां' बहुत ही बहादुर रहता है। कबूतरों को बचपन से ही चोरी, लूटपाट, हत्या,गुलेल चलाने की शिक्षा दी जाती हैं। इनका यही प्रमुख व्यवसाय होता है। जंगलियां इन सब कारनामों में माहिर हैं। इसलिए 'शिवसिंह कबूतरा' अपनी पुत्री 'कदमबाई' का विवाह उसके साथ कर देता है। कदम जंगलियां को बहुत प्रेम करती है। जंगलियां की बहादुरी की चर्चा सुनकर 'मंसाराम' उससे गहरी मित्रता कर उसका लाभ उठाता है। गांव में प्रधान पद के चुनाव के लिए गुन्नीसिंह कई बार निर्विरोध जीतता है। गुन्नीसिंह के विरोध में इस वर्ष लल्लूराजा खड़ा होता है। मंसाराम दोनों के आपसी विद्रोह का फायदा उठाकर स्वयं प्रधान बनने की सोचने लगता है। वह लल्लूराजा के घर से जंगलियां द्वारा प्राचीन सोने की मूर्ति चोरी करवाता है। अचानक उसी रात काका जू की मृत्यु हो जाती है। काका की सारी सम्पत्ति लल्लूराजा को मिल जाती है। मंसाराम लल्लूराजा को क्षति पहुचाकर प्रधान पद से पीछे हटाना चाहता है। लल्लूराजा मंसाराम पर जंगलियां द्वारा चोरी व हत्या करवाने का आरोप लगाता है।

कदमबाई जंगलिया के कारनामो को देखकर हैरान रह जाती है। वह एक किसान की बैलगाड़ी के नीचे चिपटकर चाकू से सलीता चीर कर सारा अनाज खाली कर लेता है। वह डेरो के नियमानुसार माल मुखियां को नहीं देता हैं कदमाबाई जंगलियां का विरोध करती है। मुखियां को माल न देने के कारण उसे यह डर सताता है। कि अगर वह पकड़ा गया तो कौन उसे छुडायेगा? वह मुखिया को माल देने का आश्वासन देती है। जंगलियां कदम का विरोध कर उससे कहता है- **"ठीक है री तू गेहूँ बाँट दे कि मुखिया को ही दे दे पर मेरी हिम्मत और दिलेरी किसे दे देगी।"**[१] कदम जंगलियां को बहुत प्रेम करती है। वह किसी भी कीमत पर उससे बिछुड़ना नहीं चहती है। लल्लूराजा द्वारा लगाये गये चोरी के इल्जाम से भयभीत होकर मंसाराम जंगलियां को फरार होने की सलाह देते है। कदमबाई जगंलियाँ

---

१. अल्मा कबूतरी उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- १५)

के विरह में दिन-रात तडपती है। 'भजनी' जिठनी से उसकी हालत देखी नहीं जाती है। वह मंसाराम से 'कदमबाई' को जंगलिया'से एक रात मिलाने का आग्रह करती है। जिससे उसे संतान प्राप्ति हो सके।

मंसाराम 'कदमबाई' के सौन्दर्य को देखकर मुग्ध हो जाता है। वह रात के समय गेंहू के खेत में जंगलिया से मिलाने का आस्वासन देता है। यह बात केवल कदम भजनी व मंसाराम को मालूम रहती है। भजनी कदम का नई दुल्हन की तरह श्रृंगार कर मंसाराम के बताये स्थान पर पहुँचा देती है। वह वेशब्री से जंगलियो का इंतजार करती है। अँधेरी रात मे कदम के नजदीक एक परछाई आती हुयी दिखती है। वह जंगलिया समझकर उसकी आगोश मे सिमट जाती है। कदम को दाम्पत्य जीवन का आनन्द लेते समय सन्देह होता है। जो व्यक्ति उसके नजदीक है, वह जंगलिया नही है। मंसाराम कदम के साथ धोखे से दाम्पत्य सुख प्राप्त कर भाग जाता है। कदम मंसाराम की चाल समझ जाती है। कदम के गर्भ मंसाराम की संतान ठहर जाती है। दूसरे दिन जंगलिया का शव प्राप्त होता है। जंगलिया को मृत्यु में मंसाराम का हाथ रहता है। कदम के मन में मंसाराम के खिलाफ विद्रोह की भावना उत्पन्न हो जाती है। मंसाराम लल्लूराजा के घर की चोरी का राज खुलने के डर से जंगलिया की हत्या करवा देता है।

मंसाराम अपने किये पर पश्चाताप की ज्वाला मे निरन्तर जलता रहता है। वह जीवन के शुद्धीकरण के लिए पूजा-पाठ का आश्रय लेता है। उसका विचलित मन किसी भी कार्य में नहीं रमता है। अपराधों के बोझ को झेलना उनके लिए मुश्किल हो जाता है। परिवार की प्रतिष्ठा दाव पर लगने की चिंता उसे घुन की तरह सताती रहती है।

कदम अपने गर्भ में मंसाराम के अंश को समाप्त करने का विचार बनाती है। पर जंगलिया की मृत्यु हो जाने के कारण वह विवश रह जाती है। डूबते को तिनके का सहारा ही काफी होता है। वह मंसाराम के पुत्र को जन्म देती है। डेरों का मुखिया उसका नाम 'राणा' रखता है। राणा कदमबाई के जीने का सहारा बनता है। राणा के प्रति, कदम मन में अनेकों सपने देखती है। राणा के जन्म पर मंसाराम पालना व डेरों के लोगों के लिए गेहूँ की बोरियाँ भेजते हैं। कदम इन वस्तुओं को स्वीकार नहीं करती है। वह एक स्वाभिमानी स्त्री है। वह मंसाराम से किसी भी प्रकार की मदद लेकर अपने को कमजोर साबित नहीं करना चाहती है।

राणा धीरे-धीरे बड़ा होने लगता है। कदम राणा को डेरों के नियमानुसार धन्धों में परिपक्व करना चाहती है। वह कबूतरों के प्रमुख व्यवसाय चोरी, लूट-पाट एवं निर्भीक होकर हत्या करने आदि की

शिक्षा देती है। राणा को वह अस्त्र-शस्त्र चलाने की बारीकियों से भी अवगत कराती है। निर्दोष पक्षियों पर गुलेल चलाने के लिए राणा का कोमल हृदय द्रवित हो जाता है। कदमबाई राणा पर क्रोधित होती है। वह राणा को सभी तरह से जंगलिया जैसा मजबूत कबूतरा बनाने का दृढ़ संकल्प करती है।

मंसाराम से प्रतिशोध की अग्नि उसके हृदय में निरंतर जलती रहती है। राणा अपनी कोमल भावनाओं को प्रस्तुत कर कदम के सारे मंसूबों पर पानी फेर देता है। वह मंसाराम के पुत्र 'करन' से दोस्ती कर लेता है। करन की पुस्तकों को पढ़कर अपना समय व्यतीत करता है। करन को देखकर राणा के मन में भी कज्जा लोगों की तरह जीवन जीने की आकांक्षा प्रकट होती है। वह अपनी मां से स्कूल में नाम लिखवाने की जिद करता है। कदम राणा की बातों को सुनकर स्तब्ध रह जाती है।

कदम मुखिया के कहने पर राणा को चोरी करने के लि तैयार करती है। राणा चोरी करने से डरता है तथा चोरी न करने को कहता है। कदम व सरमन मुखिया उसे समझाकर खुरदा और गोमता के साथ निश्चित स्थान पर भेजते हैं। राणा चोरी करते समय घायल हो जाता है। खुरदा व गोमता उसे अपने ऊपर लादकर घर लाते हैं। मुखिया राणा की नाकामयाबी पर क्रोधित होता है। राणा तभी से किसी भी दण्डनीय कार्यों में हाथ नहीं डालता है। मुखिया नाराज हो जाता है। वह कदम को शराब ढालने वाले दिन का हक छुड़ा लेता है। डेरों में प्रत्येक परिवार को सप्ताह में शराब ढालने के लिए एक-एक दिन दिया जाता है। कदम का आर्थिक धन्धा ठप हो जाता है। वह जंगल में लकड़ी काटकर अपना भरण-पोषण करती है।

मलिया काका कदम को भूरी कबूतरी की हिम्मत की दास्तान सुनाते हैं। भूरी ने जीवन में अनेकों कठिनाईयों का सामना कर अपने साहस का परिचय दिया था। पुत्र रामसिंह को अपने पति की इच्छानुसार शिक्षित बनाया। रामसिंह को नायक बनाने के लिए , उसे अनेकों बार अपना दामन गिरवी रखना पड़ा। नेक कार्य के लिए स्वंय को अनेकों बार बेचना पड़ा। रामसिंह की पड़ाई में उसने कभी भी कोई बाधा नहीं आने दी। वह अपने को बार-बार बेज्जित कर रामसिंह को इज्जत व इमानदारी का जीवन उपहार में देना चाहती थी। कज्जा लोंगो की तरह वह रामसिंह के सुन्दर भविष्य के सपने देखती थी, इसलिए वह दिन-रात मेहनत करती थी। रामसिंह पढ़-लिख कर एक दिन शिक्षक बन जाता है। वह अपने लक्ष्य को पाकर हर्षित होती है। बीमारी के कारण कुछ समय पश्चात् उसकी मृत्यु हो जाती है। रामसिंह अध्यापक बनकर शिक्षक कार्य प्रारम्भ करता है। समाज के विरोधी तत्व उसकी राह को

अवरोधित करने में जुट जाते है। पुलिस वाले रामसिंह से उसकी वेतन से पैसों की मांग करते है। रामसिंह उनका विरोध करता है। पुलिस वाले रामसिंह की माँ के चरित्र की दास्तान दुहुरातें है। रामसिंह की आँखें शर्म से झुक जाती हैं। रामसिंह को खून करने के इल्जाम में नौकरी से हाथ धोना पड़ता है। उसकी पत्नी की मृत्यु हो जाती है। वह पुत्री 'अल्मा' के साथ गोरामछिया में निवास बनाकर रहने लगता है। 'अल्मा' को पढ़ाकर वह शिक्षित बनाता है।

मलिया काका की बातों को सुनकर कदमबाई प्रभावित होती है। वह राणा का नाम करन के स्कूल में लिखवा देती है। राणा की पढ़ाई लिखाई व घर का खर्च जंगल से लकड़ियाँ काटकर चलाती है। राणा को शाकाहारी भोजन पसन्द रहता है। कदमबाई निर्धनता के कारण उसकी इच्छा की पूर्ति नहीं कर पाती है। वह पंक्षियों को मारकर भोजन तैयार कर राणा को खिलाती है। वह कई बार बीमार पड़ जाता है। राणा की हालत को देखकर वे चिंतित होती हैं। मंसाराम को कई बार याद करती है। शायद उनकी कुछ मदद कर दे। मंसाराम चुपचाप राणा को थोड़ी बहुत आवश्यकताओं की पूर्ति करन द्वारा करता रहता है। मंसाराम का छोटा पुत्र करन व राणा दोनों गहरे मित्र रहते हैं।

राणा को स्कूल में कबूतरा जाति का होने के कारण कई बार अनेकों मुसीबतों का सामना करना पड़ता है। मंसाराम राणा को मुसीबतों से बाहर निकालने में मदद करता है। मंसाराम की पत्नी को यह सब अच्छा नहीं लगता है। वे राणा को अपने पालतू कुत्ते द्वारा बुरी तरह से घायल करवा देती है। कदमबाई से राणा की हालत देखी नहीं जाती है। वह राणा का इलाज करवाकर बड़ी कठिनाई से ठीक कर पाती है। वह राणा के जीवन को खतरे में देखकर रामसिंह के पास भेजने का निश्चय करती है। रामसिंह राणा को लेने आते हैं। कदमबाई व रामसिंह मिलकर अल्मा के साथ राणा का रिश्ता तय कर देते हैं। रामसिंह राणा को पढ़ाने की स्वयं जिम्मेदारी लेते हैं। कदमबाई निश्चिन्त होकर रामसिंह के साथ राणा को गोरामछिया भेज देती है। राणा को भेजने पर मंसाराम कदम का विरोध करते हैं। कदम मंसाराम के हृदय में राणा के प्रति पिता का स्नेह उमड़ता देखती है। उसे आत्मिक शान्ति प्राप्त होती है। कदमबाई रामसिंह को राणा के सुपुर्द कर उसके उज्ज्वल भविष्य के सपने देखती है।

मंसाराम का कदम के डेरों पर आना जाना बड़ जाता है। यह सब देखकर उसकी पत्नी व पुत्र जोधा उसका विरोध करते हैं। एक दिन मंसाराम की पत्नी आग लगा लेती है। माँ के आग लगाने पर जोधा, मंसाराम पर हाथ उठाने लगता है। जोधा, पिता की भूमि छीन कर उस पर अपना अधिकार जमा

लेता है। जोधा, मंसाराम को ४८ बीघा भूमि में से केवल १० बीघा भूमि उसके जीवन-यापन के लिए छोड़ देता है।

एक दिन मंसाराम का मित्र केहर उसके घर आता है। ये दोनों बचपन में साथ-साथ पढ़ते थे। केहर का बचपन निर्धनता में गुजरता है। लेकिन अब उसकी हालत अच्छी है। मंसाराम उसे अमीर होने का बड़प्पन दिखाते हैं। केहर, मंसाराम की कमजोरियों को स्वयं प्रकट कर देता है। जोधा के विषय में मंसाराम से उसकी वार्तालाप चलती है। वह मंसाराम से कहता है कि इतनी जायदाद में से जोधा ने सिर्फ १० बीघा तुम्हें दी है। तुम सारी सम्पत्ति के मालिक हो। केहर जोधा के खिलाफ मंसाराम को भड़काता है। वह मंसाराम से स्वयं का धन्धा खोलने की बात कहता है। मंसाराम केहर के साथ शराब का ठेका खोलता है, उसमें अच्छी खासी पूँजी लगाता है। कबूतरा इस व्यवसाय में संलग्न रहते हैं। कबूतरों को भी अच्छा धन्धा मिल जाता है। केहर व मंसाराम हर मुसीबत में कबूतरों के साथ देने के लिए तत्पर रहते हैं। मंसाराम कदम के साथ उसके डेरे में निवास करने लगता है। जोधा अनेकों बार आकर मंसाराम का विरोध करता है, लेकिन उसकी एक नहीं चलती है। वर परास्त होकर वापिस लौट जाता है।

गोरामछिया में राणा रामसिंह के रहन-सहन को देखकर रह जाता है। कज्जाओं जैसा आवास, खान-पान भी शुद्ध शाकाहारी एवं सम्पूर्ण भोजन बनता है। राणा यह सब देखकर सुख का अनुभव करता है। रामसिंह राणा व अल्मा को साथ-साथ पढ़ाते हैं। महापुरुषों की वीरगाथायें भी सुनाया करते हैं, जिस प्रकार उनकी माँ भूरी कबूतरी उन्हें सुनाया करती थी। रामसिंह गाँव के मरीजों को देशी दबा देने का कार्य किया करते हैं, जिससे लोगों का आना जाना बना रहता है। रामसिंह की दवा लाने का कार्य मोधिया गुरु करते हैं। राणा व अल्मा में धीरे-धीरे प्रेम अंकुरित होने लगता है। एकदिन यह प्रेम शारीरिक संबंधों में भी परिवर्तित हो जाता है।

एक रात रामसिंह के घर कुछ पुलिस वाले व बेटासिंह डाकू आकर शरण लेते हैं। राणा अल्मा से इन लोगों के बारे में बार-बार पूछता है, लेकिन वह बताने से इंकार कर देती है। बेटासिंह को पकड़ने पर बीस हजार रुपये का इनाम सरकार द्वारा घोषित रहता है। चुनाव आने के कारण उसे पकड़ने पर विशेष जोर दिया जाता है। बेटासिंह परेशान रहता है। कई बार तो अन्य लोगों की हत्या करके उनका चेहरा बिगाड़कर बेटासिंह के नाम से पुलिस को रामसिंह ने सौंप दिया था। पुलिस रिश्वत

लेकर चुप रह जाती थी। बेटासिंह के द्वारा फिर लूट होने पर नेताओं ने उसकी गिरफ्तारी पर विशेष जोर दिया। बेटासिंह रात के समय रामसिंह से अपने हुलिया के व्यक्ति को खोजने की बात करता है। रामसिंह से डरकर दूलन, सरमन, मलिया, सुरजी, सुंदरा आदि के नाम बताता है। बेटासिंह उसे ढेर सारा रुपया देने का वादा करता है। राणा रामसिंह काका की बातों को सुनकर हतप्रभ रह जाता है। वह रामसिंह काका के दूसरे रुप को देखकर समझ लेत है। कि पाप की कमाई के कारण ही इनके इतने ठाठ हैं। कबूतरों की किस्मत में इतना आराम कहाँ है। रामसिंह अपनी बेटी अल्मा की सुःख, सुविधा के लिए सब कुछ करने को तैयार रहते हैं। राणा मड़ोरा खुर्द के डेरों के लोगों की हत्या के विषय में सुनकर चिंतित हो जाता है। वह उन्हें बचाने का हर सम्भव प्रयास करने की ठानता है। वह अल्मा से विदा लेकर चुपचाप रात को भागने की योजना बनाता है। अल्मा उसे बहुत रोकने का प्रयास करती है।, लेकिन वह उसकी एक नहीं सुनता है। वह जंगलों में भटक-भटक कर झाड़ियों से घायल होकर अपने गाँव पहुँच जाता है। राणा उसे व डेरों के सभी व्यक्तियों को समारोह की योजना बतला देता है। सभी सजक हो जाते है। कदम राणा से अल्मा के विषय में पूछती है। राणा, अल्मा की याद में पागल सा हो जाता है।

एक दिन राणा को बेटासिंह डाकू के मरने की खबर मिलती है। राणा व करन दोनों पुलिस चौकी में उसका शव देखने जाते हैं। शव को देखकर राणा हतप्रभ रह जाता है। वह शव अल्मा के पिता रामसिंह का होता है। राणा अल्मा के विषय में सोचकर उसे लेने गोरामछिया जाता है। रास्ते में उसकी मुलाकात मोघिया गुरु से होती है। वह उसे बताता है, कि रामसिंह को तुमसे उचित उम्मीद न होने के कारण वह अल्मा को दुर्जन के हाथों सौपने का निश्चय कर चुका था। दुर्जन का रामसिंह के ऊपर बीस हजार रूपये का कर्ज रहता हैं कर्ज न चुकाने के कारण राम सिंह अल्मा को दुर्जन के पास पहुँचा देता है। राणा दुर्जन के पास अल्मा को लेने पहुंचता हैं लेकिन वह उसे मना कर देता है कि वह उसके पास नहीं है। राणा निराश होकर अपने डेरों में लौट आता है। कदम से, राणा का यह हाल देखा नहीं जाता है।

एक दिन मंसाराम अपने अमरा वाले भांजे धीरज को देखने जाते हैं धीरज की तबियत ठीक नहीं रहती हैं वह मंसाराम के साथ उसके गांव आकर रहने लगता है। धीरज रात के समय अकेले में डायरी लिखता हैं मंसाराम उससे डायरी लेकर पढने लगता हैं। धीरज की डायरी द्वारा मंसाराम को अल्मा के

विषय में जानकारी प्राप्त होती हैं दुर्जन अल्मा को सूरजभान को सौप देता हैं धीरज पढा लिखा लडका है। सूरजभान के पास उसकी नौकरी लगवाने के लिए दो लाख रूपय जमा रहते है। नौकरी न मिलने पर वह सूरजभान से मिलता है। सूरजभान उसे अपने यहां पर लडकी की सुरक्षा की नौकरी देते है। धीरज के साथ उस लडकी की सुरक्षा में नत्थू नाम का व्यक्ति भी रहता है। लड़की रस्सियों से बंधी रहती है। वह अन्न जल ग्रहण नहीं करती है। उसके हाथ पर गुदने से उसका नाम अल्मा कबूतरी लिखवा दिया जाता है। गुदना पकने के कारण उसे असहनीय पीड़ा देता है। वह रात-दिन दर्द से कराहती है। धीरज से उसकी हालत देखी नही जाती है। वह नौकरी जाने के डर से चुप रहता है।

धीरज को नत्थू द्वारा पता चलता है, कि इस लड़की को नेताओं के सम्भोग के लिए पकड़ा गया है। यह सुनकर वह दम्भ रह जाता है। उसकी नींद उड़ जाती है। दूसरे दिन सूरजभान आकर उसे वन विभाग के 'सर्किट हाउस' ले जाने के लिए कहकर चला जाता है। नत्थू, अल्मा को जबरन तैयार करवा देता है। धीरज असहाय सा उसे देखता रहता है। फिर वह अपने कमरे में चला जाता है। किसी कारण वश सूरज भान उस दिन उसे नहीं ले जा पाता हैं और अगले दिन की कहकर चला जाता है। धीरज को सुनकर सन्तोष मिलता है। रात के समय नत्थू के सो जाने पर धीरज चुपके से अल्मा के कमरे में जाता है और अल्मा को बंधन मुक्त करता है। उसको भगाने में वह उसकी मदद करता है। कुछ समय पश्चात् नत्थू आता है, उसे अल्मा अपने स्थान पर नहीं दिखती है । वह तुरंत उसे खोजने निकल जाता है। अंधेरे घने जंगल में टार्च की रोशनी की सहायता से अल्मा को खोजने में वह सफल हो जाता है। अल्मा नत्थू से विनय कर छोडने का आग्रह करती हैं वह नत्थू से कहती है कि सूरजभान से कह देना कि वह नहीं मिली। नत्थू बडे मुश्किल से उसकी बात मानने पर राजी होता है। वह अल्मा को सुरक्षित स्थान पर पहुँचने की बात कहता है। अल्मा निश्चिंत होकर उसके साथ चल देती है। नत्थू उसे अपने मित्र संतोले की पत्नी को सौंप देता है। अल्मा को संतोले की पत्नी के हाव-भाव पर संदेह होता है। वह सोचती है कि एक भंवर से निकली तो दूसरे भंवर में आ फंसी हूँ। अल्मा को वहाँ से निकलने का कोई रास्ता समझ में नहीं आता है।

अल्मा को भगाने पर सूरजभान धीरज को कड़ा दण्ड देता है। वह धीरज का स्त्रियों की तरह वलात् कर उसका पौरूष समाप्त कर देता है। वह घायल अवस्था में अपने गाँव अमरा पहुँचता है। सूरजभान धीरज वाली खबर सभी जगह फैला देता है। वह जहां से भी निकलता है, सभी नामर्द कहकर

उसका मजा उडाते हैं। धीरज की हालत दिन प्रति दिन बिगड़ती जाती है। जिससे उसकी माँ बहुत चिंतित होती है। धीरज का रिश्ता टूट जाता है। सगुन वापिस लाने के लिए लड़की वाले नाई को उसके घर भेजते है। धीरज के पिता उसे बहुत समझाते है। नाई कहता है कि **"माधोसिंह को गली में निकलते झिझक लगती है लोग बाग काम छोडकर इसी बात में रस लेने आते है। रंजिश मानने वालों की बन आई है। अखवार कौन पढ़ता था? उस दिन का सबने पढ़ा? घरों में हिफाजत से रख लिया कि मौका पड़े निकालकर बता दें- माधोसिंह तुम्हारा दामाद नामर्द।"२** नाई की बातों को सुनकर धीरज के पिता के पैरों तले धरती खिसक जाती है। नाई सगुन वापिस लेकर चला जाता है। पिता धीरज को पीटकर कहते हैं कि **"साले नरक के कीडे, उस मंसाराम के लक्षण लेकर जन्मा है, सो खसिया कर डाला। लो अब, और भाग जा यहां से करिया मुंह करके निकल, निकल बेटीचो..............उस मंसा की.........।"३**

धीरज मंसाराम के पास पहुँच जाता है। राणा, अल्मा के विरह में पागल सा हो जाता है। धीरज पुनः अल्मा की खोज में लग जाता है। अल्मा को जहाँ पनाह मिलती है। वह मामूली कोठी नहीं बल्कि समाज कल्याण मंत्री का आवास रहता है। संतोले अपनी पत्नी के साथ बगल में ही सर्वेन्ट क्वाटर में रहता है। मंत्री जी का नाम श्री रामशास्त्री रहता है। मंत्री चुनाव जीतकर व पदवी पाकर बहुत प्रसन्न रहते हैं। मंत्री जी का घर में मन नहीं लगता है। वे उदास से रहते हैं। संतोले की पत्नी उनके मन की बात समझ जाती है। वह अल्मा को तैयार कर उनके समक्ष प्रस्तुत करती है। मंत्री जी का मन तब भी नहीं लगता है। वे ऐसी स्त्री को घर में रखना चाहते हैं जिससे उनकी गृहस्थी चल सके। मंत्री जी को खुश करने के अलावा अल्मा के पास वहां से निकलने का कोई रास्ता नहीं रहता है। उसे कहीं और जाने व किसी ओर के हाथों फंसने का डर रहता है। वह मंत्री जी को नजदीक जाकर उन्हें मारने की योजना बनाती है। कबूतरी होने पर भी वह कभी शास्त्री जी पर वार करने का साहस नहीं जुटा पाती है। धीरे-धीरे अल्मा व शास्त्री जी पति-पत्नी के रिश्ते में रम जाते है। अल्मा विद्रोह की भावना को भूल कर प्रत्येक कार्य में उनका सहयोग करने लगती है। मंत्री जी अपनढ होने के कारण अंग्रेजी के भाषण का हिन्दी में अनुवाद अल्मा से करवाते हैं। अल्मा को अपने साथ प्रत्येक जगह दौरे पर ले जाते हैं।

---

२. अल्मा कबूतरी उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- ३२२)

३. अल्मा कबूतरी उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- ३२४)

समय निकलता जाता है।

अल्मा, राणा को भी नहीं भूल पाती है। वह सपने में स्वयं को राणा की दुल्हन के रूप में देखती है। वह कदम के डेरे तक जाती है। कदम अपनी बहू के रूप में उसका स्वागत करती है। सभी कबूतरो की स्त्रियाँ राणा के नाम से उसका सोलह श्रृंगार करती हैं। वह बहुत प्रसन्न रहती है। देवी-देवताओं को पूजन कर मंगल गीत गाए जाते है। सपना टूटता है।

"बुन्देलखण्ड में यह मान्यता लोक प्रचलित है कि अपने में अगर कोईअशुभ लक्षण दिखता है, तो निश्चित ही कुछ अनिष्ट होने वाला हैं।" अल्मा की मुलाकात बीच-बीच में धीरज से होती रहती है। एक दिन अचानक संतोले आकर अल्मा को श्री राम शास्त्री की मृत्यु की सूचना देता है। अल्मा यह सूचना पाकर चौक जाती है।

अल्मा कहती है-**"अरे नहीं। किसी ने झूठी खबर दे दी है मंत्री जी के सिर पर कौआ बैठ गया होगा। मंदिर के जीर्णोद्धार के लिए कह गए थे। वहां पुजारी और प्रसाद है कि बंदूक और कारतूस? किसी पापी ने वहीं मार गिराया।SSSS............।"४** संतोले विलाप करता हुआ बोला।

सभी नेतागण, पुलिस वाले जनसमुदाय एकत्रित हो गए। मुख्यमंत्री हेलीकॉप्टर द्वारा आये। अल्मा को शास्त्री जी की विधवा पत्नी होने के नाते सभी ने धैर्य प्रदान किया। 'अल्मा' श्री राम की मृत्यु पर विलाप करती है। ओरछा में वेतवा नदी के घाट पर शास्त्री जी की अंतिम क्रिया की व्यवस्था की गई। शास्त्री जी के परिवार में अन्य सदस्य न होने के कारण उनकी पत्नी अल्मा ने दाह-संस्कार पूर्ण किया।

रेडियो, टेलीविजन व समाचार पत्रों में दो सूचनायें प्रमुख रूप से सामने आयीं -

"पहली- प्रदेश के समाज कल्याण मंत्री श्रीराम शास्त्री का अंतिम संस्कार ओरछा नगर के कंचना घाट पर सम्पन्न हुआ। मुखाग्नि उनकी पत्नि अल्मा ने दी। दूसरी सूचना थी- श्री शास्त्री के निधन के कारण बबीना विधान सभा की जो सीट खाली हुई है उसके लिए प्रत्याशी श्रीमती 'अल्मा शास्त्री' होगी।"५

---

४. अल्मा कबूतरी उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- ३८२)

५. अल्मा कबूतरी उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- ३९०)

अध्याय- ६

बुन्देलखण्ड अंचल के हिन्दी उपन्यासों में लोक संस्कृति का अनुशीलन

६.१ पर्व, उत्सव, व्रत एवं अनुष्ठान

६.२ लोकदेवता

६.३ मेले

६.४ रीति-रिवाज एवं संस्कार

६.५ लोकगीत, नृत्य एवं वाद्ययन्त्र

६.६ लोकगाथाएं एवं कथानक

६.७ लोकोक्ति, मुहावरे एवं बुझौबल

६.८ जातीय सद्भाव

६.९ साम्प्रदायिक सौहार्द

६.१- पर्व, उत्सव, व्रत एवं अनुष्ठान-

बुन्देलखण्ड की लोकसंस्कृति को यहाँ की धार्मिक मान्यताएं प्रमुख रुप से निरुपित करती हैं। धार्मिक कार्यक्रमों द्वारा मानव को सुःख शान्ति प्राप्त होती है। परिवार के सभी सदस्य मिल-जुल कर अपनी खुशी का व्याख्यान करते हैं। पर्व, उत्सव आदि यहाँ पर लोग बड़ी धूमधाम के साथ मनाते हैं। परिवार, रिश्तेदार एवं आस-पड़ोस के लोग इन अवसरों पर अपना हर्षोल्लास शुभ-कामनाओं द्वारा व्यक्त करते हैं। ये कार्यक्रम प्रेम, स्नेह, एकता एवं सौहार्द के प्रतीक हैं। व्रत एवं अनुष्ठान मनवांछित कार्यों की सिद्धि, जीवन रक्षा के लिए एवं श्रद्धा-पूर्वक ईश्वर में विश्वास करते हुए लोग इन्हें करते हैं।

बुन्देलखण्ड अंचल के हिन्दी (सामाजिक) उपन्यासों में पर्व, उत्सव, व्रत एवं अनुष्ठान निम्न हैं -

(अ) श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' जी के उपन्यासों में -

१. पर्व - **(क) दशहरा, दिवाली- 'निमियाँ उपन्यास'** में-महाराज व श्यामलाल के बीच वार्तालाप में निम्न पर्वों का उल्लेख आता है। **"दशहरे दिवाली इनाम बखशीश भी मिल जाया करेगी।"**१

(ख) अक्षय तृतीया- 'प्रेमतपस्वी उपन्यास' में यहाँ पर पर्व का वर्णन रानी बहू 'रजउ' से कहती है **"बेटी आज अकती का त्यौहार है।"**२ पड़ोस की कुछ लड़कियाँ आयीं और रजउ से बोलीं **"क्यों जीजी। पुतलियाँ पूजने चलती हो? आज अकती है।"**३

२. उत्सव - **(क) राजतिलक- 'निमियाँ उपन्यास'** में-**"वह तिथि समीप आ गई नरेन्द्र को युवराज घोषित कर दिया जाना था। शहर की सजावट शुरु हुई। ढ़िढोरा पिटवा दिया गया। लोगों ने दिल खोलकर सजावट की। राज्य की ओर से भी सजावट में कसर न रक्खी गई।"**४

३. अनुष्ठान - **(क) भागवत- 'प्रेमतपस्वी उपन्यास'** में-धार्मिक 'अनुष्ठान' करवाने का वर्णन करते हुए कानूनगो, पण्डित जी कहते हैं कि ठाकुर पहाड़ सिंह **"यही पूछने उस दिन आये थे कि किसकी भागवत बैठलवाऊँ।"**५ भागवत बैठलवाना एक धार्मिक अनुष्ठान है।

---

१. निमियाँ उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या-१०५)
२. प्रेमतपस्वी उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या-६६)
३. वही - (पृ० संख्या-६८)
४. निमियाँ उपन्यास- श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या-३५१)
५. प्रेमतपस्वी उपन्यास- श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या-१५१)

(ब) वर्मा जी के उपन्यासों में -

१. पर्व - (क) गंगादशहरा- 'लगन' उपन्यास में पर्व का वर्णन "बुन्देलखण्ड में गंगा दशहरा के दिन सर्वत्र त्यौहार मनाया जाता है।"१ इस पर्व पर नदी में स्नान कर ब्राह्मणों को भोजन करवाकर दान-दक्षिण आदि दी जाती है।

(ख) नवरात्रि एवं दशहरा- 'उदयकिरण उपन्यास' में-"नवरात्रि-नवदुर्गा का पर्व था। उस दिन परमोले के घर पर माता के भजन होते थे।"२ इसके पश्चात् "विजया दशमी का उत्सव मनाया गया।"३

(ग) अक्षय तृतीया- 'उदयकिरण उपन्यास' में-"उदय बोला हाँ है अखती, अक्षय तृतीया का पर्व।"४

(घ) दिवाली- 'कुण्डली चक्र उपन्यास' में-"दिवाली हुये अभी कुछ ही दिन हुये थे।"५

(ङ) होली - 'कुण्डली चक्र उपन्यास' में ललितसेन ने एक दिन लालसिंह को बुलाया "वह मैली धोती होली के दिनों की रंग की छीटों से रंग-बिरंगी अंगरखी पहने हुये आया।"६

(च) दशहरा, दिवाली, होली- 'अचल मेरा कोई उपन्यास' में-"लोकनृत्य के नाम जो नाच कूद होता है- दशहरा दिवाली, होली आदि त्यौहारों पर अपना पूरा स्वच्छन्द रुप पाता है।"७

२. उत्सव - (क) रामनवमी - 'प्रत्यागत उपन्यास' में-"उस दिन रामनवमी का विशेष उत्सव था और खास सज-धज तथा सजावट के साथ मन्दिर में, जो नवलबिहारी ही का था रामायण के पाठ की तैयारी हुई थी।"८

---

१. लगन उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या-१४)
२. उदयकिरण उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या-८८)
३. वही (पृ० संख्या-११५)
४. वही (पृ० संख्या-१४१)
५. कुण्डली चक्र उपन्यास- डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या-७)
६. वही (पृ० संख्या-१२६)
७. अचल मेरा कोई उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या-८३)
८. प्रत्यागत उपन्यास- डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या-६)

(ख) रामलीला - 'प्रत्यागत उपन्यास' में हेतसिंह कहते हैं कि "अपने यहाँ देखो, धनुष यज्ञ को धूमधाम के साथ करने के लिए इतनी कोशिश करते हैं।"९ फिर नवलबिहारी कहते हैं कि "चन्दा जल्दी मिल जाए तो लीला शीघ्र आरम्भ कर दी जाये।"१०

३. व्रत- 'अचल मेरा कोई' उपन्यास में-"सोमवार को मौन व्रत धारण कर लिया करेंगे।"११

४. अनुष्ठान- 'प्रत्यागत उपन्यास' में पंडित नवलबिहारी मंगल को पुनः हिन्दू-धर्म में प्रवेश करने के लिए निम्न धार्मिक अनुष्ठान करने के लिए कहते हैं "उपवास, गंगा स्नान, गोदान, हवन, पंचगव्य, सत्यनारायण की कथा, ब्राह्मण भोजन, जाति भोज इत्यादि कथा विधि करने से कलंक मुक्त हो सकते हैं।"१२

(स) मैत्रेया पुष्पा जी के उपन्यासों में -

१. पर्व - (क) नवदुर्गा- 'झूलानट' उपन्यास में-बालकिशन कहता है "अष्टमी के दिन पैड़ भरुंगा।"१

(ख) रक्षाबन्धन- 'वेतवा बहती रही उपन्यास' में-"रक्षाबन्धन की छुट्टियां हुई थीं।"२ 'इदन्नमम् उपन्यास' में 'भुंजरियां बो दीं बऊ ने, अनवरी बुआ ने। रक्षाबन्धन है आज। राखी और भुंजरियों का त्यौहार।"३

(ग) दशहरा- 'वेतवा बहती रही उपन्यास' में-"दशहरे की छुट्टियों में मीरा चन्दनपुर आ गई थी।"४

(घ) कार्तिक- 'वेतवा बहती रही उपन्यास' में-यहाँ पर कार्तिक पर्व का वर्णन है। उर्वशी नदी को देखकर मन में विचार करती है कि "जब कार्तिक के महीने में नहान किया था। कार्तिक

---

९. प्रत्यागत उपन्यास- डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या-७)
१०. वही (पृ० संख्या-८)
११. अचल मेरा कोई उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या-३)
१२. प्रत्यागत उपन्यास- डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या-६५)
१. झूला नट उपन्यास- मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- ११)
२. वेतवा बहती रही उपन्यास- मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- ५५)
३. इदन्नमम् उपन्यास- मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- ४४)
४. वेतवा बहती रही उपन्यास- मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- ७५)

बाद्यमाघे एऽच स्नाने प्रकुर्वन्ति, ते मुक्ता पाप बन्धनात। बैरागी ने यह श्लोक बोलकर पूजा करायी थी।"५

'इदन्नमम् उपन्यास' में कार्तिक पर्व का वर्णन- **"कुसुमा ने कार्तिक नहाया।"६**

(ङ) दीवाली - 'इदन्नमम् उपन्यास' में पर्व का वर्णन है- मन्दाकिनी अपने मन में विचार करती है।**"पिछली बार भागवत के समापन के शुभ-असवर पर भी भंडार नहीं हो सका, सो दीपावली के मौके पर रख लिया। साथ-संग में खाना है तो पर्व त्यौहार ही सही।"७**

(च) संक्रान्ति- 'इदन्नमम् उपन्यास' में-बऊ बोली मन्दा **"आज संकरात है एरच वाले पुजारी आते होंगे। "८** यह पर्व जनवरी माह में पड़ता है। इसमें मिट्टी के घोड़ों एवं चकियों की पूजा कर बच्चे उनसे खूब खेलते हैं।

(छ) होली- 'इदन्नमम् उपन्यास' में-**"फाग है। होली है रंगों का त्यौहार।"९** यहां पर यह पर्व हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है।

'अल्मा कबूतरी उपन्यास' में बुन्देलखण्ड में होली के पर्व पर लोग जमकर भांग व शराब का सेवन करते हैं। होली के रंगों में रंग जाते हैं। एक-दूसरे को गुलाल व अबीर का तिलक लगाकर गले मिलते हैं। उपन्यास में होली पर्व के लिए कबूतरियां **"महुआ भिगोकर खेतों में छिपा आई। होली तक अच्छा खमीर उठकर दारु ढल जायेगी।"१०**

<u>२. उत्सव-</u> **(क) मुँहदिखाई - 'झूलानट'** उपन्यास में शीलो के विवाह के पश्चात् **"मुंह दिखाई का उत्सव मनाया गया जिसमें नाच हुआ। गाना भी हुआ। बहू ने लंबा घूंघट खींच लिया उत्सव की ओर से।"११**

'अल्मा कबूतरी' उपन्यास में नववधु के आगमन पर - **"मंगल गीत.........ढोल नगड़िया...**

---

५. वेतवा बहती रही उपन्यास- मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- ९२)
६. इदन्नमम् उपन्यास- मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- १३४)
७. वही - (पृ० संख्या- ३४३)
८. वही - (पृ० संख्या- २४६)
९. वही - (पृ० संख्या- ४४६)
१०. अल्मा कबूतरी उपन्यास- मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- ४१)
११. झूला नट उपन्यास- मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- २३)

..........माँ के कलेजे पर भारी-भारी पत्थर पटक रहा है कोई ।"१२

३. व्रत- (क) एकादशी- 'इदन्नमम् उपन्यास' में - "ऐन एकादशी के दिन आये महाराज। मन्दाकिनी ने व्रत रखा।"१३

(ख) निर्जला व्रत- 'झूलानट उपन्यास' में व्रत का वर्णन- बालकिशन अपने मन में विचार करता है- "गृहशान्ति के लिए निर्जल व्रत करेगा। झाँकी निकलवाऊँगा ऐसी चमकदार कि धरती-आसमान झलमलाता रह जाय।"१४

इसी उपन्यास में - बालकिशन के घर "व्रत उपवासों का सिलसिला। सोलह सोमवार। संतोषी माता के शुक्रवार। केला-पूजन के वृहस्पतिवार। शनि ग्रह शान्ति के शनिवार।"१५ आदि व्रत शीलो के जिम्मे आये।

(ग) मंगलवार व्रत- 'झूलानट उपन्यास' में-बालकिशन ने "मंगलवार का व्रत अपने जिम्मे ले लिया।"१६

४. अनुष्ठान- (क) कथा- 'झूला नट उपन्यास' में-"विमला जिज्जी ने कथा कीर्तन कराये। शंख झालर वाली मण्डली बुलवाई। अम्मा ने दिल खोल दिया, घी शक्कर, प्रसाद, पंचामृत, हवन की सामग्री, पण्डित-पुजारियों को जिवाना, खिलाना, दान-दक्षिणा, पांचो वस्त्र।"१७

'अल्मा कबूतरी उपन्यास' में "सत्यनारायण व्रत कथा भवबाधाओं से उबरने का शर्तिया अनुष्ठान है। कथा हर संक्रान्ति पर होने लगी। महीने के महीने। आरती और भजन प्रतिदिन।"१८

(ख) रामायण- 'इदन्नमम् उपन्यास' में -"हर महीने रामायण का अखंड पाठ गोपालपुरा में

---

१२. अल्मा कबूतरी उपन्यास- मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- २६०)
१३. इदन्नमम् उपन्यास- मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- २०३)
१४. झूलानट उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- ११)
१५. वही - (पृ० संख्या- ४३)
१६. वही
१७. झूला नट उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- ४४)
१८. अल्मा कबूतरी उपन्यास- मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- २८)

होता है।"१६

'अल्मा कबूतरी उपन्यास' में-"मंसाराम पूजा कर रहे थे। चौकी पर नया कपड़ा बिछाकर चार पीतल की मूर्तियों को स्नान कराकर आनंदी ने पधराया था। अगरबत्ती सुलग रही थी। सुगंध और पवित्रता चारों ओर व्याप्त हो गई । रामायण का सुन्दरकाण्ड पाठ चल रहा था। पति-पत्नी बराबरी पर बैठे थे हाथ जोड़कर।"२०

(ग) भागवत - 'इदन्नमम्' में-"पिछली बार भागवत के समापन के शुभ-असवर पर भी भंडार नहीं हो सका।"२१

---

१६. इदन्नमम् उपन्यास- मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- २४८)

२०. अल्मा कबूतरी उपन्यास- मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- १५३)

२१. इदन्नमम् उपन्यास- मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- ३४३)

६.२- लोकदेवता -

लोकदेवता वह देवता होते हैं, जो लोक द्वारा मान्य और प्रतिष्ठित होते हैं। इन्हें स्थान देवता भी कहते हैं। बुन्देलखण्ड के अंचल में अनेक जाति व सम्प्रदाय के लोग निवास करते हैं, और अलग-अलग देवी-देवताओं का पूजन करते हैं। यहाँ पर लोग पारंपरिक ढंग से देवी-देवताओं का पूजन करते हैं। बुन्देलखण्ड में लोक-देवता प्रत्येक गाँव व कस्बों में देखने को मिल जाते हैं।

बुन्देलखण्ड अंचल के हिन्दी (सामाजिक) उपन्यासों में लोक देवता निम्न हैं -

(अ) श्री अम्बिका प्रसाद दिव्य जी के उपन्यासों में -

'निमियाँ उपन्यास' में श्यामलाल ईश्वर पर आस्था रखते हुए कहता है **"ईश्वर के न्याय को हम समझ भले न पावें परन्तु वह न्यायी है।"१**

'मनोवेदना उपन्यास' में लोक देवी का वर्णन- **"लक्ष्मी में लक्ष्मी आती है।"२**

'प्रेमतपस्वी उपन्यास' में लोकदेवता-**"घर के पीछे ही बगिया थी, उसमें शिवजी का मन्दिर था।"३**

'प्रेमतपस्वी उपन्यास' में लोकदेवी का वर्णन **"वह भी पूरी लक्ष्मी थी और लक्ष्मी ही उसका नाम था।"४**

अकती पर्व पर यहाँ बच्चों द्वारा लोकदेवताओं के रुप में गुड्डा-गुड़ियों की पूजा की जाती है। रजऊ से उसकी सखियां कहती हैं **"क्यों जीजी पुतरियां पूजने चलती हो? आज अकती है।"५**

लोकदेवताओं के रुप में इस उपन्यास में लोक-देवता के रुप में **"राधा-कृष्ण"६** का नाम भी आता है।

---

१. निमियाँ उपन्यास- श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या- ३४४)
२. मनोवेदना उपन्यास- श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या- ४७)
३. प्रेमतपस्वी उपन्यास- श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या- ८३)
४. वही - (पृ० संख्या- ९१)
५. वही - (पृ० संख्या- ९८)
६. वही - (पृ० संख्या- १०६)

(ब) वर्मा जी के उपन्यासों में -

'लगन उपन्यास' में लोकदेवता- "हनुमान जी की एक मूर्ति सती की शिला है।"१

'प्रत्यागत उपन्यास' में लोकदेवता को "ठाकुर जी"२ के नाम से भी पुकारा जाता है।

'उदय-किरण उपन्यास' लोकदेवी का नाम सरमन ने कहा-"दुर्गा मैया की कृपा से धान तो बहुत अच्छी आई है।"३

मगन कहता है "दुर्गा जी की कृपा से वाद्य-बध जाए और उससे नहर निकल जाए तो फिर लक्ष्मी जी हस-हस पड़ेगी।"४

'कुण्डली चक्र उपन्यास' में माँ ने बेटी से कहा "तुम नित्य तुलसी जी की पूजा किया करो। और संजा समय पीपल के नीचे दिया धर आया करो।"५ बुन्देलखण्ड में लोकदेवी एवं देवताओं के रुप में वृक्षों को भी पूजा जाता है।

यहां पर लोकदेवी के नामों का उल्लेख भुजबल कहता है "सरस्वती और लक्ष्मी का ऐसा संयोग मैंने बहुत कम देखा है।"६

पूना देवताओं का स्मरण करके कहती है "वरुण देव मेरी रक्षा करें।"७

'अचल मेरा कोई उपन्यास' में लोकदेवी-"गृह लक्ष्मी घर की लक्ष्मी फीकी है।"८

(स) मैत्रेयी पुष्पा जी के उपन्यासों में -

'झूला नट उपन्यास' में-बालकिशन "महामाई जी की आसनी के पास जलती हुई ज्योति को एकटक निहार रहा है, चौंध-मौंध कुछ नहीं। देवी मइया के सत्य की महिमा। सुनहरी उजाले में उतरता जा रहा है बेधड़क।"१

---

१. लगन उपन्यास- डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या- १)
२. प्रत्यागत उपन्यास- डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या- ८१)
३. उदयकिरण उपन्यास- डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या- ८६)
४. वही
५. कुण्डली चक्र उपन्यास- डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या- ५३)
६. वही - (पृ० संख्या- २०)
७. वही - (पृ० संख्या- २०१)
८. अचल मेरा कोई उपन्यास- डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या- ११८)
१. झूला नट उपन्यास- मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या - ७)

बालकिशन कहता है "देवी मइया मैं कहाँ था। अभी तक कहाँ आ गया? बैकुण्ठ धाम की शोभा और इन्द्रासन पर बैठी तुम भवानी.........तेरे संसार में विरचता मैं रोज रहा था कि तुम पुकार रही हो।"२ राह में शीलो। "रणचण्डी का अवतार।"३ बालकिशन देवी को स्मरण कर कहता है "शीलो अभागिन को माफ करना शीतला माई।"लोकदेवियाँ "जय अम्बे, जगदम्बे, जय गौरी माँ।"४ बालकिशन कहता है "मोरे ठाकुर मेहर तुम्हारी, कहकर अम्मा महादेव का नहीं, शीलो भाभी का गुणगान करती ।"५ "देवी -देवता, कुल-पितरों का प्रकोप घर के लोग घिर गए।"६

"बालकिशन माँ के दुख को कितना समझता है। बयान नहीं कर सकता, हाँ उन दिनों उसने देवी दुर्गा की भक्ति और हनुमान की उपासना कुछ ज्यादा सख्त कर दी।"७

चंपादास बालू की माँ से कहते हैं -"चण्डीमाता तुम्हारे मनोरथ पूर्ण करेगी।"८

बालकिशन की माँ कहती है "बेटा। जा, पहले महामाई ढार आ। संकर महादेव पर पान-फूल और दूध चढ़ा आ। भूले-बिसरे देव-पितर, तुम्हारी जै रहे।"९

माँ बालकिशन से कहती है "थान वाले देव पर मीठा रोठ चढ़ाने की बोल रही थी। थान वाले देव तेरी रक्षा करें।"१०

बालकिशन शीलो भाभी को भगवान की उपमा देते हुए कहता है "भाग छूटी ज्यों कान्हा ने वंशी बजाई हो।"११ बालकिशन के मन में "हरदौल की याद आई। ओरछा धाम जाने की

---

२. झूला नट उपन्यास- मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या - ९)
३. वही - (पृ० संख्या- ११)
४. वही - (पृ० संख्या- १२)
५. वही - (पृ० संख्या- २६)
६. वही - (पृ० संख्या- २९)
७. वही - (पृ० संख्या- ३०)
८. वही - (पृ० संख्या- ४६)
९. वही - (पृ० संख्या- ३०)
१०. वही - (पृ० संख्या- ४६)
११. वही - (पृ० संख्या- ४७)

लालसा बारह साल की उम्र से की है।"[१२] बालकिशन शीलो को छोड़ने के विषय लोकदेवता का स्मरण करते हुए कहता है -"रामचन्द्र जी ने तो खुद सीता को वनवास दे दिया था।"[१३] बुन्देलखण्ड के प्रसिद्ध लोकदेवता "कारस देव (दूध के देवता) की ढांक बजी थी।"[१४]

बालकिशन अपने मन में सोचता है "लक्ष्मी मइया के चरणों में सबेरे प्रसाद चढ़ायेंगे।"[१५]

"कन्हैया जू" "गोबर गनेश"।[१६] "रामराजा के ओरछा नरेश को प्रणाम, हरदौल जू को प्रणाम।"[१७]

'वेतवा बहती रही उपन्यास' में लोकदेवताओं का वर्णन "सीताराम की लम्बी आवाज सुनाई दी, उर्वशी का दान भाव जाग उठा। अनन्य श्रद्धा-भक्ति उमड़ उठी। मन विभोर हो गया जगदम्बे माई के मंदिर रोज ही परिक्रमा करती थी।"[१८]

उर्वशी ने विवाह के समय लोकदेवी-देवताओं को पूजते समय "सबसे पहले महामाई के मंदिर पर हाथ लगाये। फिर शंकरजी के मंदिर तक पहुंची। फिर मोदी लला की बाबड़ी, बगीचे में केले के पेड़ का पूजन और अंत में सास के थान पर जाकर औरतें रुक गयी।"[२०]

'इदन्नमम उपन्यास' में-मन्दा अपने मन में विचार करती है कि मै उन्हीं औरतों में मिल जाऊं जो गाती हुई जा रही हैं। "जो भुंजरियां सिराएंगी। जो माता के मन्दिर में शीश झुकाएंगी।"[२१]

यहाँ पर बऊ अपने कुल देवों को स्मरण करते हुए कहती है "सोनपुरा के कुलदेवता यहाँ आ जायेंगे रक्षा करने।"[२२]

---

१२. झूला नट उपन्यास- मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या - ८३)
१३. वही
१४. वही - (पृ० संख्या- ६३)
१५. वही - (पृ० संख्या- १३७)
१६. वही - (पृ० संख्या- १४२)
१७. वही - (पृ० संख्या- १४३)
१८. वही - (पृ० संख्या- १६०)
१९. वेतवा बहती रही उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या - १८)
२०. वही - (पृ० संख्या- ४८)
२१. इदन्नमम् उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या - ४५)
२२. वही - (पृ० संख्या - ६६)

मकरन्द मन्दा के समक्ष अपनी बात को सत्य साबित करने के लिए यहाँ पर देवता को आधार बनाता है **"महावीर बब्बा का कौल।"**२३ यहाँ पर बऊ मन्दा से कहती है **"हथेली पर कटी-फटी लकीरें काढ़ीं हैं बैमाता ने।"**२४ प्रातः होते ही **"कुसमा नहा धोकर शंकर जी ढारने आ गई।"**२५

लोकदेवताओं को स्मरण करते हुए बऊ ने प्रार्थना की कि **"हे मेरे पिरभू, मेरे ठाकुरजू, मेरे दोहरे बब्बा और कुल के इतर-पितर, मंदा और मकरन्द की जिन्दगी में हमेशा चारों दिशाएं ऐसी ही उजियारी रहें।"**२६ **"मन्दाकिनी अम्मा और बऊ के साथ अक्षरा देवी, रक्तदन्ता देवी आयी थी। अम्मा ने सैयद बाबा के चबूतरे पर मनौतिया मांगी थीं।"**२७

कार्तिक स्नान के समय **"मोदी लल्ला की बाबड़ी पर जुड़ती है सब सखियाँ। पूजा करती हैं। गनेस, तुलसी और गौरा-पार्वती के भजन गाती हैं।"**२८

यहाँ पर गनपत बऊ से कहता है **"जे तबिजिया हम नहीं ले जायेंगे। संभाल के धरो। तुम्हारे कुलदेवता की फोटू बनी है जा पै।"**२६

यहाँ पर उपन्यास में कुंवारी कन्याओं को भी देवी-देवता के तुल्य पूज्यनीय बतलाया गया है- गोपालपुरा की ठकुराईन मन्दा से कहती है **"तुम तो बिटियां हो कन्या। बामन और पुजारी महाराज दोनों से अधिक पूज्य, अधिक मान्य। सीता, पार्वती और सरस्वती का रुप। मन्दा अपने मन में विचार कर देवी की शक्ति और सरस्वती का वरद हस्त सी वह दृढ़ हो आई।"**३०

बऊ कहती है **"हमारे गांव में बनी पत्थर की बनीं दोहरे बाबा की मढ़िया, महामाई का**

---

२३. इदन्नमम् उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या - ८२)
२४. वही - (पृ० संख्या- ११०)
२५. वही - (पृ० संख्या- ११७)
२६. वही - (पृ० संख्या- १२१)
२७. वही - (पृ० संख्या- १२६)
२८. वही - (पृ० संख्या- १३४)
२६. वही - (पृ० संख्या- १८७)
३०. वही - (पृ० संख्या- १६८)

थान, महादेव का थान, महादेव की पिण्डी भली, जो सर्दी-गर्मी, आधी-तूफान, वर्षा-सूखा में हमारे संग-संग रहती है।"३१

'अल्मा कबूतरी उपन्यास' में मंसाराम ने जंगलिया से कहा-"अटारी में हनुमान जी की मढ़िया। सोने की प्रतिमा के रुप में पवनपुत्र विराजे हैं।"३२ "देवताओं की मढ़िया बनाने के लिए कोरा कपड़ा थोड़ा ऊपर उठाकर ताना गया।"३३ उपन्यास में यहाँ पर यह बतलाया जा रहा है कि कबूतरा जन-जाति के लोगों के भी अपने अलग लोकदेवता होते हैं- कबूतरी जमुनी "तीन साल से बीर देवता पर पान और बेर के पत्ते चढ़ाकर संतान मांग रही थी।"३४

कबूतराओं के देवताओं में - "कुनवी देवता।"३५ "द्वार देव को साथ-साथ पुजवाया गया।"३६

अतः उपन्यासों में प्राचीन परम्परानुसार बुन्देलखण्ड में लोक-देवी देवताओं के रुप में उपर्युक्त इष्टदेवों की पूजा-अर्चना आज भी की जाती है।

---

३१. इदन्नमम् उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या - ४०५)
३२. अल्मा कबूतरी उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या - १६)
३३. वही - (पृ० संख्या- २६)
३४. वही - (पृ० संख्या- ४७)
३५. वही - (पृ० संख्या- ३२६)
३६. वही - (पृ० संख्या- ३८०)

६.३- मेले -

बुन्देलखण्ड में लगने वाले मेले काफी आकर्षक व महत्वपूर्ण होते हैं। ये किसी विशेष अवसर या देव स्नान पर लगाये जाते हैं। मेलों में बच्चों के भरपूर साधन उपलब्ध रहते हैं। ग्रामीण व नगर के बच्चे मेले देखने के लिए हमेशा तत्पर रहते हैं। ग्रामीण स्त्रियाँ घर-गृहस्थी का ज्यादातर सामान मेलों से ही खरीदती हैं। मेलों में छोटी सी छोटी व बड़ी से बड़ी चीजें आसानी से मिल जाती हैं। यहाँ पर ज्यादातर मेले पर्व पर लगते हैं।

बुन्देलखण्ड अंचल के हिन्दी (सामाजिक) उपन्यासों में मेले -

(अ) श्री अम्बिका प्रसाद दिव्य जी के उपन्यासों में -

'प्रेमतपस्वी उपन्यास' में-मनसुखलाल अपनी पत्नी रानी बहू से बोला **"बगौरा चलो न।" बसंतपंचमी के दिन वहाँ मेला लगता है।"१**

यहाँ पर मेलों की सजावट का वर्णन है- **"तरह-तरह की दुकानें पंक्तियों में सज गईं। कहीं बर्तन के ढेर लगे दिखते, कहीं कपड़ों के, कहीं शाक-सब्जी के। विसातखाने की तो कितनी ही दुकानें आ गईं। कहीं खिलौने बिकते हैं कहीं फिरकियां।"२**

(ब) वर्मा जी के उपन्यासों में -

डा० वृन्दावन लाल वर्मा जी के प्रमुख सामाजिक उपन्यासों में मेलों का अभाव है।

(स) मैत्रेयी पुष्पा जी के उपन्यासों में -

'झूला नट उपन्यास' में-बालकिशन कहता है **"भूमि समाधी? किसने की भूमि समाधि? संत श्रद्धा नंद ने। जिसकी समाधि पर हर साल मेला भरता है। पंगत होती है। भण्डारा. ....।"१**

'वेतवा बहती रही' उपन्यास में-दादी कहती है कि **"मेले से पकड़ लायी थीं। शेरा को।"२ "पहाड़ के नीचे मेला भरा था।"३ "बिरगुआ के मेले से।"४**

निम्न उपन्यासकारों के सामाजिक उपन्यासों में इन्ही मेलों का वर्णन मिलता है।

---

१. प्रेमतपस्वी उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या - १८)
२. वही - (पृ० संख्या - २५)
१. झूला नट उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- १५४)
२. वेतवा बहती रही उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- ७६)
३. वही - (पृ० संख्या- १३४)
४. वही - (पृ० संख्या- १६०)

६.४- रीति-रिवाज एवं संस्कार -

रीति-रिवाज संस्कृति के वास्तविक स्वरुप को प्रदर्शित करते हैं। ये जाति तथा अंचल के सापेक्ष होते हैं। प्रत्येक क्षेत्र के अपने अलग-अलग रीति-रिवाज होते हैं। अनेकों रीतियां कुल तक सीमित होती हैं तो उन्हें कुल रीति कहते हैं। बुन्देलखण्ड की संस्कृति को यहाँ के पर्व, उत्सव, रीति-रिवाज एवं संस्कारों द्वारा आसानी से जाना जा सकता है। अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा यहां पर रीति-रिवाज एवं संस्कारों को अधिक महत्व दिया जाता है। ये एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होते हैं।

बुन्देलखण्ड अंचल के हिन्दी (सामाजिक) उपन्यासों में रीति-रिवाज एवं संस्कार-

(अ) श्री अम्बिकाप्रसाद दिव्य जी के उपन्यासों में -

(अ) रीतियां -

(क) विवाह के पूर्व -

१. कुण्डली मिलाना- **'निमियाँ उपन्यास'** में बद्री बाबू अपनी पत्नी लक्ष्मी से कहते हैं **"लड़का लड़की की जन्मकुण्डली भी अच्छी मिल गई है।"१** बुन्देलखण्ड में विवाह तय करने के पूर्व जन्मकुण्डली मिलायी जाती है। कुण्डली मिलने पर ही वर-कन्या का विवाह तय किया जाता है। यह यहाँ की रीति है।

२. फलदान करना- **'प्रेमतपस्वी उपन्यास'** में भोलाराम कहते हैं **"कुण्डली देने के पश्चात् लड़की वाले कुछ ही दिन में पक्यात के लिए आ धमकेंगे।"२**

(ख) विवाह के समय-

१. टीका, चढ़ावा, भांवर- **'प्रेमतपस्वी उपन्यास'** में बब्बू व रजउ के विवाह में **"धूमधाम के साथ टीका हो गया। चढ़ाया और भांवर की तैयारी होने लगी। भीतर भावरों का कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ, बाहर नाचरंग का।"३**

२. जयमाल- **'प्रेमतपस्वी उपन्यास'** में विवाह के समय रजउ को नारियों ने संकेत दिया

---

१. निमियाँ उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या-१७)

२. प्रेमतपस्वी उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या-२२)

३. वही - (पृ० संख्या-४६)

"उसने कापते हुए हाथों से ईसुरी के कंठ में जयमाल डाल दी। ईसुरी ने भी रजउ के कंठ में जयमाल डाल दी।"४

३. वेदी परिक्रमा-परिणय बंधन- "रजउ व ईसुरी को मंत्रोच्चार के साथ वेदी की परिक्रमा कराई गई। इस तरह ईसुरी और रजउ का परिणय-संस्कार जो प्रकृति को स्वीकार था समापन को प्राप्त हुआ।"५

'मनोवेदना उपन्यास' में रामा कुमुद से कहती है "कुछ ही दिनों में तेरी भांवर पड़ी जाती है।"६

४. मुँह दिखाई- रजउ व ईसुरी के द्वार पर पहुंचते ही नारियों का समूह "मुंह चाहने के लिए आगे बढ़ा। तरह-तरह के उपहार देते हुए नारियों ने नव-वधू का सम्मान किया। दोनों ने घर के भीतर प्रवेश किया।"७

(ग) विवाह के पश्चात् -

१. देवी-देवताओं को पूजन- 'निमियाँ उपन्यास' में रजनी अपनी बहू से बोली "देवता पूजन चलना है। तैयार हो जाओ।"८

(ब) रिवाज -

१. बालविवाह- 'प्रेमतपस्वी उपन्यास' में-मनसुखलाल रानी बहू से कहते हैं "विवाह के लिए लड़का-लड़की पैदा होने के पूर्व ही छेड़ लिए जाते हैं।"९

२. पुनर्विवाह- 'निमियाँ उपन्यास' में-श्यामा की मृत्यु के पश्चात् "रमेश श्यामलाल की लड़की के साथ वह विवाह करने को तैयार है।"१०

---

४. प्रेमतपस्वी उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या-२१७)
५. वही - (पृ० संख्या-२१८)
६. मनोवेदना उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या-२५)
७. प्रेमतपस्वी उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या-२१९)
८. निमियाँ उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या-२०७)
९. प्रेमतपस्वी उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या-१७)
१०. निमियाँ उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या-३७९)

३. अन्तर्जातीय एवं पुर्नविवाह- 'प्रेमतपस्वी उपन्यास' में राजा की आज्ञा से "रजउ व ईसुरी के पुनर्विवाह का आयोजन एक विशेष धूम-धाम के साथ किया जावे।"११

४. नेग मांगना एवं हँसी मजाक करना- 'प्रेमतपस्वी उपन्यास' में रजउ के "दूल्हे ने नेग मांगा कलाई की घड़ी। किसी को मजाक सूझा। एक पीपल का घड़ा उठाकर दूल्हे के सामने रख दिया।"१२

५. विदाई के समय रोना - 'प्रेमतपस्वी उपन्यास' में विदाई के समय "रजउ द्वार से बाहर निकली रोती चिखती हुई । इस औरत से लिपटती उस औरत से लिपटती। मनसुखलाल द्वार पर खड़े थे ।उनसे भी लिपट गई और बुरी तरह से चीखकर रोने लगी ।"१३

(स) संस्कार -

१. अंतिम संस्कार - 'निमियाँ उपन्यास' में -"चिता तैयार थी। श्यामा समीप ही एक लाल वस्त्र मे आच्छादित ठठरी पर पड़ी हुई थी।"१४ रमेश द्वारा "अन्त्येष्टि क्रिया करते ही अग्नि की भीषण ज्वाला शेष नाग की जिह्वाओं के समान चिता के चारों तरफ से फूट निकली।"१५

'मनोवेदना उपन्यास में' कुमुद की मृत्यु के पश्चात् "कुमुद की अंतिम क्रिया की तैयारी होने लगी तैयारी होते देर न लगी उसे शमशान भूमि पर ले गये।"१६

---

११. प्रेमतपस्वी उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या-२०५)
१२. वही - (पृ० संख्या-१२३)
१३. वही - (पृ० संख्या-१२६)
१४. निमियाँ उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या-३३८)
१५. वही - (पृ० संख्या-३४०)
१६. मनोवेदना उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या-६०)

(ब) वर्मा जी के उपन्यासों में -

(अ) रीतियाँ -

क. विवाह के पूर्व -

१. विवाह शोधन या मुहूर्त निकलवाना- 'उदयकिरण उपन्यास' में "एक दिन किरण और उदय का ब्याह का मुहूर्त आ गया।"१

२. सगाई पक्यात- 'अचल मेरा कोई उपन्यास' में "सुधाकर पक्यात होने के बाद ही सुधाकर अपनी फूफी के पास पहुँचा।"२

ख. विवाह के समय-

१. टीका, पाणिग्रहण एवं भांवर- 'कुण्डली चक्र उपन्यास' में पूना व अजित का विवाह होता है। "पहले टीका की रस्म पूरी की गई और रस्में भी शीघ्रता-पूर्वक निवटाकर मण्डप के नीचे अजितकुमार ललितसेन के साथ पहुँचा। पुरोहित बुला लिया गया। पाणिग्रहण और अग्नि-प्रदक्षिणा हो गई। भांवर पड़ रही थी।"३

'उदयकिरण उपन्यास' में उदयकिरण के "विवाह में यहाँ पर सात फेरों (भांवर) का वर्णन है - रात के समय भावर व फिल्म का प्रदर्शन।"४

ग. विवाह के पश्चात् रीति-

१. विदाई- 'अचल मेरा कोई उपन्यास' में "कुछ घण्टों उपरान्त निशा की विदा हो गई।"५

घ. मृत्यु पर्यन्त रीति -

१. पितरों को जलदान करना- कुण्डली चक्र उपन्यास में शिवलाल कहता है कि "अगर आज मैं मर जाऊं तो जलदान तक के लिए कोई नहीं।"६

---

१. उदय किरण उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या-१४४)
२. अचल मेरा कोई उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या-१३१)
३. कुण्डली चक्र उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या-२२०)
४. उदय किरण उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या-१४५)
५. अचल मेरा कोई उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या-१३१)
६. कुण्डली चक्र उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या-९५)

(ब) रिवाज -

१. न्यौता देना - 'उदयकिरण उपन्यास' में "विवाह के दिन सभी के घरों में निमंत्रण (न्यौता) भेजा गया। पंगतों में ग्रामीण लोग भोजन के लिए आते रहते हैं और टोलियों में खाना खिला दिया जाता है।"७

२. पुनर्विवाह - 'अचल मेरा कोई उपन्यास' में "निशा के विधवा होने के पश्चात् उसका अचल के साथ विवाह हो गया।"८

(स) संस्कार -

१. विवाह- 'अचल मेरा कोई उपन्यास' में "कुन्ती व सुधाकर का ब्याह हो गया।"९

(स) मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में -

(अ) रीतियां -

(क) विवाह के पूर्व -

१. मुहूर्त निकलवाना - 'झूला नट उपन्यास' में बालकिशन के भाई का "फाल्गुन वदी दौज का ब्याह है।"१

२. सुतकरा (पीली चिट्ठी) - 'इदन्नमम् उपन्यास' में अवधा मन्दाकिनी से कहती है "सुतकरा (पीली चिट्ठी) दिखाया तो ब्याह से आठ दिन पहले रुपइया देवे की बात कही थी।"२

३. गोद भराई - 'वेतवा बहती रही उपन्यास' में "उर्वशी की अगले मंगल ही दाऊ नाई को लेकर ओली (गोद) भरने आ गये थे।"३

४. सगाई - 'इदन्नमम् उपन्यास' में "मंदा एवं मकरन्द की सगाई है आज।"४ रिश्ता

---

७. उदय किरण उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या-१४६)
८. अचल मेरा कोई उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या-२३६)
९. वही - (पृ० संख्या-१५४)
१. झूला नट उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-१८)
२. इदन्नमम् उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-२६७)
३. वेतवा बहती रही उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-३०)
४. इदन्नमम् उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-१२०)

पक्का होने को सगाई कहते हैं।

५. उवटन करना, राई-नौन उतारना एवं पक्यात- 'इदन्नमम् उपन्यास' में पक्यात वाले दिन मन्दाकिनी की "उवटन से देह गमक रही है। गुलाबी रेशम की साड़ी पहनी है। गले में हार पहन लिया है। देवगढ़ वाली कक्को ने पांव में महावर माथे पर लाल बिंदी। बऊ ने राइ-नौन उतार दिया। मन्दाकिनी की पक्यात है।"५

६. राछरी या घुड़चड़ी - 'वेतवा बहती रही उपन्यास' में आजी के बिना "राछरी (घुड़चड़ी) के समय दादी का मन नहीं माना।"६

७. जुगिया- 'वेतवा बहती रही उपन्यास' में दच्चिन काकी ने आवाज लगायी -"मीरा बिन्नू सोउती हों कि जुगिया करवै कौ इन्तजाम करौ। मूसर किते धरौ हमें दे जाओ। चलो तुम और उखसी दूला-दूलइया बन जाओ।"७

८. कंकन बांधना- 'वेतवा बहती रही उपन्यास' में "कंगना बधौ है हाथ में।"८

९. मण्डप गाड़ना - 'वेतवा बहती रही उपन्यास' में "भाभी ने मण्डप गड़ाई कौ नेग भेजो है।"९

(ख) विवाह के समय-

१. पूजन- 'वेतवा बहती रही उपन्यास' में वेतवा नदी के पूजन के लिए उर्वशी को लेकर नाइन छत पर चली गई पीछे-पीछे औरतों की भीड़, सूप में चावल, हल्दी, अक्षत, धूप। पटरे पर बैठकर नाइन ने चावल अक्षत, धूप, हल्दी सब उसके हाथ में धर दी।"अर्पण कर दो बिन्नू, वेतवा को और विनती करो लो कि ओ वेतवा मइया मेरी दोष, गलती क्षमा करियो। भइया-भतीजिन की रच्छा करियो।"१०

२. उबटन- 'वेतवा बहती रही उपन्यास' में नाइन कहती है- "ओ राजगिरी वारी बहू,

---

५. इदन्नमम् उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-१२०)
६. वेतवा बहती रही उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-८८)
७. वही - (पृ० संख्या-९१)
८. वही - (पृ० संख्या-४८)
९. वही - (पृ० संख्या-१३०)
१०. वही - (पृ० संख्या-४२)

अरे व उवटन कौ बेला कितै धरौ? मोड़ी को उपटनो करने है।"[११]

३. टीका- 'वेतवा बहती रही उपन्यास' में दादी उर्वशी से कहती है "टीका की थाली कहां धरी है- वे पंडितजी पूजा कौ सामान मंगा रहे।"[१२]

४. सिर पर कलश रखना- 'वेतवा बहती रही उपन्यास' में दादी कहती है कि "टीका के बखत बुआ के सिर पर घड़ा धरे जात।"[१३]

५. बौड़ारें (चीकटें) निकालना- 'वेतवा बहती रही उपन्यास' में घर की स्त्रियों के पीहर से साड़ी आती है, उन्हें बौड़ार या चीकट कहते हैं। आजी उर्वशी से कहती हैं "उर्वशी बेटा, तुम वे बौड़ारें (पाहुनों द्वारा लाई गई साड़ी) कितै धरत जा रही। सम्भार के धरियो एक बक्सा में।"[१४]

'अल्मा कबूतरी उपन्यास में' मंसाराम की "मंझली जिज्जी की बेटी का ब्याह था। ब्यौहार और चीकटें लेकर जाना था।"[१५]

६. चढ़ावा- 'वेतवा बहती रही उपन्यास' में मीरा के विवाह में टीका के बाद "चढ़ावा हो गया।"[१६]

७. पैर पखराई- 'वेतवा बहती रही उपन्यास' में मीरा के "पांव पखारने उर्वशी पाहुनियों के बीच लम्बा घूँघट डालकर आई थी। दोनों के पांव छूकर कुछ रुपये और चांदी की पायलें थाली में डालीं तो वह देखती रह गई।"[१७]

८. कन्यादान- 'वेतवा बहती रही उपन्यास' में "नाना ने उसका कन्यादान भी किया था।"[१८]

---

११. वेतवा बहती रही उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-१३०)

१२. वही

१३. वही

१४. वही

१५. अल्मा कबूतरी उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-१५७)

१६. वेतवा बहती रही उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-१३२)

१७. वही

१८. वही - (पृ० संख्या-४६)

९. कलेऊ - 'वेतवा बहती रही उपन्यास' में "राघवेन्द्र उर्वशी के पावों पर झुके। चरण-स्पर्श करके घर के बाहर निकल गये।"१९

१०. जूता चुराई- 'वेतवा बहती रही उपन्यास' में सर्वदमन कह रहे हैं- "नगीने की जड़ी अंगूठी ले लो मीरा, यह तो जूता चुराई है।"२०

११. गांठ बांधना- 'वेतवा बहती रही उपन्यास' में "नाना गाठ में रुपइया बांधते जोर से रो उठे थे।"२१

१२. विदायी - 'वेतवा बहती रही उपन्यास' उर्वशी की विदाई के समय में "बड़ी-बूड़ियां चिल्ला रही थीं। बैठके न रोओ बेटा ब्याह में बैठ के नहीं रोओ जात उठ के ठाड़ी हो जाओ। मिल भेंट लो।"२२

(ग) विवाह के पश्चात् -

१. शर्बत पिलाना- 'वेतवा बहती रही उपन्यास' में जब उर्वशी दुल्हन के रुप में ससुराल पहुँचती है तो उसके आगे "एक जोड़ी चूड़ी भरे हाथ उसे शरबत पिलाने आगे बड़े। उसने गिलास थाम लिया। घूंघट के अंदर गिलास से शरबत पी लिया। एक रुपये का सिक्का गिलास में डाल दिया।"२३

२. देवी-देवताओं का पूजन- 'वेतवा बहती रही उपन्यास' में विवाह के बाद उर्वशी व सर्वदमन के "अगले दिन हाथे लगने (देवता पूजने) थे।"२४

३. निछावर करना- 'वेतवा बहती रही' सर्वदमन के जीजा "पचास का नोट उर्वशी के ऊपर निछावर करके नाज बहू के हाथ में थमा गये।"२५

---

१९. वेतवा बहती रही उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-१३३)
२०. वही - (पृ० संख्या-४५)
२१. वही - (पृ० संख्या-४६)
२२. वही - (पृ० संख्या-४१)
२३. वही - (पृ० संख्या-४७)
२४. वही
२५. वही - (पृ० संख्या-५०)

४. मुँह दिखाई – 'वेतवा बहती रही उपन्यास' में "रात को बहू मुँह दिखायी के लिए बिठाई गई थी।"२६

५. सहेलियों को उपहार देना – 'वेतवा बहती रही उपन्यास' में जब उर्वशी पीहर पहुँचती है, तो वह अपनी सहेली मीरा से कहती है "लो तुम्हारे जीजा पे तुम्हारे लाने बटुआ-रुमाल भेजे हैं।"२७

६. गौना (चलाय) – 'वेतवा बहती रही उपन्यास' में "गौने के दिन नजदीक सरक रहे थे। मेंहदी रचने को थीं। महावर आलता की शीशिया नाईन सहेज कर रख रही थी।"२८

७. रोटी-छुआई एवं पैर छूना एवं नामकरण- 'वेतवा बहती रही उपन्यास' में नव-वधू जब दादी के पैरों पर झुकी तो दादी ने कहा "अबे नहीं। जब रोटी छुओगी। तब पाँव छुइयो और तबही तुम्हारा नाम धरो जेहै। ससुराल को अलग नाम।"२९

'इदन्नमम् उपन्यास में' नव-वधू की "रोटी-छुआई के दिन औरतों ने तो अनेक नाम निकाले थे।"३० "औरतों ने नाम का जिम्मा मंदाकिनी को दे दिया और खिचड़ी खाकर पांच-पांच रुपये से पांव छू लिए ।"३१ "बहू को नर्मदा नाम मंदा ने ही दिया।"३२

८. गोद बिठालना – 'झूला नट उपन्यास' में बालकिशन से स्त्रियाँ कहती है "देवर की गोद विठाई होगी तुरंत ही।"३३

(घ) बैधव्य रीति –

१. सुहाग उतारना – 'वेतवा बहती रही उपन्यास' में उर्वशी "पति के निधन पर कैसे रोय। चूड़ी तोड़ने को कहा तो चुपचाप दोनों हाथ आगे कर दिये। कांच की चूड़ियां

---

२६. वेतवा बहती रही उपन्यास – मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-९३)
२७. वही – (पृ० संख्या-५२)
२८. वही – (पृ० संख्या-१३७)
२९. वही – (पृ० संख्या-९४)
३०. इदन्नमम् उपन्यास – मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-१४५)
३१. वही – (पृ० संख्या-१४६)
३२. वही – (पृ० संख्या-१४५)
३३. वही – (पृ० संख्या-२१)

छिन्न-छिन्न टूटती रही, बिछिया उतारते ही दहाड़ मार कर रो उठी।"३४

'अल्मा कबूतरी उपन्यास' में श्री रामशास्त्री के निधन पर "अल्मा पथरीले फर्श पर हाथ पटक-पटक कर चूड़ियां तोड़ने लगी। संतोले की बहू रोना भूलकर पंडित की ओर मुँह करके चिल्लाई मंतर पढ़कर सुहाग उतरवाओ पंडित जी। पंडित उठकर अल्मा के पास आया। मंत्र पढ़ने लगा। चूड़ियां संतोले की बहू उतारने लगी। अल्मा के पावों के बिछिया उतारे जा रहे हैं। दोनों चीजें लाश के ऊपर रख दी। मांग का सिंदूर पोछा जा रहा है।"३५

(ब) रिवाज -

१. अर्थी को कन्धा देना - 'अल्मा कबूतरी उपन्यास' में श्री रामशास्त्री के शव को "रामनाम सत्य है की ध्वनि के साथ जवान अर्थी कंधों पर साधे एक-एक कदम आगे बढ़ रहे हैं।"३६

२. मृत्यु वाले दिन चूल्हा न जलना - 'वेतवा बहती रही उपन्यास' में सर्वदमन की मृत्यु वाले दिन "पड़ोस में से रोटियां बनकर आती रहतीं। खाने का मन ही किसका रहता?"३७

३. बाल-विवाह - 'वेतवा बहती रही उपन्यास' में नववधु की उम्र कम होने पर स्त्रियाँ एक-दूसरे से कहती हैं "जे विदा लायक हती, सो बाप ने विदा कर दयी। अबे न भेजते। चलाय (गौने) में भेज देते। अबे जाकी उमर ही का थी।"३८

४. पुनर्विवाह -

१. बिछिया पहनना - 'वेतवा बहती रही' उपन्यास में मीरा से गाँव की स्त्रियाँ कहती हैं कि यह गाँव उर्वशी की "ससुराल नहीं है, और का है? गाँव भर में चर्चा हो रही, उर्वशी तुम्हारे पिताजी के बिछिया पहरेगी।"३९ विधवा होने के पश्चात् किसी ओर के नाम के बिछिया पहनने का अर्थ पुनर्विवाह करना।

---

३४. वेतवा बहती रही उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-१५७)
३५. अल्मा कबूतरी उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-३८६)
३६. वही - (पृ० संख्या-३८७)
३७. वेतवा बहती रही उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-६५)
३८. वही - (पृ० संख्या-६३)
३९. वही - (पृ० संख्या-६५)

२. बछिया करना - **'झूला नट उपन्यास'** में बालकिशन के साथ विवाहिता शीलो का (पति द्वारा छोड़े जाने पर) अम्मा पुर्नविवाह करना चाहती है। वे बालकिशन से कहती है **"बछिया होगी। बछिया पुण्य होगी। पंडित मंतर पढ़ देगा।"४०**

'इदन्नमम् उपन्यास' में कुसमा की सास उसे पुर्नविवाह के लिए ताना देकर कहती है -**"ऐसी सतवादिन हती तो अग्नि साच्छी करती। बछिया कराती, फिर दिखाती अपनी करिया सिलिक गांव भर को ।"४१**

५. पच देना - 'वेतवा बहती रही उपन्यास' में देवेश के जन्म पर **"राजगिरी से अजीत और सूरज मामा आये थे। नाना और उर्वशी के दादा ने यथा-शक्ति 'पच' भेजा था। देवेश के लिए सोने के कड़े, जंजीर, कपड़े। उर्वशी को साड़ी कान के झुमके। सबके लिए रुपये पैसे। आटा, चावल, घी, चीनी, दाल, सूप, चलनी.......।"४२**

'इदन्नमम् उपन्यास' में कुसमा मन्दाकिनी से कहती है **"हमारी भौजाई नहीं मानी। बोली, लला भए है, पछ (छोछक) में कुछ तो आतें।"४३**

<u>(स) संस्कार -</u>

१. नामकरण - 'वेतवा बहती रही उपन्यास' में उर्वशी के पुत्र होने पर **"नामकरण" संस्कार दाऊ ने ऐसे ही सादा सा किया था।"४४**

'अल्मा कबूतरी उपन्यास' में **"मलिया जैसे बूड़े ही नामकरण कर देते हैं। नाम धरने का हक किसी को भी हो सकता है। हमने शुरु से ही सोच लिया था कदमबाई के बेटी होगी तो नाम धरेंगे पधिनी और बेटा होगा तो नाम - राणाप्रताप ।"४५**

२. छठी - 'अल्मा कबूतरी उपन्यास' में **"कदमबाई के बच्चे की छठी थी।"४६**

---

४०. झूला नट उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-७४)
४१. इदन्नमम् उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-१६६)
४२. वेतवा बहती रही उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-५६)
४३. इदन्नमम् उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-१६४)
४४. वेतवा बहती रही उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-५६)
४५. अल्मा कबूतरी उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-३६)
४६. वही - (पृ० संख्या-३३)

३. मुण्डन- 'इदन्नमम उपन्यास' में कुसमा मन्दाकिनी को "कुंवर के कपड़े बदलते हुए बताने लगी, इसका मुण्डन करवाना था। सो बिन्नू हम चाहते हैं कि एरच घाट पर तुम और बऊ उस बखत हमारे साथ रहो। आसीरवाद दो।"४७

४. अंतिम संस्कार - 'वेतवा बहती रही' उपन्यास में उर्वशी की मृत्यु होने पर "दाह क्रिया की तैयारी हो गयी। आगे-आगे देवेश के साथ दूसरा कंधा उदय का था। पीछे लुटे-लुटे से दाऊ और बैरागी। और महाप्रयाण की ओर चली जा रही थी- सर्वदमन की विधवा...... ......उर्वशी। वेतवा के निर्मल जल में धीरे-धीरे उर्वशी की कंचन काया समाने लगी।"४८

'अल्मा कबूतरी उपन्यास' में "श्रीराम शास्त्री का अंतिम संस्कार ओरछा नगर के कंचन घाट पर सम्पन्न हुआ। मुखाग्नि उनकी पत्नी अल्मा ने दी।"४६

बुन्देलखण्ड में रीति-रिवाज एवं संस्कार प्राचीन परम्परानुसार आज भी प्रचलित हैं।

---

४७. इदन्नमम् उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-२८४)

४८. वेतवा बहती रही उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-१५०)

४६. अल्मा कबूतरी उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-३६०)

६.५- लोकगीत, नृत्य एवं वाद्ययन्त्र -

गायन, वादन एवं नृत्य तीनों के सहभाव को संगीत कहते हैं। मनुष्य अपने हृदय की कोमल भावनायें गीतों द्वारा ही व्यक्त करता है। गीत के साथ नृत्य एवं नृत्य के साथ वाद्ययन्त्रों का सांमजस्य मधुर संगीत को जन्म देता है। गायन, वादन, नृत्य इन तीनों में से किसी एक के अभाव से संगीत अधूरा है।

बुन्देलखण्ड अंचल के हिन्दी (सामाजिक) उपन्यासों में - लोकगीत, नृत्य एवं वाद्ययन्त्र-

(अ) श्री अम्बिका प्रसाद दिव्य जी के उपन्यासों में -

क. लोकगीत - बुन्देली लोकगीत लोकसंस्कृति का आईना है। लोकगीतों की धुनें एक जैसी होती हैं। ग्रामीण स्त्रियाँ सबसे अधिक लोक गीत गाती हैं। इनके पास ये कंठस्थ रुप में एकत्रित होते हैं। ये गीत पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तान्तरित होते रहते हैं।

'प्रेमतपस्वी उपन्यास' में इस उपन्यास में लोकगीत की जगह लोककवि ईसुरी की फागों का वर्णन है- ईसुरी रजउ के विवाह के समय निम्न फाग गाते हैं -

१. फागें - "हम खा रजउ की बिछुरन व्यापी-कड़त नहीं जी पापी
भरभावर जे प्रान फिरत है - थर-थर दिहिया काँपी
को जाने लये रहत प्राण कौ, सिर पै मौत अलापी
उनके एंगर इये ईसुरी- बे मानस पखापी ।"[1] (प्रेमतपस्वी)

"चलती बेर नजर भर हेरो-मन भर जावे मेरो,
मिला लेव आंखन से आंखे- घूँघट तनक उगेरौ,
टप-टप असुआ गिरत नैन से- चितै चितै मुख तेरो,
'ईसुर' कात बिदा की बेरा- होत बिधाता डेरो ।"[2] (प्रेमतपस्वी)

दिव्य जी के उपन्यासों में से केवल प्रेमतपस्वी में लोकगीत के रुप में लोककवि ईसुरी की फागें मिलती हैं। ये फागें बुन्देलखण्ड में काफी चर्चित हैं।

---

१. प्रेमतपस्वी उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या-४७)
२. वही - (पृ० संख्या-१३४)

ख. लोकनृत्य -

१. विवाह के समय- 'प्रेमतपस्वी उपन्यास' में "भीतर भावरों का कार्यक्रम हुआ, बाहर नाचरंग का।"३

ग. लोक वाद्ययन्त्र- दिव्य जी के उपन्यासों में वाद्य यन्त्रों का वर्णन निम्न है।

१. नगड़िया - 'प्रेमतपस्वी उपन्यास' में ईसुरी दली से कहता है "हां फागें गा लेता हूं। नगड़िया भी बजा लेता हूं।"४

'निमियाँ उपन्यास' में "दरवाजे पर नगड़िया बजने की आवाज सुनाई देती है।"५

२. रमतूला - 'निमियाँ उपन्यास' में "नगर में रमतूला बजता है और बन्द हो जाता है।"६

३. ढिडोंरा- 'निमियाँ उपन्यास' में "शहर की सजावट शुरु हुई ढिडोरा पिटवा दिया गया।"७

(ब) वर्मा जी के उपन्यासों में -

क. लोकगीत -

१. कृषि से संबंधित - "सूरज चढ़ आओ सीस पे, अगिन दोपरी होय ।

काहे बैठे सेज पे जू? काम करे कुछ होय। खेत पे जाओ गोड़ो निहारो, सींच घरै आओ,

खलियान को जाओ, दांय चलाओ, अनाज घर ल्याओ।"१ (उदयकिरण उपन्यास)

२. गृहकार्य से संबंधित -

"कस देती ढुमेना सास जी। कित डरवाये तुमने चन्दन पलंगवा।

मेरी भोली सास जी ? हंस-हंस ननद संग कुवल पै जाऊ।

ल्याऊँ भर गंगाजल भोजन पकाऊं, हँस-हँस देवर संग हार खेत जाऊँ।

---

३. प्रेमतपस्वी उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या-४६)
४. वही - (पृ० संख्या-३४)
५. निमियाँ उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या-१०)
६. वही - (पृ० संख्या-१५)
७. वही - (पृ० संख्या-३५१)
१. उदयकिरण उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या-८८)

कटाऊ करवी मिल, गठ्ठा घर लाऊं, सब ही तो काम करुँ,

हँस-हँस के काम करुँ ,बड़ी मेहनत से सास जी? "२ (उदयकिरण)

३. श्रृंगार गीत -"फुल गेंदवा न मारो राजा,लगत करेजवा में चोट ।"३ (अचल मेरा कोई)

ख. लोकनृत्य - 'अचल मेरा कोई उपन्यास' में

१. शादी ब्याह में होने वाले नृत्य - निशा पंचम से कहती है - "तुम्हारे गांव में भी स्त्रियाँ नाचती होंगी? लोक नृत्य होते हैं। ब्याह शादी के समय नाच होते हैं।"४

२. होली के अवसर पर होने वाले नृत्य - तिजुआ कहता है - "स्त्रियाँ केवल अपने घरों के भीतर नाचती हैं और केवल स्त्रियों के सामने पुरुषों के सामने पुतरियां बुलाई जाती हैं नाचने के लिए सो भी होली के मौके पर और पैसे वाले ही उन्हें बुलाते हैं।"५

३. पर्वों पर होने वाले नृत्य- "लोक नृत्य के नाम से जो नाच-कूद होता है दशहरा, दिवाली, होली इत्यादि त्यौहारों पर अपना स्वच्छन्द रुप पाता है।"६

४. खेती संबंधी नृत्य- "खेती-किसानी संबंधी नाच हैं"७

५. रासलीला में होने वाले नृत्य- "रासलीला की आड़ में नाच होते हैं, जिनमें गर्दन और हाथ ज्यादा हिलाये जाते हैं।"८

६. विद्यालयों में सिखाया जाने वाला नृत्य-

कत्थक नृत्य- अचल कुन्ती से कहता है "कत्थक नृत्य जो तुमने सीखा है - नृत्य, नाटक और गायन का समन्वय है।"९

७. नौटंकी में होने वाले नृत्य- "कल्याण को नाच-गान का शौक था। मंच पर नौटंकी का एक छोटा सा दृश्य हुआ। गांव वाले प्रसन्न हुये।"१०

---

२. उदयकिरण उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या-७५)
३. अचल मेरा कोई उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या-४७)
४. वही - (पृ० संख्या-११५)
५. वही
६. वही - (पृ० संख्या-८३)
७. वही
८. वही
९. वही
१०. उदयकिरण उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या-१०८)

८. मंच पर मनोरंजन के लिए होने वाले नृत्य- "एक लोकनृत्य और कुछ मनोरंजन का सामान रखा गया।"११

ग. लोकवाद्य यन्त्र- वर्मा जी के उपन्यासों में वाद्य यन्त्र का वर्णन निम्न है -

'प्रत्यागत उपन्यास' में - १. शंख, झालर- "मंदिर के भीतर आरती हो रही है शंख झालर बज रहे हैं।"१२

कुण्डली चक्र उपन्यास में - २. हरमोनियम - "अजित बोला हरमोनियम से कोई खास नफरत नहीं है।"१३ ३. रमतूला- "टीके का रमतूला बजने लगा।"१४

'उदयकिरण उपन्यास' में - ४. ढोलक - किरण ने कहा- "चाची ढोलक निकालो।"१५

'अचल मेरा कोई उपन्यास' में - ५. बेला- "निशा ने कहा - कोई बेला ले लेगा।"

६. इसराज - "कोई इसराज" ७. तबला- "अचल कुमार बहुत अच्छा बजाते हैं । तबला मास्टर से भी अच्छा।"१६ ८. ढोलकी - कुन्ती सुधाकर से कहती है- "ढोलकी ! ढोलकी तो मैं नहीं बजाती।"१७

(ब) मैत्रेयी पुष्पा जी के उपन्यासों में -

क. लोकगीत -

१. वियोग श्रृंगार से संबंधित लोकगीत - "दिन है बेकार तुम्हारे बिना
राजा देखो हमारी अखिया, हुई रों रो के लाल तुम्हारे बिना
राजा देखो हमारा कलेजा, हुआ जल-जल के राख तुम्हारे बिना
राजा देखो हमारी जवानी, कोई थामे न हाथ तुम्हारे बिना।"१ (झूला नट उपन्यास में)

---

११. उदयकिरण उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या-१२७)
१२. प्रत्यागत उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या-४६)
१३. कुण्डली चक्र उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या-२०)
१४. वही - (पृ० संख्या-८७)
१५. उदयकिरण उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या-६०)
१६. अचल मेरा कोई उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या-२०)
१७. वही - (पृ० संख्या-२५५)
१. झूला नट उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या -४४)

२. श्रृंगार से संबंधित फाग – "बूंदा मन को हरन तुमारौ, जी लये हमारौ बनौ रहत घूँघँट के पीछे, करे रहत उजियारौ।"२ (झूला नट उपन्यास में)

३. देवी-देवताओं से संबंधित गीत –

(क) कीर्तन- १. "तुलसा महारानी नमो-नमो ।"३ (झूला नट उपन्यास में)

२. ओरछा के राजा राम, दरसन देना जी,

दरसन देना, पांव परसन देना जी।"४ (झूला नट उपन्यास में)

३. मैं सुमिरों सिरी गणराज ।

मेरे कीरतन में विघ्न परै नाऽऽ ।"५ (झूला नट उपन्यास में)

(ख) अछरी – कैसे कै दरसन पाऊ री, माई तेरी सकरी दुअरिया

माई के दुआरें एक अन्धा पुकारें, नैना दैदऊ जाऊरी।

माई तेरी सकरी.....।"६ (वेतवा बहती रही उपन्यास)

(ग) कार्तिक गीत – 'इदन्नमम् उपन्यास में'

"कन्हैया मांगता दान दही कौ, नहात में चीर हरें सबही कौ

गोपिका क्यों इतरानी रे.............। कैसे से जाय कहै बृज बाबा

करो तुम क्यों मन मानी रे.............।"७ (इदन्नमम्)

(घ) भजन – "सखि आज दोपहरी में रामचन्द्र सीताजी के भक्त बिराज रहें।

मुख में पान, नैन में सुरमा केसर-तिलक लगाय रहे।

माथे मुकुट, अंग पीताम्बर, हाथ में धनुष उठाये रहे।

सखि आज...........।"८ (इदन्नमम्)

---

२. झूला नट उपन्यास – मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-८५)

३. वही – (पृ० संख्या-१४८)

४. वही – (पृ० संख्या-१६०)

५. इदन्नमम् उपन्यास – मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या -३६)

६. वेतवा बहती रही उपन्यास – मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या -४८)

७. इदन्नमम् उपन्यास – मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या -१३४)

८. वही – (पृ० संख्या -१८६)

४. विवाह से संबंधित गीत -

(क) गारी - "सिया वारी बमरी रघुनन्दन बनरे, को को बरातै जाय मोरे लाल।"९ (इदन्नमम्)

(ख) बन्नी- छोटी सी वनरी के लम्बे-लम्बे केस, सो खेलें बाबुल दरबार भले जू।

कै तुम बेटी मेरी सांचे में ढारी, कै गठी सकल सुनार भलें जू ।"१० (इदन्नमम्)

(ग) दादरा - "कोइ लैलो मटर की दो फलियां-फलियां,सोने की थाली में भोजन परोसे

जिन्हें जेवें श्याम की सखियाँ,जिनके लम्बे-लम्बे केस, रसीली अखियां ।"११

(वेतवा बहती रही उपन्यास)

(घ) विदाई गीत - "औरन,कौरन गुड़िया छोड़ी। रोउत छोड़ी सहेली"१२ (वेतवा बहती रही)

५. मनोरंजन से संबंधित बच्चों के गीत-

(क) सुआटा गीत - "तिन के फूल तिनही के दाने, चंदा उगे बड़े भुनसारे।

सारे वारे फूल सिराय, काठ-कठीले काठे से।

पांचों भइया पंडा से, छटई बहन ईगुर सी।"१३ (इदन्नमम्)

"कि नारे जिजी के घर पर फरीं तुरइयां, कौ टेरे को खाय।

कि नारे जिजी के घर पै मेले लिबउआ, लाये महोबिया पान।

कि नारे रची है, जिभिया रची है, राचे बत्तीसी दांत ।"१४ (इदन्नमम्)

(ख) लोकनृत्य -

१. विवाह में हिजड़ों का नृत्य - 'वेतवा बहती रही उपन्यास' में "हिजड़ों ने नृत्य आरम्भ कर दिया। मेरे गले हार राज, क्यों लाये सौतनिया रे।"१५

२. पर्व पर नृत्य- 'इदन्नमम उपन्यास' में सुर और ताल झूम रहे हैं लोग गा रहे हैं गवइया

---

९. इदन्नमम् उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-१२०)
१०. वही - (पृ० संख्या-१२२)
११. वेतवा बहती रही उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या -४६)
१२. वही - (पृ० संख्या-४२)
१३. वही - (पृ० संख्या-१३१)
१४. वही - (पृ० संख्या-१३२)
१५. वेतवा बहती रही उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या -५०)

और नाच रहे हैं नचइया। "दिबरिया आ गए।"१६

ग. वाद्य यन्त्र - पुष्पाजी के उपन्यासों में वाद्य यन्त्रों का वर्णन- 'झूला नट उपन्यास' में

१. झींका - बालकिशन ने "झींका बजाकर छंद उठाया।"१७

२. झाँझ, मजीरा और ढोल- "देह में माता का सत्त है। झाँझ मजीरा और ढोल बजाने वाले हार गये।"१८

'वेतवा बहती रही उपन्यास' में

१. रमतूला - "बरार कक्का रमतूला लेकर भोर से ही बैठे थे।"१६

२. ढोल - "बरार बऊ। गले में ढोल डाले, आगे-आगे चलती हुई।"२०

'इदन्नमम् उपन्यास' में -

१. हरमोनियम- "ढड़कोले चमार है। जो हरमोनियम पर आड़ा तिरछा होकर झूम रहा है।"२१

२. ढोलक - "अमरसिंह दाऊजी कि अच्छी ढोलक बजा रहे हैं। बऊ ।"२२

३. मृदंग, रमतूला, झांझ - "मृदंग बजा, रमतूला फूफा, झाझ बजी । फागें गाईं।"२३

४. शंख- "एकादशी पर महाराज ने शंख बजाया।"२४

५. झींका, मजीरा, शहनाई, नगड़िया- 'अल्मा कबूतरी उपन्यास' में "झींका, मजीरा और ढोलक की ताल में मौत का आतंक तोड़ दिया। शहनाई और नफीरी बजेगी। झींका और नगड़िया वाले आदमी बुलाये जायेंगे।"२५

---

१६. इदन्नमम् उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या -३५८)
१७. झूलानट उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या -७)
१८. वही - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या -१२)
१६. वेतवा बहती रही उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या -८६)
२०. वही - (पृ० संख्या-४८)
२१. इदन्नमम् उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या -३६)
२२. वही
२३. वही - (पृ० संख्या-१४६)
२४. वही - (पृ० संख्या-२०६)
२५. अल्मा कबूतरी उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या -२८८)

६.६- लोक-गाथाएं एवं कथाएं -

बुन्देलखण्ड अंचल के हिन्दी (सामाजिक) उपन्यासों में लोकगाथाएँ एवं कथाएँ -

(क) लोकगाथाएं - लोकगाथाओं का परम्परागत रुप गेय था। वर्तमान में लयबद्ध गेय गाथाओं का अभाव है। आज ये गद्य शैली में सामान्य रुप से लोककथाओं में वर्णित हैं।

(ख) लोककथायें -

(अ) श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' के उपन्यासों में -

'दिव्य' के सामाजिक उपन्यासों में लोककथाओं का अभाव है। परन्तु 'वर्मा जी' एवं 'मैत्रेयी पुष्पा जी' ने अपने उपन्यासों में बुन्देली लोककथाओं का उल्लेख किया है।

(ब) वर्मा जी के उपन्यासों में -

'उदयकिरण उपन्यास' में लोक-कथा - "हनुमान जी और शनीचर के बीच में वादविवाद हुआ। शनीचर ने कहा - मैं जिस पर सवार हो जाता हूँ उसे छकाता हूँ और मिटा तक देता हूँ। तुम मेरे सामने कुछ नहीं। मुझे कुछ चढ़ाओ ।'

हनुमान जी बोले - 'भाई शनीचर, मैं तो रामजी का भक्त और सेवक हूँ। जिसके साथ भगवान हों उसका कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता। तुम्हें देने के लिए मेरे पास कुछ नहीं है।'

हनुमान जी जरा सा इधर-उधर चलकर राम भजन करते हुए वहीं सो गये। शनीचर ने मौका पाकर उनके सिर पर अपनी सवारी गाँठी। हनुमानजी जाग पड़े। सिर में पीड़ा थी। अंग-अंग दुख रहा था। कहने लगे 'क्या कारण है? समझ में आ गया कि शनीचर ने दुष्टता की है। उसी समय उन्होंने काठ के खिलौने की एक बड़ी शिला उठाकर अपने सिर पर रख ली। शनीचर पीछे खड़ा था। चिल्लाया- क्षमा करो, हनुमान जी। आगे कभी तुम्हें नहीं सताऊँगा। तुम्हारे पास तक से नहीं भटकूँगा ।

हनुमान जी ने उसे चेताया- 'खबरदार, जो कभी भगवान के भक्त और मेहनत करने वालों के पास भटके। हनुमान जी ने छोड़ दिया। वे चले गये।"[१]

(स) मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में -

१. लोककथा - 'झूलानट उपन्यास में' "बालकिशन ने हौंसला जुटाया। अपने नर रुप को

---

१. उदयकिरण उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या-११४)

लरकारा। हरदौल की याद आई। ओरछा धाम जाने की लालसा बारह साल की उम्र से की है बालकिशन ने। ओरछा महाराज के छोटे भाई हरदौल उसके मनबसिया रहे हैं। प्रेम के पुजारी। सच्ची लीला करने वाले। महाराज की पटरानी मतलब कि अपनी भाभी से प्रीति हो गयी थी उन्हें। निश्छल निष्कलंक लगाव। कलजुग की घड़ी, लगाव माने मैली आंख से देखना। स्त्री-पुरुष में प्रेम का मतलब एक ही निकालता है संसार। हरदौल कहाँ जानते थे यह बात, भोले भंडारी।

हरदौल और रानी के चर्चे हर जुबान पर, नगर में शोर मच गया। राज में हलचल हुई। रामराजा को मंदिर में पधारने वाली रानी ने लक्ष्मण को कीचड़ में खींच लिया। थू है धिक्कार। रानी माँ जार-जार रोती । राजा न्यायकारी होता है, प्रजा के कहे को गलत कैसे माने? रामचन्द्र जी ने खुद सीता को वनवास दे दिया था। महाराज ने रानी को वेतवा की सौंगध देकर कोडुआ (घेरा) काढ़कर खड़ा कर लिया और बज्जुर की छाती करके पूछा, "महारानी हरदौर से नाजायज रिश्ता नहीं है। अपने हाथों जहर पिला सकती हो?" रानी ने ऐसे देखा, जैसे महाराज का मगज चला गया हो। क्या जबाब दे इस बात का?

राजा की बात कुत्ता की लात नहीं होती, पत्थर की लकीर मानी जाती है। एकबार से दूसरी बार बोलता भी नहीं है राजा। हुकुम माने, जो कुछ राजा ने कह दिया। सोच विचार उसका काम नहीं, सोच-विचार प्रजा का भी काम नहीं। हुकुम की तालीम की जाती है, बस।

रानी रोने लगी। उनकी आँखों से मोती नहीं, पानी की धारें बहीं। राजा का शक पक्का होता गया। रोना प्रेम का लक्षण है। प्रेम में आदमी कमजोर हो जाता है। 'जहर' यह शब्द महल में, कंगूरों में, बुजियों में, किले में, तोपखाने में, रनिवास में गूँज रहा था.........जहर.... जहर.... जहर....। हरदौल भाभी के पास आये। उनकी उदासी का कारण पूछा। बात पता लगी, तो हंस दिए हरदौल, "बस इतनी सी बात। लाओ, जहर भरा कटोरा.........अभी इसी समय.........।"

बालकिशन के दिल में तोप दागी किसी ने.........हरदौल भाभी को निष्पाप साबित करने के लिए कुर्बान हो गए। छोड़ दिया चोला।"[१]

इदन्नमम् उपन्यास में - "एक चिड़िया थी, जिसे कहीं से चने का दाना मिल गया। वह ठूँठ पर बैठ गई। चोंच से दाना छूटकर ठूँठ में अटक गया। चिड़िया तुरन्त उड़ी और बढ़ई के पास जा

---

१. झूलानट उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-८३-८४)

पहुँची, बोली, 'ठूँठ काट दो।' बढ़ई ने मना कर दिया तो वह राजा के पास गई और बोली कि हे राजा, बढ़ई को सजा दो। राजा ने बढ़ई को सजा नहीं दी। वह चूहे के पास गई कि वह राजा के कपड़े काट दे। चूहा भी राजी नहीं हुआ। तो वह बिल्ली के पास गई कि वह चूहे को खा ले। चिड़िया की औकात देखकर बिल्ली भी राजी नहीं हुई। तब वह कुत्ते के पास पहुँची और बोली कि वह बिल्ली को काटे। कुत्ता भी क्यों राजी होता? फिर वह लठिया के पास पहुँच गई कि वह कुत्ते को मारे, मगर लठिया ने भी उसका कहा नहीं माना। बोली 'नन्हीं सी चिड़िया, तेरे कहने से क्या मैं कुत्ते को मारने जाऊँगी। वह पेड़ के पास गई कि पेड़, तुम लकड़ी मत देना, क्योंकि तुम्हारी लकड़ी से बनी लाठी ने अपना धरम नहीं निभाया। पेड़ बोला, 'जा चिड़िया! तेरे कहने से क्या मैं लाठी बनाना बन्द कर दूँगा तो मेरा महत्व क्या रहेगा? बड़ी आशा लेकर वह हाथी के पास गई कि वह पेड़ उखाड़ दे, क्योंकि पेड़ भी अपनी गरिमा के अनुरुप काम नहीं कर रहा। हाथी बोला, 'तू जरा सी चिड़िया, विशाल पेड़ को सीख दे रही है। अन्त में वह चींटी के पास गई कि बहन, तू मेरी मदद कर, हाथी को मार। हाथी ने धरम नहीं निभाया। चींटी सहर्ष चली और हाथी की सूँड़ में घुस गई। हाथी मर गया। चना ठूठ में ही रह गया।"२

'अल्मा कबूतरी उपन्यास में ' - "जमाने पहले की बात है तब धरती पर लोग नंगे रहते थे। शंकर महादेव उनके देवता थे। अपने भगतों को शंकर जी ने कुनबी नाम दिया। वे सुख-आनंद से रहते थे। तब आज की सी बात नही थी कि आदमी भूखा मरे, जंगलों में फल-फूल थे, रहने के लिए ठिया-ठौर था। जो चीज देवता, पर चढ़ती थी, वही आदमी का भोग था।

कुदरत की बात, देवता के संग हैवान पैदा हुआ। नदी के इस पार देवता, उस पार असुर। कुनबी लोग फिर भी बैखौफ रहते थे। ऋषि-मुनि उनकी हिफाजत करते थे। वे अपने तप से असुरों को हरा देते थे। शंकर महादेव के प्यारे भोले कुनबी, यह बात ऋषि जानते थे।

एक दिन उन्हीं कुनबियों से ऋषि की गाय मर गयी। हिरन के धोखे में गाय का वध हुआ। ऋषि के शोक का ठिकाना न रहा। वह गाय नहीं धर्म गाय थी। शोक मामूली शोक नहीं, ऋषि -मुनियों का शोक था। देवताओं का सिंहासन हिला। अनंत ताप से धरती आसमान जल उठे। सबको पता है कि ताप श्राप के बिना नहीं सिरता। कुनबियों के दुःख का ठिकाना न था। पछताए, पर पछतावे से गाय जिंदा

---

२. इदन्नमम् उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-१९०-१९१)

होने वाली नहीं थी।

कुनबी ऋषि के पांवों में सिर टेककर माफी मांगने लगे। पर ऋषि को आंखें मूँदकर तप करने की आदत थी, देखा ही नहीं और बिन देखे ही श्राप दे दिया- तुम कलंकी हो। कलंक ढोते-ढोते मरोगे।

ऋषियों की महिमा.......जैसे श्राप न दिया हो, राक्षस को इशारा किया हो, बांधकर ले जा, नमकहराम कुनबियों को और अपनी गुफा में बंद कर ले। बाहर से पत्थर अडा दे ।

एक-एक कुनबी का नित आहार। कुनबी घटने लगे। और ऋषि का संतोष बढ़ने लगा। वे अकेले ही पूरे जंगल में विचरने लगे। कुनबियों ने सोचा-ऋषि हमारे विनाश पर इतने मगन हैं, उनसे फरियाद क्या? वे राक्षस से किस तरह कम हैं? कुनबियों ने अपनी गुहार बड़ी अदालत तक पहुँचाई- अँधेरा काटने वाली बड़ी सरकारी शंकर महादेव । मगर बड़ी सरकार शंकर महादेव को फैसला लेने में इतनी देर लगी कि सारे कुनबी खत्म हो गए। महादेव भी पछताए। पछताना सच्चा था- अब शासन के लिए कोई बचा नहीं। उनमें तेज था। मनमाने स्वभाव वाले देवता ने दो नर-नारी पैदा किए। वे सोने और चाँदी की रंगत के थे- नाचने मे कुशल प्रवीन ।

शंकर जी ने कहा- नाचगीत ऐसी कला है, जो अभिमानी ऋषियों का तप खंडित करती रही है, राक्षस क्या चीज है उसके सामने ?

सच ही राक्षस ऋषि-मुनियों की तरह ज्ञानी नहीं थे। नहीं जानता था कि कब क्या छिपाना है ? कब क्या बताना है? सो तुरंत अपनी खुशी जाहिर कर बैठा। बोला- नाचो नाचो। नर-नारी नाचते रहे। वह मोहित होकर बेसुध हो गया। और बोला- मांगो-मांगो कुछ। नर-नारी संसारी नहीं थे, नहीं तो महादेव की बात भूल गए होते क्योंकि आदमी जब-तब भूल करता ही रहता है। उन्होंने तुरन्त वर मांग लिया- महाराज, कुनबियों को आजाद करो।

वह बोला- कुनबी तो मैंने खा लिए । शंकर महादेव का सिंहासन फिर हिला । उन्हें लगा कुछ न कर सके तो उन्हें कौन पूछेगा? महिमा न रहेगी तब वे क्या करेंगे? भक्तों को अपने लिए पैदा करना होगा। शंकर महादेव ने चाँदी-सोने की रंगत वाले नर-नारी से कहा संतान पैदा करो। सुन्दर और शांत, कबूतर की तरह ।"३

---

३. अल्मा कबूतरी उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-३४-३५)

६.७ - लोकोक्ति, मुहावरे एवं बुझौअल -

लोकजीवन का प्रतिबिम्ब उसका साहित्य होता है। किसी भी क्षेत्र के साहित्यिक और धार्मिक जीवन को अनुप्रमाणित करने वाली शक्ति उसका लोक साहित्य होती है। लोक साहित्य में अनेकों विधाएं निहित हैं - लोकगीत, गाथाएं-कथाएं, पहेलियां, लोकोक्तियां, बुझौअल, मुहावरे, अहाने, लोरियाँ एवं सूक्तियों का भंडार है। इनमें 'बुन्देली लोकजीवन' और 'संस्कृति' पर्याप्त रुप से परिलक्षित होती है।

लोकोक्तियाँ प्रायः नीतिपरक या उपदेशात्मक होती हैं। बुझौअल 'बूझने' से बना है। सांकेतिक ढंग से रहस्यात्मक बात कहना तथा दूसरे से पूछना और सही अर्थ जानना बुन्देली में बुझौअल कहलाता है।

वाक्य को आकर्षक एवं चुस्त बनाने के लिए विलक्षण अर्थपरक वाक्यांश का प्रयोग करना ही यह मुहावरे कहलाते हैं।

बुन्देलखण्ड अंचल के हिन्दी (सामाजिक) उपन्यासों में लोकोक्ति, मुहावरे एवं बुझौअल -

(अ) श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' जी के उपन्यासों में -

१. लोकोक्ति, मुहावरे - 'प्रेमतपस्वी उपन्यास' में

"करघा छोड़ तमाशे जाय- नाहक चोट जुलाहा खाय। दाम न दे दच्ची, कुम्हार की सी बच्ची, दौज का वायना तीज कों, उनकी हर बात में अढ़ाई चावल की खिचड़ी अलहदा पकती है,चलनी में दूध दुहै और कपाल को दोष दैं। दौज का वायना तीज को, मनसुख लाल राख सी खाये चले गये, बाप न मारी लोमड़ी बेटा तीरे नदाज, गम खाकर रह गये, जिसके पैर न फटी बिमाई, वह क्या जाने पीर पराई, अपना उल्लू सीधा करना, कुछ दिन और गम खा, मान न मान मैं तेरा मेहमान।"१

'मनोवेदना उपन्यास' में "अपनी गरज पड़े सौत के घर भी जाना पड़ता है, खून का घूँट पीकर रह जाती, रामा की दाल न गलती, बेचारे आँसू पीकर रह जाते, अक्लों पर भी पत्थर पड़ गये, चेहरे पर हवाइयां उड़ने लगीं, यही भूत सवार था, घुटने टेक कर ईश्वर को धन्यवाद दिया, उनके मुंह काले हो जायेंगे, कान काट सकती थी।"२

'निमियाँ उपन्यास' में "बाबा छोड़ी झोपड़ी जो चाहे से लई। चालाक कौआ मैला पर ही चोंच

---

१. प्रेमतपस्वी उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या-१५,२१,४६,५८,,२४,५६,५६,६८,७०,७७,१४८)

२. मनोवेदना उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या-३५,३,५,६,१०)

मारता है। क्वांरी के भाग्य से ब्याही मरती है। शरीर सूखकर कांटा हो गया, नौ खाये तेरह की भूखी बनी रहती है, न रहता बाँस न बजती बांसुरी, घर फूंक तमाशा देख, जिन खोजा तिन पाइया, मान न मान मैं तेरा मेहमान, मुद्दई सुस्त गवाह चुस्त, बड़े घर बायना देने लगे थे, काटो तो खून नहीं, डूबते को तिनके का सहारा, रोटियों के गुलाम, नेकी और पूछ-पूछ, खून का घूँट पीकर रह जाता हूँ, जले पर नमक छिड़कना।"३

(ब) वर्मा जी के उपन्यासों में -

१. लोकोक्ति, मुहावरे - 'लगन उपन्यास' में "जब अपनी ही दाम खोटा तो परखैया को क्या दोष दें।"१

'प्रत्यागत उपन्यास' में "कैसा भैंसे की तरह रेंकता है,रघुकुल रीति सदा चलि आई, प्राण जाई पर वचन न जाई, गमार की अकल चोरी में होती है, मर जाये ऐसा लड़का जो झाड़ू के झाड़ने से जिये, बर्रे बालक एक सुभाऊ । "२

'उदय-किरण उपन्यास' में "अंत भला सो सब भला, उत्तर खेती मधम वान- अधम चाकरी भीख निदान, भाग्य ही खोटा है हमारा, उल्टी आते गले पड़ी।"३

'अचल मेरा कोई उपन्यास' में "भूखे भजन न होय भुआलू।बज्र न टूटे, काला मुँह कर यहाँ से, भाड़ झौंकना, जीभ का चटोर, किंकर्तव्यविमूढ़, गला सूख जाना, जी जल जाना, कलेजे के पार, नेकी कर बदी खड़ी, कलेजा जलना, आँखों में खून आा जाना, उल्टी गंगा बहना। घर फूंक तमाश देखना, पहाड़ खोदा चुहिया निकली, न नौमन तेल होगा न राधा नाचेगी"४

'कुण्डली चक्र उपन्यास' में "मेरे परा तो कानी कौड़ी भी नहीं, जहाँ सींग समावे, मुझे कोड़ निकले, जो जैसा करेगा, वैसा पावेगा, मान न मान मैं तेरा मेहमान, मजिस्ट्रेट दाँत पीसने लगा।"५

---

३. निमियाँ उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य'
(पृ० संख्या-१०१,२५२,३७६,७,८६,१००,१३५,१३८,१४४,२८३,२५४,२५६,२८५,३४५,३४८,३६७)
१. लगन उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या-७०)
२. प्रत्यागत उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा
(पृ० संख्या-७,३९,५६,१३३,१३६,१०,१३,१५,२५,२८,३०,३२,५३,६४,१३४,१४४,१५०)
३. उदयकिरण उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या-१६,२०,३३,२४)
४. अचल मेरा कोई उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या-१२,१२२,१८४,१८५)
५. कुण्डली चक्र उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या-५७,७७,१६३,१७३,१८७,२२२)

२. बुझौअल - 'प्रत्यागत उपन्यास' में "घुटी खोपड़ी नंगा सिर, कर में डंडा मुंह में टर्ट।"६

(स) मैत्रेयी पुष्पा जी के उपन्यासों में -

१. लोकोक्ति मुहावरे - 'झूला नट उपन्यास' में "बूढ़ियों के घर हुए, तो मरघट किसकी वाय टेरेगा। बारह बर्ष बाद घूरे के भी दिन फिरते हैं, तार-तार कथरी कोई कहा से सिये, एक न एक दिन तो चदरियाँ की फांके असलियत की मुनादी कर ही देगी, आय-हाय पूरी न पपरिया, अछिया न बछिया, पूत कपूत हो जायेगा माता कुमाता नहीं होती, बूड़े मुँह मुहांसे देखो लोग तमाशे।सबर का फल मीठा होता है, बिन मांगे ही मोती मिल जाते हैं, दाल में काला है, किंकर्तव्यविमूढ़, पेट में दाड़ी।"१

'इदन्नमम् उपन्यास' में विनाश काले विपरीत बुद्धि, नीम चढ़ा करेला, बहती गंगा में हाथ धोते हो कि नहीं, मुल्ला की दौड़ मस्जिद तक, जै मुँह और मसूर की दाल, न नौ मन तेल रहेगा न राधा नाचेगी। चमरिया से चाची कही, चौका में चली आई, पराधीन सपनेहुँ सुख नाहीं, पर मरी मइया, आसों आए आँसू, कानी के ब्याह को सौ जोखे, बाह फड़के बाई, बीस मिले साई।"२

'अल्मा कबूतरी उपन्यास' में "जैसा बोया, वैसा काटा, काटो तो खून नहीं, नौ सौ चूहे खांय विलइया हज करे।"३

२. बुझौअल- 'इदन्नमम् उपन्यास' में "एक फूल की चार कली, रानी डोले गली-गली।"४

बुन्देलखण्ड में प्रायः लोकोक्ति, बुझौअल तथा मुहावरों का प्रयोग दैनिक जीवन के वार्तालाप में खूब किया जाता है।

---

६. प्रत्यागत उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या-११)

१. झूला नट उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-१५,२६,५६,८०,१०३,६२,४१,५३,६१,१४७)

२. इदन्नमम् उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा
(पृ० संख्या-१६२,१८४,२२५,,२४२,२७८,१८,७२,७६,११५,१२४,२०१,२३५)

३. अल्मा कबूतरी उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-१०,१६८,२५४)

४. इदन्नमम् उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-१८)

६.८- जातीय सद्भाव -

वर्तमान में हमारा समाज विभिन्न जातियों में बँटा हुआ है। इनकी गणना करना असामान्य है। प्राचीनकाल में जाति व्यवस्था कर्म पर आधारित थी। जो व्यक्ति जिस कार्य को करता था, उसे उसी जाति का माना जाता था। जैसे- वेदों का अध्ययन करने वाले को ब्राह्मण, कपड़ा धोने वाले को धोबी, वर्तनों को ठीक करने वाले को ताम्रकार, सोने-चाँदी के आभूषण बनाने वाले को सुनार, लोहा पीटने वाले को लोहार आदि माना जाता था। वर्तमान में जन्म के आधार पर जातियों का निर्धारण होता है। जो व्यक्ति जिस जाति में जन्म लेता है, उसे उसी जाति का सदस्य माना जाता है।

बुन्देलखण्ड में विभिन्न जातियों एवं जनजातियों के लोग निवास करते हैं।

वर्णों के आधार पर- ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र

जनजातियों के आधार पर- कोल, भील, शबर, द्रविण एवं किरात आदि ।

इन सभी में भिन्नता होते हुए भी जातीय सद्भाव देखने को मिलता है -

बुन्देलखण्ड अंचल के हिन्दी (सामाजिक उपन्यासों) में जातीय सद्भाव निम्न है -

(अ) अम्बिका प्रसाद दिव्य जी के उपन्यासों में -

'प्रेमतपस्वी उपन्यास में' जाति-पांति के बन्धन को तोड़कर राजा साहब 'रजउ' व 'ईसुरी' का पुनर्विवाह करवा देते हैं। पंडित जी कानूनगो से कहते हैं- **''महाराज साहब का विचार है कि ईसरुी और आपकी बधू रजउ का पुनर्विवाह करा दिया जाए। प्रकृति की यही योजना रही, पर अल्पबुद्धि मानव ने उसके मार्ग में बाधा डाली और इससे इतना बड़ा काण्ड घटित हुआ। परस्पर प्रेम ही विवाह-शादी का सच्चा आधार है। जाति-पाँति पाखण्ड नहीं"१** ईसुरी ब्राह्मण है, जबकि रजउ अन्य जाति की लड़की है। जाति-पांति के बंधन को तोड़कर इन दोनों का विवाह होता है। उपन्यास में यहाँ पर जातीय सद्भाव देखने को मिलता है।

'मनोवेदना उपन्यास में' विनोद की नजर में अपनी बहन के लिए **"शरद किसी भी प्रकार कुमुद के अयोग्य नहीं था। केवल जाति का अंतर, जिसे वह कोई महत्व न देता था। अन्तर्जातीय विवाह उसे पसंद था"२** विनोद का स्वयं अन्तर्जातीय विवाह वासुकी के साथ होता है। यहाँ पर जातीय सद्भाव देखने को मिलता है।

---

१. प्रेमतपस्वी उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या-२०६)

२. मनोवेदना उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या-१६)

'निमियाँ उपन्यास में' रमेश श्यामा के साथ अन्तर्जातीय विवाह कर लेता है, तो उसकी माँ (रजनी) रमेश से नाराज हो जाती है। पिता (बद्रीप्रसाद) लक्ष्मी को समझाते हुए कहते हैं -**"इस जाति-पाति के भेदभाव ने ही हिन्दुस्तान को मिटा दिया है एक तरह से अच्छा ही हुआ है कि लड़के ने इस नई दिशा (अन्य जाति में विवाह कर जातीय सद्भाव बढ़ाया है) की ओर पहला कदम रक्खा है। दूसरे लोग उससे नसीहत लेंगे।"**३ अन्तर्जातीय विवाह द्वारा अलग-अलग जातियों में सद्भाव की भावना उत्पन्न होती है।

(ब) वर्मा जी के उपन्यासों में -

'प्रत्यागत उपन्यास में' हिन्दू धर्म में पुनः प्रवेश के लिए धार्मिक अनुष्ठान को पूर्ण कर, मंगल गाँव के सभी जातियों को भोज में सम्मिलित होने के लिए आमंत्रित करता है। पं० नबलबिहारी के भड़काने पर ग्रामवासी मंगल के भोज का बहिष्कार कर देते हैं। भोज में वहाँ पर गाँव के स्कूल के सभी जातियों के पचास-साठ लड़के आ पहुँचते हैं और कहते हैं **"हम अतिथियों को थोड़ा-थोड़ा सा दो। बिना खाये नहीं मानेंगे। यदि मंगल की जूठी पत्तल में ही थोड़ा सा क्या होगा तो उसी मे से बाँट खायेंगे।"**१ स्कूल के सभी जाति के बालक प्रायश्चित भोज को ग्रहण कर मंगल के अनुष्ठान को पूर्ण करते हैं तथा जातीय सद्भाव दिखाते हैं।

'उदयकिरण उपन्यास में' ग्राम-वासी उदय द्वारा मंच पर किये गये कार्यक्रमों से प्रभावित होते हैं। सहकारी समितियों में गांव के सभी जातियों के सदस्य संगठित हो जाते हैं। वे सभी उदय से कहते हैं कि **"हम लोगों ने प्रण किया है कि मिलजुल कर काम करेंगे और आगे बढ़ते रहेंगे। कठिनाइयों के सामने कभी नहीं झुकेंगे। भगवान हम सब की सहायता करें।"**२ सहकारी कृषि में सभी जातियों के सदस्य उदय व किरण का साथ देकर सहयोग करते हैं। उपन्यास में यहाँ पर ग्रामीणों में जातीय सद्भाव देखने को मिलता है।

'कुण्डली चक्र उपन्यास' में ललित 'अजित पर लगाये स्वयं के मुकद्मा को खारिज कर देता है, तो मजिस्ट्रेट ललित से चिढ़ कर कहता है- **"प्रबल जाति के हाकिम के सामने दुर्बल कौम के आदमी का यह घमण्ड। तमकर उसने कहा- अभी न बतलाओगे, पीछे हाथ जोड़कर बतलाना पड़ेगा, जब अजित कुमार मान हानि का दावा हमारे यहाँ तुम्हारे ऊपर करने**

---

३. निमियाँ उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या-१६४)

१. प्रत्यागत उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या-११५)

२. उदयकिरण उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या-११६)

आवेगा। सरकार में उसकी बहुत इज्जत होगी। सच्चा ईमानदार है। उसे जितना खजाना मिल गया था, सब हमारे यहाँ दाखिल कर दिया। हमने उसे आधा खजाना दिये जाने का हुक्म दिया है। अब वह तुमसे ज्यादा धनी और प्रबल हो जायेगा। तुम उसके सामने कोई चीज नहीं हो।' ललित सेन मुस्कराकर बोला- सच मानिये इस समाचार को सुनकर जितनी खुशी मुझे हुई, उतनी आपको नहीं हो सकती।"३ उपन्यास के अंत में ललित व अजित का एक हो जाना जातीय सद्भाव का उदाहरण है।

'लगन उपन्यास में' रामा और देवसिंह के विवाह में दहेज में सौ भैसें न देने पर शिबू बहू की विदा करवाने से इंकार कर देता है। रामा का भाई बेताली सभी बरातियों का अपमान कर देता है। बरात में सभी जातियों के लोग थे उनसे अपमान सहा न गया। **"बरातियों के पुरुषार्थ की मात्रा ऐसे अवसरों पर बहुत अधिक बढ़ जाती है। सब सहमत हो गये। एक ने तो यहाँ तक कहा कि 'बरौल' में आग लगा दो।"४** सभी जातियों के बारातियों के सुझावानुसार बारात, बिना विदा किये 'बजटा'लौट गयी। बारातियों के संगठन को देखते हुए कह सकते है कि गाँवों मे जातीय सद्भाव आज भी देखने को मिलता है।

(स) मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में-

'इदन्नमम उपन्यास में' बऊ कहती हैं **"धन्य है रे दादा के राज। श्यामली गाँव में गाँधी जुग ले आये हैं। काहे हो गनपत इतै के तो नेम कायदा ही अलग हैं। अबरन-सबरन सब एक। चमार-बसोर से परहेज नहीं। किसी दिन पनका महतरानी को भी बिठा लेगे संग-संग।"१** दादा सभी जाति के लोगों का सम्मान करते हैं। इसलिए गाँव में सभी जाति के सदस्यों में संगठन है। इसलिए यहाँ पर जातीय सद्भाव देखने को मिलता है।

बुन्देलखण्ड में शादी विवाह आदि के अवसर पर निम्न जाति के लोगों को उच्च्व जाति के लोग आदर के साथ उन्हें पुकार कर खुश करते है। उपन्यास में जगेसर यहाँ पर बऊ से कहता है **"तुम्हारे ब्याह में नाऊ, धोबी, चमार, बसोर तक के लाने सोने की मोहरे आई थीं।"२** विवाह में सभी जाति के व्यक्तियों का सम्मान होना जातीय सद्भाव है।

---

३. कुण्डली चक्र उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या-२२२)
४. लगन उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या-३)
१. इदन्नमम् उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-३६)
२. वही - (पृ० संख्या-१८१)

उपन्यास में यहाँ पर द्वारिका कक्का मन्दाकिनी से कहते है-**"एकता तो हर तरह से करनी है। खाली गाल बजाने से काम तो नहीं चलेगा । शरीर से, मन से, पइसा-टका से कहते है न कि तन-मन-धन से जुटता है संगठन और तब ही होता है सफल। मन में सच्ची इच्छा होती है तो पूरी भी होती है बिटिया तुम संकोच जिन करो । सब अपने आप देगें। जनी-मानसें क्या जानती नहीं हैं कि मन्दा काहे के लाने माँग रही है ? देंगी, देंगी काहे नहीं? तुम्हारी हथेली-बस भर खाली नहीं लौटने देंगी। इतेक तो हम दावे के साथ कह सकते हैं।"**३ मन्दाकिनी गाँव में बेरोजगारी दूर करने गाँव वालों से रुपये, पैसे, जड़-जेबर आदि एकत्रित कर एक ट्रेक्टर ट्रॉली खरीदती है। जिसे क्रेशर पर गिट्टी ढोने के लिए रख लिया जाता है। उसमें गाँव के सभी जाति के बेरोजगारों को रोजगार मिल जाता है। इसलिए यहाँ पर जाति सद्भाव देखने को मिलता है।

'अल्मा कबूतरी उपन्यास में' सूरज भान के साथ वार्तालाप में धीरज उससे कहता है **"भइया, यह ठहरा दलितों का जमाना। खोजो कि आजादी की लड़ाई में किस-किस दलित ने भाग लिया था? कुछ तो हमीं बता देते हैं। विचार करके देख लेना। मातादीन भंगी ने सैनिक विद्रोह के बीज डाले थे। लोचन मल्लाह को ले सकते हो, जिसने अंग्रेजों को गंगा पार करने के लिए चालीस नावें तैयार की थीं। सैनिक छावनी अधिकारी ह्यू हीलर की विदाई पर बिगुल बजते ही लोचन ने अपने साथियों से नाव छोड़ने के लिए कहा। अवसर देखकर सारे मल्लाह पानी में कूद गए और दूसरी नावें लेकर अंग्रेजों का पीछा करने लगे। अस्सी अंग्रेज स्त्री-पुरुष पकड़ लिए। स्त्री और पुरुषों को छोड़कर बाकी सबको जंगल में फांसी पर झुला दिया।"**४ स्वतंत्रता संग्राम की लड़ाई में सभी जातियों के लोगों ने संगठन कर अपना भर-पूर योगदान देकर जातीय सद्भाव दिखाया था।

'वेतवा बहती रही उपन्यास' में उर्वशी के विवाह के पश्चात् देवी-देवताओं के पूजन के समय **"बरार बहू गले में ढोल डाले, आगे-आगे चलती गयी।"**५ बुन्देलखण्ड में विवाह आदि कार्यक्रमों में निम्न जाति के स्त्री-पुरुषों को विशेष महत्व दिया जाता है।

अतः हम कह सकते हैं कि अन्य प्रान्तों की अपेक्षा बुन्देलखण्ड में जातीय सद्भाव अधिक देखने को मिलता है।

---

३. इदन्नमम् उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-२३६)
४. अल्मा कबूतरी उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-२८८)
५. वेतवा बहती रही उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-४८)

६.६- साम्प्रदायिक सौहार्द-

हमारे देश में विभिन्न धर्मों के लोग निवास करते हैं - जैसे - हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख एवं ईसाई, पारसी। हिन्दुओं के आराध्य राम-कृष्ण हैं, मुस्लिम खुदा को मानते हैं, सिक्ख वाह गुरु को एवं ईसाई लोग ईसू को अपना परमपिता परमेश्वर मानते हैं। परमेश्वर के अलग-अलग रुप होते हुए भी वह एक है। हम सभी एक पिता परमेश्वर की संतान हैं। अतः हम सब भाई-भाई हैं।

देश को आजाद कराने के लिए स्वतंत्रता संग्राम की लड़ाई भी सभी धर्मों के लोगों ने मिलकर लड़ी और देश को आजाद कराया। अंग्रेजों ने भारत से जाते समय भी हिन्दू-मुस्लिमों के बीच बँटवारे की एक गहरी खाई खोद दी थी। बँटवारे के समय हिन्दुस्तान के सारे मुस्लिम पाकिस्तान चले गये। पाकिस्तान से सारे हिन्दू हिन्दुस्तान आ गये। लेकिन तब भी हिन्दू-मुस्लिमों के बीच आपसी प्रेम व स्नेह ने एक-दूसरे को जुदा न होने दिया। हिन्दुओं ने बहुत से मुस्लिमों को हिन्दुस्तान में शरण दी। यहाँ मुस्लिमों को आज भी भारतीय होने का गर्व है। वर्तमान में भारत के ग्रामीण क्षेत्रों व कस्बों में हिन्दु-मुस्लिम बड़े प्रेम स्नेह व सौहार्द के साथ मिल-जुल कर अपना जीवन यापन कर रहते हैं।

भारत के हृदय स्थल बुन्देलखण्ड में साम्प्रदायिक सौहार्द पर्व-उत्सव आदि पर अधिक देखने को मिलता है। ग्रामीण क्षेत्रों में हिन्दू मुस्लिमों का रहन-सहन व वेश-भूषा एक जैसी ही देखने को मिलती है। हिन्दू-मुस्लिम एक-दूसरे के देवी-देवताओं को मानते हैं। हिन्दू धर्म के लोग, सैयद बाबा, पीर बाबा आदि की मजारों पर जाकर वृहस्पतिवार के दिन चादर आदि चढ़ाते हैं। मुस्लिम धर्म के लोग दिवाली, होली, दशहरा एवं नवरात्रि की झाकियों के दर्शन श्रद्धाभाव पूर्वक करने जाते हैं। इनके परिवार में बच्चों को देवी(चेचक) आने पर स्त्रियां मंदिर जाकर देवी को ढारती हैं और उसका पूजन भी श्रद्धा पूर्वक करती हैं।

बुन्देलखण्ड अंचल के हिन्दी (सामाजिक) उपन्यासों में साम्प्रदायिक सौहार्द निम्नवत् है -

(अ) अम्बिका प्रसाद दिव्य जी के उपन्यासों में -

'निमियाँ उपन्यास' में हिन्दू धर्म में लड़के के विवाह में नखरे करने वालों के ऊपर बद्रीप्रसाद बाबू कहते हैं **"कितनी तो लड़कियां किस्तान या मुसलमान हो गई, कितने ही लड़के आवारा हो गये। पर समाज न टस से मस हुआ। ऐसा भी और कोई समाज दुनियां में होगा। जो दुनियाँ में तरक्की करना जानता ही नहीं। खैर लड़के ने जो कुछ किया अच्छा ही किया। एक**

कदम समाज के आगे तो रखा। किसी धर्म, किसी समाज किसी खानदान के ख्याल से अपना जीवन बरबाद कर देना, केवल मोह और मूर्खता है।"१ बद्रबाबू यहाँ पर धर्म या जाति को महत्व न देकर, सुःखमय जीवन को अधिक महत्व देते हैं। रमेश के अन्तर्जातीय विवाह को स्वीकार कर वे समाज के बेमतलब बंधनों को तोड़ना स्वीकार कर लेते हैं।

बद्रीप्रसाद बाबू द्वारा किसी भी धर्म में विवाह करने की सहमति, यहाँ पर अन्य धर्म के प्रति साम्प्रदायिक सौहार्द की भावना प्रकट करती है।

(ब) वर्मा जी के उपन्यासों में -

'प्रत्यागत उपन्यास' में पेशइमाम मंगल से मुस्लिम धर्म अपनाने के लिए जोर देता है, तो मंगल कहता है **"मैं हिन्दू मुसलमान सबको एक सा समझता हूँ। सब धर्म एक से हैं। सबका एक ही ईश्वर है।"१** मंगल के विचारों से उपन्यास में यहां पर साम्प्रदायिक सौहार्द की भावना प्रकट होती है।

'कुण्डली चक्र उपन्यास' में अजित भुजबल से कहता है कि आपने धर्म ग्रन्थ पढ़े हैं? भुजबल उत्तर देते हुए कहता है **"बिना धर्म ग्रन्थ पढ़े तो जीवन का निर्वाह ही नहीं हो सकता। इस असार-संसार में भवसागर से पार उतारने वाले तो धर्म ग्रन्थ ही हैं। मैनें रामायण, महाभारत, श्रीमद्भागवत इत्यादि ग्रन्थ पढ़े हैं। इन सबका सार है- परोपकार करो, पराये के लिए अपने प्राण तक छोड़ दो।"२** उपन्यास के अनुसार प्रत्येक धर्मग्रन्थ हमें यही शिक्षा देते हैं कि सभी को मिलजुल कर एक-दूसरे के प्रति त्यागकर, साम्प्रदायिक सौहार्द बनाना चाहिए ।

(स) मैत्रेयी पुष्पा जी के उपन्यासों में -

'झूला नट उपन्यास में' बालकिशन अपने मन में विचार करता है **"अबकी बार भाभी की बाह पर सन्नू फकीर से गड़ा बंधवाकर अम्मा ने अपना धर्म छोड़ पीर मसानी पर विश्वास करने की ठानी थी।"१** यहाँ पर यह बतलाया गया है कि हिन्दू धर्म की स्त्रियाँ मन्नत मांगने मुस्लिम

---

१. निमियाँ उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या-१६१)

१. प्रत्यागत उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या-३०)

२. कुण्डली चक्र उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या-१८)

१. झूला नट उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-५८)

मजारों पर श्रद्धा व विश्वास पूर्वक जाती हैं। मन्नत पूरी होने पर चादर व प्रसाद आदि चढ़ाती हैं। हिन्दू धर्म के लोगों द्वारा मुस्लिम धर्म में आस्था रखने पर यहाँ साम्प्रदायिक सौहार्द देखने को मिलता है।

'इदन्नमम् उपन्यास' में श्यामली में बऊ ने देखा है **"चीफ साब का दालानों बाला घर। वही है उनके परदादा कमरे में ।दादा के इसी बैठका के पिछवाड़े पड़ता है, जहाँ सब जुड़े हैं। एक झरोखा है बातचीत करने के लिए। अम्मा बेगम और देवगढ़वारी बातें करती हैं उसमें झाँककर।"२** उपन्यास में हिन्दू-मुस्लिम स्त्रियों का आपस में बातचीत करना, दोनों धर्मों के बीच, एक-दूसरे के प्रति सौहार्द का प्रतीक है।

दादा, मोदी और चीक साहब (क्रमशः अहीर, बनिया व मुसलमान) **"ब्याह कारज, खुशी-गमी, केस-मुकदमा, जहाँ भी जाना हो तीनों जने संग ही जाते हैं। दादा के हाथ में छाता, मोदी के हाथ में छड़ी और चीक साब के कंधे पर खाकी का झोला रहता है। लोग दूर से ही पहचान जाते हैं, लो, वे आ रहे हैं, छाता, डंडा, झोला।"३**

रक्षाबन्धन के दिन शकील मन्दा के पास एक लिफाफे में राखी रख कर लाता है **"मन्दाकिनी उसके गाल पर हल्की सी चपत जड़ते हुए बोली-दिखाओ राखी। शकील ने पलकें झपकाकर लिफाफा दिखाया। लाओ इधर हम तुम्हें राखी बाँधें।"४** उपन्यास में हिन्दू लड़की द्वारा मुस्लिम लड़के को राखी बांधना साम्प्रदायिक सौहार्द का प्रतीक है।

हिन्दू-मुस्लिम दंगों में चीफ द्वारा गाँव छोड़ने पर कुसमा से हिन्दू होते हुए **"दादा कहते हैं, कुरान मंगाकर (मस्जिद) में रख देंगे। शायद हमारा यार चीक कभी लौटे, तो देखे तो सही कि हमारे हृदय में वह आज भी बसता है।"५** हिन्दू धर्म के दादा का मुस्लिम धर्म के चीफ साहब के प्रति अपार प्रेम यहाँ पर एक-दूसरे के प्रति साम्प्रदायिक सौहार्द को दर्शाता है। उपन्यासों के आधार पर हम कह सकते हैं कि आज भी बुन्देलखण्ड में साम्प्रदायिक सौहार्द देखने को मिलता है।

---

२. इदन्नमम् उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-३७)

३. वही

४. वही - (पृ० संख्या-४४)

५. वही - (पृ० संख्या-२६६)

अध्याय- ७

हिन्दी के आंचलिक उपन्यासों में बुन्देलखण्ड का लोकजीवन

७.१ परिवार

७.२ पति-पत्नि संबंध

७.३ आवास-प्रवास

७.४ दिनचर्या

७.५ भोजन और व्यंजन

७.६ लोकाचार

७.७ लोकरंजन

७.१ - परिवार -

परिवार समाज की मूल-भूत इकाई होती है। जिसमें माता-पिता, भाई-बहिन, चाचा-चाची, भतीजे-भतीजी एवं पुत्र-पुत्री आदि होते हैं। इनमें रक्त संबंध होने के कारण सभी लोग पारस्परिक स्नेह तथा उत्तरदायित्व की भावना से एक-दूसरे से जुड़े रहते हैं। इन परिवारों को संयुक्त परिवार कहते हैं। बुन्देलखण्ड में ज्यादातर इसी तरह के परिवार देखने को मिलते हैं।

वर्तमान में व्यापार, नौकरी व उद्योग-धन्धों के कारण परिवार के सदस्यों को घर छोड़कर बाहर जाना पड़ता है। बच्चों की शिक्षा के कारण भी ग्रामीण लोग गांव छोड़कर कस्बों व नगर की ओर प्रस्थान कर रहे हैं। इन सब कारणों से संयुक्त परिवारों में विघटन हुआ, जिससे एकांकी परिवारों का निर्माण हुआ है। इन परिवारों में पति-पत्नी एवं उनके बच्चे होते हैं। बुन्देलखण्ड में संयुक्त एवं एकांकी दोनों प्रकार के परिवार देखने को मिलते हैं।

बुन्देलखण्ड अंचल के हिन्दी (सामाजिक) उपन्यासों में परिवार -

(अ) श्री अम्बिका प्रसाद दिव्य जी के उपन्यासों में -

(क) संयुक्त परिवार- 'निमियाँ उपन्यास' में श्यामलाल का संयुक्त परिवार है। उसके घर में उसकी माँ, बहिन कृष्णा (जो कि विधवा है) सझले, मझले दो भाई व उनकी पत्नियाँ, श्यामलाल व उसकी पत्नी एवं चार बेटियाँ हैं। ये सभी सदस्य एक छत के नीचे निवास करते हैं। अतः हम कह सकते हैं कि उपन्यास में संयुक्त परिवार देखने को मिलता है।

(ख) एकांकी परिवार - 'निमियाँ उपन्यास' में बद्रीबाबू का परिवार एकांकी है, उनके परिवार में बद्रीबाबू व उनकी पत्नी लक्ष्मी, पुत्र रमेश पुत्रबधू श्यामा है।

'मनोवेदना उपन्यास में' दिनेश व उनकी पत्नी रामा, पुत्री कुमुद, पुत्र विनोद व पुत्रवधू वासुकी है। उपन्यास में यहाँ पर हमें एकांकी परिवार देखने को मिलता है।

'प्रेमतपस्वी उपन्यास में' पं० भोलानाथ एवं उनकी पत्नी बड़ी बहू एवं एक पुत्र ईसुरी है।

कानूनगो के परिवार में कानूनगो पत्नी रानी बहू, एवं उनकी एक ही पुत्री रजऊ है। अतः दिव्य जी के उपन्यासों में संयुक्त एवं एकांकी दोनों ही परिवार देखने को मिलते हैं।

(ब) वर्मा जी के उपन्यासों में-

क-संयुक्त परिवार- 'अचल मेरा कोई उपन्यास में' "जियाराम के छः लड़के और एक लड़की थी । लड़के सब वय प्राप्त और व्याहे-ठ्याहे । लड़की अविवाहित थी ।"१

'उदय-किरण उपन्यास में' किरण की माँ से पिता (मगन) किरण के विवाह के संबंध में घर-वर व परिवार बतलाते हुए कहते है **"लड़के चार भाई है उनका बाप तो गुजर गया है, पर दो काका हैं। इनके भी बाल बच्वें है। सब शमिल रहते हैं।"२** अतः यहाँ पर संयुक्त परिवार देखने को मिलते हैं।

'लगन उपन्यास में' "बादल का परिवार बड़ा था । लड़के थे बहुयें थीं, परन्तु लड़की एक ही थी ।"३ भरा-पूरा संयुक्त परिवार है।

ख- एकांकी परिवार- 'उदय-किरण उपन्यास में' "मगन के घर में उसकी पत्नी चालीस-पैंतालीस की अवस्था में बूढ़ी लग रही थी । श्वांस का रोग था, देह भी दुर्बल थी । न कुछ बच्चे हुए थे । वे नहीं रहे । किरण एक मात्र संतान थी ।"४

'कुण्डली चक्र उपन्यास में' "ललित की आयु तीस वर्ष के लगभग हो गई थी, परन्तु उसने अपना विवाह न किया था । माता-पिता छुटपन में ही साथ छोड़ गये थे। एक बहिन थी, विवाह उसका भी न हुआ था, यद्यपि वह पन्द्रह-सोलह वर्ष की हो चुकी थी।"५

'लगन उपन्यास में' "शिबू के इकलौते लड़के का नाम देवसिंह था । इसके माँ न थी । इसलिए बाप ने बड़े लाड़ दुलार से पाला था।"६

'प्रत्यागत उपन्यास में' "टीकाराम शर्मा थे और युवा उनका आत्मज मंगलदास चंचल वृति सहसा प्रवृत्ति, लाड़-दुलार का बिगड़ा हुआ बालक ।"७

---

१. अचल मेरा कोई उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या -१६)
२. उदयकिरण उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या -१२०-१२१)
३. लगन उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या - २)
४. उदयकिरण उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या -१२)
५. कुण्डली चक्र उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या -१)
६. लगन उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या - २)
७. प्रत्यागत उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या - १)

"मंगल का विवाह छुटपन में हो गया था और गौना इत्यादि भी। उसकी माँ पौत्र प्राप्ति की अभिलाषा में कई महीने व्रत रक्खा करती थी।"८

अतः उपन्यासों में यहाँ पर एकाकी परिवार देखने को मिलते हैं। वर्मा जी के सामाजिक उपन्यासों में संयुक्त परिवार की अपेक्षा एकाकी परिवार अधिक देखने को मिलते हैं ।

(स) मैत्रयी पुष्पा के उपन्यासों में-

क- संयुक्त परिवार- 'झूला नट उपन्यास' में "शीलो चलायमान चित्त की लड़की बड़ी बहन अमावस, तो कांता पूरणमासी । पूरणमासी पहली बार बहन की ससुराल आई थीं अपने यहाँ बाप भाइयों का दबदबा, भौजाइयों की निगरानी, माँ की नेक सलाह के चलते सिर झुकाकर घर में बंद रहना पड़ता था ।"१

'वेतवा बहती रही उपन्यास' में मीरा कहती है "बड़ी बखरी ही कभी संयुक्त घर थी। पूरा घर उसी में रहता था । दादी उसी घर में ब्याहकर आयी थीं । फिर विधवा होने के बाद भी वही.. आजी ने छोटी बहन का सा प्यार दिया था । वही लाड़-दुलार । कहने को आजी दादी की जेठानी थीं आजी, पर दादी को पुत्रीवत् रखतीं ।"२

'इदन्नमम उपन्यास' में "दादा से छोटे है 'गोविन्दसिंह' और सबसे छोटे हैं 'अमरसिंह' (दाऊ जू) । संयुक्त ग्रहस्थी में एकाध अनाथ-सनाथ भी, जिनमें डबल बब्बा हैं। सब दादा के ही हैं- विकरम, सिरीकान्त और मीरा।"३ उपन्यासों में उपर्युक्त, सभी जगह संयुक्त परिवार देखने को मिलते हैं।

ख- एकांकी परिवार- 'इदन्नमम उपन्यास' में बऊ ने "जिन्दगी भर गिरिस्ती अकेले खेंची । महेन्द्र को पाल-पोसकर बड़ा किया अकेली ने ही ।"४ महेन्द्र की मृत्युपरान्त महेन्द्र की पत्नी पुनर्विवाह कर लेती है। घर में महेन्द्र 'पुत्री' (मन्दा) एवं बऊ रह जाती है। यहाँ पर एकांकी परिवार

---

८. प्रत्यागत उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या - ४)
१. झूला नट उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-११६)
२. वेतवा बहती रही उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- ५६)
३. इदन्नमम् उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-३४-३५)
४. वही - (पृ० संख्या-११)

देखने को मिलता है।

'झूला नट उपन्यास में' बाल किशन के परिवार में बालकिशन, उसकी माँ एवं पत्नी शीलो है। कुल मिलाकर एकाकी परिवार है।

'वेतवा बहती रही उपन्यास' में उर्वशी के पिता के परिवार में-माता-पिता भाई एवं उर्वशी अकेली लड़की थी । **"उर्वशी के पिता के पास नाम-मात्र की जमीन थी। उर्वशी अजीत से कई वर्ष छोटी रही होगी । अजीत की पीठ पर कई बच्चे नहीं रहे। बड़ी मुश्किल से उर्वशी बची ।"५**

'अल्मा कबतूरी उपन्यास' में मंसाराम का **"जिस स्त्री से ब्याह का गठबंधन जुड़ा, उसे पूरी तरह निभाया । वंशबेल के रूप जोधा और करन दो बेटे । परिवार की परम्परा नहीं तोड़ी ।"६**

निम्न उदाहरणों से यह पता चलता है कि मंसाराम के परिवार में उनकी पत्नी एवं दो पुत्र है। यहाँ पर एकांकी परिवार देखने को मिलता है।

तीनों उपन्यासकारों के उपन्यासों में हमें संयुक्त एवं एकाकी दोनों प्रकार के परिवार देखने को मिलते है। लेकिन ज्यादातर एकाकी परिवार ही हैं।

---

५. वेतवा बहती रही उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- १४)

६. अल्मा कबूतरी उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- २६)

७.२ - परिवार -पति-पत्नी संबंध

बुन्देलखण्ड में पति-पत्नी के आदर्श संबंध देखने को मिलते हैं। हिन्दू स्त्री जीवन में एक बार मन, वचन, व कर्म से समर्पित होकर पति का वरण करती है। वह पति को देवता तुल्य मानकर उसका आदर-सम्मान करती है। पति पत्नी को लक्ष्मी स्वरूपा देवी मानकर उसका सम्मान करता है। जहाँ पर पति-पत्नी में प्रेम स्नेह देखने को मिलता है, वहाँ ऐसे ही आदर्श संबंध प्राप्त होते हैं। दोनों साथ-साथ मिलकर अपने परिवार का भरण-पोषण करते हैं। सुःख व दुःख का साथ-साथ अनुभव करते हैं। जीवन में आने वाली प्रत्येक स्थिति का सामना मिल-जुल कर करते हैं।

यहाँ पर पितृ सत्तात्मक परिवार होने के कारण पुरुष घर का मालिक होता है। स्त्री सहायिका के रुप में पति का साथ देती है। ये दोनों एक ही गाड़ी के दो पहिये होते हैं। पुरुष घर के बाहर के कार्यो को करता है। स्त्री घर के अंदर के कार्यों को करती है। पति-पत्नी के प्रेम संबंधों द्वारा बच्चों का जन्म होता है। बच्चों के जन्म से परिवार का निर्माण होता है। ये दोनों मिलकर अपने बच्चों के सुन्दर भविष्य के सपने संजोते हैं।

बुन्देलखण्ड में ज्यादातर स्त्री-पुरुष के मधुर संबंध ही देखने को मिलते हैं।

बुन्देलखण्ड अंचल के हिन्दी (सामाजिक) उपन्यासों में पति-पत्नी संबंध -

(अ) श्री अम्बिका प्रसाद दिव्य जी के उपन्यासों में -

'प्रेमतपस्वी उपन्यास' में विवाह के पश्चात् रजउ अपने पति ईसुरी से फाग गाने का आग्रह करती है ।

पत्नी के आग्रह पर ईसुरी ने समाधि मुद्रा बनाकर फाग उठायी -

"नइयाँ रजऊ काउ के घर में-बिरथा कोऊ भर में,

सबमें है और सबसे न्यारी- सब ठौरन में मरमें

को कयै अलख-अलख की बातें-लखी न जाये नजर में

ईसुर गिरधर रयँ राधा में - राधा रयँ गिरधर में।"[१]

ऐसा कहकर ईसुरी अपनी प्रेयसी पत्नी को अपने अलिंगन में समेट लेते हैं। यहाँ पर पति-पत्नी

---

१. प्रेमतपस्वी उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या -२२३)

के रुप में ईसुरी व रजऊ के अनन्य प्रेम का वर्णन है।

'निमियाँ उपन्यास' में पत्नी श्यामा की मृत्यु हो जाने पर **"रमेश उसे देखते ही अपनी भुजायें पसार कर उसके ऊपर गिर पड़ता है। जैसे कोई नदी में गिर पड़े। तब भी हृदय-हृदय से न मिल सका। श्यामा की भुजायें उसे अपनाने के लिए न उठीं। शरीर में कोई स्पन्दन न हुआ।"**२ उपन्यास में यहाँ पर रमेश द्वारा अपनी पत्नी के प्रति अनन्य प्रेम दृष्टिगात होता है।

'मनोवेदना उपन्यास' में कुमुद की माँ **"रामा पुराने चाल ढाल की भारतीय रमणी थी। पति दिनेश बाबू उसे फूहड़ और असभ्य समझकर माफ कर देते थे। दिनेश पश्चिमी सभ्यता और रामा प्राचीन भारतीय सभ्यता की परन्तु दिनेश के स्वभाव में सहनशीलता अधिक होने के कारण किसी प्रकार पटती जाती थी।"**३ दोनों के विचारों में मेल न खाते हुए भी, दोनों पति पत्नी अपने दायित्वों का पूर्ण निर्वाहन करते हैं।

(ब) वर्मा जी के उपन्यासों में -

'अचल मेरा कोई उपन्यास' में अचल अपनी पत्नी निशा से कहता है **"तुमको पाकर अब और कुछ पाने की इच्छा नहीं रही। मैं बहुत सुःखी हूँ।"**१

'उदय किरण उपन्यास' में विवाह होने के पश्चात् उदयकिरण को **"चलो चलें चित्र देखने का अवसर कुंवरपुरा में मिल गया। चित्र देखने के पश्चात् अकेले में उदय ने किरण से कहा- इस चित्र का नाम 'उदय किरण' होता तो कैसा रहता। सकुचाकर किरण कहती है और केवल तुम्हारा नाम ही रहता तो?"**२ यहाँ पर पति-पत्नी का एक दूसरे के प्रति प्रेम स्पष्ट होता है।

'लगन उपन्यास' में रामा का दहेज के कारण ससुराल वाले विवाह में विदाकर ससुराल नहीं ले जाते हैं लेकिन देवसिंह अपनी पत्नी को बहुत प्यार करता है। वह छिपकर उससे मिलने उसके घर पहुँच जाता है। फिर वह वापिस जाने के लिए कहता है, डरता है, ताकि घर वाले रामा पर अत्याचार न करें। इस बात पर रामा कहती है **"मुझे इसका क्या भय है? मेरे देवता मेरे पास हैं। मेरा कोई क्या**

---

२. निमियाँ उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या -३३८)

३. मनोवेदना उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या -४-५)

१. अचल मेरा कोई उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या- २३९)

२. उदयकिरण उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या- १४८)

कर सकता है?बहुत होगा आपके साथ जाने को कह देंगे चली जाऊँगी।"३

(स) मैत्रेयी पुष्पा जी के उपन्यासों में -

'वेतवा बहती रही उपन्यास' में **"जीवन और मृत्यु के बीच झूलते पति के लिए और क्या मांगती गजरा फिर तो एक ही गुहार थी, एक ही टेर कि प्रभु इनकी सांसों में मेरी सांसों को मिला दे। मेरा जीवन काटकर जोड़ दो इनकी आयु में....... इसी में मेरा मोक्ष है, खुशी है, संतोष है।"१** उपन्यास में उदाहरण द्वारा स्पष्ट होता है कि यहाँ (बुन्देलखण्ड में) पर पत्नियाँ पतिव्रत धर्म का पालन कर उनकी दीर्घायु की कामना करती हैं।

'अल्मा कबूतरी उपन्यास' में मंसाराम के साथ **"उन दिनों पत्नी भी उनके साथा तपस्या पर जुटी थी। मंसाराम का तप ईश्वर आराधना था तो आनंदी की साधना पति सेवा थी जैसाकि शास्त्रों में बताया गया है। वह नहाने का पानी भरती, धुले कपड़े देती। चंदन घिसती। पूजा की थाली सजाती। लुटियाँ मांजकर दूध और जल भरती। फूल-पात जुटाती। परसाद बनाती। पंडितायनों की तरह ऐसे अनेक काम करती, जो पूजा से संबंधित थे। वह भक्त पति का किसी भी तरह दिल नहीं दुखाती। आसन डालकर पीछे बैठी रहती, कब क्या जरुरत पड़ जाये?२** धार्मिक कार्यों को पूर्ण करने में पति-पत्नी का सहयोग करती है।

मैत्रेयी जी ने अपने उपन्यासों में पति-पत्नी के मधुर संबंधों के साथ एक-दूसरे में कड़ुवे व अवैध सम्बन्धों को भी अपने उपन्यासों में उकेरा है। मैत्रेयी जी नारी को पुरुष की अपेक्षा किसी भी तरह कम नहीं मानती हैं, जो कार्य पुरुष कर सकता है वह नारी भी कर सकती है। वर्तमान में स्त्री-पुरुष कन्धे से कन्धा मिलाकर कार्य करते हैं। मैत्रेयी ने अपने उपन्यासों के माध्यम से नारी को हमेशा ऊँचा उठाने की कोशिश की है। पुष्पाजी ने नारी को दलित-शोषित जीवन जीने को हर सम्भव रोकने का प्रयास किया है। 'झूला नट उपन्यास' में पति-पत्नी के संबंध अलग हैं -

'झूला नट उपन्यास' में शीलो अपने विवाहित पति से बालकिशन के विषय में कहती है **"काय के पति-पत्नी, बाबू जी? वह अबोध मन का अच्छा सो बस तुम्हारी व्याहता होने के बाद**

---

३. लगन उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या- ५५)

१. वेतवा बहती रही उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- ६७)

२. अल्मा कबूतरी उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- २७)

भी.......पर छोड़ो उस बात का। बालकिशन तो बस ऐसे ही हमारे लिए। जैसे तुम्हारे लिए तुम्हारी औरत। बिन व्याही मन मर्जी की सच मानो बालकिशन इससे ज्यादा कुछ नहीं।"३ पति द्वारा ठुकरा देने पर शीलो अपने देवर बालकिशन से बिना बछिया किये वैवाहिक संबंध स्थापित क लेती है, जिस प्रकार उसका पति दूसरी औरत रख लेता है। उपन्यास में मैत्रेयी जी ने पुरुष प्रधान समाज पर स्त्री होकर ईंट का जबाब पत्थर से दिया है।

इस प्रकार के पति-पत्नी संबंध कम ही देखने को मिलते हैं अगर मिलते भी हैं, तो निम्न जातियों में ।

'इदन्नमम् उपन्यास' में दादा के पुनर्विवाह कर लेने पर देवरानी की कठोर बातों की निन्दा कर देवगढ़वारी अपने पति के विषय में कहती है- **"जेठ की मान-मरजादा तियाज दी तुमने। पर यह बताओ कि हम कैसे तियाग दें अपने आदमी का संग? हमारा तो अनादर नहीं किया उन्होंने। ले आए तो ले आए। होगी दुखिया।"४** देवगढ़ वाली आदर्श पत्नी होने के कारण पति का विरोध सुनने को तैयार नहीं होती है, जबकि पति (दादा) दूसरी पत्नी घर ले आते हैं। वह उसे दीन-दुखिया समझकर स्वीकार कर लेती है। दादा देवगढ़ वाली को हमेशा सम्मान देते रहते हैं।

बुन्देलखण्ड की परम्परानुसार उपन्यासों में पति-पत्नी के आदर्श संबंध देखने को मिलते हैं।

---

३. झूला नट उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- ११२)
४. इदन्नमम् उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- २५)

७.३ - आवास-प्रवास-

बुन्देलखण्ड अंचल के ग्रामीण क्षेत्रों में आवास-प्रवास एक जैसे हैं। गरीबी रेखा के नीचे जीवन-यापन करने वालों के घर कच्ची मिट्टी के बने होते हैं, उनके ऊपर छप्पर डला रहता है। सामान्य स्थिति वालों के घरों का बाहरी भाग पक्का एवं अंदर कच्चा होता है। सम्पन्न व्यक्तियों के घर पूरे पक्के बने होते हैं। घर कच्चे हो या पक्के घरों की बनावट एक जैसी ही होती है। जैसे- सबसे पहले पौर, फिर बरामदा, फिर आँगन, आँगन के चारों तरफ दालानें, दालान में नक्कासीदार खम्भे होते हैं। आँगन के बीच में मचकौरिया होती है। एक रसोई घर होता है। गेहूँ भरने के लिए एक बड़ा सा कमरा 'बन्डा घर' होता है। एक से अधिक मंजिल वाले मकानों पर छत के ऊपर अटारी बनी रहती है। नहाने व पीने के पानी को रखने वाला स्थान 'जलघरा' कहलाता है। घर के अंदर की बनावट आवास कहलाती है।

घर के बाहर चबूतरा होते हैं। चबूतरे पर व्यक्ति एकत्रित होकर बैठते हैं, जिसे हम 'चौपाल' कहते हैं। चबूतरे के पास में एक कोड़ा बना रहता है सर्दियों में उसमें बराबर आग जलती रहती है। जाड़ों में चौपाल का महत्व बड़ जाता है। बूड़े पुराने लोग बैठकर किस्से कहानियाँ सुनाते हैं और बच्चे उन्हें सुनकर ज्ञानार्जन करते हैं। घर के बाहर पेड़-पौधे आदि भी रहते है विशेषकर नीम का पेड़। घरों के बाहर बकरी, गाय, भैंस आदि भी बंधी रहती है। घर के बाहर की बनावट को हम प्रवास कहते हैं। आवास-प्रवास एक दूसरे से जुड़े होते हैं।

बुन्देलखण्ड अंचल के हिन्दी (सामाजिक) उपन्यासों में आवास-प्रवास -

(अ) श्री अम्बिका प्रसाद दिव्य जी के उपन्यासों में -

'निमियाँ उपन्यास' में "कच्चा मिट्टी का घर था। दीवालों में जहाँ-तहाँ कूबड़ से निकल रहे थे। मालूम होता था जैसे वे छप्पर के भार से नीचे बैठ रही हो। बगल में एक नावदान वह रहा था, जिसकी सुगंध अगान्तुक का दूर ही से स्वागत करती थी। घर का नाम था, मजिस्ट्रेट का बंगला।"१

"निमियाँ पास ही रसोई घर के सामने सारा दालान में बैठी किस्सा सुन रही थी।"२

---

१. निमियाँ उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या- २६६)

२. वही - (पृ० संख्या- १७७)

'प्रेमतपस्वी उपन्यास' में "घर का एक-एक कोना देखा, भंडेरी देखी, घिनौची देखी"३

(ब) वर्मा जी के उपन्यासों में -

'प्रत्यागत उपन्यास' में मंदिर की बनावट "ठाकुर द्वारे के समाने एक दालान थी। दालान के सामने एक बड़ा चौक ।"१

'उदयकिरण उपन्यास' में "गाँव में एक दो मंजिला पक्का मकान था। बाकी एक मंजिल वाले कुछ खपरैल और कुछ के छापे हुए थे ।"२

"परमोले ने गाय-बैल पौर में बाधे और बाहर गया। द्वार के दोनों और छोटे-छोटे चबूतरे थे। एक चबूतरे के नीचे आग जलाये, तपाने के लिए छोटा सा गण्डा था, जिसे कोड़ा कहते हैं।"३

'कुण्डली चक्र उपन्यास' में "घर एक ओर फूटा पड़ा था। पौर समूची थी आँगन लम्बा-चौड़ा और भीतर दो घर थे। एक कोने में नावदान था। और दूसरी ओर मिट्टी के घड़े और एक तांबे का कलश रक्खा था। पौर से आँगन और भीतर का सब सामान दिखलाई पड़ता था। घर में दो भैंसे थी।"४

(स) मैत्रेयी पुष्पा जी के उपन्यासों में -

'झूला नट उपन्यास' में "अम्मा नहीं, इस घर के पौर-दीवार, द्वार आँगन सबको सब बिलख रहे हैं।"१

'वेतवा बहती रही उपन्यास' में "वही राजगिरि कच्चे पक्के घरों का छोटा सा पुरवा।"२

"गाँव के समीप ही एक गढ़ी बनी हुयी है- पक्की ईंटों का कमरा और पतले खम्भों की दालान।"३ दशहरे की छुट्टियों में मीरा चन्दनपुरा आयी थी उसने "घर आकर देखा तो लगा

---

३. प्रेमतपस्वी उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या- ६३)
१. प्रत्यागत उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या- १३६)
२. उदयकिरण उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या- ३)
३. वही - (पृ० संख्या- ४)
४. वही - (पृ० संख्या- ८)
१. झूला नट उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- ५६)
२. वेतवा बहती रही उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- १०)
३. वही - (पृ० संख्या- १६)

ही नहीं कि यह अपना वही घर है। कोठों के आगे अब खपरैल छपे छपरे नहीं थे, पिताजी ने पक्के बरामदे बनवा दिये थे। पतले चौकोर खम्बों पर सीमेंट की छत। पूरा घर सफेद पुता हुआ था। अंधेरे कमरों में भी कुछ उजाला सा भर गया।"४

'इदन्नमम् उपन्यास' में श्यामली में दादा का घर पर "कलई पुती दीवालें। किशमिशी रंग की चिकनी और पीतल की पीली कील-ठुकी किवाड़े।"५ इसी उपन्यास में विरगवाँ का वर्णन- "विरगुवा छोटा सा गाँव है। मुश्किल से सौ घर है। कच्ची भीतें और खपरैलें की छतों का पुरवा है। गांव में इकलौता पक्का घर एक है।"६

'अल्मा कबूतरी उपन्यास' में राणा रामसिंह के घर को देखता है। घर "सफेद दीवारों और हरे रंग की चमकीली किवाड़े। घर के आगे बड़ा सा चौक, हैडपंप खड़ा है। दाईं ओर पक्की लिड़ौरी बनी है, गाय सानी खाती है। पास ही एक कोठरी है, जिसकी दीवारों पर लौकी-तोरई की बेलें फैली हैं।"७

उपन्यासों में आवास-प्रवास जैसा वर्णन है वर्तमान में भी बुन्देलखण्ड में ऐसे ही आवास-प्रवास देखने को मिलते हैं।

---

४. वेतवा बहती रही उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- ७५)
५. इदन्नमम् उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- १३)
६. वही - (पृ० संख्या- १००)
७. अल्मा कबूतरी उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- १२१)

७.४ - दिनचर्या -

बुन्देलखण्ड में ग्रामीण व कस्बों के लोग ज्यादातर समय व्यस्त रहते हैं। प्रातः उठकर वे उरैन डालकर अपने-अपने कार्यों में व्यस्त हो जाते हैं। स्त्रियाँ घर के अंदर के कार्यों में व्यस्त रहती हैं। पुरुष घर के बाहर के काम-काज संभालते हैं। प्रमुख व्यवसाय कृषि होने के कारण कृषकों का समय दिन-रात कड़ी मेहनत करते हुए व्यतीत होता है। कृषक कृषि का कार्य निपटा कर घर आकर सुबह-शाम गाय भैसों की देखरेख करते हैं। स्त्रियाँ दूध, घी, मट्ठा आदि तैयार करती हैं एवं घर गृहस्थी संभालती हैं। मनुष्य द्वारा प्रातः से रात्रि तक किये गये कार्य दिनचर्या में आते हैं।

बुन्देलखण्ड अंचल के हिन्दी (सामाजिक) उपन्यासों में दिनचर्या -

(अ) श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' जी के उपन्यासों में -

'प्रेमतपस्वी उपन्यास' में **"सूरज चढ़ा तो प्रकाश में निखार आया। गाँव के लोग भी घरों से बाहर निकलने लगे। कोई मवेशी ढीलने को, कोई कुंए से पानी भरने लगे।"**१ बड़ी बहू कहती है **"थोड़ा बैठले रानी बहू। बड़ी बहू ने स्वयं बैठते हुए पूछा, "झारा बटोरी कर आयी?"**२ बड़ी बहू भोलाराम से कहती **"उठो, तुम जाओ, नहाओ-धोओ और पूजा करो।"**३

'निमियाँ उपन्यास' में कई स्त्रियाँ अपना ज्यादातर समय अपनी साज-सज्जा में व्यतीत करती है। श्यामा ने **"आज आइने में देखकर अपने रुप की एक-एक रेखा सजाई थी। अपनी अच्छी से अच्छी पोशाक निकाली थी। जार्जिट की बहुमूल्य साड़ी, कामदार रेशमी ब्लाउज, बेल-बूटोंदार रेशमी पेटीकोट, रेशमी वेणी बाँधने का फीता।"**४ रुप श्रृंगार स्त्रियों की दिनचर्या में आता है।

'मनोवेदना उपन्यास' में **"शरद को काम मिल गया। काम को वह इतनी सावधानी और लगन के साथ करने लगा कि विनोद को दिनो-दिन उस पर श्रद्धा और विश्वास बढ़ने लगा।"**५

(ब) वर्मा जी के उपन्यासों में -

'प्रत्यागत उपन्यास' में **"भोजन के उपरान्त मंगल पिता के पास जा बैठा। टीकाराम**

---

१. प्रेमतपस्वी उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या- ७८)
२. वही - (पृ० संख्या- १२)
३. वही - (पृ० संख्या- ८३)
४. निमियाँ उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या- १३६)
५. मनोवेदना उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या- १६)

लड़के से इधर- उधर की बातें कहने लगे थोड़ी देर में उसकी माँ भी भोजन करके आ गई और उसकी पत्नी भी चौके का काम-काज करने लगी।"१

'कुण्डली चक्र उपन्यास' में प्रातः "पूना झाड़ू लेकर स्थान बुहारने लगी।"२

"जो गाँव वाले दिन भर की मेहनत मजदूरी के मारे अपने-अपने घरों में दाखिल हो चुके थे वे भी मृतक के संबंधियों के पास आ बैठे।"३

'उदय-किरण उपन्यास' में लोग सुबह नित्य कर्म को पूरा कर "उद्योग धन्धों में, कताई, बुनाई, मुर्गीपालन, भेड़ बकरियों की नसल का सुधार, शहद का उत्पादन, लुहार बढ़ई का काम बाँध-बन्धी डालना।"४ यह ग्रामीणों की दिनचर्या है।

'अचल मेरा कोई उपन्यास' में दिन प्रति दिन "सुधाकर का काम बढ़ने लगा और वह उसका अधिक समय लेने लगा। कुन्ती ने पुस्तकों को अधिक समय देने का प्रयास किया।"५

(स) मैत्रेयी पुष्पा जी के उपन्यासों में -

'झूला नट उपन्यास' में बालकिशन का "चार बजे के पहले ही उठ जाना, नहाना धोना, हनुमान चालीसा का पाठ, देवी के मंदिर में जल चढ़ाकर बैठ जाने बैठ जाने के बाद दुर्गा सप्तसती के छंदों का गायन।"१

'वेतवा बहती रही उपन्यास' में "अंदर को बड़ा सा आँगन था। जहाँ नानी सुबह-सुबह सूरज निकलने से बहुत पहले मुह-अधियारे छविया के संग खूब बड़ी सी मटकी में मठा भाया करती थी।"२ "नानी की ही तरह माँई नहा-धोकर सूरज के सामने लोटा-भर पानी ढारती है। पानी से गीली हुई धरती को छूकर माथे से लगाती है। तुलसी के नीचे घी का दिया जलाकर धरती है और परिक्रमा करती है।"३

---

१. प्रत्यागत उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या- १२)
२. कुण्डली चक्र उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या- ६०)
३. वही - (पृ० संख्या- ११७)
४. उदय किरण उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या- ८३)
५. अचल मेरा कोई उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या- १२)
१. झूला नट उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- २३)
२. वेतवा बहती रही उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- ११)
३. वही - (पृ० संख्या- १२)

प्रातः मीरा नहाने की तैयारी में थी। दादी-दाल भरवाने में लगी थी। सबेरे से शेरा की बहू जतला से दाल दल रही थी। दालें भरकर रख दी तो तुरन्त बोली **"रोटी चढ़ाऔ बेटा, विजय ट्रैक्टर लैकें आ रहे होंगे।"४**

'इदन्नमम् उपन्यास' में कुसमा **"भाभी भोर से ही नहा लीं। सूरज भगवान को जल ढार रही है। नीचे की माटी मांग से छुआ ली। तुलसी ढारी, परिक्रमा की। आँखें बंद किये खड़ी हैं।"५**

बऊ ने **"स्नान ध्यान किया। सूरज भगवान को जल चढ़ाया। हरि सुमिरन करके अपना संकल्प को पक्का किया। मन्दा बऊ से कहती है ले यह फूल पड़ो चौपाई खतम करें सो चढ़ा देना ठाकुर जू पर।"६** प्रातः व सांयकाल रामायण का पाठ ग्रामीणों की दिनचर्या में निहित रहता है।

'अल्मा कबूतरी उपन्यास' में रामसिंह काका दिनचर्या बतलाते हुए राणा से कहते हैं **"सबेरे टट्टी जाना, फिर नहाना। उसके बाद पूजा। चंदन घिसना, अल्मा बतायेगी।"७**

धीरे-धीरे राणा और भी कार्य राणा के दिनचर्या में निहित हो जाते हैं **"राणा गाय दुहता, गोबर डालता, पानी भरता ।"८**

मंसाराम अपने परिवार में शान्ति बनाये रखने के लिए पहले की ही दिनचर्या बनाये हुए थे। **"नियम से नहाना-धोना, खाना-पीना और भजन-पूजन में जिंदगी बिताने वाले ध्येय का अनुकरण करते हुए समय बिता रहे थे।"९**

उपन्यासों में वर्णित दिनचर्या आज भी बुन्देलखण्ड के निवासियों में देखने को मिलती है।

---

४. वेतवा बहती रही उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- ११९)
५. इदन्नमम् उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- ८७)
६. वही - (पृ० संख्या- ११८)
७. अल्मा कबूतरी उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- १२१)
८. वही - (पृ० संख्या- १३५)
९. वही - (पृ० संख्या- १५२)

७.५ - भोजन व्यंजन -

प्रत्येक क्षेत्र में प्रकृति के अनुसार अलग-अलग फसलों की उपज होती है। जिस क्षेत्र में जो उपज होती है, वही उस क्षेत्र का भोजन होता है। जैसे- कहीं धान, चावल का अधिक उत्पादन होता है उस क्षेत्र का चावल प्रमुख भोजन है। जैस- बुन्देलखण्ड में गेहूँ, चने की अधिक पैदावार होती है, तो यहाँ का प्रमुख भोजन गेहूँ की रोटियाँ, चने की दाल है। विवाह, पर्व, उत्सव आदि पर बुन्देलखण्ड में 'समूदी' रसोई तैयार की जाती है। इस भोजन का बहुत महत्व होता है। इसमें बहुत से पकवान तैयार किये जाते है जैसे- फुल्का, पछयावर, चने की दाल,चावल, बरा, फरा, लप्सी, भुर्रा, आदि बनाया जाता है। ये सभी व्यंजन कच्चे भोजन में आते है। पक्के भोजन में पूड़ी, दो या तीन सब्जियाँ, रायता (सन्नाटा), खीर, पापड़ एवं मिठाई आदि ।

बुन्देलखण्ड अंचल के हिन्दी (सामाजिक) उपन्यासों में भोजन-व्यंजन-

(अ) श्री अम्बिका प्रसाद दिव्य जी के उपन्यासों में-

'प्रेमतपस्वी उपन्यास' में पूड़ी, सब्जी, मिठाई- भागवत के समापन पर **"पत्तले पड़ी । परस हुई। पूड़ी-सब्जी-मिठाई की भरमार हो चली। लोगों ने भोजन शुरू किया ।"१**

'निमियाँ उपन्यास' में "रजनी देवी 'लगन' के लिए जिस पात की तैयारी में लगी थी। सारे आँगन में औरतें भरी थीं । कोई औरत मैदा दल रही थी, कोई गेहूँ साफ कर रही थी । काम के साथ-साथ गाने भी चल रहे थे ।"२

(ब) वर्मा जी के उपन्यासो में-

'कुण्डली चक्र उपन्यास' में १. कलेवा- " रतन एक थाली में, कुछ कलेवा कटोरी में दूध और गिलास में पानी ललि के सामने रख कर भीतर चली गई ।"१

२. पौनछक पूड़ी- बारात आने पर **"जनवासा, पौनछक की पूड़ी इत्यादि महत्वपूर्ण विषयों पर खूब लड़ाई-झगड़े होने के बाद टीका पौने पाँच बजे हुआ ।"२**

---

१. प्रेमतपस्वी उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या- १७६)

२. निमियाँ उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या- १६१)

१. कुण्डली चक्र उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या- ४४)

२. वही - (पृ० संख्या- ८७)

'अचल मेरा कोई उपन्यास'-

३. चाय-पकौड़ी- क्लब में "गर्म चाय एवं चटपटी पकौड़ियों की ठहरी ।"३

(स) मैत्रेयी जी के उपन्यासों में-

'झूला नट उपन्यास' में-

१. गोरस-भात- गाँव के लोग इंतजार में है कि "माता का धूम-धाम से होगा भण्डारा । गोरस और भात, तीन गाँव की कन्यायें जिवेगी ।"१

२.दलिया-दूध- अम्मा की पुकार सुनकर बालकिशन गया "आंचल के नीचे से दलिया-दूध भरा कटोरा निकाला।"२

३. खीर- प्रसाद तैयार करने के लिए "धान कूट कर चावल निकाला जायेगा । गुड़ डाल कर भात रधेगा कड़ाही में घी डालकर भात भुनेगा। गुडऋ की भेली हसियां से काटी जाती है, आज के दिन, हमारे थान बब्बन पर।"३

४. मिठाई- सत्ते के बाप "कलाकन्द लाना कभी नहीं भूलते थे।"४

५. सब्जी-रोटी- "आलू की तरकारी और रोटी के चलते घर जिंदा होगा।"५

६. कचौरिया, खीर, बूँदी का रायता- "प्याज मसाले में तैयार की गई तरकारियां सौंफ और धनियां की कचौरियां, मखाने की खीर, बूँदी का रायता।"६

७. पेड़े- शीलो बालकिशन से कहती है "मन्नू मिठिया के यहाँ से पेड़े भी लेते आना।"७

८. लस्सी - "दसियों बार मना करने पर ठण्डी लस्सी लगा दी।"८

---

३. अचल मेरा कोई उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या- १८१)
१. झूला नट उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-)
२. वही - (पृ० संख्या- १३)
३. वही - (पृ० संख्या- ५३)
४. वही - (पृ० संख्या- ५५)
५. वही - (पृ० संख्या- ५६)
६. वही - (पृ० संख्या- ६२)
७. वही - (पृ० संख्या- १०८)
८. वही - (पृ० संख्या- ११६)

'वेतवा बहती रही उपन्यास' में -

९. ज्वार बाझरे की रोटी- "ज्वार बाझरे की रोटी मिल जाये तो समझो छत्तीसी भोग।"९

१०. कलेवा- मीरा की नानी ने सुबह कलेऊ करवा दिया था। "दूध-दलिया एक टाकी में डाल लाई वह'(माई के लिए भी कलेऊ की थाली परसदी- दो रोटी- घी में चुपड़ी हुई- अचार के साथ और पीपल के लम्बे गिलास में दूध ।"१०

११. कड़ी-"दो चूल्हों में बड़े-२ पतेलो पर कड़ी चड़ी थी। रोटी चावल आदि भी बनाये जा रहे थे ।"११

१२. लड्डू व नमकीन मटरी - " उर्वशी ने मीरा के साथ आठ दिन का नाश्ता बांध दिया लड्डू मटरी ।"१२

'इद्न्नमम उपन्यास' में -

१३. सब्जी, रोटी, अचार, खीर- "आलू-बैगन का साग, दही का कटोरा, घी से चुपड़ी हुई रोटी ठण्डी रोटिया । मिर्च और आम का अचार ।कटहल की तरकारी, आलू का साग, रोटी और कटोरे में खीर।"१३

१४. लड्डू- "मोठ के बाजार से बुदी के लड्डू आये ।"१४

१५. पूरी, पपरिया, गुजियाँ- त्यौहार के दिन- "पूरी पपरिया-गुझिया बनाये जाते है।"१५

१६. प्रसाद- "पंजीरी, कटे हुए केले है, दही मिलाकर चरणामृत बनाया ।"१६

१७. लुचई- "भण्डारे की दावत बैठ गई । लुचई सिंकने की महक उठ रही है।"१७

---

९. वेतवा बहती रही उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-१४)
१०. वही - (पृ० संख्या- ८२)
११. वही - (पृ० संख्या- ६२)
१२. वही - (पृ० संख्या- ३७)
१३. इदन्नमम् उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-१७-२५)
१४. वही - (पृ० संख्या- १२०)
१५. वही - (पृ० संख्या- १४५)
१६. वही - (पृ० संख्या- ३२२)
१७. वही - (पृ० संख्या- ३६०)

'अल्मा कबूतरी उपन्यास' में -

१८. **सम्पूर्ण कच्चा भोजन-** रामसिंह काका के घर में सब कुछ खाने को है राणा अपने मन में विचार करता है कि **"दाल रोटी खाने को कितना तरसता था । यहाँ दाल संग तरकारी भी, चावल भी, दही भी, कितने ही ऐसे स्वाद है, जो यहाँ आकर चखे है।"१८**

१९. **पूड़ी, कचौड़ी, साग, खीर- "अल्मा ने पूड़ी- कचौड़ी, साग- खीर की दावत के दस्तरखान बिछा दिया ।"१९**

२०. **दूध, जलेवी, समोसा, बरफी-** सूरभान के यहाँ कैद अल्मा **"दूध, जलेवी, समोसा, बर्फी, पूरी साग धरे-धरे सड़-सूख जाते है।"२०** हाथ नहीं लगाती ।

उपन्यासों में दिये गये मांसाहारी भोजन-व्यंजन निम्न हैं -

'इदन्नमम् उपन्यास' में **"गोश्त का सालन, प्याज और रोटी अहिल्या थाली परोस लाई।"२१**

'अल्मा कबूतरी उपन्यास' में कदमबाई राणा को समझाती हुई कहती है - **"खरा-लुखरिया का मांस खाकर ही हमने जिन्दगी जीती है।"२२**

उपन्यासों में मांसाहारी भोजन ज्यादातर मेहनत मजदूरी करने वाले लोग ही ग्रहण करते हैं। जिनके पास आटा, दाल, चावल, एवं सब्जी खरीदने के लिए पैसे उपलब्ध नहीं होते। ये लोग जीव-जन्तु पकड़ कर ही अपना पेट पालते हैं। यही इनका भोजन **है।**

---

१८. अल्मा कबूतरी उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-१२३)
१९. वही - (पृ० संख्या- १४१)
२०. वही - (पृ० संख्या- २९१)
२१. इदन्नमम् उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- २७५)
२२. अल्मा कबूतरी उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या-३८)

७.६ - लोकाचार -

प्रत्येक क्षेत्र के पृथक-पृथक लोकाचार एंव लोकारीतियाँ होती है। लोकाचार आचार व संस्कृति के यथार्त चित्र होते है। जिस युग में जो आचार प्रस्फुटित होते है, वह उस युग की संस्कृति कहलाते है। कलाकृतियों द्वारा जो चित्र चित्रित होते है- जैसे युद्ध के चित्र, घोड़ों के चित्र, शिकार करना आदि । इन चित्रों के माध्यम से प्राचीन युग के आचार उद्घटित होते है।

आचारों में अतीत की झाँकी और भविष्य के संकेत मिलते है। वास्तविकता में लोकाचार, लोकसंस्कारों, लोकरीतियों, लोकप्रथाओं और लोकवर्जनाओं के सामुच्य है। इसलिए वे दीर्घजीवी होते है। प्राचीन परम्पराओं द्वारा पोषित इनमें लोकविश्वास है। शकुन- अपशकुन, टोना-टोटका, अथवा मनौतिया कदम-कदम पर मिलती है। शिक्षित लोग इन्हें अंधविश्वास व ढकोसला मानते है। लोकाचार लोक में लोकविश्वास के रूप में प्रतिष्ठित रहते है। लोग इन्हें पूर्ण विश्वास के साथ अपनाते है।

बुन्देलखण्ड अंचल के हिन्दी (सामाजिक) उपन्यासों में लोकाचार-निम्न रूपों में मिलते है।-

(अ) श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' जी के उपन्यासों में -

१. मनौतियाँ- 'मनोवेदना उपन्यास' में बाबू द्वारा घर छोड़कर चले जाने पर कुमुद **"देवी-देवताओं को मनाती है और प्रार्थना करती है।"**[१] वह जल्द से जल्द वापिस लौट आये । मन-वांछित इच्छाओं को पूर्ण करने के लिए लोग अपने इष्ट देवों से मनौतिया मागते है।

२. शगुन- 'निमिया उपन्यास' में पाँचवी पुत्री निमियाँ के जन्म पर कृष्ण कहती है - **"चलो मैं तुम्हारी ओली देती हूँ। लड़का हो या लड़की तुम्हारे नेग दस्तूर तो हाथ घिसे के हैं। खाली ओली कैसे जाओ लड़की का नहीं तो भैया और भावी का सगुन देखना ही है।"**[२]

'प्रेमतपस्वी उपन्यास' में **"सगनौतिया यद्यपि निराधार होती, तब भी वे मनुष्य को अपने मार्ग पर चलाती है। पण्डित भेलाराम की सगनौतिया से कलुआ चपरासी को पूरा विश्वास हो गया कि उसकी भैसें दलीं ने चुरायी है।"**[३]

इसी उपन्यास में रजउ व ईसुरी के विवाह में **"मंगली घट रखे हुए औरतों ने मंगल गीत**

---

१. मनोवेदना उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या- ५६)
२. निमियाँ उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या- ६,१०)
३. प्रेमतपस्वी उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या- ६३)

गाये।"४ मंगल-कलश शुभ शकुन के प्रतीक होते है।

३. अपशकुन - 'मनोवेदना उपन्यास' में शरद पाँच मिनट के लिये **"छींक आने का दोष मिटाने के लिये कुर्सी पर बैठ गया। ज्यों ही दरवाजे पर गया एक काना मिल गया । एक काला कुत्ता रास्ता काट गया।"५**

४. छुआ -छूत- 'मनोवेदना उपन्यास' में रामा वासुकी के विषय में विनोद से कहती है **"न जाति का न पाति का मै तो उसका छुआ पानी भी नहीं पीती ।"६**

५. अंधविश्वास - 'निमियाँ उपन्यास' में घपला बोला - **" राम! राम हत्या सिर पर चढ़कर बोलती है। देखना क्या होता है। अब यह कोट किस लिए लादे लिए चलते हो । यही हमें फसा देगा ।"७** यहाँ पर कृष्णा बुआ निमियाँ से कहती है **"यह क्या भूत तेरे ऊपर सवार हो गया ।"८**

६. टोना- टोटका - 'प्रेमतपस्वी उपन्यास' में इसुरी अपने पिता से कहता है **"कोई-भूत-प्रेत मेरे ऊपर चढ़ आया हो । फागें बनीं या क्या बना , मै नहीं जानता।"९**

इसी उपन्यास में भोला कहते है **"दली न जाने भूत-प्रेत विद्या जानता है, या वशीकरण मन्त्र सिद्ध किये है? उसने ईसुरी पर कैसा जादू फेरा है।"१०**

(ब) वर्मा जी के उपन्यासों में -

१. मनौतियां - 'कुण्डली चक्र उपन्यास' में पूना अपनी सुरक्षा के लिए भगवान से मनौती मांगती है, **"वरुण देव मेरी भली भांत रक्षा करेंगें ।"१** 'उदय-किरण उपन्यास' में मगन मनौती माँगता है **"कि दुर्गाजी की कृपा से बाध-बध जाये और उससे नहर निकल जाय तो फिर लक्ष्मी जी हँस-हस पड़ेगी ।"२**

---

४. प्रेमतपस्वी उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या- २१९)
५. मनोवेदना उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या- ११)
६. वही - (पृ० संख्या- २७)
७. निमियाँ उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या- २६२)
८. वही - (पृ० संख्या- २२४)
९. प्रेमतपस्वी उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या- ५१)
१०. वही - (पृ० संख्या- ८४)
१. कुण्डली चक्र उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या - २०१)
२. उदयकिरण उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या - ८९)

२. शगुन – 'कुण्डली चक्र उपन्यास' में अजित कुमार ने **"एक गाय बच्चे को दूध पिलाती देखी ।"३**

'लगन उपन्यास' में पन्नालाल अपने पुर्नविवाह की खुशी का शुभ स्वप्न देखता है **"घर के आस-पास भैंसो के 'बगर के बगर' स्वप्न में दिखलाई पड़ने लगे, बालों में तेल ज्यादा पड़ने लगा, साफे भी लहरियादार तथा इन्द्रधनुषर बाँधे जाने लगे ।"४**

३. अपशकुन – 'कुण्डली चक्र उपन्यास' में शिवलाल **"यात्रा के समय तीन आदमियों का एक साथ जाना मनहूस समझता था ।"५**

४. छुआ-छूत – 'प्रत्यागत उपन्यास' में बुड्डे ने कहा,**"मेरे हाथ का छुआ पानी नही पिया इसलिए कह सकता कि तुम मुसलमान नहीं हो ।"६**

५. अंधविश्वास – 'प्रत्यागत उपन्यास' में पं. नवल बिहारी ने गाँवों वालों को **"मूर्ति की आँख मिच जाने वाली बात ब्यौरे के साथ सुनायी ।"७ "मूर्ति के पैर ऊपर थे सिर नीचे।"८**

'कुण्डली चक्र उपन्यास' में यहाँ पर भुजबल अजित से कहता है **"कि महलों में भूत-प्रेत का निवास होता है ।"६**

(स) मैत्रेयी पुष्पा जी के उपन्यासों –

१. मनौतियाँ – 'झूला नट उपन्यास' में बाल किशन स्वस्थ होने के लिये कहता है कि **"मइया ने चाहा, तो मंदिर के द्वारे जमकर खेलूंगा ।यहां बाल किशन कहता है "चण्डी माता तुम्हारे मनोरथ पूर्ण करेगी ।"१**

'इदन्नमम् उपन्यास' में बऊ ने मनौती मांगी **"हे मेरे प्रिरभू, मेरे ठाकुरजू, मोरे देहरे**

---

३. कुण्डली चक्र उपन्यास – डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या – २७)
४. लगन उपन्यास – डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या – १५)
५. कुण्डली चक्र उपन्यास – डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या – १७१)
६. प्रत्यागत उपन्यास – डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या – ४८)
७. वही – (पृ० संख्या – १४३)
८. वही – (पृ० संख्या– १४४)
६. कुण्डली चक्र उपन्यास – डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या – ३४)
१०. कुण्डली चक्र उपन्यास – डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या – २०१)
१. झूला नट उपन्यास – मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या – १२)

बब्बा और कुल के इतर-पितर, मंदा और मकरंद की जिंदगी में हमेशा चारों दिशायें ऐसी ही उजियारी रहें ।"२

'अल्मा कबूतरी उपन्यास' में जमुनी "तीन साल से वीरदेवता पर पान और वेर के पत्ते चढ़ाकर संतान मांग रही थी ।"३

२. शगुन - 'वेतवा वहती रही उपन्यास' में उर्वशी के विवाह के समय "सुहाग के कचारा (काली चूड़ी) ।"४ शुभ-सगुन मानी जाती है।

३. अपशकुन - 'अल्मा कबूतरी उपन्यास' में मन्त्री जी की मृत्यु की सूचना को झूठ समझकर अल्मा कहती है ऐसा इसलिए कहा कि "मंत्री जी के सिर कौआ बैठ गया होगा ।"५

'झूलानट उपन्यास' में अम्मा कहती है कि "सगुन सात आयी बहू के आगमन पर अठैन (असगुन) ।"६

'वेतवा वहती रही उपन्यास' में मीरा सोचती हैं कि "शायद सिर पर कौआ बैठ गया हो ।"७

४. छुआ-छूत - 'अल्मा कबूतरी उपन्यास' में मास्टर जी निम्न जाति के राणा को स्कूल में पानी पीने के लिये नल नहीं छूने देते है। वे उससे कहते है "तू नल नहीं छुएगा । नल के आस-पास भी देख लिया तो याद रखना, यहाँ सिपाही आते है पकड़वा दूँगा ।मास्टर जी ने सुझाव दिया, तालाब से पानी पीकर आ ।"८

५. अंधविश्वास - 'अल्मा कबूतरी उपन्यास' में "हाय देवी माता, जमुनी चुड़ैल ने घर दबाया । भजनी भूत-पिसाचों पर विश्वास करने लगी ।"९

'झूला नट उपन्यास' में बालकिशन कहता है "देह में माता का सत्य है ।"१०

---

२. इदन्नमम् उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या - १२१)
३. अल्मा कबूतरी उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या - ४७)
४. वेतवा बहती रही उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या - ४१)
५. अल्मा कबूतरी उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या - ३८२)
६. झूला नट उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या - २५)
७. वेतवा बहती रही उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या - ६२)
८. अल्मा कबूतरी उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या - ८२)
९. वही - (पृ० संख्या - ५०)
१०. झूला नट उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या - १२)

'इद्न्नमम उपन्यास' में बऊ कहती है **"भूत-प्रेत का इस उमर में बड़ा डर रहता है बेटा । चड़ी उमर को ही ले दावता है प्रेत ।"११**

६. टोना-टोटका - 'इदन्नमम् उपन्यास' में एक बऊ कहती है **"खसबोई पर रीझ जाते है भूत-प्रेत । हवा के तेज झोंको में कोई चुड़ैल उड़ा रही हो मुगंध ।"१२** ये खुशबु वाले तेल को टोटका मानती है बऊ, इसलिए मन्दा को लगाने से मना करती है ।"

उपन्यासों में दिये लोकाचार बुन्देलखण्ड में आज भी लोग मानते है। जो कि पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तान्तरित होते है। वर्तमान शिक्षा के कारण नई युवा पीढ़ी के लोग इन्हें नहीं मानते है। फिर बुन्देलखण्ड में ज्यादातर लोग इन्हे मानते हैं।

७.७ - लोकरंजन -

मनोरंजन के लिए लोक विशेष में जो खेल खेले जाते हैं, उन्हें हम लोकरंजन कहते हैं। मनुष्य के शरीर को स्वस्थ्य बनाने का प्रमुख साधन है मनोरंजन। वर्तमान समय में मनोरंजन के लिए अनेकों सुख-सुविधायें उपलब्ध हैं, लेकिन खेलों के माध्यम से मनोरंजन करने पर अनोखा ही आनंद प्राप्त होता है।

बुन्देलखण्ड अंचल के हिन्दी (सामाजिक) उपन्यासों में लोकरंजन -

(अ) श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' जी के उपन्यासों में -

'प्रेमतपस्वी उपन्यास' में

१. घुट-घुटैया- 'ईसुरी' ने रजउ का हाथ पकड़ा। और बोला, **"घुट-घुटैया खेलोगी।"१** इस खेल में एक बच्चा घुटने के बल चलता है और दूसरा पीठ पर बैठता है।

२. गुड्डा-गुड़ियों के खेल- "लड़किया गुड्डा-गुड़िया के विवाह के ही खेल खेलती है।"२

३. चन्दा-पौआ- पं० भोलाराम ईसुरी से कहते हैं **"पड़ोस के बच्चे बुला लिया करा। उनके साथ चन्दा-पौआ या अठारह गोटी खेला करा।"३**

---

११. इदन्नमम् उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या - ६४)

१२. वही

१. प्रेमतपस्वी उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या- १२)

२. वही - (पृ० संख्या- ३२)

३. वही - (पृ० संख्या- ४३)

४. आतिशबाजी- 'ईसुरी' -'रजउ' के विवाह में मनोरंजन के लिए **"आतिशबाजी के विशेष खिलौने छूटे जिनका प्रकाश सबको प्रकाशित कर चला।"४**

'निमियाँ उपन्यास' में -

५. **कविता द्वारा, कुश्ती द्वारा, जानवरों की कुश्ती द्वारा - "महाराजा साहब मनोरंजन के लिए कविता भी सुन लेते थे, पहलवानों की कुश्तियां देखकर उनकी नकलों का आनंद ले लेते। जंगली जानवरों की तथा लवा तीतरों की लड़ाईयां तो प्रायः रोज ही देखते।"५**

६. **शिकार-** राजा साहब को **"शिकार का तो यहाँ तक शौक था कि जानवरों की खबर पाते ही भोजनों का थाल छोड़कर चल देते थे।"६**

(ब) वर्मा जी के उपन्यासों में -

'उदय किरण उपन्यास' में - **१. बन्दूक चलाना-** गाँव में **"बन्दूक चलाना बहुतो ने सीख लिया।"१**

२. संगीत- संगीत मनोरंजन का बहुत अच्छा साधन है। **"स्त्रियाँ गाती-बजाती रहती हैं। पुरुष आला गाते हैं और भजन कीर्तन भी करते हैं।"२**

३. शिकार- "जंगल में तेंदुये, सुअर तीतर इत्यादि जानवर थे। जिनका शिकार कल्याण सिंह किया करते थे।"३

४. नौटंकी- "मंच पर नौटंकी का एक छोटा सा दृश्य हुआ।"४ ग्रामीण क्षेत्रों में नौटंकी मनोरंजन का विशेष साधन हुआ करती थीं।

'अचल मेरा कोई उपन्यास' में -

५. **रासलीला- "रीति-रिवाज और रासलीला नाच की खिचड़ी समझो।"५** रासलीला में नृत्य

---

४. प्रेमतपस्वी उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या- २१७)
५. निमियाँ उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ० संख्या- २३)
६. वही
१. उदयकिरण उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या- ८४)
२. वही
३. वही - (पृ० संख्या- १०७)
४. वही - (पृ० संख्या- १०८)
५. अचल मेरा कोई उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या- ८३)

मनोरंजन का प्रमुख साधन होता है।

६. टैनिस, पहलवानी- "टैनिस तक तो गनीमत थी, पर दण्ड-बैठक और पहलवानी से क्या मतलब?"६ वर्तमान समय में नवीन खेलों को लोग महत्व अधिक देते हैं, प्राचीन खेलों को इतना नहीं।

७. निशानाबाजी - सुधाकर कहता है "बन्दूक चलाना सीखोगी कुंती? बन्दूक चलाना केवल या निशाना बाजी भी?"७

८. ताश- "ब्रज सोलो रमी अपनी जान से ज्यादा प्यारी नहीं।"८ ये ताश के पत्तों के खेल हैं। बुन्देलखण्ड में यह खेल बहुत खेला जाता है।

(स) मैत्रेयी पुष्पा जी के उपन्यासों में -

'झूला नट उपन्यास' में -

१. गुल्ली-डण्डा- बालकिशन भाभी के तीखे दर्द को "गुल्ली डण्डा का खेल समझ रहा है।"१

'वेतवा बहती रही उपन्यास' में -

२. आतिशबाजी - दादी फिकर में थी कि "उदय ने बैण्ड-आतिशबाजी का प्रबंध किया कि नहीं।"२

'इदन्नमम् उपन्यास' में -

३. ताश-चौपड़- कौन सा खेल चल रहा था मन्दा के संग? "ताश, चौपड़ या कुछ और....।"३

४. पर्वों पर आतिशबाजी- बऊ मन्दा से कहती है "कुछ मोमबत्तियाँ, कुछ फटाखे, रंगीन माचिस, फुलझड़ी रखी है झोला में।"४ पर्वों पर आतिशबाजी कर बच्चे विशेष आनंद का अनुभव करते हैं।

---

६. अचल मेरा कोई उपन्यास - डा० वृन्दावन लाल वर्मा (पृ० संख्या- १५६)
७. वही - (पृ० संख्या- १६०)
८. वही - (पृ० संख्या- १८३)
१. झूला नट उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- ५८)
२. वेतवा बहती रही उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- ८८)
३. इदन्नमम् उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- ५६)
४. वही - (पृ० संख्या- ३६०)

५. **तीरकमान-** तुम्हारा ध्यान **"दशहरा के तीर कमानों में लगा हुआ है।"**[५] दशहरा के मेले में बच्चे राम-रावण युद्ध को देखकर तीरकमान खरीद कर उन्हें चलाने का प्रयास करके, आनंद लेते हैं।

'अल्मा कबूतरी उपन्यास' में -

६. **ताश खेलना-** राणा माँ से कहता है **"करन कभी तासों की बाजी लगा लेता है।"**[६]

७. **कैरम, लूडो, सांप-सीढ़ी-** रामसिंह राणा से कहता है तू अल्मा के संग **"ताश, कैरम, लूडो, सांप-सीढ़ी आदि खेल लिया कर।"**[७]

८. **चन्दा-पौआ- "राणा को ऐसा ही एक खेल याद आ गया- चंदा-पौ।"**[८]

९. **गुलेल- अल्मा राणा से कहती है "चलो गुलेल चलाते हैं।"**[९]

उपन्यासों में वर्णित खेल बुन्देलखण्ड में आज भी मनोरंजन के अच्छे साधन माने जाते हैं। ग्रामीण बच्चे आज भी चंदा-पौआ, लुका-छिपी, गुड्डा-गुड़ियों का खेल, ताश कैरम तथा बड़े बुजुर्ग लोग निशानेबाजी, कुश्ती, ताश आदि शौक के साथ खेलते हैं।

---

५. इदन्नमम् उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- ३६६)
६. अल्मा कबूतरी उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ० संख्या- ६८)
७. वही - (पृ० संख्या- १२२)
८. वही - (पृ० संख्या- १२४)
९. वही - (पृ० संख्या- १३५)

अध्याय - ८

बुन्देलखण्ड के आंचलिक उपन्यास साहित्य का हिन्दी साहित्य को योगदान

बुन्देलखण्ड के आंचलिक उपन्यास साहित्य का हिन्दी साहित्य को योगदान -

प्राचीनकाल में 'चेदि', 'जेजाक भुक्ति', 'दशार्ण' आदि नामों से विख्यात्-भारत भूमि का हृदय स्थल बुन्देलखण्ड एक अद्वितीय भू-भाग है। यहाँ की प्राकृतिक छटा मानव मन को सहज़ आकर्षित करती है। पठारी भू-भाग होने के कारण यहाँ की जीवन-यापन पद्धति श्रम साध्य है। बुन्देलखण्ड यद्यपि आर्थिक क्षेत्र में बहुत पिछड़ा है लेकिन साहित्य के क्षेत्र में यह उर्वरा-भूमि है। भवभूति, व्यास से, हिन्दी के 'वीरगाथा काल' से अब तक यहाँ पर अनेकों राष्ट्रीय स्तर के साहित्यकारों ने जन्म लिया।

हिन्दी गद्य साहित्य में उपन्यास साहित्य का महत्वपूर्ण स्थान हे। उपन्यास कथा साहित्य का विस्तृत फलक है जिसके माध्यम से मानव-जीवन की विस्तार पूर्वक व्याख्या की जा सकती है। हिन्दी के आंचलिक उपन्यासों के क्षेत्र में 'फणीश्वर नाथ रेणु' का महत्वपूर्ण स्थान है। उन्होंने क्षेत्रीय विशेषताओं के आधार पर अनेक उपन्यासों की रचना कर 'आंचलिक उपन्यास साहित्य' को पाठकों में लोकप्रिय बनाया है। अन्य अनेक उपन्यासकारों ने इस लोकप्रियता से प्रेरित होकर अपनी क्षेत्रीय विशेषताओं को कथा साहित्य में स्थान देकर अनेक लोकप्रिय आंचलिक उपन्यास प्रस्तुत किये।

आंचलिक का शाब्दिक अर्थ है जनपद या क्षेत्र। आंचलिक उपन्यास उसे कहते हैं, जिन उपन्यासों में किसी विशिष्ट प्रदेश के जनजीवन का समग्र बिम्बात्मक चित्रण होता है। इन उपन्यासों का प्रमुख उद्देश्य किसी विशेष अंचल के समग्र जीवन का चित्रण करना होता है। अतः उसमें जनपद की 'लोक संस्कृति' एवं 'लोक सभ्यता' निहित है।

उपन्यासकार जब स्थानीय विशेषताओं को अपने उपन्यासों में प्रस्तुत करता है, तो लेखक के मन-मस्तिष्क में रचे-बसे चित्र शब्द पाकर मुखरित हो उठते हैं। आंचलिक उपन्यासों में, उपन्यासकार अपनी स्थानीय लोक भाषा का प्रयोग करके, लोकजीवन को साहित्य प्रेमियों तक पहुँचाने का सफल प्रयास करते हैं।

हिन्दी उपन्यास के क्षेत्र में बुन्देलखण्ड के 'श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य', 'डा. वृन्दावन लाल वर्मा' एवं 'मैत्रेयी पुष्पा जी' ने महत्वपूर्ण योगदान दिया है यद्यपि इनके उपन्यास साहित्य का क्षेत्र देश का विस्तृत भू-भाग रहा है लेकिन फिर भी इनके बहुत से उपन्यासों में इनका बुन्देलखण्ड की पावन भूमि के प्रति विशेष लगाव परिलक्षित होता है। इनके उपन्यासों को आंचलिक उपन्यासों की

श्रेणी में लिया जाय तो अनुचित न होगा। इन उपन्यासकारों ने अपने जीवन का अधिकांश समय बुन्देलखण्ड की साहित्य उर्वरा भूमि पर व्यतीत किया । अतः इस भू-भाग की विस्तृत छवि इनके मन-मस्तिष्क से लेखनी में स्थानांतरित होकर उपन्यासों के रूप में प्रकट हुयी है।

अम्बिका प्रसाद'दिव्य', डा० वृन्दावन लाल वर्मा के सभी सामाजिक उपन्यासों की कथा बुन्देली-भू-भागों से जुड़ी है। कुछ उपन्यासों को छोड़ कर 'मैत्रेयी पुष्पा जी' ने भी अपने उपन्यासों में बुन्देली भू-भागों के कथानक का आधार बनाया है। इनमें बुन्देलखण्ड के लोकजीवन की लोकसंस्कृति एवं सभ्यता समाहित है।

हिन्दी उपन्यास साहित्य को समृद्ध बनाने में स्वर्गीय **श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य'** ने महत्वपूर्ण योगदान दिया है। 'दिव्यजी' एक नई यथार्थवादी दृष्टि लेकर उपन्यास साहित्य जगत में आये। आपने हिन्दी उपन्यासों को परम्परागत शैली से मुक्तकर सामाजिक एवं ऐतिहासिक यथार्थ से जोड़ा इनके उपन्यासों में मानव जीवन से संबेधिम विशेष परिस्थितियों एवं घर घटनाओं का चित्रण है। यही कारण है कि आधुनिक लेखकों में 'दिव्य जी' के उपन्यासों का विशिष्ट स्थान है। दिव्य जी साहित्य के क्षेत्र में नया व्यक्तित्व और नई दृष्टि लेकर आये ।

"दिव्यजी का व्यक्तित्व कवि, उपन्यासकार, कहानीकार, नाटककार, निबंधकार, चित्रकार और अनुवाद का संगम स्थल था । उन्होनें जिस विधा पर कलम चलाई वह अपने आप में पूर्ण दीप्त हुई। उनके उपन्यासों में कथानक की सृष्टि किसी न किसी ऐतिहासिक अथवा सामाजिक समस्या को आधार बनाकर की गई है। दिव्यजी का दृष्टिकोण, स्पष्टवादी रहा है।"[१] उन्होंने दोनों प्रकार के (सामाजिक ऐतिहासिक) उपन्यासों की रचना की है। उनके उपन्यासों में 'मनोवेदना','प्रेमतपस्वी', 'निमियाँ', 'खजुराहो की अतिरुपा', 'सती का पत्थर', 'फजल का मकबरा' आदि सामाजिक एवं ऐतिहासिक उपन्यास है। ये बुन्देलखण्ड की पृष्ठ भूमि को आधार बनाकर लिखे गये है। सामाजिक समस्याओं को भली-भांति उकेरने का लेखन ने सफल प्रयास किया है। 'निमियाँ' की कथा, व्यक्ति के स्वार्थ को तीखी वाणी एवं प्रहारक शब्दावली से प्रस्तुत किया। इतना ही नही इन्होने उपन्यासों के माध्यम से जन-सामान्य के

---

१. उपन्यासों का समीक्षात्मक अध्ययन - गायत्री तिवारी (पृ०संख्या-४६५)

दु:ख-दर्द, उत्पीड़न व शासकों के विलासिता पूर्ण जीवन का निसंकोच वर्णन किया ।

"दिव्यजी ने अपने प्रेम तपस्वी उपन्यास में समाज की ज्वलंत रूढ़ियों को तोड़कर ईश्वरी व रजऊ का अर्न्तजातीय एवं पुनर्विवह दर्शाया है। "पण्डित जी वाले महाराज साहब का विचार है कि ईश्वरी और आपकी वह रजऊ का पुनर्विवाह करवा दिया जाय प्रकृति की यही योजना रही है। पर अल्प वृद्धि मानव ने उसके मार्ग में वाधा डाली है। परस्पर प्रेम ही शादी ब्याह का सच्चा आधार है। जाति पाति पाखण्ड है बोलये आपके क्या विचार है।"२

दिव्यजी ने अपने उपन्यास के माध्यम से बुन्देलखण्ड क्षेत्र की ज्वलंत समस्याओं को लेकर यहाँ के विचारों अनुभूतियों, मानव पारिस्थितियों एवं जटिलताओं को साहित्य प्रेमियों के सम्मुख प्रकट किया है। उन्होंने व्यापक रूप में सम-सामयिक जीवन की स्थिति व समस्याओं को व्यक्त करते हुए बुन्देली संस्कृति के स्वरुप का स्पष्ट अंकन किया । अतः कहा जा सकता है कि दिव्य जी का योगदान बुन्देलखण्ड के आंचलिक उपन्यास साहित्य को ही नही, वरन् सम्पूर्ण हिन्दी साहित्य को है। 'दिव्यजी' ने अपने आंचलिक उपन्यासों के माध्यम से बुन्देलखण्ड के लोक जीवन से सम्पूर्ण हिन्दी जगत को अवगत कराकर साहित्य के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान प्रदान किया ।

हिन्दी साहित्य में **'डॉ० वृन्दावन लाल वर्मा'** का नाम प्रमुख उपन्यासकारों में गिना जाता है। स्वर्गीय पं० अमरनाथ झाँ ने लिखा है **"प्रसाद जी महाकवि थे, प्रेमचन्द्र जी सफल उपन्यास लेखक थे परन्तु 'श्री वृन्दावन लाल वर्मा' उपन्यास और नाटक दोनों कलाओं में अपना विशिष्ट स्थान रखते है।"३** इन्होने सामाजिक एवं ऐतिहासिक दोनों प्रकार के उपन्यासों को अपने लेखन का आधार बनाया। जिसमें अधिकांश उपन्यास बुन्देलखण्ड क्षेत्र को आधार बनाकर लिखे गये हैं । इनके प्रमुख आंचलिक सामाजिक उपन्यासों में 'लगन', 'प्रत्यागत' 'कुण्डली चक्र 'अचल मेरा कोई' 'उदय-किरण' आदि उपन्यासों में बुन्देलखण्ड की लोक संस्कृति एवं लोकसभ्यता निहित है।

वर्मा जी ने बुन्देलखण्ड के इहिास -भूगोल, रीति-रिवाज, रहन-सहन आदि को, अपने उपन्यासों के माध्यम से व्यक्त किया इन्होने बुन्देलखण्ड के चप्पे-चप्पे का भ्रमण किया । यहाँ के

---

२. प्रेमतपस्वी उपन्यास - श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' (पृ०संख्या-२०६)

३. वृन्दावन लाल वर्मा व्यक्तित्व एवं कृतित्व - डा० पदम सिंह शर्मा 'कमलेश' (पृ०संख्या-२१६)

पेड़ पत्ते, पशु-पक्षी, नदी-नाले, खण्डहर-किले, पहाड़-पहाडियाँ, गीत, लोक साहित्य से ये इतने घुल-मिल गये, कि वे सब उनके अपने हो गये। यही अपनेपन की आंचलिकता आगे चलकर वर्मा जी के उपन्यासों की अमूल्य निधि बन गयी।

वर्मा जी ने गौरव गाथाओं व इतिहास परम्पराओं के पन्ने पल्टे। इतिहास और परंपरा, पात्र और घटनाक्रम कला और उद्देश्य कर तूफान इनके मन में उठकर खड़ा हुआ। उस युग के (खंगार राज्यकाल के) लोगों का रहन-सहन, प्रेम, शौर्य, स्वार्थ, त्याग, जातीय सद्भाव एवं साम्प्रदायिक सौहार्द आदि का वर्णन कर बुन्देलखण्ड के लोकजीवन से, पाठकों को अवगत कराने का प्रयास किया है, इनके आंचलिक उपन्यास हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि के रुप में उपलब्ध है।

वर्मा जी के उपन्यासों में आंचलिक की सौंधी सुगंध पर हिन्दी संसार ऐसा मुग्ध हुआ कि वह कहने लगा **"वास्तव में आंचलिक साहित्यकार होना संकीर्णता अथवा हीनता का परिचायक नहीं है।"**४

"वर्मा जी ने हिन्दी भाषा को अनेक नये शब्द दिये हैं। उनकी यह देन अमर है। यदि किसी लेखक की उच्चता उसके नवीन शब्द प्रयोग-जनपदीय और स्वनिर्मित दोनों पर निर्भर मानी जाए तो वर्मा जी को बहुत ऊँचा स्थान प्राप्त होगा। इस प्रकार वर्मा जी का स्थान हिन्दी-साहित्य परम्परा को समृद्ध करने वाले कलाकारों में अन्यतम है। श्रम और सेवा के जिन आदर्शों की प्रतिष्ठा उनके द्वारा हुई है, उससे जीवन को जीवन की भाँति जीने की प्रेरणा ही नहीं मिलती, प्रत्युत निरंतर गतिशील रहने की शक्ति प्राप्त होती है।"५

हिन्दी साहित्य प्रेमियों में **'मैत्रेयी पुष्पा जी'** एक पूर्ण ख्याति प्राप्त व्यक्तित्व है। आप शालीनता, सौम्यता की प्रतिमूर्ति और एक सम्पूर्ण उपन्यासकार हैं। आप नारी की सुकोमल भावनाओं की कद्र करने वाली महिला हैं। हिन्दी साहित्य की 'उपन्यास विधा' को मैत्रेयी जी की लेखनी ने अमूल्य कृतियाँ प्रदान की हैं। अपनी इन कृतियों के माध्यम से मैत्रेयी जी आज पाठक वर्ग में अविस्मरणीय हो गई हैं। आप अपने निरंतर प्रयासों से हिन्दी साहित्य सेवा में रत हैं।

---

४. गंध सुगंध - भगवानदास (पृ०संख्या-१५५)

५. वृन्दावन लाल वर्मा व्यक्तित्व एवं कृतित्व - डा० पदम सिंह शर्मा 'कमलेश' (पृ०संख्या-२१६)

एक गद्य लेखिका के रुप में आपने उत्कृष्ट कोटि के उपन्यास और कहानी संग्रह लिखे। मैत्रेयी जी ने काव्य की अपेक्षा गद्य अभिव्यक्ति को अधिक सशक्त और सफल माध्यम माना है। इसलिए आपने निबंध, कहानी एवं उपन्यासों का निर्माण कर हिन्दी साहित्य की निधि में बृद्धि कर, महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

मैत्रेयी जी ने अपने कुछ उपन्यासों को छोड़कर अन्य सभी उपन्यासों का आधार बुन्देलखण्ड भू-भाग बनाया है। यहाँ से जुड़े लोकजीवन, लोक संस्कृति को अपने उपन्यासों के माध्यम से जन-जन तक पहुँचाने का सफल प्रयास किया है। बुन्देलखण्ड कर्मस्थली होने के कारण यहाँ के वातावरण का प्रभाव आपके उपन्यासों में पूर्णतः परिलक्षित होता है। आपने अपने उपन्यासों में लोक जीवन को अत्यधिक प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया है। इसलिए आपके उपन्यासों में स्वाभिकता तथा आत्मानुभूति की झलक स्पष्ट ढंग से दृष्टि गोचर होती है।

बुन्देलखण्ड को आधार बनाकर लिखे गये आपके प्रमुख सामाजिक आंचलिक उपन्यास,झूलानट, इदन्नमम्, वेतवा वहती रही एवं अल्मा कबूतरी आदि है। जिनमें बुन्देलखण्ड के जन जीवन को उपन्यासों के माध्यम से पाठक वर्ग के समक्ष बड़े सहज ढंग से प्रदर्शित किया गया है ।

पुष्पा जी ने अपने उपन्यासो में बुन्देलखण्ड के नारी पात्रों को अधिक प्रधानता दी है ।उन्होंने उनके अधिकारों के हनन का कट्टर विरोध किया है। आपने उपन्यासों मे नारी पात्रों को स्वतंत्र एवं आत्मनिर्भर बनाने का पूर्ण प्रयास किया है। 'झूला नट उपन्यास' में शीलो के माध्यम से इन्होंने यह बताने का प्रयास किया है कि इस पुरुष प्रधान समाज में जो कार्य पुरुष कर सकते हैं। वह स्त्रियाँ भी कर सकती हैं। शीलो अपने पति से कहती है **"काय के पति-पत्नि बाबू जी ? वह अबोध मन का अच्छा है। सो बस.....। तुम्हारी ब्याहता होने के बाद भी.....पर छोड़ो उस बात को। बालकिशन तो बस ऐसे ही हमारे लिए। जैसे तुम्हारे लिए तुम्हारी औरत। बिन व्याही मन मर्जी की। सच मानो, बालकिशन भी इससे ज्यादा कुछ नहीं।"**६ इस प्रकार पुष्पा जी ने अपने उपन्यासों के माध्यम से इसे अंचल के पुरुष प्रधान समाज की सत्ता का कड़ा विरोध किया है।

---

६. झूला नट उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ०संख्या-११२)

'इदन्नमम् उपन्यास' में बुन्देलखण्ड के संयुक्त परिवारों का बड़ा सजीव चित्रण निम्न है -

"दादा से छोटे है, गोविन्द सिंह काका जू। घर के खजाने की चाबी रहती है उनके पास। खेती देखते हैं। फसल की पूरी जिम्मेदारी उठाते हैं। सबसे छोटे अमर सिंह घर में दाऊ जी कहलाते हैं।"७

पुष्पाजी ने अपने उपन्यासों में बुन्देलखण्डीय भोजन-व्यंजनों का उल्लेख अनेक जगहों पर किया है। 'वेतवा बहती रही उपन्यास' में **"नानी ने सबेरे से कलेऊ करवा दिया था। दूध, दलिया, एक ताठी में डाल लाईं। भाभी के लिये भी कलेऊ की थाली परस दी, दो रोटी घी में चुपड़ी हुईं। अचार के साथ और पीतल के लम्बे गिलास में दूध।"८**

इन उपन्यासकारों ने अपने आंचलिक उपन्यासों में यहाँ की लोकसंस्कृति एवं लोक सभ्यता को विस्तृत रुप से चित्रित किया है। 'पर्व, उत्सव, व्रत एवं अनुष्ठान' लोकदेवता, मेले, रीति-रिवाज, संस्कार, लोकगीत, नृत्य, वाद्य यंत्र, लोकगाथायें, लोकोक्ति, मुहावरे, बुझौअल, जातीय सद्भाव एवं साम्प्रदायिक सौहार्द, परिवार, पति-पत्नि संबंध, आवास-प्रवास, दिनचर्या, भोजन-व्यंजन, लोकाचार एवं लोकरंजन आदि के सुन्दर दृश्य इन उपन्यासों में देखने को मिलते हैं।

इन उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में बुन्देली की अनेक रुढ़ियों एवं कुप्रथाओं का उल्लेख करते हुए उनको दूर करने के लिए अनेक रचनात्मक सुझाव दिये हैं। बालविवाह, पुनर्विवाह, विधवा पुनर्विवाह, अन्तर्जातीय विवाह, बेमेल विवाह, बेरोजगारी, निर्धनता, अंधविश्वास, छुआछूत, पर्दाप्रथा, अशिक्षा आदि के अनेक चित्र इनके उपन्यासों में विस्तार से देखने को मिलते हैं।

इस प्रकार से अम्बिका प्रसाद 'दिव्य', डा० वृन्दावन लाल वर्मा एवं मैत्रेयी पुष्पा जी ने अपने आंचलिक उपन्यास साहित्य के माध्यम से हिन्दी जगत को बुन्देली लोकजीवन की बारीकियों से अवगत कराया। उनके उपन्यासों को पढ़कर जनमानस में इस विस्तृत भू-भाग के भ्रमण की लालसा जाग्रत हुई। ये उपन्यास केवल आंचलिक निधि ही नहीं वरन् हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि है। इस प्रकार इन उपन्यासकारों ने हिन्दी उपन्यास साहित्य की थाती में कुछ बहुमूल्य रत्न जोड़ने का सफल प्रयास किया है। हिन्दी साहित्य जगत इनका सदैव आभारी रहेगा।

---

७. इदन्नमम् उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ०संख्या-३४)

८. वेतवा बहती रही उपन्यास - मैत्रेयी पुष्पा (पृ०संख्या-८२)

परिशिष्ट

आधार ग्रन्थ सूची -

श्री अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' जी के उपन्यास -

१. निमियाँ

२. मनोवेदना

३. प्रेमतपस्वी

डा० वृन्दावन लाल वर्मा जी के उपन्यास -

विवेच्य-

१. लगन

२. प्रत्यागत

३. कुण्डली चक्र

४. अचल मेरा कोई

५. उदय-किरण

अन्य -

१. संगम

२. प्रेम की भेंट

३. कभी न कभी

४. सोना

५. अमर बेल

मैत्रेयी पुष्पा जी के उपन्यासों में -

१ इदन्नमम्

२. झूला नट

३. वेतवा बहती रही

४. अल्मा कबूतरी

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची -

१. हिन्दी भाषा का उद्भव एवं विकास - डॉ० गुणानन्द जुयाल

२. हिन्दी साहित्य का उद्भव एवं विकास - आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी

३. हिन्दी साहित्यकोश भाग-एक - ज्ञान मण्डल वाराणसी

४. हिन्दी साहित्यकोश भाग-दो - ज्ञान मण्डल वाराणसी

५. हिन्दी साहित्य का इतिहास - आचार्य रामचन्द्र शुक्ल

६. हिन्दी साहित्य का सुबोध इतिहास - गुलाब राय

७. हिन्दी भाषा का उद्भव एवं विकास - डॉ० उदय नारायण तिवारी

८. हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियां - डॉ० जयकिशन प्रसाद

९. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ० नगेन्द्र

१०. हिन्दी साहित्य का कोष - राम वेलान पाण्डे

११. हिन्दी और उसके कलाकार - फूलचन्द्र जैन सारंग

१२. हिन्दी शब्द सागर – काशी नागरी प्रचारिणी
१३. बुन्देलखण्ड का राजनैतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास – अब्दुल करयूम मदनी
१४. बुन्देलखण्ड दर्शन – मोतीलाल त्रिपाठी 'अशान्त'
१५. बुन्देलखण्ड का साहित्यिक ऐतिहासिक सांस्कृतिक वैभव – डॉ० रमेश चन्द्र श्रीवास्तव
१६. बुन्देलखण्ड की लोकचित्रकला – डॉ० श्रीमती मधु श्रीवास्तव
१७. बुन्देलखण्ड की लोकसंस्कृति का इतिहास – नर्मदा प्रसाद गुप्त
१८. सांस्कृतिक बुन्देलखण्ड – अयोध्या प्रसाद गुप्त 'कुमुद'
१९. बुन्देलखण्ड का लोकजीवन – अयोध्या प्रसाद गुप्त 'कुमुद'
२०. बुन्देलखण्ड की संस्कृति और साहित्य – श्री रामचरण ह्यारण 'मित्र'
२१. कविप्रिया – केशवदास
२२. हिन्दी साहित्य में दलित चेतना – डॉ० आनन्द बास्कर
२३. कोंच के मंदिर सरोवर एवं स्मारक – डॉ० रामसजीवन शुक्ल
२४. धर्म और समाज मानवीय एकता के परिपेक्ष्य में
२५. दैनिक आज समाचार पत्र – कानपुर से प्रकाशित – प्रधान सम्पादक
२६. दिव्यालोक (अखिल भारतीय अम्बिका प्रसाद 'दिव्य' स्मृति पुरस्कार वितरण समिति की मुख्य पत्रिकाएं) – श्री जगदीश किंजल्क (प्रकाशन साहित्य सदन सार म.प्र.)
२७. दिव्य जी का उपन्यास साहित्य कथ्य एवं शिल्प – (शोधार्थी) रामप्रकाश अग्रवाल
२८. दिव्य के उपन्यासों का समीक्षात्मक अध्ययन –गायत्री तिवारी
२९. दिव्य जी का व्यक्तित्व एवं कृतित्व –आर. सी. खरे
३०. वृन्दावन लाल वर्मा :व्यक्तित्व एवं कृतित्व –डॉ. पद्यसिंह शर्मा 'कमलेश'
३१. उपन्यासकार वृन्दावन लाल वर्मा –डॉ. शशिभूषण सिंघल
३२. मैत्रेयी पुष्पा के कथ्य का आलोचनात्मक अध्ययन (लघुशोध) –कु. सीमा सौनकिया
३३. सृजन समीक्षा (पत्रिकायें) साहित्य एवं संस्कृति का त्रैमासिक –सम्पादक– 'सत्यवान शुक्ल'
३४. बुन्देलखण्ड का साहित्यिक इतिहास – मोती लाल त्रिपाठी 'अशान्त'
३५. बुन्देलखण्ड का इतिहास – डॉ० गोरे लाल
३६. उदय और विकास – रामचरण ह्यारण 'मित्र'
३७. बुन्देलखण्ड का व्याकरण – श्री रामभट्ट
३८. बुन्देलखण्ड की संस्कृति और साहित्य – डॉ० बलवन्त तिवारी

३६. बुन्देलखण्ड का सांस्कृतिक इतिहास - डॉ० गोरे लाल
४०. बुन्देलखण्ड हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ० गोरे लाल
४१. बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास - पं० चतुर्भुज शर्मा
४२. बुन्देलखण्ड की लोकधारा - श्रीमती दुर्गा पाठक
४३. लोकाचरण - डॉ० गनेशी लाल बुधौलिया
४४. बुन्देली का लोककथा साहित्य - बलभद्र तिवारी
४५. भारतीय लोक साहित्य - डॉ० श्याम परमार्थ
४६. बुन्देली लोक साहित्य - रामस्वरुप श्रीवास्तव
४७. बुन्देलखण्ड का सामाजिक एवं सांस्कृतिक अनुशीलन - रामस्वरुप ढेंगुला (दतिया)
४८. गद्य-सुगंध - भगवान दास (झाँसी)
४६. समाजशास्त्र - जी० के० अग्रवाल
५०. भारतीय समाज एवं संस्थाएं - डॉ० आर. एन. सक्सेना
५१. भारतीय समाज एवं संस्थाएं - एम.एल. गुप्ता एवं डी.डी.शर्मा
५२. हिन्दू विवाह - ए० एल० अल्टेकर
५३. हिन्दू संस्कार - डॉ० राजवली पाण्डेय
५४. भारत में विवाह और परिवार - के. एम. कपाड़िया
५५. हिस्ट्री ऑफ मैरिज - वेस्टर मार्क

BUNDELKHAND UNIVERSITY
Central Library
JHANSI